CIJ -01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

फलित ज्योतिष का सैद्धान्तिक ज्ञान

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. एल.आर. गुर्जर
निदेशक, संकाय,
व.म.खु.वि.वि., कोटा

संयोजक/ समन्वयक एवं सदस्य

समन्वयक	संयोजक
डॉ. क्षमता चौधरी सहायक आचार्य, अंग्रेजी व.म.खु.वि.वि., कोटा	डॉ. कपिल गौतम सहायक आचार्य, संस्कृत व.म.खु.वि.वि., कोटा

सदस्य

प्रो. बी. त्रिपाठी लाल बहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली	प्रो. विनोद कुमार शर्मा जगतगुरू रामानन्द आचार्य राजस्थान संस्कृत विद्यालय, जयपुर
डॉ. सरिता भागर्व राजकीय महाविद्यालय, झालावाड़	डॉ. जितेन्द्र कुमारी द्विवेदी व्याख्याता, संस्कृत लाड देवी शर्मा पंचोली संस्कृत महाविद्यालय माण्डलगढ़, भीलवाड़ा
श्री ओम प्रकाश ज्योतिर्षाचार्य, कोटा	डॉ. कमलेश जोशी उपकुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा

संपादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

सम्पादक

डॉ. देवेन्द्र कुमार मिश्रा
सहायक आचार्य, ज्योतिष, संस्कृत
उत्तराखण्ड खुला विश्वविद्यालय, हल्दवानी नैनीताल,
उत्तराखण्ड

पाठ्यक्रम लेखन

1 सुश्री सपना सुराना (5,6,7,8)
ज्योतिष विशारद, जयपुर

2 श्री राजेन्द्र सुराणा (9,13)
ज्योतिष विशारद, जयपुर

3 श्रीमती नीलम सालानी(1,11,12)
ज्योतिष व वास्तुशास्त्र परामर्शदाता,
अकोला, महाराष्ट्रा

3 सुमन सचदेव (2,3,4,10)
ज्योतिष व वास्तुशास्त्र परामर्शदाता, जयपुर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. विनय कुमार पाठक	प्रो. एल.आर. गुर्जर	**प्रो. पी.के. शर्मा**
कुलपति	निदेशक	निदेशक
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा	संकाय विभाग	**क्षेत्रीय सेवा प्रभाग**
	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा	**वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी,

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन

इस सामग्री के किसी भी अंश भी अंश को व.म.खु.वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि., कोटा के लिए कुलसचिव को व.म.खु.वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

विवरणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृ.सं.
इकाई - 1	ज्योतिष शास्त्र का उद्भव एवं विकास – प्राचीन काल, मध्यकाल एवं आधुनिक काल में ज्योतिष शास्त्र का परिचय	4
इकाई - 2	फलित ज्योतिष – संज्ञा प्रकरण के अन्तर्गत, नक्षत्र, राशि, वार, योग, करण ग्रहों का परिचय	15
इकाई - 3	कुण्डली परिचय लग्नादि द्वादश भावों के अन्तर्गत भावों की संज्ञा, कारक ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता, शत्रु, उच्च–नीच, मूल त्रिकोणादि ज्ञान,ग्रहों कारकत्व एवं दृष्टि विचार	56
इकाई - 4	लग्न का सामान्य फल, ग्रहों का शुभाशुभत्व एवं अरिष्ट विचार	72
इकाई - 5	भावफल	82
इकाई - 6	नाभसादि योग	104
इकाई - 7	आजीविका एवं राजयोगविचार	127
इकाई - 8	बालारिष्ट एवं आयुविचार	153
इकाई - 9	दशाज्ञान:- दशाओं का शुभाशुभ फल, महादशा, अन्तर्दशा एवं प्रत्यन्तर्दशा ज्ञान	179
इकाई - 10	मारक ग्रह निर्णय	212
इकाई - 11	शुभाशुभ मुहूर्त निर्णय	2225
इकाई - 12	विवाह, यात्रा मुहूर्त्त	259
इकाई - 13	‘शंकुन ज्योतिष’	316

इकाई - 1

ज्योतिष शास्त्र का उद्भव एवं विकास – प्राचीन काल, मध्यकाल एवं आधुनिक काल में ज्योतिष शास्त्र का परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 भारतीय ज्योतिष का इतिहास

1.3.1 पूर्व वैदिक काल

1.3.2 वैदिक काल अथवा उदय काल

1.3.3 वैदिक काल में ज्योतिष सिद्धान्त

1.3.4 आदिकाल/पौराणिक काल

1.4 सारांश

1.5 शब्दावली

1.6 अभ्यास प्रश्न

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.1 प्रस्तावना

भारतीय ज्योतिष वेदाग्ड़ है, इसे शास्त्र कहते है। शास्त्र वह है जिसमें विधि और निषेध का उपवर्णन हो। ज्योतिष की परम्परा वैदिक परम्परा ही है। यह वेद नेत्र है – ज्योतिषामयनं चक्षु: किन्तु इसकी ऐतिहासिकता में विचारणीय यह है कि भारतीय शास्त्र का क्रमबद्ध अध्ययन करने की परम्परा का विकास किस रूप में हुआ? किन किन बातों में ज्योतिष के विभिन्न पक्षों का कितनी गहराई से अध्ययन किया गया। यही सब इस इकाई में आपको अध्ययनार्थ प्रस्तुत है।

''प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रम्'' की उक्ति सर्वथा प्रसिद्ध है। पूर्व वैदिक काल में ज्योतिष सम्बन्धी विशेष साहित्य तो उपलब्ध नहीं होते किन्तु इस काल में ज्योतिष का होना प्रमाणित किया गया है। पूर्व वैदिक काल, वैदिक काल और पौराणिक से लेकर अद्यतन ज्योतिष शास्त्र के त्रिस्कन्ध का अध्ययन विकसित हुआ है। वेद, आरण्यक, ब्राह्मण उपनिषद् से लेकर पदे – पदे ज्योतिष से संबंधित सामग्रियाँ उपलब्ध है।

अत: इस इकाई के संक्षिप्त अध्ययन के पश्चात् आप ज्योतिष शास्त्र के विकास को भली भांति समझा सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

ज्योतिष शास्त्र के इतिहासात्मक अध्ययन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेंगे कि -

1 पूर्व वैदिक काल में ज्योतिष का ज्ञान था या नहीं?
2 वैदिक काल अथवा उदयकाल में ज्योतिष से सम्बन्धित कितना ज्ञान विकसित हो सका?
3 पौराणिक काल में ज्योतिष शास्त्र के किस स्वरूप से किस स्वरूप का अध्ययन किया गया।?
4 आधुनिक परिवेश में ज्योतिष की पहँच कहॉं तक है?
5 ज्योतिष का इतिहास वास्तव में क्या है?
6 ज्योतिष के किन - किन पक्षों का अध्ययन उपलब्ध है?

1.3 भारतीय ज्योतिष का इतिहास

भारतीय ज्योतिष के उद्गम अथवा जन्म का समय ज्ञात करना संभव नहीं है परन्तु उसके विकास के आधार पर कालों का विभाजन किया जा सकता है। जिस प्रकार भारतीय संस्कृति के इतिहास को विभाजित किया गया है, उसी प्रकार ज्योतिष के इतिहास का वर्गीकरण भी किया गया माना जा सकता है। सृष्टि के आरम्भ में व्यक्ति भाषा की लिखित अभिव्यक्ति करने अथवा किसी घटना को लिपिबद्ध करने में असमर्थ था। धीरे-धीरे वह शब्द करना सीखा तथा बोल-चाल द्वारा अपने मन के भावों को व्यक्त करने लगा। यही बोल-चाल, बातचीत की शक्ति बढ़ती गयी और उच्चारण द्वारा व्यक्ति भाव प्रकट करने लगा।

ज्ञान के क्रमिक विकास के साथ ही साथ उसकी संभाषण शक्ति भी बढ़ने लगी और भाषण की इसमें योग्यता बढ़ने लगी। न तो लेखन के लिए तब कोई साधन उपलब्ध थे न ही लेखन शैली ने जन्म लिया था। अत: उस सारे ज्ञान का आधार स्मरणशक्ति थी, वह स्मृति कहलायी। जो भी व्यक्ति ज्ञान प्राप्त किए हुए थे वे किसी घटना के दृश्य को देखकर उसे विस्तार से आत्मसात कर याद कर लेते थे और बोलकर अन्य व्यक्तियों तक उस ज्ञान का संप्रेषण करते थे तथा उन्होंने वह ज्ञान किसी अन्य व्यक्ति से सुनकर प्राप्त किया है। अत: उसे श्रुति कहा जाता था। इस प्रकार बोले व सुने गए ज्ञान के विवरण व विस्तार में कमियाँ भी रह गई तथा कुछ भ्रांति भी उत्पन्न हुई। मनुष्य की ज्ञान-पिपासा की स्वाभाविक प्रवृत्ति में क्यों तथा कैसे व कब आदि बातें शामिल हैं। इसी कारण वह खोज में निरन्तर लगा रहता था अत: विकास के क्रम में उसके मन में समय, स्थान और दिशा की जानकारी पाने की जिज्ञासा हुई। यह कहा जा सकता है कि इन तीनों विषयों का ज्ञान ज्योतिष द्वारा प्राप्त करने के उपरान्त अन्य विषयों का ज्ञान मनुष्य को हुआ होगा।

भारत वर्ष की प्रमुख विशेषताओं में आध्यात्मिक ज्ञान मुख्य है और इसका संपादन योग क्रिया द्वारा प्राचीन होता आ रहा है। योग क्रिया सिद्धान्त के अन्तर्गत महाकुण्डलिनी नाम की शक्ति समस्त सृष्टि में व्याप्त है तथा मनुष्य में यह शक्ति कुण्डलिनी के रूप में रहती है। इसके अनन्तर चक्रों, इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना नाड़ियों द्वारा योगी की साधनाओं से याद हुआ करता था। इन नाड़ियों में इड़ा व पिंगला को सूर्य व चन्द्र भी कहा गया है। अत: यह मानने का आधार है कि योग ज्ञान केवल आध्यात्म पर आधारित ही नहीं है बल्कि ज्योतिष विषयक भी है।

1.3.1 पूर्व वैदिक काल

पूर्व वैदिक काल - वैदिक दर्शन में सृष्टि के आदि अर्थात् सृजन तथा अन्त अर्थात् विनाश माना गया है। इस दर्शन के अनुसार सृष्टि के सृजन के पश्चात् ही मनुष्य ग्रह, नक्षत्रों का अध्ययन आरंभ कर देता है तथा ज्योतिष के जीवनोपयोगी तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कर अपने ज्ञान की भी वृद्धि करता है। क्योंकि कब व कैसे? के क्रम में ही मनुष्य ने देश काल व स्थान के संबंध में जानकारी प्राप्त की होगी। घटना के घटित होने के विषय में आपस में बातचीत के दौरान ही इस विषय में उत्पन्न जिज्ञासा शान्त होती होगी, ज्योतिष द्वारा इन विषयों का अर्थात् घटना के घटित होने के समय, स्थान आदि के विषय में ज्ञान हुआ होगा। काल का बोध कराने वाले शास्त्र के रूप में यह एक अद्भुत शास्त्र है।

इस काल में ज्योतिष संबंधी विशेष साहित्य उपलब्ध नहीं हैं क्योंकि लिखित साधनों का अभाव या प्राणिशास्त्र में कुछ ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं कि आदि मानव अपने योग और ज्ञान द्वारा आयुर्वेद तथा ज्योतिष शास्त्र के मौलिक तत्वों का ज्ञान प्राप्त कर अपनी भौतिक तथा आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता था।

इस काल की ज्योतिष संबंधी मान्यताओं का ज्ञान ज्योतिष के उदय कालीन या वैदिक कालीन साहित्य से लगता है।

वैदिक दर्शन के अनुसार सृष्टि बनने के बाद से ही मनुष्य ग्रह नक्षत्रों का अध्ययन शुरु कर देता है। इसके साथ ही वह ज्योतिष की जीवन में उपयोग से जुड़ी बातें ज्ञात कर अपने ज्ञान में वृद्धि करता है।

मनुष्य जब चिन्ता करता है तब उसकी कल्पनाशक्ति तथा वाक्शक्ति और बुद्धि रहस्यों से परत उठाने में प्रवृत्त होती है।

इसी काल में जैन मान्यता यह रही कि संसार अनादिकाल से ऐसे ही चला आ रहा है इसमें न कोई नई वस्तु उत्पन्न होती है और न ही किसी का विनाश होता है बल्कि वस्तुओं की पर्यायें बदल जाती है। यह मान्यता ज्योतिष तत्त्व पर प्रकाश ड़ालने वाली रही है। यह ठीक वैसे ही है जैसे ऊर्जा नष्ट नहीं होती बल्कि रूप बदल लेती है। जैन मान्यता के अनुसार बीस कोड़कोड़ी अद्धा (यह खरब की संख्या से भी कई गुना अधिक है) का एक कल्पकाल बताया गया है। कल्पकाल के दो भेद हैं इनके उपभेदों में 6 भेद माने गए हैं।

इनके 6 कालों में से प्रथम व द्वितीय काल में भोगभूमि (भोगभूमि वह स्थान था जहाँ भोजन, वस्त्र आदि आवश्यकता की वस्तुएं कल्पवृक्षों से प्राप्त होती हैं) की, तृतीय काल के आरंभ में भोगभूमि व अन्त में कर्मभूमि की रचना करती है। इसी संदर्भ में तृतीय काल में 14 कुलकर उत्पन्न होते हैं जो प्राणियों को विभिन्न शिक्षाएं देते थे। इसी क्रम में प्रथम कुलकर के समय में मनुष्य को सूर्य व चन्द्रमा दिखाई दिए तो वह संदेह से घिर गए और अपने संदेह को दूर करने के लिए कुलकर के पास गए। कुलकर ने उन्हें सूर्य व चन्द्रमा संबंधी ज्योतिष विषयक ज्ञान दिया और मनुष्य ग्रहों से परिचित होकर अपने कार्यों का संचालन करने लगा।

द्वितीय कुलकर ने मनुष्य की नक्षत्रों से जुड़ी शंकाओं का निवारण किया तथा उस युग के व्यक्तियों को आकाश मण्डल की बातों से अवगत कराया। इस बात से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि अरबों-खरबों वर्ष पूर्व ज्योतिष तथ्यों की शिक्षाएँ दी गई थीं। आधुनिक इतिहास भी जैनधर्म के अस्तित्व होने की पुष्टि करता है। छान्दोग्योपनिषद् में भी एक कथा का वर्णन है.... इस संदर्भ में राजा जाबालि से कुछ प्रश्न पूछे गए जिनका उत्तर माँगा।

स ह कृच्छ्रीबभूव। तंह चिरं वस इत्याज्ञाप्यांचकार। तं होवाच यथा मा त्वं गौतमावदो यथेयं न प्राकृत्वत्त: पुरा विद्या ब्राह्मणान् गच्छति।

अर्थात् - गौतम ऋषि की प्रार्थना पर राजा चिन्तित हुए और उन्होंने ऋषि से कुछ समय ठहरने का अनुरोध कर उनके प्रश्नों का उत्तर देना आरंभ किया हे गौतम। आप मुझसे जो विद्या प्राप्त करना चाहते हैं, वह आपसे पहले किसी ब्राह्मण को प्राप्त नहीं हुई है। ब्रहदारण्यक उपनिषद् के मंत्र 6/2/8 से भी इस बात की पुष्टि होती है।

अत: यह मानने का पूर्ण आधार है कि पूर्व वैदिक काल में भी कुछ जैन साहित्य में ग्रह-नक्षत्रों का स्पष्ट विवेचन मिलता है।

1.3.2 वैदिक काल अथवा उदय काल

इस काल में समस्त ज्ञान एक रूप में था तथा विषयों की दृष्टि से विभिन्न अंगों में विभक्त नहीं हुआ था। प्राचीन मानव ज्योतिष को भी धर्म मानता था अत: धर्म, दर्शन व ज्योतिष के रूप में कोई अलग भेद प्रकट नहीं हुआ था सभी विषयों का साहित्य एक ही था।

कुछ लोगों की मान्यता है कि वैदिक काल से पूर्व आर्य लोग भारत में उत्तरी ध्रुव से आए थे और यहाँ बसने के बाद उन्होंने वेद, वेदांग आदि साहित्य की रचना की। आधुनिक प्राणि शास्त्रियों ने अनुसंधान करके यह प्रमाणित भी कर दिया है कि वास्तव में उत्तरी धुरव स्थिर नहीं है तथा अपने प्राचीन स्थान से पूर्व पश्चिम और उत्तर की ओर चलते हुए वर्तमान स्थिति को प्राप्त हुआ है अत: यह भी स्पष्ट है कि प्राचीन आर्य उत्तरी ध्रुव में रहते थे तथा यह प्रदेश भारतवर्ष में अन्तर्गत ही आता था। आर्यों ने उदय काल में ही वैदिक साहित्य को जन्म दिया।

1 वेद, ब्राह्मण, 2 आरण्यक, 3, द्वादशांग, 4 प्रकीर्णक और 5 उपनिषद् आदि धार्मिक रचनाओं की श्रेणी में आती हैं परन्तु इन सभी में ज्योतिष, शिल्प तथा आयुर्वेद आदि विषयों पर सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

उदयकाल में ही मास, अयन, वर्ष, युग, ऋतु, ग्रह, ग्रहण, ग्रहकक्षा, नक्षत्र, नक्षत्र लग्न, दिन-रात का मान उसकी वृद्धि व हानि आदि पर ज्योतिष के दृष्टिकोण से विचार किया जाने लगा था। ज्योतिष की यह चर्चा शतपथ ब्राह्मण तैत्तिरीय ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण आदि ग्रंथों में विस्तृत रूप में उपलब्ध है। ज्योतिष सिद्धान्तों का शास्त्रोक्त तथा व्यावहारिक दृष्टिकोणों से प्रतिपादन भी उपलब्ध है।

ऋग्वेद के अनुसार दिन को केवल काम चलाऊ समय के रूप में माना जाता था परन्तु ब्राह्मण और आरयण्क ग्रंथों में दिन की वृद्धि कब और कैसे होती है तथा दिन बड़ा-छोटा कैसे व कब होता है, इस पर शास्त्रोक्त मीमांसा होने लगी थी।

इसी वैदिक काल में सूर्य व चन्द्रमा के अतिरिक्त मंगल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि आदि ग्रहों से संबंधित ज्योतिष साहित्य बन गया था। इसके अतिरिक्त जैन साहित्य में नवग्रहों का उल्लेख ईसा पूर्व सहस्त्रों वर्ष पूर्व होने लगा था। उदयकालीन समय में स्वतन्त्र रूप से ज्योतिष संबंधी रचनाएं नहीं मिलतीं। प्रत्येक काल में साहित्य व ज्योतिष पर देश की परिस्थितियों व राजनीतिक प्रभाव पड़ता है, यह काल भी ऐसा ही रहा, उस समय की शासन प्रणाली का प्रभाव इतना गहरा था कि फल का प्रतिपादन करने वाले ग्रहों तथा नक्षत्रों को समान रूप से स्वीकार कर लिया गया। ग्रहों की मित्रता, शत्रुता, उच्चत्व, नीचत्व, दृष्टियों आदि के परिपेक्ष में विचार भारत में कौटिल्य नीति के प्रचार के पश्चात् ही किया गया। अत: यह कहा जा सकता है कि ज्योतिष साहित्य इस युग में शैशवकाल में ही था तथा धीरे-धीरे उत्थान की ओर बढ़ रहा था।

1.3.3 वैदिक काल में ज्योतिष सिद्धान्त

ऋग्वेद में वर्ष को 12 चान्द्रमासों में विभक्त किया गया है तथा सौरमास व चान्द्रमास का समन्वय करने के उद्देश्य से हर तीसरे वर्ष अधिकमास व मलमास जोड़ा गया है। इसके अतिरिक्त ऋग्वेद में सौर व चान्द्र मास का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ अत: स्पष्टत: कहा जा सकता है कि अधिकमास की कल्पना ऋग्वेदों से ही आयी थी। इसके अतिरिक्त प्रश्नव्याकरण अंग में बारह मासों की पूर्णिमाओं तथा अमावस्याओं के नामों का उल्लेख भी मिलता है। कई स्थानों पर पूर्णिमाओं के नाम के आधार पर ही मासों का नाम के आए हैं।

ऋतु विचार - ईसा पूर्व 8,000 में वसन्त ऋतु को ही प्रारंभिक ऋतु माना जाता था किन्तु ईसा पूर्व 500 में वर्षा को प्रारंभिक ऋतु माना जाने लगा, ऐसा तैत्तिरीय संहिता के 4/4/11 में उल्लेख है। ऋग्वेद में भी ऋतु शब्द का प्रयोग वर्ष के अर्थ में हुआ है।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में वर्ष को पक्षी माना है तथा ऋतुओं को उस पक्षी के विभिन्न अंग बताते हुए कहा गया है कि उस पक्षी का सिर वसन्त ऋतु, ग्रीष्म ऋतु दाहिना पंख, शरद ऋतु बायां पंख, वर्षा ऋतु पूँछ तथा उसका मध्य भाग हेमन्त ऋतु है। तैत्तिरीय संहिता में ऋतु एक ऐसे पात्र के रूप में वर्णित है जिसके दोनों ओर मुख हैं तथा इन मुखों का दिशा ज्ञान कठिन है क्योंकि वह सूर्य पर निर्भर है।

एक वर्ष में सौरमास का आरंभ, चन्द्रमास के साथ ही होता है तथा प्रथम वर्ष के सौरमास का आरंभ शुक्ला द्वादशी तिथि को होता है तथा उससे तीसरे वर्ष में सौरमास का आरंभ कृष्ण पक्ष की अष्टमी को होना माना गया है।

शतपथ ब्राह्मण 1/6/3 में ऋतु के संबंध में आख्यान मिलता है। इसके अनुसार सृष्टि की रचना के बाद प्रजापति के पर्व (अहोरात्र) शिथिल हो गए थे। यहाँ प्रजापति से तात्पर्य संवत्सर से लिया गया है तथा पर्व का अर्थ अहोरात्र की दोनों संधियों अर्थात् पूर्णिमा, अमावस्या तथा ऋतु आरंभ तिथि से लिया गया है।

अयन विचार - वैदिक काल में ही अयन के विषय में भी चर्चाएं होने लगी थीं। ऋग्वेद में अयन शब्द का प्रयोग कई स्थानों पर हुआ है परन्तु यह स्पष्ट उल्लेख नहीं था कि यह अयन शब्द सूर्य के उत्तरायण व दक्षिणायन के संदर्भ में ही है अथवा कुछ और।

वैदिक काल में ही शपपत ब्राह्मण के श्लोक

2/1/3 के अनुसार शिशिर से ग्रीष्म ऋतु तक उत्तरायण तथा वर्षा से हेमन्त ऋतु तक दक्षिणायन होता था।

इसी वैदिक काल की अंतिम शताब्दियों में हेमन्त ऋतु मध्य से ग्रीष्म ऋतु मध्य तक उत्तरायण माना जाने लगा था।

तैत्तिरीय संहिता के मंत्र तस्मादादित्य: षण्मासो दक्षिणेनैति षडुत्तरेण से सूर्यदेव के छ: मास उत्तरायण तथा छ: मास दक्षिणायन स्पष्ट होता है।

मैत्रायणी उपनिषद् में उदग्, अयन व उत्तरायण शब्द अधिकांश स्थानों पर प्रयुक्त हुए हैं। उदग् व अयन के पर्याय देवयान, व देवलोक हैं तथा दक्षिणायन के पर्याय पितृलोक व पितृयाण कहे गए हैं।

अत: यह स्पष्ट है कि वैदिक काल की अन्तिम शताब्दियों में उत्तरायण व दक्षिणायन का ज्योतिष के परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म अध्ययन होने लगा था।

वर्ष विचार - ऋग्वेद के दसवें मण्डल में 'समा' शब्द द्वारा वर्ष शब्द का प्रतिपादन किया गया। वर्ष का प्रारंभ कब होता है इस सन्दर्भ में ऋग्वेद से तो स्पष्ट संकेत नहीं मिलता परन्तु यजुर्वेद में वसन्त के आरंभ से वर्ष के आरंभ का उल्लेख आया है। ईसा पूर्व 500 तक सौर वर्ष प्रणाली प्रचलन में थी तथा सायन वर्ष का ही विचार होता था परंतु इसके पश्चात् अर्थात् आदिकाल में निरयन वर्ष प्रणाली का विचार होने लगा।

शतपथ ब्राह्मण 6/7/1/18 के अनुसार जिसमें ऋतुएँ वास करती हैं, वह वर्ष या संवत्सर कहा जाता है।

युग - वैदिक काल में युग शब्द से तात्पर्य काल मान से लिया जाता था परन्तु ऋग्वेद में इसका अर्थ कल्प से नहीं लिया जाकर सतयुग या द्वापर आदि से लिया जाता था। ऋग्वेद के कुछ मंत्रों से युग शब्द का अर्थ 'काल' व अहोरात्र से लिया जाता है।

ग्रह कक्षा - वैदिक काल में ज्योतिष के समय ज्ञान तक ही सिमटा हुआ नहीं था बल्कि वैदिक ऋषियों को ज्योतिष के मौलिक सिद्धान्त भी ज्ञात थे। तैत्तिरीय ब्राह्मण के मन्त्रों से स्पष्ट होता है कि पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ, सूर्य तथा चन्द्रमा वे क्रम से ऊपर हैं।

तैत्तिरीय संहिता के 7/5/23 से तात्पर्य हैं कि सूर्य आकाश की, चन्द्र नक्षत्र मण्डल की, वायु अंतरिक्ष की परिक्रमा करते हैं और अग्निदेव पृथ्वी पर निवास करते हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्र क्रम से ऊपरी कक्षा वाले हैं।

सामान्य रूप से वैदिक ऋषियों की यह कल्पनाएँ न होकर स्वभाविकता ही है क्योंकि जब सूर्य दृश्यमान होता है तो नक्षत्र दृश्यमान नहीं रहते जो स्पष्ट करता है कि सूर्य का गमन नक्षत्रकक्षा में नहीं होता। इसके विपरीत चन्द्रमा के संदर्भ में यह तथ्य या नियम काम नहीं करता इसी कारण से चन्द्रमा के गमन के समय उसके आस-पास नक्षत्र दृश्यमान होते हैं अत: हम यह कह सकते हैं कि चन्द्रमा ऊँचा होने के कारण नक्षत्रों से बहुत नीचे हैं अत: उनके गमनकाल में नक्षत्र दिखाई नहीं देते।

नक्षत्र - यजुर्वेद के एक मंत्र के अनुसार नक्षत्रों की संख्या 27 थी तथा उन 27 नक्षत्रों को गंधर्व कहा गया है परन्तु यह स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि गणना किस प्रकार की जाती थी जबकि अथर्ववेद में कृतिका आदि 28 नक्षत्रों का वर्णन मिलता है।

तैत्तिरीय श्रुति में नक्षत्रों के नाम, उनके वचन, लिंग तथा देवता आदि का वर्णन मिलता है।

1.3.4 आदिकाल/पौराणिक काल

वैदिक काल में विभिन्न ब्राह्मण ग्रंथों, वेदों, आदि में ज्योतिष विषय पर चर्चा की जाती थी वहीं पौराणिक अथवा आदिकाल में इस पर स्वतन्त्र ग्रंथों की रचना प्रारंभ हो गयी। इस काल में शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, ज्योतिष तथा छन्द ये वेदांग के रूप में प्रचलित हो गए थे। इस काल में व्यक्ति ने अपने भावों तथा विचारों को अपने तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि दूसरों तक उनको पहुँचाने का कार्य भी किया। इसी कारण अभिव्यक्ति का स्तर उठता गया और ज्योतिष का स्वतन्त्र विकास निरन्तर बढ़ता गया।

वेदांग के रूप में ज्योतिष की ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में हैं। ऋग्वेद में 36, यजुर्वेद में 44 तथा अथर्ववेद में 162 श्लोक हैं। वैदिक काल की वैदिक ज्योतिष गणना या मान्यता में दक्षिण व उत्तर धुरवों से बद्ध भचक्र वायु द्वारा भ्रमण करता हुआ स्वीकार किया गया है। सूर्य प्रदक्षिणा की गति उत्तरायण तथा

दक्षिणायन दो भागों में विभक्त है। यह कहा जा सकता है कि ईसापूर्व 500-400 में भारतीय ज्योतिष में ग्रहों के भ्रमण के संबंध में मुख्यत: दो ही सिद्धान्त प्रचलन में थे। प्रथम सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी केन्द्र थी तथा वायु के कारण ग्रहों का भ्रमण होता था तथा दूसरा सुमेरू को केन्द्र मानकर स्वाभाविक रूप से ग्रहों का भ्रमण मानता था। वैदिक काल में ही ज्योतिष को वेदरूपी पुरूष शरीर का नेत्र कहा जाने लगा, इसका तात्पर्य यह भी है कि जिस प्रकार मानव शरीर नेत्रों के अभाव में अधूरा है ठीक उसी प्रकार ज्योतिष के ज्ञान के बिना अन्य विषयों का ज्ञान अधूरा व अनुपयोगी है। इस काल में ज्योतिष को न केवल व्यवहार के दृष्टिकोण से उचित माना गया बल्कि आत्मकल्याण करने वाला भी माना गया।

इस संदर्भ में आचार्य गर्ग का यह कथन हैं कि ज्योतिष चक्र संपूर्ण जगत के शुभ व अशुभ को व्यक्त करने वाला है अत: जो ज्योतिष शास्त्र का ज्ञाता है, वह परम कल्याण को भी प्राप्त करता है। ईसा 100 से 300 तक के काल में ज्योतिष शास्त्र की विशेष उन्नति हुई। कृतिका नक्षत्र में गणना करने पर राशियों के क्रम निर्धारण में कठिनाई को देखते हुए अश्विनी नक्षत्र से गणना प्रचलन में आई तथा रेवती नक्षत्र की संपात तारा के रूप में स्वीकृति हुई। इस काल में अठारह आचार्य हुए जिन्होंने अपने दिव्य ज्ञान से ज्योतिष के सिद्धान्त ग्रंथों की रचना भी निर्माण किया।

'सूर्य पितामहो व्यसो वसिष्ठोऽत्रि: पराशर:।

कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुङ्गिरा:।।

लोमश: पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगु:।

शौनकोऽष्टादशाश्चैते ज्योति:शास्त्र प्रवर्त्तका।।

ऋषि काश्यप विरचित उपर्युक्त श्लोक के अनुसार सूर्य, पितामह, व्यास, वसिष्ठ, अत्रि, पाराशर, काश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश पुलिश, च्यवन, यवन, भृगु तथा शौनक ये अठारह आचार्य ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तकों में हैं।

ऋषि पाराशर ने उपर्युक्त वर्णित अठारह आचार्यो के अतिरिक्त 'पुलस्त्य; नामक आचार्य को भी इनमें सम्मिलित किया है अत: ऋषि पाराशर के अनुसार उन्नीस आचार्य ज्योतिष के प्रवर्त्तक आचार्यों में हैं। इसके विपरीत नारद ने उपर्युक्त वर्णित अठारह आचार्यों में सूर्य को गणना में नहीं लिया, उनके अनुसार सतरह आचार्य ही ज्योतिष के प्रवर्तक हैं तथा इन आचार्यों में कुछ आचार्य तो सिद्धान्त के रचयिता हैं तथा कुछ संहिता तथा सिद्धान्त दोनों के ही रचयिता हैं।

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अध्ययन से पता चलता है कि इस काल के ज्योतिषी हर प्रकार के ज्योतिष व अन्य प्रकार के गणितों के पूर्ण ज्ञाता थे। स्वप्न के फल, अंग फड़कना, शुभकर्मों के मुहूर्त तथा शकुन शास्त्र आदि सभी से परिचित थे।

1.4 सारांश

ज्ञान के क्रमिक विकास की आधारशिला के मजबूत हो जाने के बाद मनुष्य की सम्भावक शक्ति और लेखन शक्ति का विकास अवश्य हुआ होगा। सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही मनुष्य ने ग्रह नक्षत्रों का अध्ययन भी किया रहा होगा। प्राचीन समय में ज्योतिष को भी धर्म माना जाता था। वेद, आरण्यक, ब्राह्मण का, उपनिषद्, द्वादशांग प्रकीर्णक और अन्य धार्मिक रचनाओं तथा परवर्ती साहित्य में भी ज्योतिष शास्त्र के तत्त्व पाये जाते हैं। वैदिक काल में ज्योतिष शास्त्र के तत्त्व पाये जाते है। वैदिक काल के ज्योतिष सिद्धान्त में ऋतु विचार, अयन विचार, वर्ष विचार, युग विचार, ग्रह कक्षा विचार, नक्षत्र विचार, युग विचार, ग्रह कक्षा विचार, नक्षत्र विचार आदि सम्मिलित है। ज्योतिष का वेदान्त के रूप में प्रचलन आदिकाल या पौराणिक काल से ही है। ज्योतिष से संबंधित मन्त्र वेदों में पाये जाते हैं। ऋग्वेद में 36, यजुवेद में 44 तथा अथर्ववेद में कुल मिलाकर 162 से भी अधिक मन्त्रों में ज्योतिषीय चर्चा है। गर्गाचार्य के अनुसार ज्योतिषशास्त्र इस सम्पूर्ण जगत् के शुभ और अशुभ की संभावनाओं को व्यक्त करता है। वसन्त के आरम्भ से वर्ष के आरम्भ होने का संकेत ऋग्वेद में प्राप्त है।

इस प्रकार ज्योतिष का इतिहास इतना दुर्बल नहीं है।
अत: इस इकाई के अध्ययन से आप ज्योतिषशास्त्र के अध्ययन की क्रमिक विकास यात्रा को समझा सकेंगे।

1.6 अभ्यास प्रश्न

सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए

1 नाड़ी का अध्ययन किन वेदान्त में विहित है -
(क) शिक्षा (ख) कल्प
(ग) ज्योतिष (घ) व्याकरण

2 कोड़कोड़ी आह्हा शब्द किस समप्रदाय की मान्यता का है -
(क) बौद्ध (ख) जैन
(ग) भिक्षु (घ) कोई नहीं

3 शास्त्रों की संख्या है -
(क) 4 (ख) 5
(ग) 6 (घ) 9

4 प्रारम्भिक ऋतु कौन है -

(क) शिशिर (ख) हेमन्त

(ग) बसन्त (घ) ग्रीष्म

5 ऋतुओं के संबंध में आख्यान किस ब्राह्मण में मिलते हैं -

(क) गोपथ (ख) शतपथ

(ग) शांखायन (घ) ऐतरेय

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 ग, 2 ख , 3 ग, 4 ग, 5 ख

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 ज्योतिष शास्त्र का इतिहास – पं; सुरेश चन्द्र मिश्र चौरखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2 ज्योतिष शास्त्रों का इतिहास – डॉ; ताराचन्द्र – चौखम्भा प्रकाशन वराणसी

3 संस्कृत शास्त्रों का इतिहास – डॉ; बलदेव उपाध्याय, चौखम्भासुर भारती प्रकाशन, वाराणसी

4 वैदिक संस्कृति का इतिहास – काव्यमाला सिरीज

इकाई 2

फलित ज्योतिष – संज्ञा प्रकरण के अन्तर्गत, नक्षत्र, राशि, वार, योग, करण ग्रहों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 नक्षत्र परिचय
2.4 राशि विचार
2.5 वार विचार
2.6 योग विचार
2.7 करण विचार
2.8 ग्रह परिचय
2.9 सारांश
2.10 शब्दावली
2.11 अभ्यास प्रश्न
2.12 निबंधात्मक प्रश्न
2.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.1 प्रस्तावना

इसके पूर्व की इकाई में आपने ज्योतिष के क्रमिक इतिहास का अध्ययन किया है। इस इकाई के अन्तर्गत आप नक्षत्रों , राशियों, समस्त वारों, योगों, करणों एवं नवग्रहों का परिचयात्मक अध्ययन करते हुए उनके कार्यात्मक स्वरूप का ज्ञान करेंगे।

नक्षत्रों की संख्या 27 मानी गयी है, नक्षत्रों में ही उनके स्वामी देवता आदि होते हैं। नक्षत्रों का समूह राशि कहलाता है। बारह राशियां होती है। इन बारह राशियों के स्वामी ग्रह भी होते हैं। इन ग्रहों की आपसी मैत्री और शत्रुता तथा समभाव भी होते हैं। वार, योग, एवं करण का भी समावेश पंचाग में उतना ही महत्वपूर्ण है। फलस्वरूप ग्रहों का खगोलीय एवं ज्योतिष परिचय प्राप्त हो तो कुण्डली के फलादेश में भी पर्याप्त सहायता मिलती है।

अत: इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप पंचाग संबंधी व्यवस्थाओं से लेकर समस्त आयामों का ज्ञान करा सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

तिथि वारादि, नक्षत्र करण योगादि वर्णन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1 नक्षत्रों का स्वरूपात्मक ज्ञान करा सकेंगे।
2 राशियों का कार्यात्मक स्वरूप जान सकेंगे।
3 योग एवं करण के ज्ञान से परिचित होंगे।
4 ग्रहों का खगोलीय एवं ज्योतिष परिचय बता सकेंगे।
5 ज्योतिष शास्त्र में निर्मित होने वाले पंचाग के प्रमुख विषयों को समझा सकेंगे।

2.3 नक्षत्र परिचय

परिचय - वैदिक ज्योतिष को वेदों का नेत्र माना जाता है तथा इसी क्रम में नक्षत्र फलित अथवा ज्योतिष गणना का आधार स्तम्भ कहे गए हैं। "नक्षत्र न क्षरति, न सरति: इति नक्षत्र:'' अर्थात् जो न चलता है न हिलता है, वही नक्षत्र है। किसी व्यक्ति के जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र में भ्रमण कर रहे होते हैं वही व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कहलाता है। जन्म नक्षत्र के स्वामी ग्रह की दशा ही व्यक्ति की प्रथम महादशा होती है। नक्षत्र चरण में जन्म के अनुसार भुक्त व भोग्य दशा का भी निर्णय होता है।

जन्म नक्षत्र से गणना करने पर नक्षत्रों का विभाजन क्रमश: इस प्रकार होता है -1. जन्म 2. संपत 3. विपत 4. क्षेम 5. प्रत्यरि 6. साधक 7. वध 8. मित्र/मैत्र 9. अतिमित्र।

1. जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर होते हैं वही जन्म नक्षत्र होता है।

2. संपत अर्थात् संपदा देने वाला। जन्म नक्षत्र से दूसरा नक्षत्र संपत नक्षत्र कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो रोहिणी उसका संपत नक्षत्र होगा।

3. विपत - विपत का अर्थ है विपत्ति या कष्ट देने वाला। जन्म नक्षत्र से तीसरा नक्षत्र विपत होता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो मृगशिरा उसका विपत नक्षत्र होगा।

4. क्षेम - क्षेम का अर्थ ठीक-ठाक अथवा मध्यम फलदायी माना जा सकता है। जन्म नक्षत्र से चौथा नक्षत्र क्षेम कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म कृतिका है तो आर्द्रा उसका क्षेम नक्षत्र होगा।

5. प्रत्यरि - प्रत्यरि का अर्थ है शत्रु। जन्म नक्षत्र से पाँचवां नक्षत्र प्रत्यरि नक्षत्र कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो पुनर्वसु उसका प्रत्यरि नक्षत्र होगा।

6. साधक - साधक अर्थात् साधने वाला या सिद्ध करने वाला। जन्म नक्षत्र से छठा नक्षत्र साधक नक्षत्र कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो पुष्य उसका साधक नक्षत्र होगा।

7. वध - वध का अर्थ मृत्यु अथवा मृत्युतुल्य कष्टप्रद। जन्म नक्षत्र से सातवां नक्षत्र वध नक्षत्र कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो आश्लेषा उसका वध क्षत्र होगा।

8. मित्र - मित्र का अर्थ है कष्ट या मुश्किल में साथ देने वाला। व्यक्ति के जन्म नक्षत्र से आठवां नक्षत्र उसका मित्र कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो मघा उसका मित्र नक्षत्र होगा।

9. अतिमित्र - अतिमित्र का अर्थ है मित्र से भी अधिक सहयोग करने वाला। व्यक्ति के जन्म नक्षत्र से नवां नक्षत्र उसका अति मित्र नक्षत्र कहलाता है। यदि व्यक्ति का जन्म नक्षत्र कृतिका है तो पूर्वाफाल्गुनी उसका अतिमित्र नक्षत्र होगा।

इसी क्रम में दसवां नक्षत्र पुन: जन्म नक्षत्र होगा।

किसी व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक होने वाले सोलह संस्कारों में भी नक्षत्रों का विशेष महत्त्व है। सर्वप्रथम व्यक्ति के जन्म नक्षत्र से ही उसका नाम निकाला जाता है। प्रत्येक नक्षत्र में चार चरण होते हैं। एक नक्षत्र का मान 13^0-20’ होता है, अत: $13^0$20’ / 4 =$3^0$20’। अर्थात् प्रत्येक नक्षत्र के एक चरण का मान $3^0$20’ होता है। एक राशि में सवा दो नक्षत्र होते हैं।

उदाहरणार्थ -

1 राशि = 30^0

300 = $13^0$20’ 1 नक्षत्र

= $13^0$20’ दूसरा नक्षत्र

= $03^0$20’ तीसरे नक्षत्र का एक चरण

उपर्युक्त विभाजन मेष, सिंह व धनु राशि में होता है। अन्य राशियों में नक्षत्रों का विभाजन भिन्न होता है। नक्षत्र के एक चरण का मान 30-20’’ होने से 30^0 की एक राशि में कुल मिलाकर नौ चरण पड़ते हैं।

इसे इस सारिणी से समझ सकते हैं -

नामाक्षर

क्र सं.	राशि	नामाक्षर	नक्षत्र एवं चरण

1.	मेष	चू, चे, चो, ला, ली,लू, ले, लो, अ	अश्विनी-4, भरणी-4, कृतिका-1
2.	वृषभ	इ, उ, ए, ओ, वा,वी, वू, वे, वो	कृतिका-3, रोहिणी-4, मृगशिरा-2
3.	मिथुन	क, की, कु, घ, ड़ छ, के, को, ह	मृगशिरा-2, आर्द्रा-4, पुनर्वसु-3
4.	कर्क	ही, हु, हे, हो, डा,डी, डू, डे, डो	पुनर्वसु-1, पुष्य-4, आश्लेषा-4
5.	सिंह	मा, मी, मू, मे, मो टा, टी, टू, टे	मघा-4, पूफा.-4, उफा.-1
6.	कन्या	टो, प, पी, पू, ष,ण, ढ, पे, पो	उफा-3, हस्त-4, चित्रा-2
7.	तुला	रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू, ते	चित्रा-2, स्वाती-4, विशाखा-3
8.	वृश्चिक	तो, ना, नी, नू, ने,नो, या, यी, यू	विशाखा-1, अनुराधा-4, ज्येष्ठा-4
9.	धनु	ये, यो, भ, भी, भू, घ, फ, ढ़, ढे	मूल-4, पूषा.-4, उषा.-1
10.	मकर	भो, जा, जी, खी खू,खे, खो, ग, गी	उषा.-3, श्रवण-4, धनिष्ठा-2
11.	कुंभ	गू, गे, गो, सा,	धनिष्ठा-2, शतभिषा-4, पूभा.-3

		सी,सू, से, सो, दा	
12.	मीन	दी, दू, थ, झ, ञ,दे, दो, चा, ची	पूभा.-1, उभा.-4, रेवती-4

पाया -

जन्म नक्षत्र के आधार पर ही पाया का निर्धारण होता है जिसे हम निम्न सारिणी से समझ सकते हैं-

पाया सारिणी

पाया	नक्षत्र	परिणाम
चाँदी का पाया	आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा,मघा,पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त,चित्रा, स्वाती	चाँदी के पाये में जन्म शुभ माना जाता है
लोहे का पाया	रोहिणी, मृगशिरा	लोहे के पाये में जन्म अशुभ एवं हानिकारकमाना जाता है।
ताँबे का पाया	विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठामूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा	ताँबे के पाये में जन्म शुभ माना जाता है
सोने का पाया	पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, भरणी, कृतिका जाता है	सोने के पाये में जन्म मध्यम शुभ माना

नक्षत्र परिचय -

नक्षत्रों के स्वरूप एवं प्रभाव को जानने के लिए हमें यह देखना होता है कि नक्षत्र के स्वामी ग्रह और स्वामी देवता कौन हैं और नक्षत्र किस राशि में पड़ रहा है? इसी प्रकार नक्षत्र का चिन्ह भी उतना ही महत्त्व रखता है। जन्म नक्षत्र का प्रभाव व्यक्ति की कार्य प्रणाली और कार्य क्षेत्र पर देखा जा सकता है।

1. अश्विनी

अश्विनी नक्षत्र मेष राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह केतु हैं। अत: अश्विनी नक्षत्र में मंगल और केतु का प्रभाव देखने को मिलता है। आकाश में यह नक्षत्र घोड़े के सिर के समान दिखता है। घोड़ा दृढ़ता और ऊर्जा का प्रतीक है। अत: यह सभी गुण अश्विनी नक्षत्र में निहित होते हैं। मंगल का प्रभाव जहाँ नेतृत्व क्षमता देता है वहीं केतुके कारण अधीरता मुख्य गुण हो जाता है। केतु मोक्ष के प्रतीक हैं और आध्यात्म से इन्हें जोड़ा गया है, इसलिए ये धर्म प्रधान नक्षत्र कहा गया है।

अश्विनी नक्षत्र के स्वामी देवता सूर्यपुत्र अश्विनी कुमार हैं, जो देवताओं के चिकित्सक हैं। इसलिए इलाज करने का गुण भी इस नक्षत्र में होता है।

2. भरणी

भरणी नक्षत्र मेष राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह शुक्र हैं। मंगल और शुक्र के सम्मिलित प्रभाव के कारण यह नक्षत्र ऊर्जा और कला का अद्भुत मिश्रण लिए हुए है। यह नक्षत्र योग्यता और उत्तरदायित्व की पूर्णता देता है और यही पूर्णता लक्ष्य प्राप्ति की ओर प्रेरित करती है। यह अर्थ प्रधान नक्षत्र है इसलिए भौतिक सुख-सुविधाओं की प्राप्ति के लिए आवश्यक कौशल यह नक्षत्र देता है। भरणी के स्वामी देवता यम हैं। यम व्यक्ति के कर्म और धर्म के आधार पर ही उसकी योनि का निर्धारण करते हैं इसीलिए भरणी नक्षत्र में अच्छे और बुरे का भेद करने की क्षमता होती है।

3. कृतिका

कृतिका नक्षत्र मेष तथा वृषभ राशि में संयुक्त रूप से पड़ता है। इसके स्वामी ग्रह सूर्य हैं। मंगल, सूर्य व शुक्र के प्रभाव के कारण उच्चकोटि की सृजनशीलता, नेतृत्व क्षमता व साहस इस नक्षत्र में पाया जाता है। कृतिका अर्थात् काटने वाला। नाम के अनुरूप ही यह नक्षत्र आत्म-विश्लेषण की प्रेरणा देता है। जिससे कि अपने स्वभावगत दोषों को काटकर अलग कर दिया जाए और गुणों का विकास किया जाए।

कृतिका नक्षत्र के देवता 'अग्नि' हैं। वह अग्नि जो कि नियंत्रित हो तो भोजन पकाने का कार्य करती है और अनियंत्रित हो जाए तो अपने ताप से जला भी देती है, इसकी तेजस्विता किसी भी कार्य को दक्षता से करने का गुण भी देती है। अत: उपर्युक्त सभी विशेषताएं कृतिका नक्षत्र में पाई जाती हैं। काम प्रधान यह नक्षत्र अत्यधिक इच्छाओं को जन्म भी देता है तथा साथ ही उनको पूरा करने का साहस भी।

4. रोहिणी

रोहिणी नक्षत्र वृषभ राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह शुक्र हैं। चन्द्रमा और शुक्र का सम्मिलित प्रभाव लिए हुए यह नक्षत्र सृजनात्मकता समृद्धि तथा संपन्नता का प्रतीक है। ग्रह मंत्रिमण्डल की रानी के राज्योचित गुण इस नक्षत्र में विद्यमान हैं। चन्द्रमा की कल्पनाशीलता व शुक्र का सृजन मिलकर अनुपम रचना करने की क्षमता भर देते हैं। अत: नित नया सृजन तथा दोनों ही शुभ ग्रहों (शुक्र व चन्द्रमा का) का प्रभाव इस नक्षत्र का विशेष गुण होता है। इसका प्रतीक चिह्न बैलगाड़ी है जो धान्य ले जाती है, अत: ऐश्वर्य व संपन्नता भी इस नक्षत्र को यहीं से प्राप्त होती है। रोहिणी नक्षत्र के स्वामी देवता ब्रह्मा हैं, जिन्होंने इस पृथ्वी का निर्माण या सृजन किया है अत: पूर्णत: यह नक्षत्र सृजन का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। पौराणिक मान्यता है कि रोहिणी चन्द्रमा की प्रिय पत्नी हैं और इस नक्षत्र में आने पर चन्द्रमा अपने कर्त्तव्यों को भूलकर असामान्य व्यवहार करते हैं। इसी कारण इस नक्षत्र में कर्त्तव्यों के प्रति सजगता का भाव देर से उत्पन्न होता है। चन्द्रमा वृषभ राशि में ही उच्च के होते हैं, यह हम ग्रहों के परिचय के अन्तर्गत अध्ययन करेंगे।

5. मृगशिरा

मृगशिरा नक्षत्र वृषभ तथा मिथुन राशि में पड़ता है। इसके स्वामी ग्रह मंगल हैं अत: शुक्र, मंगल तथा बुध का सम्मिलित प्रभाव लिए हुए यह नक्षत्र शिष्टता, कोमलता तथा सुकुमारता का सम्मिश्रण है। मृगशिरा में अन्वेषी व खोजी बुद्धि के साथ ही तर्कशक्ति भी निहित है। शुक्र व बुध के प्रभाव के कारण एक ओर अद्भुत सृजन कला विद्यमान है तो दूसरी ओर मंगल के साहस के कारण विचारों को मूर्त रूप देने की क्षमता भी निहित है। वाणी की विनम्रता जहाँ शुक्र व बुध के प्रभाव को दर्शाती है वहीं इसमें कायरता का पुट नहीं मिलता। मृग की भाँति भटकना और खोज करना इसमें शामिल है। मृगशिरा के स्वामी देवता सोम अर्थात् अमृत हैं इसलिए इस नक्षत्र के माध्यम से देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त होता है।

6. आर्द्रा

आर्द्रा नक्षत्र मिथुन राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह राहु हैं। बुध की उर्वरा शक्ति और राहु के भोग की इच्छा का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में होता है। आर्द्रा का अर्थ नमी से है, यह नमी भावनात्मक शक्ति को समझने में सहायता करती है। दूसरे की भावनाओं को समझने की अद्भुत क्षमता यह नक्षत्र देता है। आर्द्रा नक्षत्र के स्वामी देवता रुद्र हैं। रुद्र का अर्थ विनाश व उसके बाद का परिवर्तन है। अत: इस नक्षत्र में निरंतर प्रयास दृढ़ निश्चय व कठोर परिश्रम देखने को मिलता है।

7. पुनर्वसु

पुनर्वसु नक्षत्र मिथुन व कर्क राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह बृहस्पति हैं। इस प्रकार बुध, बृहस्पति व चन्द्रमा का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में होता है। बुध की बुद्धि, बृहस्पति का आध्यात्म व चन्द्रमा

की कल्पनाशक्ति इस नक्षत्र का महत्त्वपूर्ण बिंदु है। बुध की वाक्-पटुता कल्पना को यथार्थ में बदलने का गुण लिए होती है। इस नक्षत्र के स्वामी देवता माता अदिति हैं। अदिति देवताओं की माता हैं इसलिए इसी प्रभाव के कारण पालन-पोषण व दया भाव इस नक्षत्र के महत्त्वपूर्ण गुण हैं।

8. पुष्य -

पुष्य नक्षत्र कर्क राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह शनि हैं। अत: शनि व चन्द्रमा का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में होता है। कोमल चन्द्रमा के विचारों की निर्मलता तथा चुंबकीय शक्ति व शनिदेव का धैर्य, एकाग्रता, स्थिरता व कठिन श्रम इस नक्षत्र में विशेष रूप से सम्मिलित होते हैं। पुष्य शब्द का अर्थ ही है- पोषण या पालन हार, इसीलिए इस नक्षत्र में भी दया व पोषण की भावना होती है। पुष्य नक्षत्र के स्वामी देवता बृहस्पति हैं। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार भगवान शिव ने बृहस्पति देव को अमृत तुल्य ग्रह का दर्जा दिया था अत: बृहस्पति के गुणों का भी प्रभाव इस नक्षत्र में मिलता है।

विशेष - पुष्य नक्षत्र को नक्षत्रराज कहा जाता है तथा इस नक्षत्र में सभी शुभ कार्य किए जा सकते हैं परंतु यह नक्षत्र विवाह के लिए वर्जित माना गया है।

9. आश्लेषा

आश्लेषा नक्षत्र कर्क राशि में पड़ता है और इसके स्वामी ग्रह बुद्धि के कारक बुध हैं। इस प्रकार इस नक्षत्र पर बुध व चन्द्रमा का सम्मिलित प्रभाव रहता है। कल्पनाशक्ति का बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग इस नक्षत्र में पाया जाता है। बुद्धि और कल्पना का यही प्रयोग तर्क व दर्शन की ओर झुकाव बढ़ाता है। आश्लेषा के स्वामी अहि (अर्थात् नाग) हैं। धर्मग्रन्थों की मान्यतानुसार नाग भगवान विष्णु के समीप रहकर उनकी सेवा करते हैं। इस नक्षत्र के सर्प शक्ति से जुड़ाव के कारण यह रहस्य का परिचायक है अत: पूर्वाभास की शक्ति भी आश्लेषा नक्षत्र में होती है। अत: आसानी ये किसी के प्रति विश्वास की भावना भी इस नक्षत्र में नहीं होती अर्थात् इसमें संदेह की प्रवृत्ति अधिक देखने को मिलती है।

10. मघा

मघा नक्षत्र सिंह राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह केतु हैं। इस प्रकार सूर्य व केतु का संयुक्त प्रभाव इस नक्षत्र में होता है। ग्रहों में राजा माने जाने वाले सूर्यदेव का प्रभाव सत्ता की इच्छा प्रदान करता है तथा मघा का अर्थ भी अधिकार संपन्नता है अत: इस नक्षत्र में अधिकार पाने की इच्छा अधिक होती है। आर्थिक उपलब्धि से अधिक मान-सम्मान पाने की चाह इसमें देखी जा सकती है। मघा नक्षत्र के स्वामी देवता पितृगण हैं। पितृ अर्थात् हमारे वे पूर्वज जो शांत हो चुके हैं इसलिए इस नक्षत्र में परंपराओं व मान्यताओं के प्रति अटूट विश्वास मिलता है। इसके साथ ही राजसी गुणों के कारण अधिकार व सत्ता का गर्व भी इस नक्षत्र में मिलता है।

11. पूर्वाफाल्गुनी

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र सिंह राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह शुक्र हैं। शुक्र और सूर्य का प्रभाव लिए हुए यह नक्षत्र रचनात्मकता तथा प्रभुत्व का सम्मिश्रण है। यह समन्वय कार्यों के प्रति निरन्तर सोच, खोज तथा सृजन को उजागर करता है। शुक्र का प्रभाव व्यक्तियों को अपनी ओर आकर्षित करता है तथा समाज में सौहार्द्र फैलाने का कार्य सूर्यदेव का प्रभाव करता है। इन्द्रिय सुख-भोग तथा कला की ओर रुचि भी इस नक्षत्र में मिलती है।

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र के देवता 'भग' हैं जिसका अर्थ आनंद से लिया जाता है। 'भग' दांपत्य सुख देते हैं। धर्मशास्त्रों के अनुसार भगवान शंकर का विवाह इसी नक्षत्र में हुआ था। इस नक्षत्र में सृजन की अपार क्षमता छिपी हुई होती है तथा सोच-विचार में निरंतरता बनी रहती है। अत: बड़ी खोज व सिद्धान्तों के प्रतिपादन की क्षमता भी इस नक्षत्र में मिलती है।

12. उत्तराफाल्गुनी

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र सिंह तथा कन्या राशि में पड़ता है। इसका प्रथम चरण सिंह राशि तथा अन्य तीन चरण कन्या राशि में पड़ते हैं। इस नक्षत्र के स्वामी ग्रह सूर्य हैं अत: सूर्य व बुध का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में होता हैं। सूर्य आत्मा के कारक हैं तथा बुध बुद्धि के। ज्ञान, दानशीलता व सज्जनता के साथ ही साथ शासक बनने की इच्छा इस नक्षत्र में मिलती है। उच्च महत्वाकांक्षा तथा बाधाओं को राजा के समान चुनौती मानने का गुण इस नक्षत्र में समाहित है।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के स्वामी देवता आर्यमान हैं, जो सरंक्षण के देवता कहे जाते हैं अत: पिता के समान संरक्षण देने का भाव भी इस नक्षत्र की विशेषता है।

13. हस्त

हस्त नक्षत्र कन्या राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह चन्द्रमा हैं। कन्या राशि के स्वामी बुध हैं। अत: बुध व चन्द्रमा का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। बुद्धि व कल्पनाशीलता, बुद्धि की शुद्धता तथा परिपक्वता के साथ ही विपरीत परिस्थिति में धैर्य रखना इस नक्षत्र का मुख्य गुण है। हस्त नक्षत्र के स्वामी देवता सवितृ हैं। सवित्र अर्थात् सूर्य भगवान जो नैसर्गिकता व मौलिकता से परिपूर्ण सृजनात्मकता को मूर्त रूप में बदलने का काम करते हैं। सूर्यदेव आत्मा के कारक हैं, अत: सवित्र की प्रबल आत्मिक शक्ति का प्रभाव भी इस नक्षत्र में मिलता है।

14. चित्रा

चित्रा नक्षत्र कन्या तथा तुला राशि में पड़ता है। चित्रा के प्रथम दो चरण कन्या राशि तथा अंतिम दो चरण तुलाराशि में पड़ते हैं। इसके स्वामी ग्रह मंगल हैं। अत: मंगल, बुध व शुक्र का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र

में देखने को मिलता है। शुक्र की रचनात्मकता, बुध का बुद्धि कौशल तथा मंगल का असाधारण उत्साह, साधारण वस्तुओं की भी असाधारण प्रस्तुति का प्रदर्शन इस नक्षत्र को प्रदान करते हैं। प्रेरणा लेकर कार्य करके आगे बढ़ना इस नक्षत्र के देखने को मिलता है।

इस नक्षत्र के स्वामी देवता त्वष्टा अर्थात् विश्वकर्मा हैं, जो इस ब्रह्माण्ड के स्थपति (आधुनिक परिपेक्ष में आर्किटेक्ट) हैं तथा सुंदर, भव्य और कल्पनातीत भवनों के निर्माता हैं। अत: रचनात्मकता इस नक्षत्र में देखने को मिलती है।

15. स्वाती

स्वाती नक्षत्र तुला राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह राहु हैं। स्वाती नक्षत्र में शुक्र व राहु का सम्मिलित प्रभाव देखने को मिलता है। शुक्र मीठा बोलने वाले तथा राहु कूटनीतिज्ञ हैं। अत: भावनाओं की प्रधानता व उचित समय पर सही क्रिया-प्रतिक्रया देने की विशेषता इस नक्षत्र में देखने को मिलती है। राहु रहस्य हैं तथा शुक्र ज्ञानी, अत: खोजी प्रवृत्ति, जिज्ञासाएँ तथा ज्ञान नवीन विचारों को खुले मन से स्वीकार करना इस नक्षत्र में पाया जाता है।

स्वाती के स्वामी देवता वायु हैं, जो हवा के स्वामी हैं। कार्यों में वायु की तरह साहस दिखाना तथा उत्साही बने रहना इस नक्षत्र में विशेष रूप से पाया जाता है।

16. विशाखा

विशाखा नक्षत्र तुला तथा वृश्चिक राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह बृहस्पति हैं। इसके तीन चरण तुला राशि में तथा अन्य एक चरण वृश्चिक राशि में पड़ता है। अत: इस नक्षत्र पर शुक्र, मंगल तथा बृहस्पति का सम्मिलित प्रभाव पड़ता है। नक्षत्र के स्वामी ग्रह बृहस्पति वाक्कला, मंगल ऊर्जा तथा शुक्र लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रयास देते हैं। योजनाबद्ध काम करने का ढंग, दृढ़-निश्चय तथा आशावादी दृष्टिकोण इस नक्षत्र की मुख्य विशेषताओं में सम्मिलित है।

विशाखा नक्षत्र के स्वामी देवता अग्नि व इन्द्र हैं। अग्नि व इन्द्र कभी लक्ष्य से भटकाते हैं तो कभी लक्ष्य के प्रति अत्यधिक समर्पण का भाव देते हैं।

17. अनुराधा

अनुराधा नक्षत्र वृश्चिक राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह शनिदेव हैं इसलिए इस नक्षत्र में मंगल तथा शनिदेव का सम्मिलित प्रभाव रहता है। इसमें जिज्ञासा, भावनाओं व मर्म को समझना, भूमि से प्रेम करना शामिल हैं। शनिदेव की अपने सिद्धान्तों पर अटल रहने की प्रवृत्ति तथा मंगल का निश्चय इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। अनुराधा नक्षत्र के स्वामी देवता मित्र हैं। इनका पूर्ण प्रभाव अनुराधा नक्षत्र में

देखने को मिलता है। अत: इस नक्षत्र में सभी से मित्र के समान व्यवहार करने की विशेषता देखने को मिलती है।

18. ज्येष्ठा

ज्येष्ठा नक्षत्र वृश्चिक राशि में पड़ता है। इस नक्षत्र के स्वामी ग्रह बुध हैं अत: बुध व मंगल का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र पर होता है। बुध बुद्धिमान हैं तथा मंगल उत्साही अत: बौद्धिक प्रखरता का उत्साह के साथ मिश्रण व क्रियान्वयन इस नक्षत्र की विशेषता है। ज्येष्ठा का शाब्दिक अर्थ है बड़ा अत: इस नक्षत्र में उत्तरदायित्व संभालने की भावना अधिक रहती है तथा मानसिक परिपक्वता भी जल्दी ही आ जाती है। ज्येष्ठा नक्षत्र के स्वामी देवता देव योद्धा इन्द्र हैं। अत: योजनाबद्ध रणनीति इस नक्षत्र की प्रमुख विशेषता बन जाती है पौराणिक कथाओं के अनुसार ज्येष्ठा चन्द्रमा की सबसे बड़ी रणनीति और चन्द्रमा उनकी उपेक्षा करके अत: इस नक्षत्र में उपेक्षा का भाव अधिक रहता है।

19. मूल

मूल नक्षत्र धनु राशि में पड़ता है तथा इस नक्षत्र के स्वामी ग्रह केतु हैं। गुरु तथा केतु का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र पर होता है। मूल का शाब्दिक अर्थ है, जड़ के साथ। इसके साथ ही केतु व गुरु से संबंध होने के कारण आध्यात्म भी इस नक्षत्र मेें देखने को मिलता है। मूल व जड़ होने के कारण विषयों की गहराई भी इस नक्षत्र में देखने को मिलती है। इस नक्षत्र को संस्थापक नक्षत्र (अर्थात् नींव डालने वाला) भी कहा जाता है। केतु का संबंध उच्चाटन से भी है अत: इस नक्षत्र में उच्चाटन तथा सत्यवादिता भी रहती है।

मूल नक्षत्र के स्वामी देवता नैऋति हैं, जो विनाश की देवी मानी जाती हैं। उनके इस प्रभाव के कारण इस नक्षत्र में क्रोध की अधिकता रहती है जिसकी वजह से हिंसा की प्रवृत्ति भी जन्म ले लेती है।

20. पूर्वाषाढ़ा

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र धनु राशि में पड़ता है। इसके स्वामी ग्रह शुक्र हैं। अत: बृहस्पति व शुक्र का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में मिलता है। बृहस्पति देवगुरु हैं तथा शुक्र दैत्य गुरु हैं अत: दो गुरुओं के प्रभाव के कारण इसमें ज्ञान व बुद्धिमत्ता अधिक मिलती है। महत्त्वकांक्षा व जिजीविषा भी इसमें अधिक मिलती है। गुरुओं के प्रभाव का एक अन्य उदाहरण यह होता है कि इस नक्षत्र में बातों व तथ्यों के सार को ग्रहण करने की क्षमता होती है।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के स्वामी देवता आप हैं, जो जल के पर्याय हैं, अत: जल की भाँति स्वच्छता व निर्मलता का भाव भी इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। कभी-कभी अहंकार की भावना भी जाती है।

21. उत्तराषाढ़ा

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र धनु तथा मकर राशि में पड़ता है। इसका अंतिम चरण धनु राशि में तथा अन्य तीन चरण मकर राशि में पड़ते हैं। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के स्वामी ग्रह सूर्य हैं अत: सूर्य, बृहस्पति व शनि का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। सूर्यदेव सकारात्मक सोच रखने वाले, शनिदेव दार्शनिक व परिश्रमी हैं। दार्शनिकता के साथ सकारात्मक सोच से कार्यों का क्रियान्वयन करना इस नक्षत्र का विशेष गुण होता है। सूर्य के प्रभाव के कारण व्यक्तिगत प्रयास की अपेक्षा सामूहिक प्रयास की भावना भी इस नक्षत्र की विशेषताओं में शामिल है। विषम परिस्थितियों पर विजय पाने की कोशिश भी इसमें भली-भाँति देखी जा सकती है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के स्वामी देवता धर्म के दस पुत्र विश्वेदेव हैं तथा वे इस नक्षत्र पर अपना पूर्ण आशीर्वाद रखकर सुख प्रदान करते हैं। सूर्यदेव की दृढ़ता व स्थिरता तथा शनिदेव की आध्यात्मिक एकाग्रता कभी-कभी जिद का रूप भी ले लेती है।

22. श्रवण

श्रवण नक्षत्र मकर राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह चन्द्रमा हैं अत: इस नक्षत्र पर शनि व चन्द्रमा का सम्मिलित प्रभाव होता है। श्रवण शब्द का अर्थ है- सुनना। अत: सुनने के महत्त्व की समझ, गंभीरता व सुनकर सीखने की लालसा इसमें सदैव बनी रहती है। इसके अतिरिक्त इसमें संगीत, कला की ओर आकर्षण भी बना रहता है।

चन्द्रमा की अभिव्यक्ति व शनि की एकाग्रता के कारण ज्ञान का अधिकाधिक विस्तार भी इस नक्षत्र में मिलता है। मुहूर्त शास्त्र के अनुसार इस नक्षत्र में शुरु किया गया कार्य अवश्य पूर्ण होता है।

श्रवण के स्वामी देवता सृष्टि के पालनकर्ता विष्णु हैं अत: इस नक्षत्र में नियंत्रित स्वभाव तथा सजगता का गुण देखने को मिलता है।

23. धनिष्ठा

धनिष्ठा नक्षत्र मकर तथा कुंभ राशि में पड़ता है। इसके दो चरण मकर तथा दो चरण कुंभ राशि में पड़ते हैं। धनिष्ठा नक्षत्र के स्वामी ग्रह मंगल हैं अत: शनि व मंगल का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। शनिदेव की एकाग्रता व मंगल की तीक्ष्णता इस नक्षत्र में देखी जा सकती है।

प्रखर बुद्धि, संवेदनशीलता तथा आत्म विश्वास इस नक्षत्र के मुख्य गुण हैं।

धनिष्ठा नक्षत्र के स्वामी देवता अष्टवसु हैं जो सौरमण्डल की ऊर्जा व प्रकाश के देवता हैं। वसुओं की ऊर्जा व शनिदेव की एकाग्रता मिलकर उच्च महत्वाकांक्षाओं को सही राह पर चलकर पूरा करने का साहस देते हैं, अत: यह धनिष्ठा नक्षत्र की प्रमुख विशेषता बन जाता है।

24. शतभिषा

शतभिषा नक्षत्र कुंभ राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह राहु हैं। शतभिषा नक्षत्र पर राहु व शनि का सम्मिलित प्रभाव रहता है। शतभिषा का शाब्दिक अर्थ है- सौ भिषक अर्थात् सौ शरीर क्रिया विज्ञानी। अत: इस नक्षत्र का संबंध निदान से है। इसलिए न केवल शारीरिक बल्कि हार्दिक व आत्मिक समस्याओं का निदान भी इस नक्षत्र में मुख्य रूप से पाया जाता है। राहु के प्रभाव के कारण बातों को गुप्त रखना इस नक्षत्र में देखा जा सकता है, तथा शनि देव के प्रभाव के कारण शंकालु प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है। अत: सजगता व चौकन्नापन दोनों ही बातें इस नक्षत्र में देखी जा सकती हैं।

इस नक्षत्र के स्वामी देवता समुद्र के स्वामी वरुण हैं इस कारण गंभीरता, धैर्य व गहन अध्ययन इस नक्षत्र की विशेषताओं में सम्मिलित हैं।

25. पूर्वाभाद्रपद

पूर्वा भाद्रपद नक्षत्र कुंभ तथा मीन राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह देवगुरु बृहस्पति हैं। इसी कारण बृहस्पति तथा शनि का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र पर पड़ता है। पूर्वाभाद्रपद का शाब्दिक अर्थ है - पूर्व में भाग्यशाली। देवगुरु का ज्ञान तथा शनिदेव की एकाग्रता व परिश्रमी स्वभाव के कारण किसी का आश्रय न लेना इस नक्षत्र की विशेषता होती है। उर्वर मस्तिष्क, ज्ञान व दार्शनिकता भी इसमें देखने को मिलती है। नए मार्ग खोजकर उन पर चलना व कठोर परिश्रम से कार्यों का पूरा करना भी इस नक्षत्र का गुण है।

इस नक्षत्र के स्वामी देवता अजैकपाद हैं अर्थात् एक पैर वाली बकरी इसी कारण विषम परिस्थितियों में भी सतत् कार्य करना इस नक्षत्र में देखा जा सकता है।

26. उत्तराभाद्रपद

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मीन राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह शनिदेव हैं। इस नक्षत्र पर भी गुरु व शनि का सम्मिलित प्रभाव रहता है। उत्तराभाद्रपद का अर्थ है- बाद में भाग्योदय। शनि व गुरु के मिश्रित प्रभाव के कारण स्वभाव से जल्दीबाजी दूर करके, धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करना है। गुरु के समान सदैव बड़ा सोचना तथा दूसरों के मन के भावों को समझकर उनकी सहायता करना इस नक्षत्र का स्वभाव है।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र के स्वामी देवता अहिर्बुध्न्य हैं जो समुद्र के लाभकारी व शुभ देवता हैं। समुद्र के समान ही अपनी गहराई का अंदाज ने लगने देना इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। इस नक्षत्र को योद्धा नक्षत्र भी कहा जाता है।

27. रेवती

रेवती नक्षत्र मीन राशि में पड़ता है तथा इसके स्वामी ग्रह बुध हैं। इस कारण बुध व बृहस्पति का सम्मिलित प्रभाव इस नक्षत्र में देखने को मिलता है। बुध की बौद्धिक प्रखरता तथा बृहस्पति के ज्ञान के कारण जीवन के उजले पक्ष की ओर देखना इस नक्षत्र का स्वभाव है। परोपकार की भावना, सभ्यता, संस्कृति व आध्यात्म की ओर झुकाव इस नक्षत्र में देखने को मिलता है।

रेवती नक्षत्र के स्वामी देवता पूषण हैं, जिनकी प्रवृत्ति प्रकाश फैलाना है अत: अच्छी सलाह देना तथा दूसरों की समस्याओं को हल करना इस नक्षत्र की विशेषता है।

2.4 राशि विचार

3600 के भचक्र में 12 राशियाँ होती हैं अत: प्रत्येक राशि का मान 300 होता है। राशियों की प्रकृति तथा स्वभाव आदि के आधार पर इनका वर्गीकरण किया गया है।

राशियों को निम्न आधारों पर वर्गीकृत किया गया है - (1) स्वभाव (2) तत्त्व (3) लिंग (4) प्रकृति (5) वर्ण (6) दिशा (7) उदय (8) बल (9) चिन्ह।

(1) स्वभाव - राशियों का स्वभाव तीन प्रकार का माना गया है- चर, स्थिर व द्विस्वभाव। चर का अर्थ है चलायमान, स्थिर का अर्थ है ठहराव तथा द्विस्वभाव का अर्थ है चर व स्थिर का मिश्रण।

चर राशियाँ - मेष, कर्क, तुला व मकर हैं।

स्थिर राशियाँ - वृषभ, सिंह, वृश्चिक व कुंभ हैं।

द्विस्वभाव राशियाँ - मिथुन, कन्या, धनु तथा मीन हैं।

(2) तत्त्व - राशियों को चार तत्वों में विभाजित किया गया है - अग्नि, पृथ्वी, वायु तथा जल।

अग्नि तत्त्व राशियों का प्रमुख गुण ऊर्जा होता है। अग्नि तत्त्व राशियाँ - मेष, सिंह तथा धनु हैं।

पृथ्वी तत्त्व राशियों का मुख्य गुण पृथ्वी के समान सहनशीलता और रचनात्मकता हैं। पृथ्वी तत्त्व राशियाँ - वृषभ, कन्या तथा मकर हैं।

वायु तत्त्व राशियों का मुख्य गुण चंचलता और किसी भी परिस्थिति में सामंजस्य स्थापित करना है। वायु तत्त्व राशियाँ - मिथुन, तुला तथा कुंभ हैं।

जल तत्त्व राशियों का मुख्य स्वभाव कोमलता और विपरीत परिस्थिति में विनाशकारी रूप धारण कर लेना है। जल तत्त्व राशियाँ - कर्क, वृश्चिक तथा मीन हैं।

(3) लिंग - राशियाँ पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग दो भागों में बंटी हैं। पुल्लिंग राशियों में पुरुष के समान गुण पाए जाएंगे तथा स्त्रीलिंग राशियों में स्त्री के समान गुण पाएं जाएंगे।

पुल्लिंग राशियाँ मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु तथा कुंभ हैं अर्थात् सभी विषम संख्यक राशियाँ पुल्लिंग हैं तथा सम संख्यक राशियाँ वृषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर तथा मीन स्त्रीलिंग हैं। स्त्रीलिंग राशियों में स्त्रियों के समान गुण पाए जाते हैं।

(4) प्रकृति- राशियों को प्रकृति के आधार पर पित्त, वायु, मिश्रित और कफ चार वर्गों में बाँटा गया है।

पित्त राशियों में पित्त का आधिक्य होता है तथा सभी अग्नि तत्त्व राशियाँ पित्त प्रकृति की होती हैं अर्थात् मेष, सिंह तथा धनु।

वायु तत्त्व राशियों में वायु का आधिक्य होता है और सभी पृथ्वी तत्त्व राशियाँ अर्थात् वृषभ, कन्या, मकर वायु तत्त्व की हैं।

मिश्रित राशियों में पित्त, वायु व कफ तीनों का मिला-जुला प्रभाव होता है और सभी वायु तत्त्व राशियाँ मिश्रित प्रकृति की होती हैं अर्थात् मिथुन, तुला व कुंभ मिश्रित प्रकृति की हैं।

कफ प्रकृति की राशियों में कफ की प्रधानता होती है और सभी जल तत्त्व राशियाँ कफ प्रकृति की होती हैं अर्थात् कर्क, वृश्चिक व मीन कफ प्रकृति की हैं।

(5) वर्ण - राशियों को वर्ण के आधार पर चार वर्गों में बाँटा गया है- क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और ब्राह्मण।

क्षत्रिय राशियों का प्रमुख गुण शौर्य होता है और सभी अग्नि तत्त्व राशियाँ क्षत्रिय वर्ण की होती हैं।

वैश्य राशियों का प्रमुख गुण वणिक (बनिया) बुद्धि है और सभी पृथ्वी तत्त्व राशियाँ वैश्य वर्ण की मानी गई हैं।

शूद्र राशियों का प्रमुख गुण हस्त कला कौशल है और सभी वायु तत्त्व राशियाँ शूद्र वर्ण की हैं।

ब्राह्मण वर्ण की राशियों में बुद्धि कौशल प्रमुख होता है और सभी जल तत्त्व राशियाँ ब्राह्मण वर्ण की मानी जाती हैं।

(6) दिशा -

सभी अग्नि तत्त्व राशियों की दिशा पूर्व है।

सभी पृथ्वी तत्त्व राशियों की दिशा दक्षिण है।

सभी वायु तत्त्व राशियों की दिशा पश्चिम है।

सभी जल तत्त्व राशियों की दिशा उत्तर है।

(7) उदय - जो राशियाँ अग्र भाग से उदय होती हैं उन्हें शीर्षोदय कहा जाता है। सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुंभ शीर्षोदय राशियाँ हैं। जो राशियाँ पृष्ठ भाग से उदय होती हैं उन्हें पृष्ठोदय राशि कहा जाता है। मेष, वृषभ, कर्क, धनु व मकर पृष्ठोदय राशियाँ मानी जाती हैं। जो राशियाँ दोनों भागों में उदय होती हैं उन्हें उभयोदय कहा जाता है। मिथुन और मीन उभयोदय राशियाँ हैं। शीर्षोदय राशियों की विशेषता है कि वे दशा के प्रारंभ में फल देती हैं, पृष्ठोदय अंत में फल देती हैं तथा उभयोदय मध्य में फल देती हैं।

(8) बल - कुछ राशियों को दिन में तथा कुछ राशियों को रात्रि में बल मिलता है। दिन में बली होने वाली राशियाँ हैं - सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ व मीन। रात्रि में बली होने वाली राशियाँ - मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, धनु व मकर हैं।

(8) चिन्ह - प्रत्येक राशि का एक विशिष्ट चिन्ह है जो उस राशि के स्वभाव को प्रदर्शित करता है। इसका विस्तृत वर्णन राशि परिचय में किया जाएगा।

मेष राशि

राशि चक्र की प्रथम राशि मेष है। यह 'अग्नि तत्त्व' राशि है। अग्नि की ऊर्जा मेष राशि वालों में स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है।

मेष राशि वाले व्यक्तियों के लक्ष्य स्पष्ट निर्धारित होते हैं तथा अदम्य साहस एवं उत्साह से अपने लक्ष्यों को पाने के लिए आगे बढ़ते हैं। चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करते हैं।

मेष राशि के व्यक्तियों में अग्नि रूपी वह ईंधन होता है जो इन्हें (करो या मरो) इस पार या उस पार के सिद्धांत पर चलाता है परन्तु जो अग्नि खाना पकाती है, वही अनियंत्रित होकर जला भी देती है। मेष स्वभावत: 'चर' राशि है अर्थात् चलायमान कार्य परन्तु स्थायित्व की कमी। इस राशि के व्यक्ति हर क्षेत्र में कार्य के तत्काल परिणाम की अपेक्षा करते हैं, परिणाम तुरन्त न मिलने पर झुंझलाहट व क्रोध प्रदर्शित कर कार्य को बीच में छोड़ने की प्रवृत्ति रखते हैं।

इसके स्वामी ग्रहों के सेनापति मंगल हैं। मंगलदेव साहस का पर्याय हैं। अत: मेष राशि वाले व्यक्ति क्रियान्वयन को ही पसन्द करते हैं, बैठे रहना उनके स्वभाव में नहीं होता। उच्चकोटि की नेतृत्व शक्ति व स्वभाव में सेनापति के गुण होते हैं। सेनापति की ही भांति थकावट या हार स्वीकार नहीं करते अपितु परिस्थितियों से पूर्ण क्षमता से लड़कर जीवन में आने वाली कठिनाइयों एवं बाधाओं का सामना कर विजयी होने का गुण लिए होते हैं। इनकी मुख्य सोच 'जीत' होती है- उसके लिए कौनसा रास्ता चुना जाए, कौन सी नीति अपनायी जाए- यह सोच निरन्तर रहती है। किसी की प्रतीक्षा में रहना या सहारा लेना कम पसन्द करते हैं।

इनकी जिजीविषा एवं कर्मठता इन्हें उन परिस्थितियों में भी दृढ़ रखती है, जिनमें अन्य व्यक्ति आसानी से हार मान लेते हैं।

इस राशि का चिह्न मेढ़ा है जो दृढ़ निश्चयी व लड़ाकू जीव है। (आक्रमण करने से पूर्व) क्रोधी 'मेढ़ा' अपने शत्रु की शक्ति का आकलन नहीं करता व न ही परवाह करता है। इसी स्वभाव से प्रभावित मेष राशि के व्यक्ति भी त्वरित निर्णय लेते हैं और दृढ़ निश्चय के साथ युद्ध क्षेत्र में उतर जाते हैं, चाहे परिणाम कुछ भी हो। यह राशि शरीर में सिर एवं मस्तिष्क का प्रतिनिधित्व करती है।

यह एक पुरुष राशि है। मेष राशि के व्यक्ति भावना प्रधान न होकर यथार्थवादी दृष्टिकोण अधिक रखते हैं।

वृषभ राशि

राशि चक्र की दूसरी राशि वृषभ है। यह पृथ्वी तत्त्व राशि है। पृथ्वी के गुणों धैर्य, सहनशीलता एवं उत्पादकता का इस राशि के व्यक्तियों में समावेश होता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में आपा न खोना, सोच-विचार कर कदम उठाना इनकी मुख्य विशेषता होती है। नए विचारों को जन्म देना व उनके क्रियान्वयन में मस्तिष्क की पूरी ऊर्जा का यह करते हैं।

इस राशि के व्यक्ति उत्कृष्ट कार्य क्षमता वाले होते हैं। इनकी कार्यशैली नीतिगत होती है। नीतियों को धुरी बनाकर उन्हीं पर पूर्ण समझ बूझ से घूमना, पृथ्वी की भांति इनका स्वभाव होता है। पृथ्वी का सा धैर्य भी इनमें कूट-कूट कर भरा होता है परन्तु जब पृथ्वी धैर्य खोती है तो भूकंप भी आता है, ठीक इसी भांति जब ये क्रोधित होते हैं तो इनके क्रोध को रोक पाना कठिन होता है।

यह एक 'स्थिर' राशि है। वृषभ राशि के व्यक्तियों के स्वभाव की स्थिरता एवं स्थायित्व इन्हें विश्वसनीय बनाता है। यह 'हवाई किले' नहीं बनाते अपितु यथार्थ के धरातल पर विश्वासपूर्वक चलते हैं।

इस राशि के स्वामी दैत्य गुरु, सौंदर्य प्रिय शुक्र हैं। 'शुक्र' का अंग्रेजी नाम Venus है। ग्रीक पौराणिक मान्यताओं के अनुसार Venus सौंदर्य की देवी हैं। वृषभ राशि के व्यक्ति सौंदर्य से गहराई से जुड़े होते हैं तथा (शुक्र की भांति) भोग-विलास एवं ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीना चाहते हैं। समस्त देवताओं में से केवल शुक्र को संजीवनी विद्या का ज्ञान था। शुक्र के इसी प्रभाव के कारण वृषभ राशि के व्यक्ति निराश लोगों को भी आशा से भरने वाले होते हैं। शुक्र को मायावी विद्या का ज्ञाता माना जाता है और वृषभ राशि के लोग आगे बढ़ने के लिए आधुनिक तकनीकी और भौतिक संसाधनों का भरपूर उपयोग करते हैं।

इनके मस्तिष्क की उर्वरता शुक्र के सौंदर्य के साथ मिलकर अद्वितीय परिणाम लाने वाली होती है परन्तु यह अपने कार्यों की प्रशंसा हर कदम पर चाहते हैं।

यह स्त्री राशि है- इस राशि के व्यक्ति कोमल स्वभाव के व भावुक होते हैं। स्त्री के कोमल भाव व शुक्र का सौंदर्य इन्हें कल्पनाशील, सहृदय कवि, लेखक अथवा गीत-संगीत प्रेमी बनाता है। नृत्य आदि ललित कलाओं के प्रति इनका झुकाव सदैव रहता है।

वृषभ राशि का चिह्न 'बैल' है। कोल्हू के बैल की सी क्रियाशीलता इनमें सदैव रहती है। 'लगातार काम करना व कभी न थकना के सिद्धांत के प्रतिपालक' होते हैं। इनके कंधों पर जिम्मेदारियों का बोझ हमेशा दिखाई देता है जिसे यह सहर्ष स्वीकार करके, पूरा भी करते हैं परन्तु 'बैल' का अड़ियलपन भी इनके स्वभाव में कभी-कभी आ जाता है। इनसे जबर्दस्ती कोई कार्य नहीं कराया जा सकता, अपनी इच्छा से यह अपना सर्वस्व भी लुटा देते हैं। वृषभ राशि शरीर में मुख का प्रतिनिधित्व करती है। वृषभ राशि के व्यक्तियों को अपनी असीम शक्तियों को पहचानने का प्रयास करना चाहिए।

मिथुन राशि

राशि चक्र की तीसरी राशि 'मिथुन' है। यह वायु तत्त्व राशि है। वायु चंचल स्वभाव की, सर्वव्यापक एवं उच्छृंखल होती है। ठीक इसी प्रकार मिथुन राशि के व्यक्तियों का स्वभाव देखा जाता है। यह एक जगह न टिकने वाले व समस्त क्षेत्रों में पाँव पसारने वाले होते हैं।

इनकी सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता अद्‍भुत होती है, यह या तो वातावरण को अपने अनुसार ढाल लेते हैं या फिर स्वयं ही वातावरण के अनुसार ढल जाते हैं।

जिस प्रकार 'वायु' कभी तो मन्द पवन है जो मन को आनन्दित करती है और कभी वही वायु प्रचंड वेग से आने वाली आँधी है। ऐसे ही मिथुन राशि के व्यक्ति भी दोहरा स्वभाव लिए होते हैं क्योंकि यह एक 'द्विस्वभाव' राशि है। इस राशि के व्यक्ति कभी कोमल सुकुमार भावनाएं लिए व कभी कठोर रूखा व्यवहार करते हैं।

इस राशि के स्वामी ग्रहों में बाल 'राजकुमार' कहे जाने वाले बुद्धिमान, गणितज्ञ, वाकपटु, रचनात्मक, शिल्पी, मार्केटिंग कला में निपुण व साहित्यकार बुध है।

मिथुन राशि के व्यक्तियों में बुध का प्रभाव अत्यधिक देखा जाता है। अपने बुद्धि चातुर्य और वाक् पटुता से बड़े से बड़े कार्य को आसानी से बना लेना इनकी आदत होती है। इनकी Grasping Power बहुत अच्छी होती है। इसलिए अधिकतर व्यक्तियों के द्वारा हौवा माना जाने वाला कठिन विषय गणित भी इन्हें 'सरल; ही लगता है। विषय की गहराई जितनी अधिक होती है, उतने ही यह उसकी ओर अधिक आकर्षित होते हैं, इसलिए ज्योतिष आदि विषयों की ओर इनका विशेष झुकाव रहता है। इनकी हाजिर जवाबी बेमिसाल होती है। बुध ग्रह को बचपन और यौवन दोनों से जोड़ा जाता है। अत: मिथुन राशि के व्यक्तियों में एक ओर जहाँ हर विषय के प्रति बाल सुलभ जिज्ञासा रहती है वहीं दूसरी ओर युवा की तरह सारे संसार को मुट्‍ठी में बंद करना चाहते हैं।

बालक बुध अपने प्रियजनों का ध्यान केवल अपनी ओर आकर्षित करना चाहते हैं और ऐसा न होने की स्थिति में चंचल बालक की भाँति बिगड़ जाते हैं। बुध बुद्धिमान हैं, योजनाएं बनाते हैं, उनका क्रियान्वयन भी बौद्धिक स्तर पर कर लेते हैं किंतु शारीरिक श्रम की बात की जाने पर अपना राजसी स्वभाव नहीं छोड़ सकते अर्थात्‌ शारीरिक श्रम इनके कार्यक्षेत्र का हिस्सा नहीं बन पाता।

मिथुन राशि का चिह्न स्त्री-पुरुष का जोड़ा है। स्त्री के हाथ में वीणा है और पुरुष के हाथ में गदा है। वीणा और गदा दोनों एक-दूसरे के स्वभाव के विपरीत होते हैं।

वीणा जहॉं अपनी तारों की मधुर तानों के कोमल स्वर से मन-मस्तिष्क को शान्ति प्रदान करती है, वहीं गदा कठोरता का भाव लिए मानों युद्ध को ललकारती है। इसी तरह इस राशि के व्यक्ति कोमल, भावुक, रचनात्मकता लिए हुए सुंदर प्रतिमाएं बनाने वाले शिल्पकार हैं और दूसरी ओर आधुनिक प्रतियोगिता के युग में अपनी Marketing प्रतिभा से दृढ़ गदा की भांति कुछ भी विक्रय कर विजय हासिल करते हैं।

लेखन कार्य और साहित्य भी बुध के ही विषय हैं। मिथुन राशि के व्यक्तियों का झुकाव साहित्य की ओर होता है। लेखकों की जन्मपत्रिका में बुध की स्थिति बलवान होती है। बुध बहुत अच्छा Sense of Humour हैं। इन इनका Sense of Humour इनकी वाक्‌पटुता के साथ मिलता है तो उच्चकोटि का व्यंग्य तैयार होता है। इनके मजाक आसानी से हर किसी की समझ में नहीं आते और लोग इनसे नाराज हो जाते हैं।

मिथुन राशि के व्यक्तियों को अधिक सफलता के लिए अपने दृष्टिकोण को विस्तृत करना चाहिए।

कर्क राशि

राशि चक्र की चतुर्थ राशि कर्क है। यह जल तत्त्व राशि है। जल के गुणों निर्मलता, सौम्यता और लगातार बहते रहना या चलते रहना इस राशि के व्यक्तियों की विशिष्ट पहचान होती है। जल प्राणीमात्र के जीवनदायी है, आसन्न संकट से उबार लेना व जीवनी शक्ति बनकर मदद के लिए आ जाना ही इस राशि के व्यक्तियों का स्वभाव होता है और परोपकार के लिए जीन इनका उद्‌देश्य। यदि जल के प्रवाह को रोक दिया जाए तब भी बड़ी से बड़ी दीवार को गिराकर अपने लिए मार्ग खोज ही लेता है और बाँधों (Dams) के रूप में रुका हुआ यही जल विद्युत उत्पादन करता है। ठीक इसी तरह 'कर्क' राशि के व्यक्ति मुसीबत आने से पूर्व सक्रिय नहीं होते परंतु यदि ये कुछ करने की ठान लें तो इन्हें रोकना लगभग असम्भव है। भारत के अधिकांश प्रधानमंत्री व विशिष्ट व्यक्ति इसी राशि से किसी न किसी रूप में प्रभावित थे व हैं।

यह एक 'चर' राशि है। इसके स्वामी ग्रहों में रानी माने जाने वाले चन्द्रमा हैं। चन्द्रमा माता हैं इसलिए इस राशि के व्यक्तियों में दूसरों के प्रति कोमल भावनाएं सदैव रहती हैं व इनका Caring attitude होता है, जिनसे ये स्नेह करते हैं उनकी सुरक्षा अपनी जिम्मेदारी मान लेते हैं। उन पर कोई आँच इन्हें बर्दाश्त नहीं

होती। यह बहुत भावुक होते हैं, दूसरों को कष्ट में देखकर स्वयं को उस तराजू में तोलते हैं, इसलिए दूसरों के दर्द को अधिक समझते हैं परन्तु एक माँ की भांति यह भी कई बार केवल भावनाओं के वशीभूत होकर गलत निर्णय भी ले लेते हैं। साथ ही ये व्यक्ति जिनसे जुड़े होते हैं उन्हीं की बात मानना व सुनना पसंद करते हैं इसलिए इनके निर्णय कभी एकतरफा भी हो जाते हैं। इस राशि का चिह्न केकड़ा है। कर्क राशि के व्यक्तियों को जल के स्रोतों के निकट बहुत सुकून मिलता है। जल से संबंधित व्यापार या उत्पादनों से इन्हें लाभ होता है। हृदय की आकृति केकड़े के समान होती है। शरीर में कर्क राशि हृदय का प्रतिनिधित्व करती है।

इस राशि में पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा नक्षत्र सम्मिलित होते हैं। इसलिए कर्क राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी गुरु, शनि और बुध की महादशाएं अवश्य आती हैं। 'पुष्य नक्षत्र' के मुहूर्त कर्क राशि में पड़ते हैं, इसलिए बहुत शक्तिशाली होते हैं।

सिंह राशि

राशि चक्र की पांचवी राशि सिंह हैं। यह अग्नि तत्त्व राशि है। इस राशि के व्यक्तियों के विचारों और कार्यशैली में स्पष्ट रूप से इस अग्नि की झलक देखने को मिलती है। यह अत्यधिक महत्वाकांक्षी होते हैं और महत्वाकांक्षा की पूर्त्ति के लिए किसी भी हद तक जाकर कार्य करते हैं, कार्य को करने के लिए यही अग्नि तत्त्व इन्हें ऊर्जा प्रदान करता है, अर्थात यह ऊर्जावान होते हैं।

यह एक स्थिर राशि है इसलिए इनका स्वभाव स्थिरता लिए होता है, अत: किसी कार्य से अंत तक उसी तीव्रता से जुड़े रहना पसंद करते हैं जिस तीव्रता से कार्य को आरंभ किया था। इनके मन में एक दृढ़ भावना रहती है कि जो कार्य कर रहे हैं उसमें सफलता अवश्य ही मिलेगी। वादा-खिलाफी इन्हें पसंद नहीं होती। यह जो बात कहते हैं उस पर स्थिर रहते हैं और अन्य व्यक्तियों से भी यही अपेक्षा रखते हैं। यदि अपेक्षित व्यवहार न मिले तो राशि की अग्नि इनकी जिह्वा पर भी आ जाती है, यह कटु से कटु वचन बोलने से भी नहीं चूकते, चाहे इनको इस बात भी कितनी ही बड़ी कीमत क्यों न चुकानी पड़े।

इस राशि के स्वामी ग्रहों के राजा सूर्य हैं। साथ ही इस राशि का चिह्न वनराज सिंह है।

राजा के समान साहसी, अपना प्रभुत्व जमाने वाले, दृढ़ निश्चयी और स्वतन्त्र प्रवृत्ति के होते हैं। अपने आत्मविश्वास के यह कारण किंतु परन्तु जैसे शब्दों को नापसंद करते हैं।

जैसे सूर्य सभी ग्रहों की रोशनी देते हैं, उसी तरह यह भी दयालु होते हैं और जहॉ तक हो सके लोगों की सहायता करने से पीछे नहीं हटते। यह धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों के होते हैं। यह अपनी परम्पराओं से बहुत अधिक जुड़े होते हैं और अपनी आसानी से न बदलने की आदत के कारण रूढ़िवादी रुख अपना लेते हैं।

सिंह राशि के व्यक्ति राजसी गुण लिए होते हैं, ऐशो-आराम से युक्त जीवन जीना पंसद करते हैं। सिंहासन पर बैठकर नीतियां बनाना और लोगों से उनका पालन कराना, शारीरिक श्रम लेना यह बखूबी जानते हैं। मानसिक व प्रशासनिक कार्य इनके प्रिय विषय हैं।

यह कड़वा सच है कि सिंह राशि के जो गुण हैं यदि वे थोड़े भी अनियन्त्रित हो जाएं तो बहुत बड़े दुर्गुण के रुप में उभरते हैं। सिंह राशि में राजसी गुणों का आधिक्य होने से सुख उपभोग की इच्छा बलवती होती है। अपनी सत्ता में कमी आते रेखकर यह लोग कई बार हिंसक हो उठते हैं। इन्हें छोटे दर्जे का कार्य पसन्द नहीं आता। शालीनता व आज्ञाकारिता इन्हें पसंद नहीं आती है व अवज्ञा को ये क्षमा नहीं करते।

ये व्यक्ति जिनसे जुड़े होते हैं, उन पर अपना एकाधिकार समझते हैं, जो ईर्ष्या की हद तक होता है उस स्थिति में यह उसको पाने के लिए साम, दाम, दण्ड, भेद सभी अपना लेते हैं।

सिंह राशि शरीर में उदर पेट और कुक्षि (कांख) का प्रतिनिधित्व करती है। इस राशि में मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनील नक्षत्र सम्मिलित होते हैं। इसलिए सिंह राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामीग्रहों केतु, शुक्र और सूर्य की महादशाएं अवश्य आती हैं।

सिंह राशि के व्यक्तियों के गुणों एवं अवगुणों के बीच एक महीन विभाजन रेखा है अत: इस राशि के व्यक्तियों को इस विभाजन रेखा में गुणों की ओर ही रहने का प्रयास करना चाहिए।

कन्या राशि

राशि चक्र की छठी राशि कन्या है। यह पृथ्वी तत्त्व राशि है। जिस प्रकार पृथ्वी में सबको धारण करने व उत्पादन की क्षमता है, ठीक इसी प्रकार कन्या राशि के व्यक्ति रचनात्मक व धैर्यवान होते हैं। पृथ्वी सभी जीव-जन्तुओं को धारण करती है, जब इसे जोता जाता है तब यह 'शस्य श्यामला' अर्थात्ं धान्य आदि से परिपूर्ण हो जाती है। कन्या राशि के व्यक्ति भी अपनी सभी जिम्मेदारियों को बहुत कुशलतापूर्वक निभाते हैं, चाहे इन्हें श्रेय मिले या न मिले। पृथ्वी यथार्थ का भी प्रतीक है। कन्या राशि के व्यक्ति दूसरों के दर्द को बहुत गहराई से समझकर उसको दूर करने का प्रयास करते हैं, परन्तु जब इनकी बारी आती है तो पृथ्वी की ही भांति अपने दर्द को छुपाकर रखते हैं। दर्द की शिकायत करना इनके स्वभाव में आसानी से नहीं आ पाता। इस दर्द को समझना इनको एक अच्छा मनोवैज्ञानिक सिद्ध करता है।

धान्य और धातुओं को उगलने वाली पृथ्वी अपने भीतर सालों तक लावे को समेट कर रखती है और एक दिन अचानक न सह पाने के कारण 'ज्वालामुखी' के रूप में फट पड़ती है, ऐसे ही इस राशि के व्यक्तियों का स्वभाव होता है। यह कष्टां और अन्याय चुपचाप सहते हैं और अचानक एक दिन विद्रोह कर देते हैं, उस विद्रोह में कौन जलेगा, कौन नहीं, यह सोचना उनके विचार का हिस्सा नहीं बन पाता।

यह द्विस्वभाव राशि है। यह स्वभाव कन्या राशि के व्यक्तियों में भी देखने को मिलता है। कभी तो यह बहुत ही भावुक हो जाते हैं और दूसरे ही पल कठोर हृदय बन जाते हैं। 'पल में तोला पल में माशा' की इनकी प्रवृत्ति होती है परन्तु वास्तव में जरूरत मंद व्यक्ति सदैव इनका स्नेह पात्र रहता है।

कन्या राशि के स्वामी ग्रहों में 'राजकुमार' कहे जाने वाले कोमल, सुकुमार, बुद्धिमान, गणितज्ञ, वाक्‍पटु, रचनात्मक, शिल्पी, मार्केटिंग कला में निपुण व साहित्यकार बुध हैं। बुध के यही गुण कन्या राशि के व्यक्तियों में होते हैं। इनकी वाक्‍पटुता इन्हें तार्किक भी बनाती है, यह बातों को तर्कपूर्ण तथ्य के रूप में प्रस्तुत कर विजय हासिल करते हैं। इनकी विश्लेषण शक्ति अद्‍भुत होती है और किसी भी विषय का गहराई से अध्ययन कर उस पर विस्तृत टिप्पणी करने वाले होते हैं। इनका उर्वर मस्तिष्क नित नए विचारों को जन्म देकर उन्हें मूर्त रूप देने में सक्षम होता है।

यह व्यक्ति अपने बुद्धि बल से एक अच्छे कार्यकर्ता तो हो सकते हैं परन्तु नेतृत्व शक्ति का इनमें कभी-कभी अभाव होता है।

इस राशि का चिह्न 'कुंवारी कन्या' है। कन्या की सुकोमलता इनके व्यवहार में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। यही कोमलता इन्हें दूसरों के प्रति ममतावान बनाती है।

इस राशि के व्यक्तियों की कोमलता कभी-कभी नकारात्मक रूप में प्रकट होती है। किन्हीं क्षणों में यह एक संस्कारित एवं दृढ़ आत्म विश्वासी होते हैं व किन्हीं क्षणों में इनका स्वयं पर से ही विश्वास उठने लगता है और यह हताश हो जाते हैं। कन्या राशि के व्यक्ति अत्यधिक सफाई पसंद होते हैं। व्यक्तिगत स्वास्थ्य और सौंदर्य के प्रति ये संवेदनशील होते हैं। इस राशि में हस्त, चित्रा और स्वाती नक्षत्र सम्मिलित होते हैं। इसलिए कन्या राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी ग्रहों चन्द्रमा, मंगल एवं राहु की महादशाएं अवश्य आती हैं। कन्या राशि शरीर में 'कमर' का प्रतिनिधित्व करती है।

कन्या राशि के व्यक्तियों को अपने व्यक्तित्व के नकारात्मक पहलू को छोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

तुला राशि

राशि चक्र की सातवीं राशि तुला है। यह एक वायु तत्त्व राशि है। वह वायु जो प्राणदायी है व तपते हुए रेगिस्तान में पेड़ के नीचे बैठे यात्री के लिए मन्द पवन है, जिसमें वह राहत की साँस लेता है और चाहता है कि यह वायु यूँ ही बहती रहे। तुला राशि के व्यक्ति भी इसी पवन की भांति सामाजिक, सबका भला करने व सोचने वाले होते हैं। एक बार इनसे मिलने पर व्यक्ति पुन: इनका साथ पाना चाहता है, अर्थात् इस राशि के व्यक्तियों का साथ छोड़ना कठिन होता है। वायु स्वभाव से निर्भीक होती है और इसे बाँधना या रोक पाना संभव नहीं होता, इसी भांति तुला राशि के व्यक्ति भी निर्भीक होते हैं, इन्हें इनके कार्यों से रोकना व बाँध सकना लगभग असंभव है। वायु समानता का भाव लिए सभी के लिए जीवनदायी है, अत: इस राशि के व्यक्ति भी सभी के साथ एक सा संतुलित व्यवहार रखते हैं, सत्य वक्ता होते हैं। सत्य

बोलते समय हवा की निर्भीकता इनकी बातों से प्रकट होती है। बिना परिणाम की परवाह किए सत्य बोल देते हैं।

ज्योतिष में तुला की संज्ञा चर राशि भी है। 'चर' अर्थात्ः चलना या क्रियाशीलता। ऐसे ही तुला राशि के व्यक्ति सतत् क्रियाशील होते हैं लगातार कार्य करना इनका विशेष गुण होता है। इनकी क्रियाशीलता इनके मस्तिष्क को अधिक प्रभावित करती है, तेज गति से निर्णय लेने के कारण इनकी निर्णय प्रक्रिया में दोष रह जाते हैं।

इस राशि के स्वामी दैत्यगुरु, सौंदर्य प्रिय, कला-प्रवीण और शिष्ट शुक्र हैं। तुला राशि के व्यक्तियों का प्रत्येक व्यवहार कलात्मकता लिए प्रतीत होता है। शुक्र समस्त शास्त्रों के ज्ञाता हैं। इस राशि के व्यक्ति भी शुक्र के गुणों युक्त अर्थात्ः दार्शनिक, नीति शास्त्र ज्ञाता, धार्मिक सुधारवादी एवं वायु संबंधी विज्ञान के भी ज्ञाता हो सकते हैं। शुक्र सौंदर्य प्रेमी एवं कला प्रवीण हैं। इस राशि के व्यक्तियों में सौंदर्य के प्रति आकर्षण, गीत-संगीत, नृत्य कला आदि की ओर विशेष झुकाव रहता है। अच्छे वक्ता एवं कवि होते हैं। स्वयं को व्यक्त करने के लिए भी कई बार काव्यमयी भाषा का प्रयोग करते हैं। इनका सौंदर्य के प्रति आकर्षण इन्हें प्रकृति की ओर खींच ले जाता है अर्थात्ः यह प्रकृति के बहुत करीब होते हैं। प्रकृति की सी कोमलता व शीतलता इनके स्वभाव में स्पष्टत: अनुभव की जा सकती है।

संबंधों व रिश्तों को बनाए रखना इनकी विशिष्टता होती है। उनको बचाए रखने के लिए यह कई बार यह मिथ्यारोप भी सह लेते हैं तथा व्यवहार मे बहुत सरल होते हैं। शुक्र ऐश्वर्य प्रिय हैं।

इस राशि का चिह्नः तराजू है। तराजू अर्थात्ः संतुलन। जीवन के हर क्षेत्र में संतुलन बनाना तुला राशि के व्यक्तियों के स्वभाव का मुख्य गुण है। तुला की ही भांति दोनों पलड़ों को बराबर रखना अर्थात्ः प्रत्येक दृष्टिःकोण से सोच समझकर कार्य के परिणाम का अच्छा-बुरा तोलकर ही कार्य को करते हैं, अत: यह निष्पक्ष न्यायकर्ता होते हैं, न केवल कार्यस्थल पर अपितु निजी संबंधों में भी यह अद्ःभुत संतुलन का परिचय देते हैं। यह विलक्षण प्रतिभा के धनी होते हैं इसलिए तथ्यों को समझने की क्षमता भी अद्भुत रखते हैं। यह अच्छे मध्यस्थ की भूमिका भी अक्सर निभाते देखे जाते हैं। स्वभाव के संतुलन के कारण ही ये लोग अति से बचते हैं, अत: कूटनीति इनके स्वभाव में आ जाती है परंतु राजनीति इनके बस की बात नहीं होती।

तुला राशि शरीर में जननांगों का प्रतिनिधित्व करती है। इस राशि में चित्रा, स्वाती और विशाखा नक्षत्र सम्मिलित होते हैं, अत: तुला राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी मंगल, राहु एवं गुरु की महादशाएं आ सकती हैं।

वृश्चिक राशि

राशि चक्र की आठवीं राशि वृश्चिक है। यह एक जल तत्त्व राशि है। जिस प्रकार निर्मल बहते जल में विद्युत उत्पन्न करने की क्षमता छिपी होती है उसी प्रकार वृश्चिक राशि के व्यक्ति में ऊर्जा का भंडार छिपा हुआ रहता है। इस राशि के व्यक्ति झील के समान होते हैं। ऊपर से शांत झील की गहराई को आंकना असंभव है, इसी प्रकार वृश्चिक राशि के व्यक्तियों के मन की थाह पाना भी लगभग नामुमकिन है। जब ये बाहर से शांत दिख रहे होते हैं, तब भी विचारों और भावनाओं का द्वन्द्व इनके भीतर चलता रहता है।

यह एक स्थिर राशि है। अपने मन में उठने वाले आवेगों पर ये पूरा नियंत्रण रखते हैं। अपने स्वभाव की स्थिरता के कारण लोग इन पर पूर्ण विश्वास करते हैं। इनकी तूफानी प्रतिस्पर्धा और इनमें निहित बल के कारण लोग इनका अनुसरण करने को तैयार हो जाते हैं।

अपने आत्मविश्वास और दृढ़ निश्चय के बल पर ही ये ये उच्च महत्वाकांक्षी होते हैं और फिर अपने कठोर परिश्रम से अपने लक्ष्य को पा लेते हैं। ये अत्यंत विचारशील होते हैं और बिना किसी ठोस आधार के न कोई कल्पना करते हैं, न ही कोई निर्णय लेते हैं। इस राशि के लोग अत्यधिक भावुक और संवेदनशील होते हैं परन्तु अपनी भावनाओं को आसानी से प्रकट नहीं होने देते हैं, भले ही अन्दर ही अन्दर घुटना पड़े।

इस राशि के स्वामी ग्रहों में सेनापति मंगल हैं। वृश्चिक राशि के व्यक्ति जीवन का हर क्षण एक चुनौती की तरह जीते हैं। लकीर का फकीर बनना इन लोगों को कतई पसंद नहीं होता इसलिए ये सदा कुछ न कुछ नया करते रहते हैं। स्थिर राशि होने के कारण मंगल की शक्ति नियंत्रित रहती हैं और इस राशि के व्यक्ति व्यर्थ क्रोध करके अपनी ऊर्जा बर्बाद नहीं करते। नेतृत्व शक्ति और अधिकार भावना इनमें कूट-कूट कर भरी होती है। अपनी बात न सिर्फ दृढ़ता के साथ रखते हैं बल्कि आसानी से मनवा भी लेते हैं। ये उदाहरण प्रस्तुत करने में विश्वास रखते हैं इसलिए निर्देश देने के बजाए कठोर श्रम करके मापदण्ड तय करते हैं। इनकी खुद से और दूसरों से अपेक्षाएं अत्यधिक होती हैं। इसलिए इन पर कई बार अपनी बात थोपने की सीमा तक चले जाते हैं। इस राशि के व्यक्ति अपने बौद्धिक स्तर के व्यक्तियों के साथ ही सहज हो पाते हैं, इसलिए कई बार घमण्डी मान लिये जाते हैं।

इस राशि का चिह्न बिच्छू है जो एक बेहद आकर्षक परन्तु रहस्यमयी जीव है। इस राशि के व्यक्तियों के व्यक्तित्व में एक विशेष चुम्बकीय आकर्षण होता है। ये अपने मन की बात आसानी से प्रकट नहीं होने देते इसलिए रहस्य का पुट सदा इनसे भरा रहता है।

ये आक्रामक होते हैं और इनकी आक्रमण शैली बिच्छू से मिलती-जुलती होती है। बिना तैयारी के कभी आक्रमण नहीं करते क्योंकि ये सफल आक्रमण पर ही यकीन करते हैं। सही अवसर के लिए ये धैर्यपूर्वक लंबा इंतजार भी कर सकते हैं। पूर्ण तैयारी के साथ सही अवसर पर किया गया इनका वार कभी खाली नहीं जाता।

इनका प्रेम अत्यधिक अधिकार पूर्ण होता है और यदि इनकी भावनाओं की तीव्रता को समझने में भूल हो जाए तो ये आहत हो जाते हैं। भावनात्मक रूप से आहत हो जाने पर ये व्यक्ति प्रतिशोध लेने की सीमा तक भी जा सकते हैं। इस राशि में मूल, पूर्वाषाढ़ा तथा उत्तराषाढ़ा नक्षत्र आते हैं, अत: इस राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी ग्रहों केतु, शुक्र एवं सूर्य की महादशाएं आ सकती हैं। यह राशि शरीर में पीठ व रीढ़ की हड्‌डी को प्रभावित करती है। इस राशि के व्यक्तियों को चाहिए कि अपने अंतरंग मित्रों से विचार विमर्श करते रहें ताकि भावनाओं की अभिव्यक्ति होती रहे और ये अपनी असीम ऊर्जा का संपूर्ण उपयोग कर सकें।

धनु राशि

धनुराशि चक्र की नवीं राशि है। यह अग्नि तत्त्व राशि है। इस राशि के व्यक्तियों में अग्नि का पोषक रूप दिखाई देता है। यह अग्नि इन को ज्ञान की ओर ले जाती है तथा अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए प्रेरित करती है। अत: ये व्यक्ति बहुत ही उद्यमी होते हैं और नित प्रयोगों एवं खोजों में लगे रहते हैं। इन प्रयोगों और खोजों को पूरा करने के लिए अग्नि का ताप इन्हें दूर-दूर तक ले जाता है। मानव शक्ति का भरपूर प्रयोग करना और करवाना इस राशि के व्यक्ति बखूबी जानते हैं तथा सतत क्रियाशील रहते हैं, परन्तु पोषण एवं ताप देने वाली अग्नि जब सत्य वचनों के रूप में इनके मुख बाहर आती है तो ये व्यक्ति अत्यधिक क्रूर हो जाते हैं तथा वस्तु को जलाकर भस्म करने की प्रवृत्ति भी अपना लेते हैं।

यह एक द्विस्वभाव राशि है। इस राशि के व्यक्ति भी दोहरे स्वभाव वाले होते हैं। कभी संवेदनशील व हास्य-व्यंग वाणी प्रयोग करने वाले और कभी सौम्य तो कभी अत्यधिक क्रूर हो जाते हैं।

इस राशि के स्वामी देवगुरु बृहस्पति हैं। इस राशि के व्यक्ति भी न्याय एवं शान्तिप्रिय होते हैं, ईमानदारी एवं मानवीय मूल्यों को बहुत महत्त्व देते हैं। गुरु की भांति अपने कर्तव्यों के प्रति सजग होते हैं और उन्हें निष्ठा के साथ पूरा करते हैं। जिस प्रकार कोई गुरु अपने शिष्यों के लिए हितैषी और मित्र दोनों ही होते हैं, ठीक इसी प्रकार देवगुरु बृहस्पति की भांति इस राशि के व्यक्ति भी सबके हितैषी होते हैं।

गुरु ज्ञान के कारक हैं। इस राशि के व्यक्ति भी ज्ञान का अतुल भंडार लिए होते हैं। अनेकों भाषाओं, गुप्त विद्याओं और दर्शन का ज्ञान भी इस राशि के व्यक्तियों को होता है। इस राशि के व्यक्तियों को अपनी योग्यताओं पर पूर्ण एवं अटूट विश्वास होता है। ये किसी भी कार्य को असंभव नहीं मानते। मानवीयता एवं मानव हित इनके लिए सर्वोपरि होते हैं। मानव हित के साथ ही यह व्यक्ति सिद्धांतों एवं नीतियों का पालन दृढ़ता से करते हैं। सिद्धांतों के पालन में किसी तरह का समझौता करना इन्हें पसंद नहीं होता, इसलिए इनके स्वभाव में जिद्दीपन आ जाता है तथा ज्ञान के अतुल भंडार का दंभ भी कभी-कभी इनके व्यवहार में देखने को मिलता है।

इस राशि का चिह्न 'धनुर्धर' है जो आधा मनुष्य और आधा अश्वाकार हैं। 'धनुर्धर' की ही भांति इस राशि के व्यक्ति भी केवल अपने निर्धारित लक्ष्यों पर निगाहें रखते हैं और उन्हें पाने की चेष्टाएं लगातार करते

रहते हैं। धनुर्धर का लक्ष्य एवं अश्व की गति दोनों मिलकर इस राशि के व्यक्तियों को इन्द्रधनुषी कामनाओं और आशाओं की ओर ले जाती है, जिन्हें पूर्ण करना उनका उद्‌देश्य होता है। इन्द्रधनुषी कामनाएं ज्ञान की शाखाओं से जुड़ी होती है।

धनु राशि शरीर में जंघा, ऊरू तथा कूल्हों का प्रतिनिधित्व करती है। इस राशि में मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र आते हैं, अत: इस राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी देवताओं केतु, शुक्र एवं सूर्य की महादशाएं आ सकती हैं।

धनु राशि के व्यक्तियों को अपने स्वभाव में आए जिद्‌दीपन को छोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

मकर राशि

राशि चक्र की दसवीं राशि है। यह पृथ्वी तत्त्व राशि है। धीर, गंभीर, परोपकारी पृथ्वी सभी को धारण कर धीरे-धीरे अपनी धुरी पर घूमती है, तथा एक निर्धारित समय में अपनी परिक्रमा पूरी करती है। ठीक इसी प्रकार मकर राशि के व्यक्ति भी धैर्य धारण कर धीरे-धीरे-धीरे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हुए उसको पूरा करके ही छोड़ते हैं। लक्ष्य चाहे चट्टान की भांति कठोर ही क्यों न हो, यह शांत रहकर दृढ़ इच्छा व आत्म विश्वास के साथ उसे पाने के लिए जुटे रहते हैं। इनके लिए कठोर परिश्रम ही सफलता की कुंजी होता है तथा यह यथार्थवादी होते हैं।

यह चर संज्ञक राशि है। 'चर' अर्थात चलना या निरन्तर क्रियाशील रहना। इस राशि के व्यक्तियों के स्वभाव में सतत प्रयास एवं क्रियाशीलता देखी जा सकती है। ये व्यक्ति मानते हैं कि धीरे एवं निरन्तर चलने वाला ही सदैव विजयी होता है। यही कर्मठता इस राशि के व्यक्तियों को दूसरों के लिए एक उदाहरण बना देती है। इस राशि के व्यक्ति उत्तरोत्तर उन्नति करते हैं।

इस राशि के स्वामी शनिदेव हैं जो शनैश्चर भी कहे जाते हैं। शनै: +चर यानि धीरे चलने वाले। मकर राशि के व्यक्ति भी शनि की भांति देर से कार्य करने वाले व आलसी होते हैं।

शनिदेव भृत्य ग्रह हैं इस राशि के व्यक्ति भी कम उम्र में ही नौकरी करने की इच्छा रखते हैं। सेवक ग्रह होने के कारण ही शनि कठोर परिश्रमी भी हैं। इस राशि के व्यक्ति भी शारीरिक परिश्रम करने में सदैव आगे रहते हैं।

शनि आध्यात्मिक प्रवृत्ति के हैं व दण्डनायक हैं। मकर राशि के व्यक्ति भी इसी स्वभाव के होते हैं। वे अनुशासन प्रिय होते हैं तथा तर्क देने में निपुण होते हैं, अनुशासन के विरुद्ध जाने पर व्यक्ति को दण्ड देने से भी नहीं चूकते। अपने बनाए सिद्धान्तों को मानना और उन्हीं को महत्त्व देना इनका स्वभाव होता है, अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाना, और खुलकर उसका विरोध करना, अन्यायी की आलोचना इनकी विशेषता होती है परन्तु जहॉ अधिकार एवं सत्ता अधिक होती है वहां निरंकुशता आ जाती है, इस राशि के व्यक्ति यदा-कदा निरंकुश हो जाते हैं व एकाधिकार चाहते हैं, वह सब न मिलने की स्थिति में इनके

स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है, इसलिए इनके अधिक मित्र नहीं होते। और ये स्वयं भी किसी को विश्वसनीय नहीं मानते।

इस राशि का चिह्न 'जलमृग' है। इस राशि के व्यक्तियों के स्वभाव में भी मृग सी चंचलता व सोम्यता देखने को मिलती है।

यह राशि शरीर में घुटनों का प्रतिनिधित्व करती है। इस राशि में उत्तराषाढ़ा, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र आते हैं। अत: इस राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी ग्रहों सूर्य, चन्द्रमा और मंगल की महादशाएं आ सकती हैं।

मकर राशि के व्यक्तियों को अपनी एकाकी प्रवृत्ति को छोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

कुंभ राशि

कुंभ राशिचक्र की ग्यारहवीं राशि है। यह वायु तत्त्व राशि है। कुंभ राशि के व्यक्ति वायु की भांति स्वच्छंद होकर उड़ने वाले होते हैं। अपनी राह में किसी का हस्तक्षेप इन्हें पसंद नहीं होता। यह ऊंची उठने वाली हवा की ही भाँति उच्चाभिलाषी होते हैं। जिस प्रकार वायु संपूर्ण वातावरण में समान रूप से फैली होती है व सभी के लिए समान श्वासदायी होती है, ठीक उसी प्रकार कुंभ राशि के व्यक्ति भी परोपकारी व उदारमना होते हैं और किसी भी पूर्वाग्रह और लघु दृष्टिकोण से दूर होते हैं इसलिए यह संगठन व समूह में अच्छा कार्य करते हैं, इस राशि के व्यक्तियों में समूह के रूप में कार्य की भावना प्रधान होती है। जिस प्रकार वायु वातावरण में मौजूद तो होती है परन्तु दिखाई नहीं देती ठीक इसी प्रकार कुंभ राशि के व्यक्ति भी अपने द्वारा किए गए कार्यों का श्रेय लेने से बचते हैं। सादगी और सरलता से अपना कार्य करने में विश्वास रखते हैं।

यह स्थिर संज्ञक राशि है। 'स्थिर' अर्थात् स्थायी। ऐसे ही कुंभ राशि के व्यक्ति भी निरन्तर बाधाओं का सामना करते हुए एक समान व्यवहार रखते हैं, जीवन मूल्यों से समझौता नहीं करते। स्वभाव की यह स्थिरता ही उन्हें सूक्ष्म दृष्टि प्रदान करती है जिससे यह विषय की गहराई तक उसका विश्लेषण करते हैं। जो बातें यह सोचते हैं, वह अन्य व्यक्तियों की सोच से कई बार परे होती हैं।

इस राशि के स्वामी कठोर परिश्रमी, आध्यात्मिक, न्यायाधिकारी, कठिन परीक्षक शनिदेव हैं। इस राशि के व्यक्ति भी कठोर परिश्रम कर अपनी योग्यता को सिद्ध करते हैं। योग्यता शनिदेव की कसौटी पर खरे उतरकर ही सिद्ध हो पाती है। 'शनै:+चर' अर्थात् धीरे चलने वाले। इस राशि के व्यक्तियों को भी देर से परिणाम मिलते हैं। परिणाम पाने के लिए इनको संघर्ष करना पड़ता है, इससे इनका दृष्टिकोण दार्शनिक हो जाता है।

शनिदेव न्यायाधिकारी हैं, अत: सर्वोच्च रहना चाहते हैं, ठीक ऐसे ही कुंभ राशि के व्यक्ति भी बेहद स्वाभिमानी होते हैं। इनका यही स्वाभिमान यदा-कदा 'अहं' में बदल जाता है। जिस कारण इस राशि के व्यक्ति अपनी प्रगति में स्वयं ही बाधक हो जाते हैं।

इस राशि का चिह्न कंधे पर कलश धारण किए, पृथ्वी पर जल डालता पुरुष है। पृथ्वी पर जल डालना शुभत्व एवं परोपकार का प्रतीक है। ठीक ऐसे ही कुंभ राशि के व्यक्ति दूसरों की मदद के लिए सदैव तैयार रहते हैं तथा मानवता और ईमानदारी की भावनाएं मन में रखते हैं। चिह्न में घट से नीचे की ओर बहती जलधारा है। कुंभ राशि के व्यक्तियों में भी लेखन कलादि की जन्मजात प्रतिभा की धार होती है। इस राशि के व्यक्ति जल की भाँति निर्मल व भावुक होते हैं और भावनाओं को ठेस लगना सह नहीं पाते और यही इनके व्यक्तित्व का नकारात्मक पक्ष बन जाता है, ये भावनाओं को ठेस पहुंचाने वाले व्यक्ति को आसानी से क्षमा नहीं करते, अपनी इस +जिद के कारण यदा-कदा बहुत अकेले हो जाते हैं।

कुंभ राशि शरीर में पिंडलियों का प्रतिनिधिव करती है। इस राशि में धनिष्ठा, शतभिषा व पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र आते हैं। अत: इस राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी ग्रहों मंगल, राहु व गुरु की महादशाएं आ सकती हैं।

कुंभ राशि के व्यक्तियों को अपनी लोगों को क्षमा न करने की प्रवृत्ति को छोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

मीन राशि

मीन राशि चक्र की अंतिम राशि है। यह जल तत्त्व राशि है। जिस प्रकार निर्मल व सौम्य जल व्यक्ति की प्यास बुझाकर उसे जीवन देता है ठीक उसी प्रकार मीन राशि के व्यक्ति भी विनम्र एवं सौम्य स्वभाव के होते हैं। मानवीय संवेदनाओं से पूर्ण होते हैं, जल की तरह जीवन देने की इनकी परोपकारी एवं सहानुभूमि पूर्ण प्रकृति होती है। यह सबकी मदद भोलेपन से करते हैं व लोक हितैषी होते हैं और अपने भोलेपन से अक्सर लोगों की धोखाधड़ी के शिकार हो जाते हैं। जल का कार्य है बहना तथा अपने राह में आने वाली हर वस्तु को धोना। मीन राशि के व्यक्ति भी सहृदय होते हैं तथा व्यक्ति की जरुरत पता चलते ही उसी क्षण उसकी मदद के लिए चल पड़ते हैं, जैसे जल का प्रवाह असीमित एवं निरन्तर होता है, ठीक वैसे ही इस राशि के व्यक्तियों की कल्पनाएं भी असीमित होती हैं। यह द्विस्वभाव राशि है। द्विस्वभाव अर्थात दोहरा स्वभाव। इस राशि के व्यक्ति भी ऐसे ही होते हैं, ये कभी तो अपनी कामनाओं एवं अभिलाषाओं से अनभिज्ञ होते हैं और कभी इनके मन में अलौकिक कामनाएं होती हैं।

इस राशि के स्वामी देवगुरु बृहस्पति हैं। देवगुरु ज्ञान के कारक हैं। इस राशि के व्यक्ति भी ज्ञानी, ईश्वर में विश्वास रखने वाले होते हैं। गुरु परोपकारी हैं, भेदभाव से रहित हैं जिस प्रकार एक गुरु अपने सभी शिष्यों को समान रूप से, बिना किसी भेदभाव के शिक्षा प्रदान करते हैं ठीक ऐसे ही मीन राशि के व्यक्ति भी सभी से समान व्यवहार करने वाले होते हैं। बुराई के प्रत्युत्तर में भी अच्छाई करना इनकी विशेषता होती है। ज्ञानी गुरु व्यवहार कुशल, समस्त शास्त्रों के ज्ञाता, रूढ़ियों का पालन करने वाले हैं। इस राशि के

व्यक्ति भी बातचीत की कला में निपुण,समझदार व नीति-निपुण होते हैं। अत: यह व्यक्ति अच्छे सलाहकार होते हैं परन्तु अधिक ज्ञानी होने का दंभ भी इस राशि के व्यक्तियों में आ जाता है। ये आत्मश्लाघी व डींगे मारने वाले होते हैं और कभी-कभी आशा से अधिक आत्मविश्वासी दिखने का प्रयास करते हैं।

इस राशि का चिन्ह जल क्रीड़ा करती दो मछलियाँ हैं। जिस प्रकार मछली अकेली अपनी ही दुनिया में तैरती रहती है, उसी प्रकार इस राशि के व्यक्ति भी अपने कल्पना लोक में अकेले ही रहना चाहते हैं। इनका काल्पनिक लोक परीकथाओं का सा होता है जिसमें डूबकर यह व्यक्ति जीवन की वास्तविकताओं से दूर चले जाते हैं। जिस प्रकार मछली पानी से बाहर निकाली जाने पर तड़प कर मर जाती है ठीक उसी प्रकार मीन राशि के व्यक्ति जिनसे भावनात्मक रूप से जुड़े होते हैं, उनसे दूर हो जाने पर उसको सहन नहीं कर सकते । यह राशि शरीर में दोनों पैर तलवे तथा पैर की उंगुलियों का प्रतिनिधित्व करती है।

इस राशि में पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र आते हैं। अत:इस राशि के व्यक्तियों के जीवन में इन नक्षत्रों के स्वामी ग्रहों गुरु, शनि तथा बुध की महादशाएं आ सकती हैं।

मीन राशि के व्यक्तियों को आत्मश्लाघा की प्रवृत्ति को छोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

2.5 वार विचार

सूर्योदय के समय जो पहली होरा होती है उसके स्वामी के नाम पर वार का नाम होता है। वार एक सूर्योदय से अगले सूर्योदय तक रहता है। अंग्रेजी कैलेन्डर में तारीख रात्रि में बारह बजे बदल जाती है परन्तु पंचांग में वार सूर्योदय से सूर्योदय तक रहता है।

सूर्य से दूरी के आधार पर होरा शनि की फिर बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा की होती है। होरा की अवधि 1 घंटे की होती है। उदाहरण के लिए सोमवार को सूर्योदय से पहले घंटे में चन्द्रमा की होरा होगी। चन्दमा के बाद शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र और फिर बुध की होरा होगी। बुध की होरा के पश्चात् पुन: चन्द्रमा की होरा होगी अर्थात् आठवें घंटे में। अंतिम होरा अर्थात् चौबीसवें घंटे की होरा बृहस्पति की होगी। बृहस्पति के बाद मंगल की होरा होती है। सोमवार के बाद मंगलवार होगा और पहली होरा मंगल की होगी।

इस सृष्टि का आरंभ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को होना माना गया है जो रविवार है। इसलिए सप्ताह का आरंभ रविवार से होता है।

2.6 योग विचार

सूर्य और चन्द्रमा की राशि, अंश, कला, विकला का योग ही पंचांग का योग है। अत: हम कह सकते हैं कि सूर्य और चन्द्रमा की संयुक्त चाल के फलस्वरूप विभिन्न योग बनते हैं। योग की कुल संख्या 27 है। अत: एक योग का मान होगा-

$360/27 = 13^{0}28' = 800$ कला

जब सूर्य और चन्द्रमा मिल कर $13^{0}20'$ अर्थात् 800 कला चल लेते हैं तब एक योग बनता है। इसी प्रकार जब वे $26^{0}40'$ चल लेते हैं तब दूसरा योग बनता है। योग की गणना का सूत्र निम्न है।

$$\frac{\text{सूर्य का भोगांश – चं. का भोगांश}}{800}$$

योगों के नाम इस प्रकार हैं -

1.	विष्कुंभ	11.	वृद्धि	21.	सिद्ध
2.	प्रीति	12.	धुरव	22.	साध्य
3.	आयुष्मान	13.	व्याघात	23.	शुभ
4.	सौभाग्य	14.	हर्षल	24.	शुक्ल
5.	शोभन	15.	वज्र	25.	ब्रह्मा
6.	अतिगण्ड	16.	सिद्धि	26.	ऐन्द्र
7.	सुकर्म	17.	व्यतिपात	27.	वैधृति
8.	धृति	18.	वरीयान		
9.	शूल	19.	परिघ		
10.	गण्ड	20.	शिव		

2.7 करण विचार

तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक तिथि में दो करण होते हैं। एक तिथि सूर्य और चन्द्रमा में 120 का अंतर होने पर बनती है। अत: 60 का अंतर होने पर करण होता है।

करण ज्ञात करने का सूत्र - $\frac{\text{चं का भोगांश – सूर्य का भोगांश}}{6^0}$

वर्तमान करण = भागफल +1

करण की कुल संज्ञा 11 हैं। 1 से 7 तक के करण चर संज्ञक हैं और एक माह में 8 बार पुनरावृत्ति करते हैं। 8 से 11 तक के करण को स्थिर संज्ञक कहते हैं। ये मास मे केवल एक बार आते हैं। चर संज्ञक करण के नाम निम्न हैं -

(1.) बव (2) बालव (3) कौलव (4) तैतिल

(5) गर (6) वणिज (7) विष्टि

स्थिर संज्ञक करण के नाम निम्न हैं -

(8) शकुनि (9) चतुष्पाद (10) नाग

(11) किंस्तुध्न

इसमें से विष्टि, शकुनि, चतुष्पाद, नाग और किंस्तुध्न को अशुभ माना जाता है और शुभ कार्यों, धार्मिक अनुष्ठानों में इनका त्याग किया जाता है।

विष्टि नाम के करण को भद्रा के नाम से जाना जाता है। इस करण की अवधि को भद्रा काल कहा जाता है।

2.8 ग्रह परिचय

ज्योतिष में नवग्रहों में सर्वप्रथम सूर्य की गणना की जाती है। सौर मण्डल में जीवनदायी शक्ति के रूप में सूर्य का महत्त्व सभी जानते हैं। सूर्य जीवन तन्त्र का आधार और शक्ति के भण्डार हैं।

सूर्य-

खगोलीय परिचय : सूर्य आकाश गंगा का एक सदस्य है और पृथ्वी के समीप होने के कारण इनका प्रकाश अधिक है। सूर्य का केन्द्रीय भाग सौर ऊर्जा का केन्द्र होता है जहॉ पर प्रचण्ड ज्वाला रहती है। सूर्य का सतही तापमान 6 हजार डिग्री सेल्सियस है तथा इसके केन्द्रिय भाग का तापमान 1.5 करोड डिग्री सेल्सियस है। सूर्य की बाहरी परत फोटो स्फियर कहलाती है और इसके ऊपर एक अन्य परत क्रोमो स्फियर नाम की भी है। जिसमें सूर्य की किरणें ज्वालाएं होने के साथ ही साथ हाइड्रोजन के बादल भी रहते हैं। सूर्य की गति के आधार पर ही दिन और रात छोटे और बड़े होते हैं। जब सूर्य की मेष या तुला

सक्रान्ति होती है तो दिन और रात बराबर होते हैं। सूर्य सदैव उदित रहते हैं। पृथ्वी की कक्षा जो कि सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है उसको हम क्रांतिवृत कहते हैं।

ज्योतिष परिचय : सूर्य को राशि चक्र की पांचवीं राशि अर्थात सिंह राशि का स्वामित्व प्राप्त है। वे मेष राशि में अपनी उच्च स्थिति में होते हैं जबकि इसके ठीक 180 अंशों की दूरी पर अर्थात तुला राशि में अपनी नीच स्थिति में होते हैं। इसमें भी मेष राशि के दस अंशों पर इनकी परम उच्च स्थिति होती है। जिसमें यह विशेष परिणाम देते हैं। इसके ठीक विपरीत तुला राशि के दस अंशों पर नीच स्थिति में होते हैं और अशुभ परिणाम देते हैं। यह सामान्य नियम है विशेष नियम जन्म पत्रिका में इनकी स्थिति पर आधारित होते हैं। सूर्य को ज्योतिष ग्रह मंत्रिमण्डल में राजा कहा गया है। सूर्य की गणना पुरुष ग्रहों में की जाती है।

सूर्य के कारकत्व : सूर्य आत्मा के कारक है। किसी व्यक्ति का समाज में प्रभाव, उसके पिता का स्वभाव, पिता का जीवन स्तर, राज्य आदि का सुख, आरोग्य, व्यक्ति का धैर्य, उसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता और हड्डियां सूर्य के विषय हैं। इसके अतिरिक्त उच्च पद प्रबल इच्छा शक्ति , प्रसिद्धि, यश, सरकारी एजेंसियों से व्यक्ति के संबंध, नौकरी में उच्चाधिकारियों से संबंध, दृढ़ इच्छा शक्ति, आध्यात्मिक प्रवृति, गर्व आदि भी सूर्य के विषयों में शामिल हैं। सूर्य का रंग श्वेतश्याम, मजबूत हड्डियां, चौकोर चेहरा, विशाल भुजाएं और सूर्य सिर पर बाल कम हैं। किसी व्यक्ति की जन्म पत्रिका में सूर्य की स्थिति से ही उसकी आकृति तथा उपर्युक्त वर्णित विषय देखे जाते हैं।

सूर्य की गति लगभग एक अंश प्रतिदिन अर्थात् एक माह में सूर्य एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं।

चन्द्रमा-

खगोलीय परिचय :

खगोलीय दृष्टि से चन्द्रमा पृथ्वी के ही एक उपग्रह हैं। और उसकी कक्षा में परिक्रमा करते हैं। इनका एक भाग पृथ्वी की ओर रहता है तथा दूसरा भाग अदृश्य होता है। खगोलीय दृष्टि से जो वस्तु पृथ्वी पर अत्यधिक भार लिए हुए होती है उसी वस्तु को चन्द्रमा पर आसानी से उठाया जाना संभव है। अर्थात् चन्द्रमा का गुरुत्वाकर्षण बल पृथ्वी की तुलना में 1/6 अंश ही है। चन्द्रमा का स्वयं का प्रकाश नहीं है और वे सूर्य के प्रकाश को ही परावर्तित करते हैं। सूर्य से चन्द्रमा की दूरी जब 180 अंश होती है तब पूर्णिमा और जब सूर्य और चन्द्रमा समान अंशों पर होते हैं तो अमाव्रस्या होती है। चन्द्रमा में अत्यधिक आकर्षण शक्ति है जिसकी वजह से समुद्र में ज्वार-भाटा आता है।

ज्योतिष परिचय :

चन्द्रमा को राशि चक्र में चौथी राशि अर्थात् कर्क राशि का स्वामित्व प्राप्त है। वे वृषभ राशि में उच्च अवस्था में होते हैं जबकि इसके ठीक 180 अंशों की दूरी पर अर्थात वृश्चिक राशि में अपनी नीच स्थिति में होते हैं। इसमें भी वृषभ राशि के तीन अंशों पर अपनी परम उच्च स्थिति में होते हैं और विशेष शुभ परिणाम देते हैं। इसके ठीक विपरीत वृश्चिक राशि के तीन अंशों पर यह अपनी परम नीच स्थिति में होते हैं और अशुभ परिणाम देते हैं। यह सामान्य नियम है। विशेष नियम जन्म पत्रिका में इनकी स्थिति पर आधारित होते हैं। चन्द्रमा को ग्रह मंत्रिमण्डल में रानी का पद प्राप्त है और इनकी गिनती स्त्री ग्रहों में की जाती है।

चन्द्रमा के कारकत्व :

चन्द्रमा मन के कारक हैं। किसी व्यक्ति की माता का स्वभाव, मन की प्रसन्नता, राज चिन्ह अथवा मैडल्स, कोमल वस्तुएं, दूध व दूध से बने पदार्थ व्यक्ति की सुन्दरता व सौन्दर्य, खेती, चांदी, कांसा आदि, किसी व्यक्ति की जन्म पत्रिका में चन्द्रमा से ही देखे जाते है। क्योंकि चन्द्रमा मन के कारक हैं इसलिए किसी व्यक्ति के जीवन में उसकी भावनाओं के उतार-चढ़ाव और दिमाग में उठने वाले विचारों को भी जन्मपत्रिका में चन्द्रमा की स्थिति से ही देखा जाता है। बीज, जल, औषधि तथा समुद्र आदि पर भी चन्द्रमा का ही अधिकार है। चन्द्रमा एक मात्र ऐसे ग्रह हैं जो शुभ और पाप दोनों श्रेणी में गिने जाते हैं। जब वे पूर्ण होते हैं अर्थात जिस दिन पूर्णिमा होती है तब वे शुभ ग्रह होते है और फल देते हैं और जब क्षीण होते हैं अर्थात अमावस्या के आस-पास वे अशुभ फल देते हैं और उनकी गणना पाप ग्रहों में आ जाती है। चन्द्रमा की यह विशेषता है कि वे किसी को भी अपना शत्रु नहीं मानते। चन्द्रमा व्यक्ति का मनोबल है और यह जलीय ग्रह होने के कारण शरीर के जलतन्त्र पर इनका अधिकार है। अर्थात शरीर में ब्लड प्रेशर चन्द्रमा का विषय है। चन्द्रमा में दिखने में बड़े शरीर वाले हैं। इनकी मीठी वाणी है और स्वभाव और शरीर दोनों कोमल हैं। ज्योतिष में प्रयोग होने वाले 27 नक्षत्र जो वैदिक ज्योतिष की गणना का आधार हैं वे चन्द्रमा की रानियां हैं। दक्ष प्रजापति की 27 कन्याओं से इनका विवाह हुआ था।

चन्द्रमा की गति लगभग बारह अंश प्रतिदिन अर्थात् सवा दो दिन में चन्द्रमा एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं।

मंगल-

खगोलीय परिचय : सौर मण्डल में मंगल का चौथा स्थान है। यह लगभग 687 दिनों में सूर्य की एक परिक्रमा कर लेते हैं। मंगल का गुरुत्वाकर्षण बल पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल से दस गुणा अधिक है। पृथ्वी के उपग्रह चन्द्रमा की तरह मंगल के चारों ओर भी दो चन्द्रमा घूमते हैं।

ज्योतिष परिचय : मंगल को राशि चक्र की पहली और आठवीं राशि अर्थात मेष और वृषभ का स्वामित्व प्राप्त है। मकर राशि में यह अपनी उच्च स्थिति में होते है जबकि इसके ठीक 180 अंशों की दूरी

पर अर्थात कर्क राशि में अपनी नीच स्थिति में होते हैं। इसमें भी मकर राशि के 28 अंशों पर इनकी परम उच्च स्थिति होती है। जिसमें यह विशेष परिणाम देते हैं। इसके ठीक विपरीत कर्क राशि के 28 अंशों पर नीच स्थिति में होते हैं और अशुभ परिणाम देते हैं, यह सामान्य नियम है, विशेष नियम जन्म पत्रिका में इनकी स्थिति पर निर्भर करता है।

मंगल के कारकत्व : मंगल रक्त के कारक हैं। किसी व्यक्ति के स्वभाव में पराक्रम, साहस आदि जन्मपत्रिका में मंगल की स्थिति से देखे जाते हैं। उत्साह, छोटे भाई बहन, उनका स्वभाव तथा उनके गुण और अवगुण, सच और झूठ बोलना यह सब मंगल के विषय हैं। सेनापति होने के नाते हथियार, शत्रुता, शरीर में होने वाले घाव या लगने वाली चोटों पर भी मंगल का अधिकार है। दृढ इच्छा शक्ति, संकल्प लेने की शक्ति, मस्तिष्क, तर्क-वितर्क, पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले पदार्थ, भूमि और भूमि से जुड़े अन्य विषय, अग्नि अर्थात रसोई घर की अग्नि मंगल के विषय हैं। फोड़े-फुंसी भी मंगल से देखे जाते हैं। मंगल की गति लगभग 1.5 दिन में एक अंश है अर्थात् डेढ़ माह में मंगल एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं।

मंगल को ज्योतिष ग्रह मंत्रिमण्डल में सेनापति का पद प्राप्त है। मंगल की गणना पुरुष ग्रहों में की जाती है।

मंगल -

मंगल लाल रंग के हैं। इनकी कमर पतली है, स्वभाव सेे क्रूर हैं परन्तु फिर भी उदार हैं। मंगल युवा हैं इसलिए छोटे दिखते हैं। यदि जन्म पत्रिका में मंगल अच्छी स्थिति में हों तो ऐसे व्यक्ति की आयु अधिक होने पर भी कम उम्र के दिखते हैं।

बुध -

खगोलीय परिचय - बुध सूर्य के सबसे समीपस्थ ग्रह हैं। इन पर हीलियम गैस अधिक पाई जाती है तथा ये सिलिकेट की चट्टानों से निर्मित हैं। इनका गुरुत्वाकर्षण बल पृथ्वी का 1/4 भाग है अर्थात् यदि पृथ्वी पर कोई व्यक्ति 8 फुट ऊँचा कूद सकता है तो बुध पर वही व्यक्ति 32 फुट ऊँचा कूद सकता है। सूर्य की निकटता अधिक होने के कारण इन्हें आसानी से देखा नहीं जा सकता। बुध ग्रह की सूर्य से अधिकतम दूरी 280 (28 अंश) ही रह सकती है। बुध वक्री व मार्गी दोनों स्थितियों में भ्रमण करते हैं। इसके साथ ही साथ ये सूर्य से एक निश्चित अंशों की दूरी होने पर अस्त भी होते हैं।

ज्योतिष परिचय - बुध को राशिचक्र की तीसरी तथा छठी अर्थात् मिथुन व कन्या राशि का स्वाभित्व प्राप्त है। वे कन्या राशि में अपनी उच्च स्थिति में होते हैं जबकि इसके ठीक 180 अंशों की दूरी पर अर्थात् मीन राशि में अपनी नीच स्थिति में होते हैं। इसमें भी कन्या राशि के 150 पर इनकी परम उच्च स्थिति होती है जिसमें ये विशेष शुभ परिणाम देते हैं, इसके ठीक विपरीत मीन राशि के 150 पर इनकी परम नीच

स्थिति होती है और उसमें ये अशुभ परिणाम देते हैं। यह सामान्य नियम है। विशेष नियम जन्म-पत्रिका में बुध की स्थिति पर आधारित होते हैं। बुध को ज्योतिष ग्रह मंत्रिमण्डल में राजकुमार का स्थान प्राप्त है।

बुध के कारकत्व - बुध बुद्धि के कारक हैं। विद्वता, वैदिक विषयों का ज्ञान, वाणी की चतुराई, काव्य-कौशल, हंसी-मजाक की प्रवृत्ति, श्रेष्ठ सलाह देने वाले, लेखन-कौशल, अच्छे मित्र, रचनात्मक प्रवृत्ति, संधि कराने वाले तथा गणितज्ञ हाजिर, जवाबी, संचार तन्त्र अर्थात् डाक-तार विभाग व कोरियर आदि को जन्म पत्रिका में बुध की स्थिति से देखा जाता है। शिल्प कला जोड़-तोड़ और मार्केटिंग आदि बुध के विषय हैं। गोद ली हुई संतान और मामा-मामी का सामाजिक स्तर व मामा से संबंध भी बुध के अधिकार क्षेत्र में हैं। बुध त्वचा के कारक हैं तथा मानव के स्नायु तन्त्र पर बुध का ही अधिकार है। बुध देखने में सुंदर, अच्छी त्वचा वाले तथा नसों से युक्त हैं। इनका चेहरा कांतिमान है और नेत्र लंबाई लिए हुए हैं। ये हरे वस्त्र धारण करते हैं।

बुध तेज गति से चलने वाले हैं तथा लगभग 28 से 30 दिन में एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं। वक्री होने की स्थिति में यह समयावधि अधिक होती है।

विशेष - क्योंकि बुध की सूर्य से अधिकतम दूरी 280 ही है अत: बुध जन्म पत्रिका में सूर्य से एक राशि पूर्व या एक राशि पश्चात् ही स्थित हो सकते हैं।

बृहस्पति -

खगोलीय परिचय - बृहस्पति सौरमण्डल के सबसे बड़े ग्रह हैं तथा सभी ग्रहों के द्रव्यमान को जोड़ने पर भी बृहस्पति का द्रव्यमान उससे अधिक ही है, इसी कारण ये गुरु भी कहे जाते हैं। पृथ्वी से अत्यधिक दूरी होने पर भी ये तेजस्वी हैं। बृहस्पति का गुरुत्वाकर्षण बल पृथ्वी से लगभग 317 गुना अधिक है। बृहस्पति बारह वर्षों में सूर्य की परिक्रमा पूरी करते हैं। बृहस्पति चट्टानों से नहीं बने हैं बल्कि हाइड्रोजन और हीलियम गैसों के पिण्ड हैं। हाइड्रोजन के अतिरिक्त इनके वायुमण्डल में पानी की बूँदें, बर्फ के कण तथा अमोनिया के कण मौजूद हैं।

ज्योतिष परिचय - बृहस्पति को राशिचक्र की नवीं तथा बारहवीं राशि का स्वामित्व प्राप्त है। वे कर्क राशि में अपनी उच्च स्थिति में रहते हैं तथा इनके ठीक 180 अंशों की दूरी पर अर्थात् मकर राशि में अपनी नीच स्थिति में रहते हैं। इसमें भी कर्क राशि के 50 पर इनकी परम स्थिति होती है। जिसमें यह विशेष परिणाम देते हैं। इसके ठीक विपरीत मकर राशि के 50 अंशों पर नीच स्थिति में होते हैं और अशुभ परिणाम देते हैं।

बृहस्पति को ज्योतिष ग्रह मंत्रिमण्डल में मंत्री का पद प्राप्त है। बृहस्पति की गणना पुरुष ग्रहों में की जाती है।

बृहस्पति के कारकत्व - बृहस्पति देवताओं के गुरु हैं अत: इन्हें देवगुरु भी कहा जाता है। देवगुरु बृहस्पति ज्ञान, संतान तथा कन्या की कुण्डली में पति के कारक हैं। शिक्षा, आध्यात्म, न्याय, दार्शनिकता, प्रचार व प्रसार, उदारता, सलाह देना, नए वस्त्र, उपहार, ईश्वर की भक्ति, कर्त्तव्य के प्रति जागरुकता, शुभ व धार्मिक कार्य, भाषण क्षमता, धैर्य, निर्भयता आदि व्यक्ति की जन्म पत्रिका में बृहस्पति की स्थिति से देखे जाते हैं। इसके अतिरिक्त समाज-सुधार के कार्य, व्यक्ति के पारिवारिक संबंध, उनकी सामाजिक स्थिति अर्थात् सोशल स्टेटस, नीतियों की पालना करना, सूती वस्त्र आदि भी बृहस्पति के विषय हैं। बृहस्पति खजांची हैं अत: बैकिंग तथा फाइनेंस भी देवगुरु बृहस्पति के अधिकार क्षेत्र में हैं। बड़े भाई व उनकी स्थिति भी जन्म-पत्रिका में बृहस्पति से देखी जाती है। बृहस्पति देखने में स्थूल शरीर वाले, धीर-गंभीर तथा भूरी आँखों वाले हैं। इनकी वाणी में गंभीरता सदा विद्यमान रहती है।

बृहस्पति की गति 1 माह में लगभग 1 अंश है अर्थात् 12/13 महीने में ये एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं।

विशेष - सभी ग्रहों में बृहस्पति को सबसे शुभ माना जाता है तथा इनकी दृष्टि 'अमृत' कही जाती है। अर्थात् बृहस्पति जन्म पत्रिका में जिस-जिस भाव को देखते हैं उसके शुभ प्रभावों में वृद्धि करते हैं। इसके विपरीत जन्म पत्रिका में जिस भाव में बृहस्पति स्थित होते हैं उस भाव से संबंधित चिंता बनाए रखते हैं परन्तु जन्म-पत्रिका में लग्न में स्थित बृहस्पति सैकड़ों अनिष्टों का नाश करने वाले कहे गए हैं।

शुक्र -

खगोलीय परिचय - सूर्य से दूरी के क्रम में शुक्र दूसरे ग्रह हैं, सूर्य के सबसे समीप बुध हैं। अत: बुध व शुक्र आंतरिक ग्रह कहे जाते हैं। सूर्य की पृथ्वी पर पड़ने वाली किरणों से दोगुनी किरणें शुक्र पर पड़ती हैं। इसी कारण शुक्र बहुत ही चमकीले दिखाई पड़ते हैं। अंधेरी रात में इनकी चमक से व्यक्ति परछाई भी देखी जा सकती है। इन्हें 'भोर का तारा' भी कहा जाता है। इनका गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी के समान है। अपनी कक्षा पर वे सूर्य की परिक्रमा वृत्ताकार पथ में करते हैं। इनकी सूर्य से अधिकतम दूरी 480 ही हो सकती है।

ज्योतिष परिचय - शुक्र को राशिचक्र की दूसरी व सातवीं राशि अर्थात् वृषभ व तुला का स्वामित्व प्राप्त है। वे मीन राशि में अपनी उच्च राशि में होते है वे मीन राशि में अपनी उच्च स्थिति में होते हैं जबकि इसके ठीक 180 अंशों की दूरी पर अर्थात कन्या राशि में अपनी नीच स्थिति में होते हैं। इसमें भी मीन राशि के 270 अंशों पर इनकी परम उच्च स्थिति होती है जिसमें यह विशेष परिणाम देते हैं। इसके ठीक विपरीत कन्या राशि के 270 अंशों पर नीच स्थिति में होते हैं और अशुभ परिणाम देते हैं। शुक्र को ज्योतिष ग्रह मंत्रिमण्डल में मंत्री का स्थान प्राप्त है। शुक्र की गणना स्त्री ग्रहों में की जाती है।

शुक्र के कारकत्व - शुक्र दैत्यों के गुरु हैं अत: इन्हें दैत्यगुरु भी कहा जाता है। संसार की समस्त संपत्तियों के स्वामी शुक्र हैं तथा समस्त शास्त्रों के जानने वाले हैं। औषधि, गीत-संगीत, मंत्र, रस एवं

गंधर्व विद्याओं का कारकत्व शुक्र को प्राप्त है। जन्म पत्रिका में शुक्र की स्थिति से व्यक्ति की संपत्ति, वैभव व समृद्धि देखी जाती है। पुरुष की जन्म पत्रिका में पत्नी के कारक शुक्र हैं। शुक्र वीर्य के भी कारक हैं। दैत्यगुरु शुक्र को 'मृत संजीवनी' विद्या का ज्ञान भी था जो उन्हें भगवान शंकर से वर स्वरूप प्राप्त हुआ था। इस विद्या से वे देवताओं व असुरों के युद्ध में मृत असुरों को पुन: जीवित कर देते थे। इसके अतिरिक्त सौन्दर्य, काम-वासना, प्रेम, कवित्व, प्राकृतिक सौन्दर्य, सुंदर वस्त्र तथा आभूषण, ऐश्वर्य, अभिनय कला, विचित्र सुंदरता, वाद्य यंत्र आदि भी शुक्र के ही अधिकार क्षेत्र में हैं। पेड़-पौधे, उपन्यास लिखना आदि भी शुक्र के कारकत्व हैं। सॉफ्टवेयर, कम्प्यूटर आदि तन्त्र भी शुक्र के ही विषय हैं। शुक्र सुंदर शरीर तथा सुंदर आँखों वाले हैं, इनके बाल काले व घुंघराले हैं। ये रंग-बिरंगे वस्त्र पहनते हैं। व्यक्ति की जन्म पत्रिका में शुक्र की स्थिति से ही उसकी आकृति तथा उपर्युक्त वर्णित विषय देखे जाते हैं।

विशेष - शुक्र केवल एक आँख से ही देख सकते हैं अर्थात् वे काणे हैं परन्तु 'नृसिंह पुराण' में ऐसा उल्लेख मिलता है कि शुक्राचार्य ने गंगाजी के जल में खड़े होकर भगवान नृसिंह जी की पूजा व ध्यान किया तब प्रसन्न होकर भगवान ने वर स्वरूप उनका नेत्र छुआ जिससे वे पुन: ठीक हो गए और उनकी आँख में ज्योति आ गयी किंतु उस नेत्र में थोड़ी विकृति रह गई। जिन व्यक्तियों की जन्म पत्रिका में शुक्र की स्थिति बलवान होती है और शुक्र की पूर्ण रश्मियाँ प्राप्त होती हैं उन व्यक्तियों की आँखों में हल्का सा तिरछापन रहता है। वही तिरछापन उन व्यक्तियों के सौन्दर्य में वृद्धि करता है।

शुक्र एक दिन में लगभग 59 कला, 3 विकला चलते हैं और इनकी अधिकतम गति 1 कला 22 विकला होती है। अर्थात् लगभग 1 माह में शुक्र एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं। वक्री होने की स्थिति में यह गति भिन्न हो जाती है। सूर्य से शुक्र की अधिकतम दूरी 480 ही हो सकती है। अत: व्यक्ति की जन्म पत्रिका में शुक्र, सूर्य से अधिकतम 2 राशियाँ पूर्व या सूर्य की स्थिति से 2 राशियाँ बाद में ही स्थित हो सकते हैं। सूर्य से एक निश्चित अंशों की दूरी रहने पर शुक्र अस्त होते हैं। यह दूरी शुक्र की मार्गी तथा वक्री स्थिति में भिन्न होती है।

शनि-

खगोलीय परिचय - सूर्य से दूरी के अनुसार शनि छठे तथा बृहस्पति के बाद दूसरे बड़े ग्रह हैं। शनि अपनी कक्षा पर कम गति से चलते हैं इसलिए इन्हें शनै:चर (धीरे चलने वाला) भी कहा जाता है। ये हाइड्रोजन तथा हीलियम गैसों के पिण्ड से निर्मित हैं तथा ये चारों ओर चमकीले छल्लों से घिरे हुए हैं। इनका द्रव्यमान पृथ्वी से लगभग 95.47 गुणा से अधिक है। शनि का घनत्व पानी के घनत्व से 0.69 है अर्थात् यदि शनि को एक पिण्ड मानकर समुद्र में डाल दिया जाए तो डूबने की अपेक्षा ये पानी पर तैरते रहेंगे। शनि पर हाइड्रोजन और हीलियम के अतिरिक्त कुछ मात्रा में मिथेन और अमोनिया भी हैं।

ज्योतिष परिचय - शनि को राशिचक्र की दसवीं तथा ग्यारहवीं अर्थात् मकर व कुंभ राशि का स्वामित्व प्राप्त है। वे तुला राशि में अपनी उच्च स्थिति में होते हैं जबकि इसके ठीक 180 अंशों की दूरी अर्थात् मेष

राशि में अपनी नीच स्थिति में होते हैं। इसमें भी तुला राशि के 200 अंशों पर इनकी परम उच्च स्थिति होती है। जिसमें यह विशेष परिणाम देते हैं। इसके ठीक विपरित मेष राशि के 200 अंशों पर नीच स्थिति में होते हैं और अशुभ परिणाम देते हैं। शनि वक्री व मार्गी दोनों गतियों में भ्रमण करते हैं।

शनि के कारकत्व - ग्रहों में शनिदेव को सेवक का दर्जा प्राप्त है अत: कठोर परिश्रम, शारीरिक श्रम शनिदेव के मुख्य कारकत्वों में हैं। शनिदेव, आयु, न्याय बंधन, कारावास, लौह व लौह पदार्थ, खनिज पदार्थ, अपमान, दुख, निराशा का भाव देते हैं। दरिद्रता, आपत्ति, कर्ज, नौकरी खेती-बाड़ी आदि शनि के अधिकार क्षेत्र में हैं।

समाज का निचला वर्ग, नीच व्यक्तियों का आश्रय, शरीर में नसों व माँशपेशियों, पुराने खण्डहरों व गुफाओं पर शनिदेव का अधिकार है। सर्वश्रेष्ठ रूप से शनिदेव न्याय के कारक हैं तथा उन्हें दण्डाधिकारी माना जाता है। किसी व्यक्ति की जन्म पत्रिका में शनि की स्थिति से उपर्युक्त सभी विषय देखे जाते हैं। शनिदेव नीले रंग के हैं तथा इसकी आँखे गड्ढेदार, शरीर कमजोर, नसें अधिक व शरीर के रोम अधिक वाले हैं। स्वभाव से कठोर हृदय हैं। ये वृद्ध हैं अत: व्यक्तियों की जन्म पत्रिका में शनि की स्थिति के कारण उम्र में कम होने पर भी वे अधिक उम्र के दिखते हैं।

शनिदेव की गति 1 माह में 1 अंश है अर्थात् 30 माह में शनिदेव एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करते हैं। सूर्यदेव से एक निश्चित दूरी पर ये अस्त होते हैं।

विशेष - शनिदेव की दृष्टि को विनाशकारी कहा गया हैं। शनिदेव जन्म पत्रिका के जिस भाव को देखते हैं, उससे संबंधित अशुभ परिणाम मिलते हैं जबकि वे जिस भाव में बैठते हैं उस भाव की वृद्धि करते हैं।

शनिदेव सूर्यदेव के पुत्र हैं। वे दृष्टि सदैव नीची करके चलते हैं।

राहु -

खगोलीय परिचय - खगोलीय दृष्टि से राहु को पात कहा जाता है। राहु व केतु एक दूसरे से 1800 के अंतर पर स्थित हैं। चन्द्रमा तथा अन्य ग्रहों का पथ क्रांति से कुछ झुका होता है इसीलिए प्रत्येक ग्रह अपनी परिक्रमा में ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर की ओर भ्रमण करते समय दो बार काटता है। यही कटान उस ग्रह के पात कहे जाते हैं। नीचे से ऊपर की जाने वाले समय के कटान को आरोही तथा ऊपर से नीचे की ओर जाने वाले समय के कटान को अवरोही पात कहते हैं। राहु व केतु चन्द्रमा के पात ही हैं। चन्द्रमा के आरोही पात राहु तथा अवरोही पात केतु हैं। राहु तथा केतु केवल गणितीय बिंदु हैं इनका भौतिक अस्तित्व नहीं है परंतु फलित ज्योतिष में इनको अत्यधिक महत्वपूर्ण माना जाता हैं। ये दोनों सदैव वक्री गति में ही चलते हैं। (इनका विस्तृत वर्णन खगोल शास्त्र में किया जाएगा)

ज्योतिष परिचय - राहु को किसी राशि विशेष का स्वामित्व प्राप्त नहीं है। कुछ विद्वान उनकी उच्च राशि वृषभ को तथा कुछ विद्वान मिथुन को मानते हैं। इनके विषय में यह मान्यता है कि केन्द्र-त्रिकोण के

स्वामियों के साथ स्थित होने पर ये उन्हीं के समान परिणाम देते हैं। महाभारत के भीष्म पर्व में उल्लेखित है कि राहु भी अन्य ग्रहों की भाँति ब्रह्मा जी की सभा में बैठते थे इसलिए इनकी ग्रह रूप में प्रतिष्ठा हुई।

राहु के कारकत्व - राज्य, विदेश यात्रा, विदेश गमन तथा विदेश में निवास, भ्रम संदेह, कभी-कभी झूठ, षड़यंत्र, गुप्त विद्याएँ, नाना, वृद्धत्व, कुतर्क तथा अधार्मिकता आदि विषय जन्म पत्रिका में राहु से देखे जाते हैं। वे स्नेहशील भी हैं। राहु जकड़न हैं। राहु की गति लगभग डेढ़ महीने में एक अंश है। अत: राहु 18 महीनों में एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करते हैं।

केतु -

खगोलीय परिचय - खगोलीय दृष्टि से केतु को पात कहा जाता है। राहु व केतु एक दूसरे से 1800 के अंतर पर स्थित हैं। चन्द्रमा तथा अन्य ग्रहों का पथ क्रांति से कुछ झुका होता है इसीलिए प्रत्येक ग्रह अपनी परिक्रमा में ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर की ओर भ्रमण करते समय दो बार काटता है। यही कटान उस ग्रह के पात कहे जाते हैं। नीचे से ऊपर की जाने वाले समय के कटान को आरोही तथा ऊपर से नीचे की ओर जाने वाले समय के कटान को अवरोही पात कहते हैं। राहु व केतु चन्द्रमा के पात ही हैं। चन्द्रमा के आरोही पात राहु तथा अवरोही पात केतु हैं। राहु तथा केतु केवल गणितीय बिंदु हैं इनका भौतिक अस्तित्व नहीं है परंतु फलित ज्योतिष में इनको अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता हैं। ये दोनों सदैव वक्री गति में ही चलते हैं। (इनका विस्तृत वर्णन खगोल शास्त्र में किया जाएगा)

ज्योतिष परिचय - केतु को किसी राशि विशेष का स्वामित्व प्राप्त नहीं हैं। कुछ विद्वान उनकी उच्च राशि वृश्चिक को तथा कुछ विद्वान धनु को मानते हैं। इनके विषय में यह मान्यता है कि केन्द्र-त्रिकोण के स्वामियों के साथ स्थित होने पर ये उन्हीं के समान परिणाम देते हैं। महाभारत के भीष्म पर्व में उल्लेखित है कि केतु भी अन्य ग्रहों की भाँति ब्रह्मा जी की सभा में बैठते थे, इसलिए इनकी ग्रह रूप में प्रतिष्ठा हुई।

केतु के कारकत्व - आत्म ज्ञान, वेदांत, शत्रुओं से पीड़ा संसार से विरक्ति, वैराग्य, मोक्ष, मंत्रशास्त्र, चंचलता, हर प्रकार के ऐश्वर्य, सब प्रकार की भोग सामग्री आदि विषय जन्म पत्रिका में केतु की स्थिति से देखे जाते हैं। केतु शब्द शास्त्रों में ध्वजा के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

ध्वजा उत्कृष्टता व उच्चता का प्रतीक भी है अत: यदि किसी जन्म पत्रिका में केतु शुभ स्थिति में हों तो उपर्युक्त उच्चता व उत्कृष्टता भी देते हैं।

2.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पंचाग के अनतर्गत आने वाले विभिनन अवयवों का स्वरूप ओर उनका ज्योतिष शास्त्रीय विश्लेषण क्या है। नक्षत्रों का परिचय, राशियों का स्वरूप एवं कार्यज्ञान का अध्ययन कर आपने सभी वारों एवं उनके स्वामियों का भी अध्ययन किया। जन्म नक्षत्रों से

की जाने वाली गणना के आधार पर नक्षत्रों का विभाजन 9 प्रकार से किया जाता है जो सम्यत् वियत, क्षेम, प्रतयरि, साधक, वध, मित्र, अतिमित्र के नाम से अभिहित हैं1 नक्षत्रों के समूह को राशि कहते हैं जो 12 प्रकार की होती है। सूर्योदय के समय प्रथम होरा के स्वामी का नाम ही उस वार का नाम कहलाता है। सूर्य एवं चन्द्रमा की राशि अंश कला तथा विकला का योग पंचाग में योग के नाम से जाना जाता है। प्रत्येक ग्रहा काखगोलिय एवं ज्योतिष परिचय अलग अलग वर्णित है। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में ज्योतिष शास्त्र के संज्ञा प्रकरण में नक्षत्रों, राशियों, वारों योगों एवं करणों के अतिरिक्त नवग्रहों का परिचयात्मक एवं कार्यात्मक स्वरूप विवेचित है। अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप पंचकग ज्ञान कर समस्त तिथियों, वारों एवं उनसे संबंधित योगों आदि का ज्ञान की करा सकेंगे।

2.10 शब्दावली

1 नामाक्षर – नाम के अक्षरों को ही नामाक्षर कहा जाता है किन्तु यहॉ पर नाम के प्रारम्भिक अक्षर का तात्पर्य है।

2 नक्षत्र – न सरति अथवा न चक्तति इति नक्षत्र: अर्थात जो स्थिरं रहता है वह नक्षत्र है। इसकी संख्या 27 है।

3 आत्मश्लाघा – अपनी प्रशंसा को कहते हैं।

4 करण – तिथि का आधा भाग

5 योग – सूर्य ओर चन्द्रमा के राशि, अंश, कला एवं विकला कायोग ही पंचांग में योग कहलाता है।

2.11 अभ्यास प्रश्न

सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए

1 सम्पत कहते है

(क)सम्पदा देने वाला
(ख)सम्मान देने वाला
(ग) सहयोग करने वाला
(घ) कोई नही

2 जन्म नक्षत्र प्रत्यरि होता है -
(क) चौथा

(ख) पांचवा
(ग) सातवां
(घ) आठवां

3 स्वाती नक्षत्र का स्वामी ग्रह है -
(क) बुध
(ख) शुक्र
(ग) राहु
(घ) केतु

4 अग्नि तत्त्व की राशि है -
(क) वृष
(ख) मेष
(ग) मिथुन
(घ) मीन

5 निम्नलिखित में सूर्य का पुत्र है -
(क) शनि
(ख) बुध
(ग) राहु
(घ) बृहस्पति

6 मन का कारक ग्रह है -
(क) राहु
(ख) केतु
(ग) चन्द्रमा
(घ) शुक्र

7 योगों की संख्या है

(क) 27
(ख) 28
(ग) 30
(घ) 13

8 आत्मा कारक ग्रह कौन है

(क) सूर्य

(ख) चन्द्रमा

(ग) मंगल

(घ) बुध

9 तिथि का आधा भाग कहलाता है -

(क) करण

(ख) योग

(ग) राशि

(घ) वार

10 सिंह राशि का स्वामी है ‘

(क) चन्द्र

(ख) बुध

(ग) बृहस्पति

(घ) सूर्य

इकाई 3

कुण्डली परिचय
लग्नादि द्वादश भावों के अन्तर्गत भावों की संज्ञा, कारक ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता, शत्रु, उच्च–नीच, मूल त्रिकोणादि ज्ञान,ग्रहों कारकत्व एवं दृष्टि विचार

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 लग्न् एवं बारह भाव

3.4 ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता

3.4.1 पंचवा मैत्री

3.5 कारक तत्त्व

3.5.1 चन्द्रमा के कारकतत्त्व

3.5.2 मंगल के कारकतत्त्व

3.5.3 बुध के कारकतत्त्व

3.5.4 बृहस्पति के कारकतत्त्व

3.5.5 शुक्र के कारकतत्त्व

3.5.6 शनि के कारकतत्त्व

3.5.7 राहु के कारकतत्त्व

3.5.8 केतु के कारकतत्त्व

3.6 दृष्टि

3.7 सारांश

3.8 शब्दावली

3.9 अभ्यास प्रश्न

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में कुण्डली के बारह भावों का विस्तृत वर्णन आपके अध्ययनार्थ किया गया है। प्रथम भाव लग्न कहलाता है। इसके स्वामी को लग्नेश कहते हैं। इस भाव से जातक का शारीरिक सौष्ठव, व्यक्तित्व, शक्ति, गुण आदि विचारित होता है।

लग्नकारक ग्रह सूर्य है। इस भाव का जन्मपत्री में अधिक महत्त्व होता है। इसी प्रकार द्वितीय भाव के स्वामी को द्वितीयश, तृतीय भाव के स्वामी को तृतीयेश, चतुर्थ भाव के स्वामी को चतुर्थेश कहते हुए बारहों भावों के स्वामियों को उनका मालिक समझा जाता है। समस्त भावों के स्वामियों को पृथक-पृथक गुण, शील, आचार विचार, कर्म, व्यवसाय, पद, प्रतिष्ठा, लाभ हानि, आधि व्याधि तथा उत्कर्ष – अपकर्ष का विचार किया जाता है। धन – सम्पदा, वैवाहिक जीवन से लेकर आधिदैविक स्थितियों का विचार भी इन्हीं भावों के द्वारा होता है। अत: जन्माड्ग चक्र के द्वादश भाव एवं उनमें अवस्थित ग्रहों की स्थितियां ही महत्त्वपूर्ण हैं।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जन्मांक चक्र के बारह भावों का सम्यक् ज्ञान कर उनके कारकत्व, स्वामितव एवं फलाफल को बता सकेंगे। साथ ही ग्रहों की उच्चता, निम्नता, एवं उनकी शुभाशुभ दृष्टि को भी समझा सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

जन्माग चक्र के द्वादश भावों से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यहबता सकेंगे कि -

1 जन्मांक के भावों की संज्ञा क्या है?

2 जन्मांक में कुल कितने भाव होते हैं?

3 बारह भावों के स्वामी कौन कौन हैं?

4 नवग्रहों ने मैत्री संबंध किनका है तथा सम और शत्रुभाव के ग्रह कौन हैं?

5 ग्रहों का दृष्टि फल क्या है तथा उनके मूल त्रिकोणादि क्या हैं?

3.3 लग्न् एवं बारह भाव

जन्म पत्रिका का प्रथम भाव लग्न कहलाता है तथा प्रथम भाव के स्वामी को लग्नेश कहते हैं। लग्न से जातक के व्यक्तित्व, शारीरिक सौष्ठव व सामूहिक रूप से शरीर व नम्रता व्यक्ति के जीवन के प्रति दृष्टिकोण, स्वभाव आदि के विषय में जानते हैं।

प्रथम भाव या लग्न के कारक ग्रह सूर्य हैं। जन्म पत्रिका में लग्न अथवा प्रथम भाव को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। रूप-रंग, यश-अपयश, दूसरों का अपमान करना, आरोग्य, मर्यादा का पालन अथवा नाश तथा निज अपमान आदि विषय लग्न से देखे जाते हैं।

इसको एक उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं। जब हम लग्न तथा लग्न के स्वामी की जन्म पत्रिका में स्थिति पर विचार करते हैं तो हम यह जानते हैं कि शारीरिक सौष्ठव कैसा है? शारीरिक सौष्ठव में संपूर्ण शरीर के विषय में देखते हैं न कि किसी अंग-विशेष को। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति का कर्क लग्न है तो उसके स्वामी चन्द्रमा हुए।

यद्यपि चन्द्रमा मन, हृदय तथा रक्त का प्रतिनिधित्व करते हैं तथापि क्योंकि रक्त शरीर में अत्याधिक मात्रा में होता है तथा मन की अपेक्षा शरीर में रक्त का अधिक प्रतिनिधित्व करेंगे। अत: कर्क लग्न में लग्नेश चन्द्रमा मन की अपेक्षा रक्त के अधिक व्यापक क्षेत्र में शरीर में विद्यमान होने के कारण यहाँ चन्द्रमा रक्त का प्रतिनिधित्व अधिक करेंगे।

द्वितीय भाव - जन्म-पत्रिका के द्वितीय भाव के स्वामी को द्वितीयेश कहते हैं। द्वितीयेश का एक अन्य नाम धनेश भी है। द्वितीय भाव से हम धन, वाणी, खाने-पीने के पदार्थ, कुटुम्ब, दूरदृष्टि, दानशीलता, सच-झूठ, आँख, व्यापार, मित्रता, कंजूसी, व्याख्यान शक्ति व विद्या आदि विषय देखते हैं।

विशेष - द्वितीय भाव मारक भाव भी है।

तृतीय भाव - जन्म-पत्रिका के तृतीय भाव के स्वामी को तृतीयेश कहते हैं। तृतीय भाव के स्वामी को पराक्रमेश भी कहते हैं। तृतीय भाव से हम छोटे भाई-बहिन, पराक्रम, छोटी यात्राएं, मित्र, बंधु, बुद्धिमत्ता, शारीरिक बल, लाभ, रुचि (।।शड्ढड्ढद्वद्गह्य), महान् कार्य, कान, चित्त का भ्रम, धन का विभाजन आदि विषय देखते हैं। अच्छे कुल में उत्पत्ति भी तृतीय भाव से ही देखी जाती है। तृतीय भाव के कारक ग्रह मंगल है।

चतुर्थ या चौथा भाव - जन्म-पत्रिका के चतुर्थ भाव के स्वामी को चतुर्थेश कहते हैं। इस भाव के स्वामी का एक अन्य नाम सुखेश भी है।

चतुर्थ भाव से माता, भूमि, भवन, वाहन, सुख, लोकप्रियता, उच्च शिक्षा, राज्य, पानी, कुआँ, दिव्य औषधि, विश्वास, झूठे आरोप, खेती-बाड़ी, खेत, बाग, मनुष्य के हित के लिए बावड़ी व कुएँ आदि बनवाना, पैतृक संपत्ति, घर, घर छोड़ना, चुराई गई वस्तु का स्थान निर्देश आदि देखते हैं।

विशेष - चतुर्थ भाव से लोकप्रियता का संबंध है तथा यश व लोकप्रियता में अर्थ के दृष्टिकोण से थोड़ा भेद है। अत: लोकप्रियता के ही संदर्भ में यह देखा जाना चाहिए। जनता संबंधी विचार इस भाव से किया जाता है और जनता सर्वसाधारण से जुड़ी होती है अत: लोकप्रियता को यहाँ स्थान दिया गया है। चतुर्थ भाव के कारक चन्द्रमा हैं। मतांतर से बुध भी हैं।

पंचम भाव - किसी भी जन्म-पत्रिका का पंचम भाव अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होता है। पंचम भाव के स्वामी को पंचमेश कहते हैं। पंचम भाव पूर्वजन्म के संचित कर्म, पद तथा संतान आदि का है। इस भाव

को पुत्रभाव भी कहा जाता है अत: इसके स्वामी का एक अन्य नाम पुत्रेश भी है। पंचम भाव जन्म-पत्रिका का त्रिकोण होने के कारण शुभ भाव है। पंचम भाव के नैसर्गिक कारक ग्रह शुभ ग्रह देवगुरु बृहस्पति हैं।

पंचम भाव से पद, पूर्वजन्म के कर्म, इष्ट, संतान, गंभीरता, दृढ़ता, बुद्धि, उपासना, टैक्स, जुआ सट्टा, लॉटरी, पाप-पुण्य का भेद, अन्नदान, धन कमाने का ढंग, मंत्री, राजशासन की मोहर, आत्मा, सदाचार, शिल्प, गर्भ, विवेक, छत्र, मंत्रजाप, समालोचना की योग्यता, पिता का धन, शास्त्र ज्ञान, श्रुति, स्मृति का ज्ञान, कार्यरतता आदि विषय पंचम भाव से देखे जाते हैं।

छठा भाव - जन्म-पत्रिका के छठे भाव के स्वामी को षष्ठेश कहते हैं। छठे भाव से रोग, रिपु, ऋण देखे जाते हैं अत: छठे भाव के स्वामी को रोगेश भी कहते हैं।

छठे भाव से, मामा, मृत्यु की आशंका, घाव, सौतन, प्रतिस्पर्द्धात्मक शक्ति (Competetive Spirit), कर्जा, चोर, दुष्टकर्म, पाप, अपमान अस्त्र, राह के अवरोध, कफ, शरीर के अंगों में सूजन, निंदा, भाई से झगड़ा, फोड़ा-फुंसी, विष, अतिशूल (अर्थात् पेट में दर्द) आदि देखे जाते हैं। छठे भाव के कारक ग्रह मंगल व शनि हैं।

सप्तम भाव - जन्म-पत्रिका के सप्तम भाव के स्वामी को सप्तमेश कहते हैं। इसका एक अन्य नाम कलत्र भाव भी है। भारत में विवाह जीवन के सोलह संस्कारों में से एक महत्त्वपूर्ण संस्कार है तथा यह भारतीय परिवार का आधार है और सप्तम भाव से विवाह, विवाह का समय वैवाहिक जीवन की स्थिति, सुगन्ध, संगीत, व्यावसायिक भागीदारी (Business Pastnesship) यात्राएं, विदेश संबंधी, मामले, विदेश यात्रा, डूबा हुआ धन, काम वासनाएँ या हृदय की इच्छाएँ, पति-पत्नी, पराजित शत्रु आदि विषय देखे जाते हैं। प्रजनन अंग, गुदा भी इस भाव से ही देखे जाते हैं सप्तम भाव मारक भाव भी है। अत: व्यक्ति की मृत्यु का विचार भी सप्तम भाव के प्रभाव क्षेत्र में ही आता है। सप्तम भाव के कारक ग्रह शुक्र हैं।

अष्टम भाव - जन्म-पत्रिका के अष्टम भाव के स्वामी को अष्टमेश कहते हैं। अष्टम भाव आयु का भाव है। इस भाव से मांगल्य अर्थात् स्त्री का सौभाग्य, मृत्यु, मृत्यु का कारण, आपदाएँ, जीवन में आने वाली बाधाएं, दुख, पाप, हार, क्लेश, बदनामी, दासत्व, मानसिक बीमारी, गढ़ा धन, क्रूर कर्मों में लिप्तता आदि विषय अष्टम भाव से देखे जाते है अष्टम भाव को रंध्र (छिद्र) भाव भी कहते हैं अत: इसके स्वामी को रंध्रेश भी कहा जाता है।

विशेष-क्योंकि अष्टम भाव से गढ़ा धन देखा जाता है अत: जमीन में गढ़ा धन अर्थात् खानें, खनिज आदि भी इसी भाव के विषय हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में वस्तु के दोष खोजना भी इसी के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त किसी भी विषय में की जाने वाली रिसर्च भी इसी भाव के विचारणीय विषय हैं। इस भाव के कारक ग्रह शनि हैं।

नवम भाव - जन्म-पत्रिका के नवम भाव के स्वामी को नवमेश कहते हैं। नवम भाव से मुख्यत: भाग्य देखा जाता है अत: इस भाव के स्वामी को भाग्येश भी कहा जाता है। नवम भाव से धर्म, गुरु, पिता (दक्षिण भारतीय पद्धति के अनुसार) तीर्थयात्रा, व्यक्ति का साला, छोटी भाभी, गुरुजनों में भक्ति, साधुओं की संगति, औषधि, चित्त की पवित्रता, वैदिक यज्ञ आदि नवम भाव के विचारणीय विषय हैं। त्रिकोण भाव होने के कारण नवम भाव विशेष शुभ है। नवम भाव के कारक ग्रह बृहस्पति तथा सूर्य हैं।

दशम भाव - जन्म-पत्रिका के दशम भाव के स्वामी को दशमेश कहते हैं। दशम भाव कर्म व आजीविका का है अत: दशमेश को कर्मेश भी कहा जाता है। पिता, राज्य सरकार, सरकारी एजेन्सियाँ, यश-अपयश, प्रवास, अनिश्चित आमदनी, उच्च पद, व्यापार किसी भी कार्य में रुचि, हुकूमत, कृषि-चिकित्सा, दूसरों को काबू में करना अर्थात् शासन करना, नौकरी, शुभ जीवन, मंत्र सिद्धि आदि विषय दशम भाव के विचारणीय विषय हैं।

दशम भाव के कारक ग्रह सूर्य, बुध, बृहस्पति व शनि हैं। दशम भाव केन्द्र है तथा कर्म का भाव होने के कारण विशेष महत्वपूर्ण है।

एकादश भाव - जन्म-पत्रिका के एकादश भाव के स्वामी को एकादशेश कहते हैं। हमारे जीवन में आय का विशेष महत्त्व है तथा एकादश भाव से आय देखी जाती है। अत: इस भाव के स्वामी को आयेश भी कहते हैं। बड़े भाई-बहिन, ऐश्वर्य, हस्त-कौशल, भौतिक लाभ, सिद्धि, वैभव, प्रशंसा, सरसता, बुरी आशा, सात्विक उपासना, धनार्जन में दक्षता, पैतृक धन, आभूषण, मणियों की प्राप्ति, प्रज्ञा, ससुराल से लाभ, भाग्योदय, अभीष्ट वस्तु की सिद्धि, विशिष्ट पदवी, बिना कष्ट के लाभ आदि एकादश भाव के विचारणीय विषय हैं। लेखन कला, चित्रकला में निपुणता, खाना-पकाना, माता की आयु, विलासिता आदि का विचार भी एकादश भाव से किया जाता है।

एकादश भाव के कारक ग्रह बृहस्पति हैं।

द्वादश भाव - जन्म-पत्रिका के द्वादश भाव के स्वामी को द्वादशेश कहते हैं। द्वादश भाव व्यय का है अत: इस भाव के स्वामी का अन्य नाम व्ययेश भी है। इसके अतिरिक्त द्वादश भाव निराशा, दांपत्य सुख, उदारता, विदेश संबंधी मामले, बंधन, मोक्ष आदि का भी भाव है। नींव जनता की और से शत्रुता, अधिकारों की समाप्ति, मानसिक बेचैनी, शारीरिक क्षति भी द्वादश भाव के विचारणीय विषय हैं।

(यहाँ शरीरांग, दिशा भाव संज्ञा, उपचय, आदि की कुण्डलियाँ लगेगी)

3.4 ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता

ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता - पिछली इकाई में ग्रहों के विषय में अध्ययन कर चुके हैं। ग्रहों की भी आपस में एक-दूसरे से मित्रता व शत्रुता है। मित्रता को हम दो तरह से परिभाषित कर सकते हैं।

1. नैसर्गिक मित्रता तथा 2. तात्कालिक मित्रता।

उपर्युक्त सारिणी के माध्यम से हमने यह जाना कि कौन किसका मित्र, शत्रु अथवा सम व्यवहार करने वाला है।

इसको आसानी से समझने के लिए हमें एक बार पुन: ग्रहों के मंत्रिमण्डल पर दृष्टि डालनी होगी।

सूर्य - राजा

चन्द्रमा - रानी

मंगल - सेनापति

बुध - राजकुमार

गुरु-शुक्र - मंत्री

शनि - सेवक

ग्रह मैत्री चक्र ग्रह	**मित्र**	**सम**	**शत्रु**
सूर्य	चं, मं, बृ,	बु;	शु, श
चन्द्र	सू, ब	मं, बृ, शु,श	
मंगल	सू, चं, बृ	शु, श	बु
बुध	सू, शु	मं, बृ, श	चं
बृहस्पति	सूं, च, मं	श	बु, श
शुक्र	बु, श	मं, बृ	सू, चं
शनि	बु, शु	बृ	सू, चं, मं

हम यह समझ सकते हैं कि राजा के मित्रों में रानी, सेनापति, राजकुमार तथा मंत्री होंगे। इसमें भी शुक्र क्योंकि दैत्यगुरु हैं अत: कई बार उनकी सलाह अपेक्षाकृत कुछ कमजोर हो सकती है अत: वे सूर्य/ राजा के मित्र नहीं होंगे।

चन्द्रमा अर्थात् रानी माँ भी हैं अत: सभी से मित्रवत् स्नेह रखेंगी, अत: व किसी को भी शत्रु नहीं मानतीं। स्पष्ट है कि चन्द्रमा किसी को भी अपना शत्रु नहीं मानते।

शेष मंत्रिमण्डल को ध्यान में रखते हुए आप मित्रता व शत्रुता का आकलन स्वयं कर पाएंगे।

किसी जातक विशेष की कुण्डली का फल कथन करते समय यह देखा जाता है कि विचारणीय ग्रह का, विचारणीय भाव से क्या और कैसा संबंध है, विचारणीय भाव में कौन सा ग्रह स्थित है? वह अधिमित्र, अधिशत्रु, मित्र, शत्रु अथवा सम में से क्या है? जैसे यदि वह विचारणीय ग्रह, विचारणीय भाव स्थित ग्रह से अधिमित्र संबंध रखता है तथा अन्यथा भी ये ग्रह शुभफल देते प्रतीत होते हैं तो विचारणीय भाव से सम्बन्धित फल के शुभ होने की भविष्यवाणी कर दी जाती है। इसी प्रकार अन्य मैत्री संबंधों के भी फल बताये जाते हैं।

3.4.1 पंचवा मैत्री

तात्कालिक मित्र : 2, 3, 4, 10, 11, 12

तात्कालिक शत्रु : 5, 6, 7, 8, 9

पंचधा मैत्री चक्र

ग्रह	अधिमित्र	मित्र	सम	शत्रु	अधिशत्रु
सूर्य	मंगल, गुरु	बुध	चं, शु, श	-	-
चंद्र	-	-	सूर्य, बुध	मं, शु, गु, श	-
मंगल	सूर्य, गुरु	शुक्र, शनि	चन्द्र, बुध	-	-
बुध	सूर्य, शुक्र	मंगल	-	गु, श	चन्द्रमा
गुरु	सूर्य, मंगल	-	चन्द्र, शुक्र	शनि	बुध
शुक्र	बुध, शनि	मंगल, गुरु	सूर्य	-	चन्द्रमा
शनि	शुक्र	-	बुध, सूर्य, मंगल	गुरु	चन्द्रमा

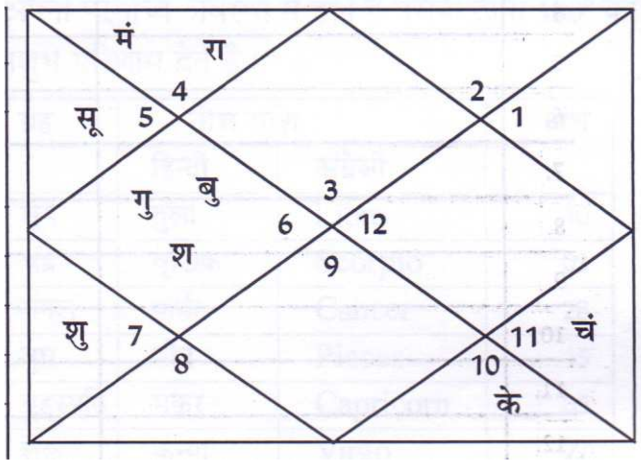

तात्कालिक	नैसर्गिक	फल
मित्र	मित्र	अधिमित्र
मित्र	सम	मित्र
मित्र	शत्रु	सम
शत्रु	सम	शत्रु
शत्रु	शत्रु	अधिशत्रु

वर्णित जन्मपत्रिका में सूर्य से प्रारम्भ करते हैं। सर्वप्रथम सूर्य के लिए चन्द्रमा का विश्लेषण करते हैं। चन्द्रमा, सूर्य के नैसर्गिक मित्र हैं। इस जन्मपत्रिका में चन्द्रमा, सूर्य से सातवें स्थान में स्थित हैं अत: तात्कालिक शत्रु हुए, शत्रु+मित्र = सम।

अत: चन्द्रमा इस कुण्डली में सूर्य के लिए सम हैं।

सूर्य और मंगल नैसर्गिक मित्र हैं। इस जन्मपत्रिका में मंगल, सूर्य से 12 वें स्थान पर स्थित हैं, अत: तात्कालिक मित्र हुए। नियमानुसार मित्र+मित्र = अधिमित्र होता है, अत: मंगल सूर्य के अधिमित्र हुए।

नैसर्गिक रूप से बुध, सूर्य के लिए सम हैं। इस जन्मपत्रिका में बुध, सूर्य से दूसरे स्थित होने के कारण तात्कालिक मित्र हैं। सम+मित्र=मित्र अत: पंचधा मैत्री चक्र में बुध-सूर्य के मित्र हुए।

बृहस्पति - सूर्य के नैसर्गिक मित्र हैं। इस कुण्डली में बृहस्पति - सूर्य से दूसरे भाव में स्थित होकर तात्कालिक मित्र हुए। मित्र+मित्र=अधिमित्र। अत: बृहस्पति - सूर्य के लिए अधिमित्र हैं।

शुक्र, सूर्य के नैसर्गिक शत्रु हैं। उदाहरण जन्मपत्रिका में शुक्र सूर्य से तीसरे स्थित हैं, अत: तात्कालिक मित्र हुए। शत्रु मित्र - सम, अत: शुक्र यहां सूर्य के लिए सम हैं।

शनि, सूर्य के नैसर्गिक शत्रु हैं। इस जन्मपत्रिका में शनि, सूर्य से दूसरे भाव में स्थित हैं, अत: तात्कालिक मित्र हुए। शत्रु+मित्र=सम अत: शनि-सूर्य के लिए सम हुए।

इस प्रकार सभी ग्रहों के लिए पंचधा मैत्री चक्र का निर्धारण किया जा सकता है।

उच्च ग्रह - प्रत्येक ग्रह किसी राशि में विशेष में श्रेष्ठ परिणाम देता है, ऐसी राशि को उस ग्रह की उच्च राशि कहा जाता है। इसमें भी किसी राशि विशेष के, अंश विशेष पर वह ग्रह अत्यधिक शक्तिशाली परिणाम देने की स्थिति में होता है। अंश विशेष पर ग्रह की स्थिति उसकी परमोच्च अवस्था कही जाती है। निम्न तालिका से हम ग्रहों के परमोच्च अंशों को ज्ञात कर सकते हैं।

नीचस्थ ग्रह - ग्रह के परिपेक्ष में नीच ग्रह से तात्पर्य है - ग्रह का निर्बल अथवा शक्तिहीन होना। ग्रह का नीचस्थ होना उसके उच्च होने की ठीक विपरीत स्थिति होती है। अर्थात् अपनी उच्च राशि से ठीक सातवीं राशि ग्रह की नीच राशि होती है। जिन अंश विशेषों पर ग्रह अपनी परमोच्च अवस्था में होते हैं उसके ठीक 1800 की दूरी पर वे अपनी परम नीच स्थिति में होते हैं तथा अशुभ परिणाम देते हैं।

ग्रह	उच्चस्थ राशि		अंश
	हिन्दी	अंग्रेजी	
सूर्य	मेष	Aries	10
चंद्र	वृषभ	Taurus	03
मंगल	मकर	Capricorn	28
बुध	कन्या	Virgo	15
बृहस्पति	कर्क	Cancer	05
शुक्र	मीन	Pisces	27
शनि	तुला	Libra	20
राहु	मिथुन	Gemini	अनिर्णीत
केतु	धनु	Sagittarius	अनिर्णीत

ग्रह	नीच राशि		अंश
	हिन्दी	अंग्रेजी	
सूर्य	तुला	Libra	10
चंद्र	वृश्चिक	Scorpio	03
मंगल	कर्क	Cancer	28
बुध	मीन	Pisces	15
बृहस्पति	मकर	Capricorn	05
शुक्र	कन्या	Virgo	27
शनि	मेष	Aries	20
राहु	धनु	Sagittarius	अनिर्णीत
केतु	मिथुन	Gemini	अनिर्णीत

अपवाद - नीच ग्रह का यदि नीच भंग हो रहा हो तो वही नीच ग्रह श्रेष्ठ राजयोग देने में सक्षम होता है। नीच भंग की स्थितियाँ निम्न हैं।

1. नीच राशि का स्वामी चन्द्रमा से केन्द्र में हो तथा
2. नीच ग्रह का उच्चनाथ चन्द्रमा से केन्द्र में हो।

मूल- त्रिकोण

हम जानते हैं कि सूर्य व चन्द्रमा को एक-एक राशि तथा मंगल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि को दो-दो राशियों का स्वामित्व प्राप्त है। इसी क्रम में प्रत्येक ग्रह अपनी किसी राशि में स्थित होता है, जिसमें वह उच्च राशि में स्थित होने की अपेक्षा कुछ कम शुभ परिणाम देता है परन्तु परिणामों का शुभत्व यहाँ भी कुछ कम नहीं होता। ग्रह की ऐसी स्थिति उनकी मूल-त्रिकोण राशि में स्थिति कहलाती है।

ग्रह	मूल त्रिकोण	अंश
सूर्य	सिंह	$0^0 - 20^0$
चंद्र	कर्क	$3^0 - 30^0$
मंगल	मेष	$0^0 - 12^0$
बुध	कन्या	$15^0 - 20^0$
बृहस्पति	धनु	$0^0 - 10^0$
शुक्र	तुला	$0^0 - 15^0$
शनि	कुंभ	$0^0 - 24^0$

मूल अर्थात् जड़ अथवा उद्गम स्थल तथा त्रिकोण जन्म-पत्रिका के शुभ भाव। अत: अपनी मूल त्रिकोण राशि में स्थित ग्रह भी अत्यधिक शुभ परिणाम देते हैं। निम्न तालिका से ग्रहों की मूल त्रिकोण राशियों का समझ सकते हैं।

3.5 कारक तत्त्व

सूर्य के कारकत्व : सूर्य आत्मा के कारक हैं। किसी व्यक्ति का समाज में प्रभाव, उसके पिता का स्वभाव, पिता का जीवन स्तर, राज्य आदि का सुख, आरोग्य, व्यक्ति का धैर्य, उसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता और हड्डियां सूर्य के विषय हैं। इसके अतिरिक्त उच्च पद प्रबल इच्छा शक्ति , प्रसिद्धि, यश, सरकारी एजेंसियों से व्यक्ति के संबंध, नौकरी में उच्चाधिकारियों से संबंध, दृढ़ इच्छा शक्ति, आध्यात्मिक प्रवृति, गर्व आदि भी सूर्य के विषयों में शामिल हैं। सूर्य का रंग श्वेतश्याम, मजबूत हड्डियां, चौकोर चेहरा, विशाल भुजाएं और सूर्य सिर पर बाल कम हैं। किसी व्यक्ति की जन्म पत्रिका में सूर्य की स्थिति से ही उसकी आकृति तथा उपर्युक्त वर्णित विषय देखे जाते हैं।

3.5.1 चन्द्रमा के कारकतत्त्व

चन्द्रमा मन के कारक हैं। किसी व्यक्ति की माता का स्वभाव, मन की प्रसन्नता, राज चिन्ह अथवा मैडल्स, कोमल वस्तुएं, दूध व दूध से बने पदार्थ व्यक्ति की सुन्दरता व सौन्दर्य, खेती, चांदी, कांसा आदि, किसी व्यक्ति की जन्म पत्रिका में चन्द्रमा से ही देखे जाते है। क्योंकि चन्द्रमा मन के कारक हैं इसलिए किसी व्यक्ति के जीवन में उसकी भावनाओं के उतार-चढ़ाव और दिमाग में उठने वाले विचारों को भी जन्मपत्रिका में चन्द्रमा की स्थिति से ही देखा जाता है। बीज, जल, औषधि तथा समुद्र आदि पर भी चन्द्रमा का ही अधिकार है। चन्द्रमा एक मात्र ऐसे ग्रह हैं जो शुभ और पाप दोनों श्रेणी में गिने जाते हैं। जब वे पूर्ण होते हैं अर्थात जिस दिन पूर्णिमा होती है तब वे शुभ ग्रह होते है और फल देते हैं और जब क्षीण होते हैं अर्थात अमावस्या के आस-पास वे अशुभ फल देते हैं और उनकी गणना पाप ग्रहों में आ जाती है। चन्द्रमा की यह विशेषता है कि वे किसी को भी अपना शत्रु नहीं मानते। चन्द्रमा व्यक्ति का मनोबल है और यह जलीय ग्रह होने के कारण शरीर के जलतन्त्र पर इनका अधिकार है। अर्थात शरीर में ब्लड प्रेशर चन्द्रमा का विषय है। चन्द्रमा में दिखने में बड़े शरीर वाले हैं। इनकी मीठी वाणी है और स्वभाव और शरीर दोनों कोमल हैं।

3.5.2 मंगल के कारकतत्त्व

मंगल रक्त के कारक हैं। किसी व्यक्ति के स्वभाव में पराक्रम, साहस आदि जन्मपत्रिका में मंगल की स्थिति से देखे जाते हैं। उत्साह, छोटे भाई बहन, उनका स्वभाव तथा उनके गुण और अवगुण, सच और झूठ बोलना यह सब मंगल के विषय हैं। सेनापति होने के नाते हथियार, शत्रुता, शरीर में होने वाले घाव या लगने वाली चोटों पर भी मंगल का अधिकार है। दृढ इच्छा शक्ति, संकल्प लेने की शक्ति, मस्तिष्क, तर्क-वितर्क, पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले पदार्थ, भूमि और भूमि से जुड़े अन्य विषय, अग्नि अर्थात रसोई घर की अग्नि मंगल के विषय हैं। फोड़े-फुंसी भी मंगल से देखे जाते हैं। मंगल की गति लगभग 1.5 दिन में एक अंश है अर्थात् डेढ़ माह में मंगल एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश कर लेते हैं।

3.5.3 बुध के कारकतत्त्व

बुध बुद्धि के कारक हैं। विद्वता, वैदिक विषयों का ज्ञान, वाणी की चतुराई, काव्य-कौशल, हंसी-मजाक की प्रवृत्ति, श्रेष्ठ सलाह देने वाले, लेखन-कौशल, अच्छे मित्र, रचनात्मक प्रवृत्ति, संधि कराने वाले तथा गणितज्ञ हाजिर, जवाबी, संचार तन्त्र अर्थात् डाक-तार विभाग व कोरियर आदि को जन्म पत्रिका में बुध की स्थिति से देखा जाता है। शिल्प कला (Sculpture) जोड़-तोड़ और मार्केटिंग आदि बुध के विषय हैं। गोद ली हुई संतान और मामा-मामी का सामाजिक स्तर व मामा से संबंध भी बुध के अधिकार क्षेत्र में हैं। बुध त्वचा (Skin) के कारक हैं तथा मानव के स्नायु तन्त्र पर बुध का ही अधिकार है। बुध देखने में सुंदर, अच्छी त्वचा वाले तथा नसों से युक्त हैं। इनका चेहरा कांतिमान है और नेत्र लंबाई लिए हुए हैं। ये हरे वस्त्र धारण करते हैं।

3.5.4 बृहस्पति के कारकतत्त्व

बृहस्पति देवताओं के गुरु हैं अत: इन्हें देवगुरु भी कहा जाता है। देवगुरु बृहस्पति ज्ञान, संतान तथा कन्या की कुण्डली में पति के कारक हैं। शिक्षा, आध्यात्म, न्याय, दार्शनिकता, प्रचार व प्रसार, उदारता, सलाह देना, नए वस्त्र, उपहार, ईश्वर की भक्ति, कर्त्तव्य के प्रति जागरुकता, शुभ व धार्मिक कार्य, भाषण क्षमता, धैर्य, निर्भयता आदि व्यक्ति की जन्म पत्रिका में बृहस्पति की स्थिति से देखे जाते हैं। इसके अतिरिक्त समाज-सुधार के कार्य, व्यक्ति के पारिवारिक संबंध, उनकी सामाजिक स्थिति अर्थात् सोशल स्टेटस, नीतियों की पालना करना, सूती वस्त्र आदि भी बृहस्पति के विषय हैं। बृहस्पति खजांची हैं अत: बैकिंग तथा फाइनेंस भी देवगुरु बृहस्पति के अधिकार क्षेत्र में हैं। बड़े भाई व उनकी स्थिति भी जन्म-पत्रिका में बृहस्पति से देखी जाती है। बृहस्पति देखने में स्थूल शरीर वाले, धीर-गंभीर तथा भूरी आँखों वाले हैं। इनकी वाणी में गंभीरता सदा विद्यमान रहती है।

3.5.5 शुक्र के कारकतत्त्व

शुक्र दैत्यों के गुरु हैं अत: इन्हें दैत्यगुरु भी कहा जाता है। संसार की समस्त संपत्तियों के स्वामी शुक्र हैं तथा समस्त शास्त्रों के जानने वाले हैं। औषधि, गीत-संगीत, मंत्र, रस एवं गंधर्व विद्याओं का कारकत्व शुक्र को प्राप्त है। जन्म पत्रिका में शुक्र की स्थिति से व्यक्ति की संपत्ति, वैभव व समृद्धि देखी जाती है। पुरुष की जन्म पत्रिका में पत्नी के कारक शुक्र हैं। शुक्र वीर्य के भी कारक हैं। दैत्यगुरु शुक्र को 'मृत संजीवनी' विद्या का ज्ञान भी था जो उन्हें भगवान शंकर से वर स्वरूप प्राप्त हुआ था। इस विद्या से वे देवताओं व असुरों के युद्ध में मृत असुरों को पुन: जीवित कर देते थे। इसके अतिरिक्त सौन्दर्य, काम-वासना, प्रेम, कवित्व, प्राकृतिक सौन्दर्य, सुंदर वस्त्र तथा आभूषण, ऐश्वर्य, अभिनय कला, विचित्र सुंदरता, वाद्य यंत्र (Musical Instruments)) आदि भी शुक्र के ही अधिकार क्षेत्र में हैं। पेड़-पौधे, उपन्यास लिखना आदि भी शुक्र के कारकत्व हैं। सॉफ्टवेयर, कम्प्यूटर आदि तन्त्र भी शुक्र के ही विषय हैं। शुक्र सुंदर शरीर तथा सुंदर आँखों वाले हैं, इनके बाल काले व घुंघराले हैं। ये रंग-बिरंगे वस्त्र पहनते हैं। व्यक्ति की जन्म पत्रिका में शुक्र की स्थिति से ही उसकी आकृति तथा उपर्युक्त वर्णित विषय देखे जाते हैं।

3.5.6 शनि के कारकतत्त्व

ग्रहों में शनिदेव को सेवक का दर्जा प्राप्त है अत: कठोर परिश्रम, शारीरिक श्रम शनिदेव के मुख्य कारकत्वों में हैं। शनिदेव, आयु, न्याय बंधन, कारावास, लौह व लौह पदार्थ, खनिज पदार्थ, अपमान, दु:ख, निराशा का भाव देते हैं। दरिद्रता, आपत्ति, कर्ज, नौकरी खेती-बाड़ी आदि शनि के अधिकार क्षेत्र में हैं।

समाज का निचला वर्ग, नीच व्यक्तियों का आश्रय, शरीर में नसों व माँशपेशियों, पुराने खण्डहरों व गुफाओं पर शनिदेव का अधिकार है। सर्वश्रेष्ठ रूप से शनिदेव न्याय के कारक हैं तथा उन्हें दण्डाधिकारी माना जाता है। किसी व्यक्ति की जन्म पत्रिका में शनि की स्थिति से उपर्युक्त सभी विषय देखे जाते हैं।

शनिदेव नीले रंग के हैं तथा इसकी आँखे गड्ढेदार, शरीर कमजोर, नसें अधिक व शरीर के रोम अधिक वाले हैं। स्वभाव से कठोर हृदय हैं। ये वृद्ध हैं अत: व्यक्तियों की जन्म पत्रिका में शनि की स्थिति के कारण उम्र में कम होने पर भी वे अधिक उम्र के दिखते हैं।

3.5.7 राहु के कारकतत्त्व

राज्य, विदेश यात्रा, विदेश गमन तथा विदेश में निवास, भ्रम संदेह, कभी-कभी झूठ, षड़यंत्र, गुप्त विद्याएँ, नाना, वृद्धत्व, कुतर्क तथा अधार्मिकता आदि विषय जन्म पत्रिका में राहु से देखे जाते हैं। वे स्नेहशील भी हैं। राहु जकड़न हैं। राहु की गति लगभग डेढ़ महीने में एक अंश है। अत: राहु 18 महीनों में एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करते हैं।

3.5.8 केतु के कारकतत्त्व

आत्म ज्ञान, वेदांत, शत्रुओं से पीड़ा संसार से विरक्ति, वैराग्य, मोक्ष, मंत्रशास्त्र, चंचलता, हर प्रकार के ऐश्वर्य, सब प्रकार की भोग सामग्री आदि विषय जन्म पत्रिका में केतु की स्थिति से देखे जाते हैं। केतु शब्द शास्त्रों में ध्वजा के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

ध्वजा उत्कृष्टता व उच्चता का प्रतीक भी है अत: यदि किसी जन्म पत्रिका में केतु शुभ स्थिति में हों तो उपर्युक्त उच्चता व उत्कृष्टता भी देते हैं।

3.6 दृष्टि

नव ग्रहों में प्रत्येक ग्रह अपनी स्थिति से ठीक सातवीं राशि अर्थात् 1800 की दूरी पर जो भाव स्थित है, उसे पूर्ण दृष्टि से देखता है। शुभ ग्रह की दृष्टि शुभ परिणाम देती है तथा पाप या अशुभ ग्रह की दृष्टि अशुभ परिणाम देने वाली होती है। उदाहरण के लिए- नैसर्गिक शुभ ग्रह शुक्र की दृष्टि शुभ प्रभाव वाली होती है।

मंगल, बृहस्पति तथा शनि को विशेष दृष्टियाँ प्राप्त हैं। मंगल अपने स्थान से चौथे, सातवें व आठवें स्थान पर देखते हैं।

बृहस्पति - अपने स्थान से पांचवें, सातवें तथा नवें स्थान को देखते हैं। बृहस्पति नैसर्गिक शुभ ग्रह हैं इनकी दृष्टि को वैदिक ज्योतिष में अमृत दृष्टि कहा गया है अर्थात् बृहस्पति जन्म-पत्रिका के जिस-जिस भाव को दखते हैं, उस-उस भाव की वृद्धि करते हैं।

शनि - शनि जन्म-पत्रिका में अपने स्थान से तीसरे, सातवें तथा दशम स्थान को देखते हैं शनिदेव की दृष्टि विनाशकारी कही गई है। अर्थात् शनिदेव जिस-जिस भाव पर दृष्टि डालते हैं, उस भाव के शुभ परिणामों की हानि करते हैं।

3.7 सारांश

जन्मांक चक्र में अवस्थित द्वादश भाव कारक ग्रहों के विस्तृत अध्ययन हेतु वर्णित इस इकाई के माध्यम से आपने जाना कि कुण्डली के बारह भावों के नाम क्या हैं। उन भावों के स्वामी कौन हैं। किन भाव कारक ग्रह कौन है। निम्न अधिमित्र तात्कालिक मैत्री – सम – शत्रुता किन ग्रहों की है। किन भाव में स्थित किस राशि का ग्रह उच्चस्थ है तथा किसका नीचस्थ है। लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, द्वादश इत्यादि भावों से क्या क्या विचारित है। हानि लाभ व्याधि यश कीर्ति आदि के विचार नवम भाव से क्यों कि जाते हैं। नवम भाव को भाग्य अथवा धर्मलाभ भाव क्यों कहा जाता है। आपने ग्रहों की दृष्टि में शुभाशुभ का भी अध्ययन इस इकाई में किया है। विशेष रूप से भविष्यवाणी के शुभ संकेतों को बताने हेतु ग्रहों के आपसी तत्कालिक, मैत्री- शत्रु इत्यादि संबंधों का निर्देश भी इस इकाई के अन्तर्गत सम्यक रूप से किया गया है।

3.8 शब्दावली

1 लग्नकारक – ग्रह शब्द ज्योतिष शास्त्र में केन्द्र भाव की राशि में स्थित ग्रह की गति से जीवन क्षेत्रादि के प्रभाव को देखने के लिए प्रयुक्त होता है।

2 लग्नेश – लग्न का मालिक

3 कुटुम्ब - उस समूह में आने वाले अथवा पारिवारिक।

4 नैसर्गिक – स्वत: उद्भव या स्वाभाविक

5 काकरत्व – प्रभावतत्व या प्रभावात्मकता

3.9 अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उततर दे

1 चन्द्रमा किसका कारक है -
(क) वाणी का
(ख) मन का
(ग) हड्डी का
(घ) कोई नहीं

2 लग्न का कारक ग्रह कौन है

(क) सूर्य
(ख) चन्द्रमा
(ग) बुध
(घ) कोई नहीं

3 कुटुम्ब का विचार किस भाव से किया जाता है -
(क) चतुर्थ
(ख) तृतीय
(ग) पंचम
(घ) द्वितीय

4 बावडी, कुंए आदि के विचार का भाव है
(क) द्वितीय
(ख) तृतीय
(ग) पंचम
(घ) चतुर्थ

5 कौन सा ग्रह सेनापति कहलाता है -
क) राहु
(ख) मंगल
(ग) बुध
(घ) केतु

6 उच्च राशि से कौन सी राशि नीच कहलाती है
(क) द्वितीय
(ख) तृतीय
(ग) सातवीं
(घ) चतुर्थ

7 मुख्यरूप से रक्तकारक ग्रह है
क) राहु
(ख) मंगल
(ग) बुध
(घ) केतु

8 ग्रहों का मैत्री संबंध कितने प्रकार का होता है
क) चार

(ख) तीन

(ग) छ:

(घ) आठ

9 प्रत्येक भाव कितने अंश का होता है

क) 40^0

(ख) 60^0

(ग) 70^0

(घ) 30^0

10 नैगर्सिक रूप से शुभ ग्रह कौन है -

(क) सूर्य

(ख) बृहस्पति

(ग) बुध

(घ) कोई नहीं

अभ्यासार्थ प्रश्नों के उत्तर

1 ख 2 क 3 घ 4 घ 5 ख 6 ग 7 ख 8 ख 9 घ 10 ख

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 ज्योतिष शास्त्र का इतिहास – पं; सुरेश चन्द्र मिश्र चौरखम्भा प्रकाशन वाराणणसी

2 ज्योतिष शास्त्रों का इतिहास – डॉ; ताराचन्द्र – चौखम्भा प्रकाशन वराणसी

3 संस्कृत शास्त्रों का इतिहास – डॉ; बलदेव उपाध्याय, चौखम्भासुर भारती प्रकाशन, वाराणसी

4 वैदिक संस्कृति का इतिहास – काव्यमाला सिरीज

इकाई 4

लग्न का सामान्य फल, ग्रहों का शुभाशुभत्व एवं अरिष्ट विचार

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 कुण्डली में शुभाशुभ भाव
4.3.1 अशुभ भाव
4.3.2 मारक भाव
4.3.3 अष्टम एवं द्वादश भावं
4.4 लग्न के विशेष नियम
4.4.1 द्वितीयेश और द्वादशेश के विशेष नियम
4.4.2 द्वितीयेश और द्वादशेश चन्द्रमा हो
4.4.3 सूर्य या चन्द्र का अष्टम भाव या स्वामी होना
4.5 राशियां
4.6 सारांश
4.7 शब्दावली
4.8 अभ्यास प्रश्न
4.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.1 प्रस्तावना

लग्नों के सामान्य फल, ग्रहों के शुभाशुभत्व एवं अरिष्ट विचार के वर्णन से संबंधित यह चौथी इकाई है। तीसरी इकाई के अन्तर्गत भावों की संज्ञाकारक ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता, ग्रहों के कारकत्व एवं दृष्टि विचार से संबंधित तथ्यों का अध्ययन किया है। इस इकाई में ग्रहों का शुभाशुभत्व और अरिष्ठ विचार तथा लग्नों का सामान्य फल वर्णन आपके अध्ययन हेतु प्रस्तुत है। किसी भी जन्मकुण्डली में शुभ और अशुभ भाव दोनों पाये जाते है। दोनों के परिणाम भी सर्वदा घटित होते देखे गये है।

शुभ अशुभ, मारक भावों के अलावा अष्टम एवं द्वादश भाव कुण्डली में हानि के भाव कहे जाते है। 1, 5 और 9 सर्वाधिक शुभ भाव होते है। 3,6,11 त्रिषड़ भाव होते है। यह अशुभ है। इन भावों का स्वामी शुभ

ग्रह हो तो भी इनके परिणाम अशुभ ही होते है। कुण्डली के द्वितीय और सातवें भाव को मारक भाव कहा जाता है। इनके स्वामी भी अशुभ फलकारी होते है। मारक का अर्थ है मृत्युकारक। प्रत्येक लग्न के लिए शुभ और अशुभ ग्रह अलग अलग होते है। इनका निर्धारण इनका भाव स्वामित्व के आधार पर किया जाता है।

अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप भावों के प्रकार ज्ञान के अलावा ग्रहों की भाव प्रभावशालीता का ज्ञान प्राप्त कर शुभाशुभत्व का निर्णय कर सकेंगे साथ ही ग्रह गति के आधार पर त्रिषड, त्रिकोण, मारक इत्यादि की स्थिति को भी बताने में सफल हो सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1 कुण्डली के लग्नों को परिभाषित कर सकेंगे

2 शुभ और अशुभ भावों को बता सकेंगे।

3 ग्रहों के नैसर्गिक स्वभाव की पहचान कर सकेंगे।

4 मारक भावों का बता कर उनके प्रति संचेत कर सकेंगे।

5 त्रिकोण आदि को परिभाषित कर पायेंगे।

6 सभी लग्नों के उत्पन्न अरिष्ठ की पहचान कर सकेंगे।

7 द्वितीयशे और द्वादेश के प्रभाव को बता सकेंगें।

4.3 कुण्डली में शुभाशुभ भाव

शुभ भाव – किसी भी जन्मकुण्डली में 1,5,9 सर्वाधिक शुभ भाव होते हैं अत: इन भावों के स्वामी सदैव शुभ परिणाम देते हैं, चाहे इन भावों के स्वामी अशुभ ग्रह ही क्यों न हों। **उदाहरणार्थ** – वृषभ लग्न में शानि नवम व दशम भाव के स्वामी होते हैं अत: नैसर्गिक रूप से अशुभ ग्रह होते हुए भी शनि भावों के लिए शुभ परिणामस्वरूप होंगे।

4.3.1 अशुभ भाव

त्रिषडाय : 3,6 और 11 भाव त्रिषडाय भाव माने जाते हैं अत: इन्हें अशुभ भाव कहा जाता है, अत: इन भावों के स्वामी ग्रह शुभ होते हुए भी अशुभ परिणामकारी होते हैं। उदाहरणार्थ – तुला लग्न में बृहस्पति 3, 6 भाव के स्वामी है अत: वे इस लग्न के लिए अशुभ ग्रह हो जाएंगे।

4.3.2 मारक स्वामी

कुण्डली के 2 एवं 7 भाव को मारक भाव कहा जाता है, अत: इन भावों के स्वामी भी फलकारी होते हैं। मारक शब्द का अर्थ होता है मृत्युकारक।

4.3.3 अष्टम एवं द्वादश भाव

अष्टम बाधाओं और संघर्षों का भाव है और द्वादश भाव हानि का भाव है अत: इन भावों के स्वामी ग्रह किसी लग्न विशेष के लिए अशुभ फलदायी हो सकते हैं।

इस प्रकार दो निष्कर्ष निकलते हैं -

क ग्रह नैसर्गिक रूप से शुभ और अशुभ होते हैं।

ख प्रत्येक लग्न के लिए शुभ और अशुभ ग्रह भिन्न भिन्न होते हैं इनका निर्धारण उस ग्रह के भाव स्वामित्व के आधार पर किया जाता है।

कुछ महत्त्वपूर्ण नियम

1 **त्रिकोण शुभ होते है** – जो ग्रह त्रिकोण के स्वामी होते हैं, वे शुभ परिणाम देते हैं अर्थात किसी जन्मकुण्डली मे 5 एवं 9 भाव के स्वामी शुभ होते हैं, चाहे वे अशुभ ग्रहों की श्रेणी में आते हों। मेष लग्न को उदाहरण मानकर इसका अध्ययन करते हैं। मेष लग्न में पंचम भाव के स्वामी सूर्य हैं त्रिकोण के स्वामी होने के कारण सूर्य लग्न में शुभ फलदायी होंगे।

हम जानते हैं कि सूर्य और चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य सभी ग्रहों को दो दो राशियों का स्वामित्व प्राप्त है। परिणामस्वरूप कोई एक ग्रह एक ग्रह एक शुभ और एक अशुभ भाव का स्वामी हो सकता है। मेष लग्न में बृहस्पति नवम व द्वादश भाव के स्वामी हैं अर्थात एक शुभ व एक अशुभ भाव। अवधारणा को अच्छी तरह समझने के लिए हमें आगे वर्णित बिन्दुओं को ध्यान में रखना होगा

1 यदि कोई ग्रह एक त्रिकोण और एक केन्द्र का स्वामी हो

इस स्थिति का विश्लेषण करने से पूर्व हमें केन्द्र से प्राप्त होने वाले परिणामों को समझना होगा। केन्द्रों के संबंध में ज्योतिष के नियम हैं कि जब कोई ग्रह केन्द्र का स्वामी होता है तो वह अपने नैसर्गिक शुभ – अशुभ गुणों को त्याग देता हैं अर्थात उसमें केन्द्राधिपति दोष आ जाता है। इसका यह अर्थ हुआ कि नैसर्गिक रूप से अशुभ ग्रह, अशुभ फल नहीं देगा और इसी प्रकार नैसर्गिक रूप से शुभ ग्रह भी केन्द्र का स्वामी होने पर शुभ परिणाम देने में तटस्थ रहेगा अत: जब एक ही ग्रह त्रिकोण और केन्द्र का स्वामी होता है तो निम्न समीकरण बन जाता है, शुभफल (त्रिकोण का स्वामी होने के कारण)+तटस्थ (केन्द्र का स्वामी होने के कारण = शुभफलदायक। आइए, इस समीकरण को निम्न कुण्डली पर लागू करते है -

2 यदि कोई ग्रह एक त्रिकोण का स्वामी व अन्य 6 या 8 भाव का स्वामी हो -

इस स्थिति को समझने से पूर्व हमें अशुभ भावों के परिणामों को समझना होगा। यदि नैसर्गिक अशुभ ग्रह किसी अशुभ भाव का स्वामी हो जाता है तो अशुभ परिणामों में वृद्धि

हो जाएगी। यदि नैसर्गिक शुभ ग्रह अशुभ भाव का स्वामी हो जो अशुभ परिणामों में कमी हो जाएगी।

त्रिकोण स्वामी + नैसर्गिक शुभ ग्रह के अशुभ भाव के स्वामी होने पर = शुभ फल (सामान्य)

त्रिकोण स्वामी + नैसर्गिक अशुभ ग्रह के अशुभ भाव के स्वामी होने पर = अशुभ फल

इस नियम को कुछ जन्म लग्नों से समझते हैं। इसे कुछ उदाहरणों से समझते हैं :

कर्क लग्न – कर्क लग्न में बृहस्पति त्रिकोण (नवम भाव) के स्वामी होते हैं, साथ ही वे अशुभ भाव (छठे भाव) के भी स्वामी होते हैं। चूंकि बृहस्पति नैसर्गिक रूप में शुभ ग्रह हैं अत: कर्क लग्न वालों के लिए वे प्राय: शुभ परिणाम देते हैं।

मिथुन लग्न – मिथुन लग्न में शनि अष्टम नवम (त्रिकोण) भाव के स्वामी होते हैं, जिनमें अष्टम भाव अशुभ व त्रिकोण भाव शुभ माना जाता है। शनि नैसर्गिक अशुभ ग्रह हैं अत: त्रिकोण भाव के स्वामी होते हुए भी शनि इस लग्न के लिए शुभ फलदायी नहीं हो सकते।

2 **यदि कोई ग्रह एक केन्द्र एवं अन्य अशुभ भाव का स्वामी हो -**

हमें ज्ञात हैं कि जब कोई केन्द्र का स्वामी होता है तो अपने मूल गुण खो देता है अर्थात उसमें केद्राधिपत्य दोष उत्पन्न हो जाता है तथा साथ ही किसी अशुभ भाव के स्वामी होने के कारण उनमें अशुभ प्रभाव भी होते हैं। इस स्थिति में निम्न समीकरण बनता है –

तटस्थ + अशुभ = अशुभ

4.4 लग्न के विशेष नियम

लग्न को केन्द्र एवं त्रिकोण दोनों ही रूप में माना जाता है । अत: यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि लग्न के लिए किस नियम को लागू किया जाएं? हमें यह स्मरण रखना होगा कि लग्न बहुत बली भाव होता है और इसीलिए लग्न के स्वामी को शुभ माना जाता है चाहे लग्नेश की दूसरी राशि अशुभ भाव में ही स्थित क्यों न हो। लग्न सर्वाधिक बली भाव होता है अत: कुण्डली की स्थिति संपूर्ण जन्मपत्रिका के बलाबल का निर्णय करती है।

4.4.1 द्वितीयेश व द्वादशेश के विषय नियम

महर्षि पाराशर के नियम के अनुसार द्वितीयेश एवं द्वादशेश तटस्थ् (सम) परिणाम देते हैं तथा अच्छे परिणाम देने की स्थिति में नहीं होते हैं। इनके परिणामों की तीव्रता इनकी दूसरी राशि की अन्य भावों की स्थिति के अनुसार निर्धारित की जाती है। उदाहरणार्थ् - मेष लग्न में बृहस्पति नवमेश – द्वादशेश होते हैं। महर्षि पाराशर के नियम के अनुसार द्वादश भाव के स्वामी होने के कारण बृहस्पति तटस्थ हो जाएंगे परन्तु

उनके त्रिकोण भाव के स्वामी होने के कारण शुभ परिणाम महत्त्वपूर्ण हो जाएंगे क्योंकि नवम भाव त्रिकोण तथा भाग्य भाव है अत: मेष लग्न में बृहस्पति शुभ परिणाम देते हैं।

4.4.2 यदि द्वितीयेश व द्वादशेश सूर्य और चन्द्रमा हों

हम जानते हैं कि सूर्य और चन्द्रमा एक एक राशि के स्वामी हैं। यदि वे द्वितीय एवं द्वादश भावों के स्वामी होते हैं तो इनके परिणामों का निर्धारण अन्य ग्रहों से इनकी युति के आधार पर करेंगे। यदि ये शुभ ग्रहों या शुभ भावों के स्वामी ग्रहों की युति करेंगे तो वे शुभ परिणाम देंगे तथा यदि ये ग्रह अशुभ ग्रहों या अशुभ भावों के स्वामियों से युति करेंगे तो व अशुभ परिणाम देंगे।
अब हम प्रत्येक लग्न के लिए शुभ या अशुभ ग्रह का निर्णय करते हैं।

4.4.3 सूर्य या चन्द्र के अष्टम भाव के स्वामी होने का विशिष्ट नियम

हम जानते हैं कि अष्टम भाव को अशुभ भाव कहा जाता है। यदि कोई ग्रह अष्टम भाव का स्वामी होता है तो वह लग्न के लिए अशुभ फलदायी हो जाता है परन्तु सूर्य और चन्द्रमा के लिए एक विशिष्ट नियम है कि वे जब अष्टम भाव के स्वामी बनते हैं तो अशुभ परिणाम नहीं देते। इस प्रकार धनु और मकर लग्नों में सूर्य, चन्द्रमा अष्टम भाव के स्वामी होने पर भी इतने अशुभ परिणाम नहीं देते जितने कि अन्य ग्रह अशुभ फलदायी हो सकते हैं।

4.5 राशियां

मेष – मंगल प्रथम एवं आठवें भावों का स्वामी है। मंगल की मूलत्रिकोण राशि मेष हैं। मंगल शुभ ग्रहों के लिए सहायक होगा। बृहस्पति (नवमेश) और शनि (दशमेश तथा एकादशेश) यदि दोनों एक साथ हो तो शुभ फल नहीं देंगे (ग्वारवां भाव शनि का मूलत्रिकोण भाव है तथा चर लग्न के लिए 11वां बाधक स्थान है। बृहस्पति यदि पीडित हों तो बुरा फल देते हैं। शनि यदि पीड़ित हो तो मृत्यु देता है। शुक्र निश्चित ही मारक हैं। (शुक्र: साक्षान्हिन्ता)। चन्द्रमा मिश्रित फलदायक है।

वृषभ – सूर्य और शनि शुभ है। बुध भी शुभ है किन्तु कुछ सीमा तक। बृहस्पति को बुरा तथा मारक माना गया है क्योंकि वह दोनों ही अशुभ भावों के स्वामी हैं। तृतीयेश चन्द्रमा, शुक्र, (लग्नेश तथा षष्टेश) षष्टेश होने के कारण (शुक्र की मूल त्रिकोण राशि तुला होने के कारण) मारक ग्रह है। सूर्य शनि के साथ शुभ होता है जबकि सूर्य केवल केनद्र तथा त्रिकोण दोनों का स्वामी हो तो वह शुभ बन जाता है। यहां पर सूर्य केवल एक भाव का स्वामी है। संभवत: इसी कारण महर्षि मराशर ने कहा है कि शुभौ शनि दिवाकरौ। बुध द्वितीयेश (मारक स्थान) है और पंचमेश (योगकारक भाव) है। परन्तु उसे कुछ सीमा तक अच्छा (अल्प शुभ प्रदत्त माना गया है। यदि बुध शनि तथा सूर्य की युति में हो तो वह प्रभावकारी उत्तम फल देता है। किन्तु अकेला हो तो वह शुभ नहीं हो सकता है। मंगल सप्तमेश तथा द्वादशेश होने के कारण मारक माना जाता है। क्योंकि सप्तम मारक स्थान है तथा 12वां मूलत्रिकोण राशि है (अशुभ भाव)।

चन्द्रमा भी मारक बन जाता है यदि वह अन्य मारक ग्रह से संबंधित हों।

मिथुन – बृहस्पति (सप्तमेश और दशमेश) और शनि (अष्टमेश तथा नवमेश) यदि दोनों एक साथ हो तो शुभ फल की आशा नहीं की जाती (जबकि ये नवमेश और दशमेश है) शनि अष्टमेश है और बृहस्पति की मूलत्रिकोण राशि सप्तम है जो द्विस्वभा लग्न के लिए बाधक स्थान है (शुभ ग्रह यदि केन्द्र के स्वामी हो तो शुभ फल नहीं देते क्योंकि इस स्थिति में केन्द्रधिपति दोष लगता है) इस लग्न के लिए चन्द्रमा प्रधान चन्द्रमा प्रधान मारक होता है (राशि मुख्यनिहन्ता) जो उसकी युति पर निर्भर करता है।

कर्क – मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा शुभ है। शनि और सूर्य मारक है किन्तु चे अपनी युति के अनुसार फल देते हैं। इसका अर्थ है शनि (सप्तमेश और अष्टमेश) तथा सूर्य (द्वितीयेश) मारक हैं किन्तु वे स्वतन्त्र रूप से प्रभाव नहीं देते बल्कि अन्य ग्रहों के साथ संबंध के अनुसार अच्छा या बुरा फल देते हैं। शुक्र केन्द्राधिपति (चौथा भाव तुला मूल त्रिकोण राशि है।) होने के कारण शुभ नहीं है। वह एकादशेश भी है (जो चर लग्न के लिए बाधक स्थान होता है) शुक्र अशुभ फल देनले के लिए अशुभ फल देने के लिए अशुभ ग्रहों का दोहरा कार्य करेगा। षष्टेश (मूल त्रिकोण राशि) होने के बावजूद बृहस्पति को भी शुभ माना गया है। संभवत: इस कारण से ही अत्यधिक शुभ नवम है और बृहस्पति चन्द्रमा का निकटतम मित्र है, जातक को शुभ फल प्राप्त होता है।

सिंह – मंगल, बृहस्पति और सूर्य शुभ ग्रह हैं। शनि और चन्द्रमा मारक हैं (चे अपनी युति के अनुसार फल देते हैं।) शनि बुरा है क्योंकि वह षष्टमेश और सप्तमेश है तथा लग्न स्वामी का शत्रु है। बुध द्वितीयेश (मूल त्रिकोण राशि) तथा एकादशेश और शुक्र तृतीयेश (मूल त्रिकोण राशि) और दशमेश (केन्द्राधिपत्य दोष) के कारण अशुभ है।

कन्या – मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा अशुभ हैं। बुध और शुक्र शुभ हैं। शुक्र मारक भी है (मारकोउपि कवि) सूय अपनी संयुक्ति के आधार पर प्रभाव देगा (सूर्य साहचर्य फलप्रद)। क्योंकि शनि पंचमेश है और लग्नेश का मित्र है। अत: उत्तम फल देगा (परन्तु पाराशन ने यहां पर शनि के बारे में कुछ नहीं कहा है और शनि तथा बृहस्पति की युक्ति के अतिरिक्त मिथुन लग्न के बारे में भी कुछ नहीं कहा है) शनि षष्टेश भी हैं। इस कारण कुछ कठिनाई आ सकती है (छठा भाव मूल त्रिकोण राशि है)। अष्टमेश होने के कारण मंगल मृत्यु भी दे सकता है।

तुला – बुध को शुभ माना जाता है। मंगल मारक है। मारक दूसरे और सातवें भावों के स्वामी हैं और सूर्य ग्यारवहें भाव (चर लग्न के लिए बाधक स्थान) के स्वामी हैं (रूकावट डालने वाला ग्रह है)। अत: यह अशुभ है। बृहस्पति तृतीयेश तथा षष्टेश होकर अशुभ हैं। यह लग्न स्वामी का शत्रु भी है(बृहस्पति के लिए शुक्र शत्रु है)।

वृश्चिक – शुक्र, बुध और शनि अशुभ है। बृहस्पति और चन्द्रमा शुभ हैं। शुक्र, बुध और अन्य अशुभ ग्रह जातक को मृत्यु देते हैं। इस लग्न के लिए मंगल सम है (तुला लग्न के लिए जैसा कि शुक्र है) मंगल लग्न स्वामी होने के कारण शुभ है किन्तु वह षष्टेश है जो उसकी मूलत्रिकोण राशि है। (अशुभ)

धनु – मंगल और सूर्य शुभ हैं। बुध और सूर्य योग बनाने में सक्षम है। शनि मारक होते हुए मृत्यु नहीं देता। बृहस्पति सम है। शुक्र में मारक शक्ति है क्योंकि वह षष्टमेश और एकादमेश है तथा लग्न स्वामी का शत्रु होकर इस लग्न के लिए अति अशुभ है। शनि द्वितीयेश और तृतीयेश होने के कारण मारक है । यदि शुक्र शनि के साथ युक्त हो तो वह मारक बन जाता है। बुध सातवें तथा दसवें भावों का स्वामी हैं (दो केन्द्र) दसवें में मूल त्रिकोण राशि पड़ती है। इसलिए अशुभ है यदि बुध की युति सूर्य (नवमेश) या मंगल (पंचमेश) दोनों से ही जो इस लग्न के लिए शुभ हैं तो शुभ फल देता हैं। चन्द्रमा और बृहस्पति की युति उत्तम अति उत्तम फल देती हैं जब गुरू और चन्द्रमा एक साथ हो तो इससे गजकेसरी योग बनता है जिस पर पाठ 13 में विचार किया जाएगा।

मकर – शुक्र और बुध शुभ हैं। शनि लग्न स्वामी होने के कारण स्वयं का मारक नहीं होगा (मन्द: स्वयं न हन्ता) मंगल तथा अन्य पाप ग्रह मृत्यु दे सकते हैं (हन्ति पापा: कुजादया:) सूर्य सम है। चतुर्थेश मंगल (मूल त्रिकोण) और एकादशेश (मूल त्रिकोण)। अत: विपरित फल देता है। चन्द्रमा सप्तम (मारक स्थान) का स्वामी है। संभवत: इसी कारण महर्षि पाराशर ने कहा है कुजजीवेन्दव: पापा/। एक मात्र शुक्र ऐसा ग्रह है जो योगकारक है क्योंकि यह पंचमेश और दशमेश है।

कुंभ – बृहस्पति, चन्द्रमा और मंगल अशुभ हैं। शुक्र और शनि शुभ हैं। एकमात्र शुक्र बली राजयोग कारक है (क्योंकि वह चतुर्थेश और नवमेश है) बृहस्पति, सूर्य और मंगल मृत्यु दे सकते हैं। बुध सम है (मिश्रित फल दे सकता है) बृहस्पति (द्वितीयेश और एकादशेश) चन्द्रमा (षष्टेश) और मंगल तृतीयेश और एकादशेश) चन्द्रता) षष्टेश) और मंगल (तृतीयेश और दशमेश) पाप ग्रह है।

मीन – गुरू या चन्द्रमा के साथ मंगल राजयोग कारक है। चन्द्रमा और मंगल शुभ हैं। मंगल बली ग्रह है। मंगल मारक भी है किन्तु त्रिकोण (9वां) भाव का स्वामी होने के कारण स्वयं नहीं मार सकता। जब तक अन्य मारक शनि या बुध अशुभ हैं। शनि 11 वें और 12वें (दोनों अशुभ भावों के स्वामी है। शुक्र भी तीसरे तथा आठवें दोनों अशुभ भावों के स्वामी हैं। छठे भाव का स्वामी होने के कारण सूर्य भी अशुभ ग्रह है।

4.6 सारांश

सभी जन्म कुण्डलियों में 1,5 तथा 9 सबसे अधिक शुभकारी भाव होते है इनके स्वामी भी सदैव शुभ फलकारी ही होते है। 3,6 तथा 11 को अशुभ भाव कहा जाता है। इनके स्वामी यदि शुभ ग्रह भी होतो उन्हें शुभफल दाता नहीं माना गया है। कुण्डलियों के द्वितीय और सप्तम भावों को मारक भाव कहा जाता है। इन भावों के स्वामी अपनी दशा में सर्वदा पीड़ा कारक होते है। आठवां भाव बाधाओं का भाव है। इसे संघर्ष का भाव कहा जाता है। द्वादश् हानि का भाव है उनके स्वामी लग्न विशेष में अशुभ फलों को देने वाले हो सकते है। नैसर्गिक रूप से ही ग्रहों की स्थितियां शुभ और अशुभ दोनों होती है। लग्नानुसार शुभ

और अशुभ भिन्न भिन्न होते है। भाव स्वामित्व ही इनके निर्धारण में सहायक होते है। त्रिकोण के स्वामी ग्रह शुभ कारी कहलाते है। अशुभ की श्रेणी में आने वाले ग्रह यदि 5 तथा 9 भाव के स्वामी होतो वे शुभ ही माने जाते है। कोई एक ही ग्रह शुभ और अशुभ दोनों भावों का स्वामी हो सकता है अत: इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप लग्नों के सामान्य फल का ज्ञान कर उनसे संबंधित भावों के अनुसार फलाफल बताने में समर्थ हो सकेंगे साथ अरिष्टता तथा के सूचक भावों को जन्मकर उससे संबंधित फलों का बोधन करा सकेंगे।

4.7 शब्दावली

1 मारक भाव – जिस भाव से मृत्यु तुल्य कष्ट होता है उसे मारक भाव कहते है।

2 त्रिषड् – 3, 6 और 11 वें भाव को त्रिषड़ कहा जाता है।

3 नैसर्गिक – प्राकृतिक या स्वत: उद्भूत

4 द्वितीयशेश – द्वितीय भाव का स्वामी

5 द्वादेश – बारहवें भाव का स्वामी

6 मुखनिहन्ता - मुख्य रूप से मारक

4.8 अभ्यास प्रश्न

सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए -

1 संघर्षो के भाव कहलाते है –

(क) अष्टम द्वादश
(ख) तृतीय द्वादश

(ग) चतुर्थ द्वादश

(घ) कोई नही

2 किस लग्न में बृहस्पति त्रिकोण का स्वामी होता है
(क) मेष
(ख) कर्क

(ग) मिथुन

(घ) तुला

3 द्वितीयेश और द्वादेश सम परिणाम देते है यह किसका मत है -

(क) लग्ध

(ख) शुक्राचार्य

(ग) पाराशर

(घ) कोई नहीं

4 शनि का मल त्रिकोण भाव है

(क) प्रथम

(ख) अष्टम

(ग) एकादश

(घ) तृतीय

5 किनके अतिरिक्त अन्य ग्रहों के दो दो राशियों का स्वामित्व प्राप्त है

(क) शुक्र और शनि

(ख) गुरू और मंगल

(ग) बुध और शुक्र

(घ) सूर्य और चन्द्रमा

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 क
2 ख
3 ग
4 ग
5 घ

4;9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 ज्योतिष शास्त्र का इतिहास – पं; सुरेश चन्द्र मिश्र चौरखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2 ज्योतिष शास्त्रों का इतिहास – डॉ; ताराचन्द्र – चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

3 संस्कृत शास्त्रों का इतिहास – डॉ; बलदेव उपाध्याय, चौखम्भासुर भारती प्रकाशन, वाराणसी

4 वैदिक संस्कृति का इतिहास – काव्यमाला सिरीज

इकाई - 5

भावफल

इकाई संरचना

5.1. प्रस्तावना
5.2. उद्देश्य
5.3. विषय प्रवेश
 5.3.1 भावों के सामूहिक नाम
 5.3.2 भावानुसार अंग एवं सम्बन्धियों का विचार
5.4. भाव विचार
 5.4.1. लग्नादि द्वादश भावों के कारक
5.5. भावश्रय फल
 5.5.1. सूर्य आदि नवग्रहों का द्वादशभावों में फल
5.6. भावों के फलित सूत्र
5.7. सारांश
5.8. शब्दावली
5.9. अभ्यास प्रश्न
5.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

5.1 प्रस्तावना

जन्म कुण्डली में बनने वाले उन द्वादश कोष्ठकों को ''भाव'' अथवा घर कहते है, जिनमें सूर्यादि ग्रहों की स्थापना की जाती है। विचार करने वाले विषयों के नाम से लग्न भाव को तनु, उदय या जन्म, द्वितीय भाव को धन, कुटुम्ब, तीसरे भाव को पराक्रम आदि। इस इकाई के अध्ययन के बाद छात्र जन्मकुण्ड़ली के द्वादश भावों की जानकारी प्राप्त कर पायेंगे। इसके अन्तर्गत हमारे मन में उठने वाले प्रश्न जैसे - आरोग्यता, धनलाभ, शिक्षा, नौकरी, व्यवसाय, शादी, सन्तान आदि से सम्बन्धित जानकारी हमें किस भाव को देखने पर मिलेगी, इसका ज्ञान करा सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन का उद्देश्य कुण्ड़ली के 12 भावों की जानकारी प्राप्त करवाना है। जातक जन्म कुण्ड़ली दिखाने आते समय अपने मन में कई प्रश्न लेकर आता है। उसे प्रश्न का उत्तर आप किस भाव से देंगे यह जानकारी प्राप्त करना ही इस ईकाई का उद्देश्य है।

5.3 विषय प्रवेश

जन्म कुण्ड़ली में 12 घर अथवा कोष्ठक होते है, जिनको 12 भाव कहते हैं। ''भाव'' के अधिपति ग्रह को ''भावेश'' कहते है। मान ले कि सप्तम स्थान पर मीन राशि का अधिपति गुरू है तो यहाँ भावेश का अर्थ गुरू होगा।

5.3.1. भावों के सामूहिक नाम से भी जाना जाता है, जैसे - केन्द्र, आपोक्लिम, त्रिक, चतुरस्त्र, त्रिकोण आदि।

(i) केन्द्र - प्रथम, सप्तम, चतुर्थ एवं दशम भाव।

(ii) पणफर - दूसरा, पाँचवा, आँठवा एवं ग्यारवाँ।

(iii) आपोक्लिम - तीसरा, छठा, नवाँ और बाहरवाँ।

(iv) त्रिकोण - प्रथम, पंचम, और नवम।

(v) चतुरस्त्र - चतुर्थ एवं अष्टम।

(vi) उपचय - तीसरा, छठा, दसवाँ।

(vii) त्रिक - छठा, आठवाँ, बारहवाँ।

(viii) मारक - दूसरा व आठवाँ।

(ix) त्रिषडाय - तीसरा छठा व ग्याहरवाँ

उपर्युक्त भावों की जानकारी हम यहाँ नीचे दी गई आकृति से स्पष्ट रूप से समझेंगे।

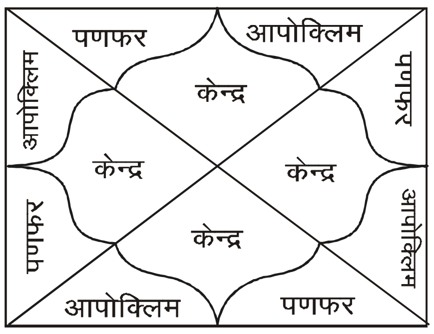

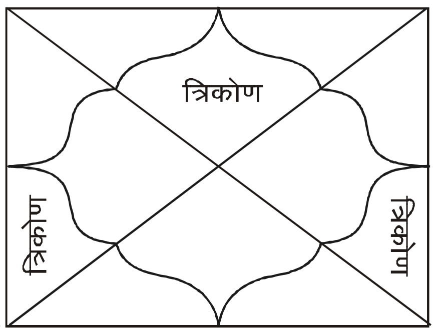

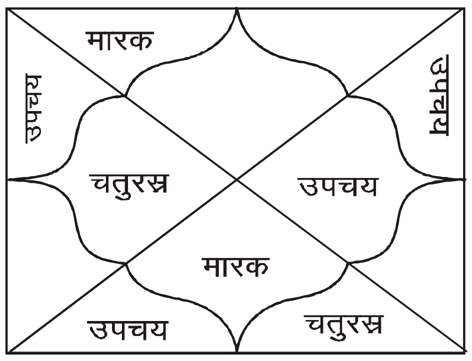

5.3.2. भावानुसार अंग एवं सम्बन्धियों का विचार

इस इकाई द्वारा हम कुण्ड़ली के 12 भावों से शारीरिक अंगों का एवं सम्बन्धियों का विचार भी कर सकते हैं। किस भाव द्वारा किस अंग अथवा सम्बन्धित का फलादेश करेंगे यह एक ज्योतिष के लिए महत्त्वपूर्ण जानकारी है। जातक को किस प्रकार का रोग है या उसकी शारीरिक बनावट किस प्रकार होगी हम यह नीचे दिए गए चित्र 1 से जान पायेंगे। एवं इन्हीं भावो द्वारा हम अपने कुटुम्ब के सदस्यों के आपस के सम्बन्ध एवं उनसे लाभ-हानि के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त करने के लिए भी चित्र 2 से जानेंगे।

भावानुसार अंग विचार

चित्र – 1

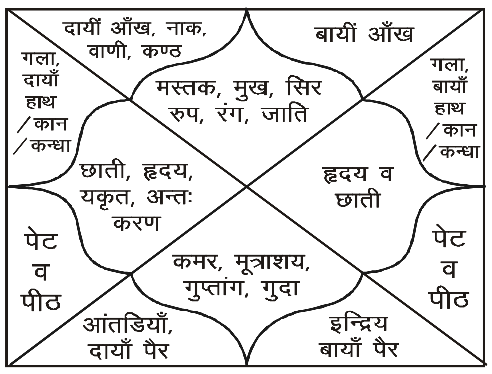

भावानुसार सम्बन्धियों का विचार

चित्र 2

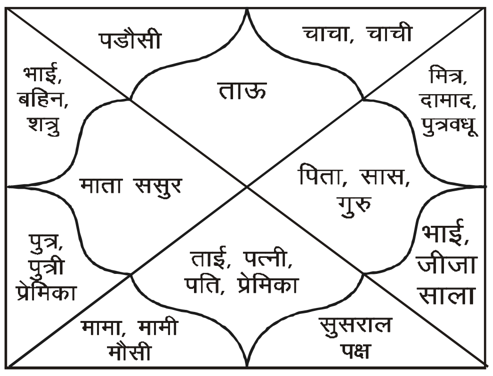

5.4 भाव विचार

जन्म कुण्ड़ली में 12 भाव होते हैं तथा भावों के सामूहिक नाम क्या होते है, यह जानकारी हम अब तक प्राप्त कर चुके हैं। परन्तु हमें किस भाव से क्या फलादेश कहना चाहिए जिससे कुण्ड़ली दिखाने आए जातक को हम संतुष्ट कर पाये, यह हमने नीचे बताने का प्रयास किया है -

(1) प्रथम भाव:

शरीर सम्बन्धी विचार, रूप, रंग काला, गोरा, शारीरिक गठन, दुबला पतला, छोटा बड़ा कद होना, बल, साहस, गुण, स्वभाव, अहंकार, बल, बुद्धि, यश, निन्दा, अज्ञान, तिल, मस्सा आदि चिह्न, बाल-यौवन अवस्था, आयु-प्रमाण, स्थान, प्रवास, लाभ-हानि, सम्पत्ति, पुत्रों का भाग्योदय, पूर्व की विदेश यात्रा, नाना, दादी, सास की माता, ससुर के पिता, ससुर का व्यवसाय, आत्मा का, होरा, देह आदि का विचार किया जाऐगा।

(2) द्वितीय भाव:

धन-धान्य का भाव, स्वर्ण चाँदी, रत्नकोष का संग्रह, क्रय एवं विक्रय, बैंक बैलेंस, दरिद्रता, स्वयं उपार्जित द्रव्य या पिता सम्बन्धी द्रव्य का विचार, लेने-देने का व्यवहार, कर्ज, खाने का, पदार्थ, मित्र, वस्त्र, विचार, मुख, जिह्वा, चेहरा आँख, कान, नाक, स्वर, सौन्दर्य, गान, प्रेम, सुखभोग, सत्यभाषण, नेत्र (विषेषकर दायें नेत्र का फल), मृत्यु का विचार, मितव्ययी प्रवृति, शेयर, संसार में आसक्ति, अनासक्ति, ज्योतिष शास्त्र और फल कथन द्वितीय भाव से बताया जाता है।

(3) तृतीय स्थान:

पराक्रम भाव, सगे भाई-बहन का विचार, भाई-बहन की संख्या, भाई का सुख, आसपास के सम्बन्धियों का सुख, सहरोदर, आभूषण, दास-कर्म, साहस, सहन शक्ति, धैर्य, चालाकी, दुष्ट-बुद्धि, हस्ताक्षर करना,

धैर्य, दमा, खांसी, क्षय, श्वास, गायन, हावा, बाजू, कन्धे, कान, योगाभ्यास, आयुष्य, नौकर पत्नी का भाग्य, पिता की चाची, सौतेली माँ, पुत्र गोद लेने अथवा लिए जाने की सम्भावना का निर्णय इसी भव से होगा।

(4) चतुर्थ भाव:

मातृ-पितृ सुख, पैतृक सम्पत्ति, ग्रह, गृह-निर्माण, स्थावर सम्पत्ति, भूमि, बगीचा, ग्रह सुख मन की स्थिति, अन्तःकरण की स्थिति, चौपाया या वाहन, नौकर, हृदय, पेट के रोग, स्तन, बिस्तर, पलंग, बिस्तर यकृत दया, औदार्य, परोपकार, कपट, छल एवं निधि का विचार भी चतुर्थ भाव से किया जाता है। इसके अतिरिक्त, भाई का धन, पुत्र का खर्च, पुत्र की विदेश यात्रा, दूसरों से मिलने वाले उपहार, मित्र, जनता, अपना गाँव मृत्यु का स्थान, लम्बी-यात्रा, भूत-बाधा, गुप्त ज्ञान, पहले भाई या बहन की सम्पत्ति पति का व्यवसाय, पति-पत्नी में अदालती झगड़े का निर्णय भी इसी भाव से किया जायेगा।

(5) पंचम भाव:

बुद्धि विद्या, सन्तान, आत्मज, गम, मन्त्र-तन्त्र लॉटरी, सट्टा, उपासना, मन्त्र-जप, काम में सफलता या असफता, ज्ञान, ज्ञान प्राप्ति की दिशा, अकस्मात् लाभ, श्रृंगार, खान-पान, नए वस्त्र, नई खबर, दूसरा भाई, प्रथम सन्तान पिता की मृत्यु पागलपन, व्यभिचार, व्याभिचार के प्रेम सम्बन्ध, कामुकता, गर्भ की स्थिति, आनन्द, विनय, नीति, व्यवस्था, देव-भक्ति, नौकरी छूटना, धन मिलने के उपय, अनायास बहुत धन-प्राप्ति, जठराग्नि, गर्भाशय, पेट की बीमारियाँ, वैश्या से सम्बन्ध, गुप्त मन्त्रणा, यन्त्र की सिद्धि। हाथ कायश, मूत्र-पिण्ड एंव वस्ति का निर्णय इस भाव से करना चाहिए।

(6) षष्ठ भाव:

रिपु, द्वेष, क्षत, वैरी, अरिष्ट, हानि द्रव्य नाश, निराशा, दुख-शोक, चिन्ता, अशुभ कर्म, व्यसन, व्रण, चोट-भय, शंका, रोग-पीड़ा, यश अपयश, युद्ध, चोर, घाव, युद्ध, चोर, घाव, दुष्ट कर्म, भर्य काम में विघ्न, चोरी की धरोहर, भूत-बाधा प्रवास, मामा की स्थिति, कमर के नीचे का भाग, आंतड़ियाँ, पेट, नाभि, गुदास्थान, आदि का फल षष्ठ भाव से कहना चाहिए। यह विशेषकर रोग, रिपु, ऋण का भाव कहलाया जाता है।

(7) सप्तम भाव:

कलत्र भाव, विवाह, पत्नी का आचार, स्त्री सुख, स्त्री शरीर का विचार, व्यवसाय का साथी, जनता, मार्ग, मैथुन, काम-क्रीडा, व्यभिचार, स्त्री-सौभाग्य वैधव्य, स्त्री-कलह, भतीजा, मुकदमें में हार-जीत, सम्पूर्ण यात्रा, व्यापार, सांझेदारी, उन्नति, खोई हुई वस्तु का विचार, नष्ट धन की प्राप्ति, गुदा, मूत्रेन्द्रिय, नाभि, विदेश में कमाया धन, पुत्र का पराक्रम, विवाह सम्बन्धी निष्चित करना। स्वास्थ्य, अंगविभाग, झगड़े एवं बवासीर रोग, मृत्यु, मदन-पीड़ का भाव कहा गया है।

(8) अष्टम भाव:

कुण्ड़ली के अष्टम भाव से जातक की आयु का निर्णय करना सम्भव हो पाता है। इसके अतिरिक्त हम इस भाव से अन्य विचारणीय बातों का उल्लेख करते है जैसे मृत्यु, क्लेश, बदनामी, स्त्री, मांगल्य, सौभाग्य, दास, मृत्यु का स्थान, मरने के बाद की गति, पूर्व जन्म और अग्रिम जन्म का वृत्तान्त, किसी मृत व्यक्ति के वारिस के रूप में धन की प्राप्ति, दूसरो का धन, गढ़ा धन की प्रापित राजदण्ड़, डर, हानि, अज्ञान, आलस्य, कर्ज देना, पानी में डूबना, नदी पार करना, व्याधि, मानसिक चिन्ता, समुद्र यात्रा ऋण का होना, उतरना, लिंग, योनि, अण्कोष, जनेन्द्रियां आदि के रोग एवं संकुचित प्रवृति है।

(9) नवम भाव:

भाग्य भाव, भाग्य की वृद्धि, वैभव, ऐश्वर्य आराध्य देव, धार्मिक कार्य, धर्म के कार्यो में प्रीति अथवा अप्रीति, तीर्थ यात्रा, देव-ग्रह, दान, धन, पुण्य, मानसिक वृत्ति, भाग्योदयशील, उच्चशिक्षा, तप, धर्म, प्रवास, पिता का सुख, गुरू-भक्ति, चित्त की शुद्धता, विदेश, जल पर्यटन, पौत्र-सुख, पिता की बीमारी इसका प्रभाव जंघा पर रहता है। कुण्ड़ली के इस भाव से जातक अपने ईष्टदेव का ज्ञात कर पाता है।

(10) दशम भाव:

इस भाव को कर्म भाव के नाम से भी जाना जाता है। इस भाव की विचारणीय बातें व्यापार, राज्य, आजीविका, इज्जत, यश, धंधा-नौकरी का विचार, राजा से आदर, अधिकार मिलने का विचार, पदवी, पदोन्नति, नौकरों पर हुकूमत, मान-भंग, यश, यज्ञ, आकाश, हुकुमत, आज्ञा स्थान गुण, आस्पद, व्यायाम, मध्य, नाभि, पितृ-पक्ष के सुख का विचार, परदेश जाना अधिकार, प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य भोग, कीर्तिलाभ, राजनिति का भाव एवं नेतृत्व का फलन दशम भाव से जानना चाहिए। इस भाव से सास, गुरू आदि का निर्णय करना भी उचित माना गया है।

(11) एकादश भाव:

यह भाव आय भाव को नाम से भी जाना जाता है। सब प्रकार का धन लाभ, संचय मान, वर्तमान कर्म-फल, आमदनी, पिता का धन, धन कमाने की चतुराई, वस्त्र आभूषण, रत्न, स्वर्ण, चाँदी, जायदाद से लाभ हानि, इच्छित द्रव्य प्राप्ति, लाभ या उपाय, गज, अश्व मांगलिक कार्य, मोटर-वाहन, पालकी, सम्पत्ति, ऐश्वर्य बायाँ कान, सफलता, विद्या-प्राप्ति, ज्येष्ठ भाई या बहन छोटे-भाई का बेटा, दोनों जंघा, बायाँ हाथ, अच्छी खबर, प्रषंसा, आगमन, पिण्ड़ली, टखना आदि। मित्र, दामाद पुत्र वधु का फल भी इसी भाव से विचार किया जाऐगा।

(12) द्वादश भाव:

इस भाव के व्यय भाव भी कहते है। सब प्रकार के व्यय अर्थात् खर्च सम्बन्धी-कार्य, धन व्यय, शुभाशुभ खर्च, हानि, शरीर नाश, विदेश गमन व्यभिचार जन्म सन्तान, स्वर्ग या नरक में जाना, मानसिक चिन्ता, गुप्त शत्रु, बन्धन, जेल-यात्रा, विवाद, सरकार एवं जनता का विरोध दण्ड-राजदण्ड, दानशीलता, भ्रमण, नेत्र, बाया कान दोनो पैर, पाँव की अंगुलियाँ, दुख, दरिद्रता, पाप, व्यसन, अस्पताल, शैया-सुख, रोगी अस्पताल से कितने समय में आयेगा। भर्ती रहने की अवधि, त्याग, चाचा-चाची का फल द्वादश भाव से जाने।

5.5 भावश्रय फल

इस विषय के अन्तर्गत सूर्य आदि भाव के विशेष फल बताये गये है।

1. सूर्य का फलादेश:

प्रथम भाव (लग्न):

यदि जन्म के समय सूर्य लग्न में हो तो जातक विचित्र रूप वाला, अल्पकेशी, काम में आलसी, क्रोधी, प्रचण्ड, लम्बा, घमण्डी, स्त्री द्वारा अपमानित, क्रूर, क्षमा न करने वाला होगा। उसके नेत्र रूखे होंगे, वात-पित्त से पीड़ा पाने वाला विशाल ललाट, उन्नत नासिका, शूरवीर, अस्थिर सम्पत्ति वाला होता है।

अगर सूर्य अपनी उच्च राशि मेष अथवा सिंह में हो तो जातक का समाज में ऊँचा स्तर होता है। उसका अपना स्वतन्त्र व्यवसाय होगा। यदि सूर्य तुला राशि में हो तो नेत्र रोगी, क्रोधी, दरिद्र, हृदय रोगी रहता है उसके पुत्र नष्ट होते है।

द्वितीय भाव: द्वितीय स्थान सूर्य से मनुष्य की विद्या विनय और धन की हानि होती है, वाणी मे दोष होता है, कुटुम्बियों का विरोधी, रोगी, दुर्बल स्मरण शक्ति वाला होगा। इस भाव में सूर्य उच्च का होने पर राज्य से लाभ दिलाता है तथा सरकारी नौकरी भी मिल सकती है।

तृतीय भाव:

तृतीयस्थ सूर्य जातक पराक्रमी, प्रतापषाली राजमान्य, योगाभ्यासी एवं बलवान होता है। उच्च एवं स्वराशिस्थ, सूर्य स्वतन्त्र व्यवासाय कराता है, वह उद्योगपति हो सकता है। नीच राशिस्थ सूर्य से चर्म रोग, सहोदर से कष्ट एवं भाई-बहन की मृत्यु का फल कहे।

चतुर्थ भाव:

चतुर्थस्थ सूर्य सुख हीन, बन्धुहीन, मित्रहीन और भूमिहीन बनाता है। शत्रुद्वारा अपमानित, पितृधन हीन, परदेश में रहने वाला, प्रतिष्ठित एवं विख्यात व्यक्ति होता है, गुप्त विद्याप्रिय बनाता है, उच्च एवं स्वराशि का सूर्य जमीन जायदाद तथा मकान का सुख देता है।

पंचम भाव:

इस भाव में सूर्य जातक बुद्धिमान, मंत्र शास्त्र का ज्ञाता, सदाचारी, अल्पसन्ततिवान, एवं दुःखी होता है। ज्येष्ठ पुत्र का नाश होता है। घूमने का शौकीन होता है, फेफड़ों का रोगी अधिक कन्या सन्तान वाला शीघ्र क्रोधी होता है।

षष्ठ भाव:

षष्ठ भाव से सूर्य शत्रु नाशक, मनुष्य राजा के समान श्रेष्ठ वैभव वाला, मातृपक्ष से धन प्राप्ति करने वाला, नौकरी, से लाभ, चिकित्सा शास्त्र का प्रेमी, यदि सूर्य निर्बल हो तो जातक रोगी एवं अल्पायु होता है।

सप्तम भाव:

सूर्य सप्तमस्थ होने पर जातक स्त्रीक्लेश कारक, स्वभिमानी, कठोर, शरीर-पीड़ा एवं मानसिक चिन्ताओं से पीड़ित होता है। परस्त्रीगामी, साझेदारी से लाभ, भाग्योदय परदेश में होता है।

अष्टम भाव:

अष्टम में सूर्य हो तो धन नष्ट, अल्पायु, पित्तरोगी, चिन्तायुक्त, विगत दृष्टि, धैर्यहीन, नेत्र रोगी हो। विदेषी अथवा विधर्मी स्त्रियों से सम्बन्ध रखने वाला, कारावास पाने वाला होता है।

नवम भाव:

नवमस्थ सूर्य जातक को धनी, सुखी, दीर्घायु, सदाचारी, नेता, ज्योतिषी, साहसी, वाहन सुख, भातृ-सुख, परन्तु पिता से हीन हो अर्थात् अल्पायु में पिता न रहे। ब्राह्मण और देवताओं का आदर करने वाला हो।

दशम भाव: जातक प्रतापी, व्यवसाय कुशल, राजमान्य राजमन्त्री, उदार, ऐश्वर्य सम्पन्न, सरकारी नौकरी में उच्च पद पाने वाला, नगर-निर्माता, यशस्वी हो। लोग उसकी प्रशंसा करते हैं।

एकादश भाव: अनेक प्रकार के द्रव्य लाभ, धनी, दीर्घायु मितभाषी, स्वाभिमानी, तपस्वी, योगी, सदाचारी, अल्पसंतति एवं उदर रोगी हो। लोगो का स्नेही, विश्वासपात्र और लोगे पर हुकूमत करने वाला हो।

द्वादश भाव: इस भाव में सूर्य के होने पर जातक नेत्र रोगी अकारण विवाद में पड़ने वाला, अपव्ययी, परदेशवासी, दुराचारी हो। वाम नेत्र तथा मस्तक रोगी, आलसी, पिता से शत्रुता रखने वाला, पुत्रहीन होता है।

2. चन्द्रमा का फलादेश:

प्रथम: जातक का चेहरा गोल, सुदर, आकर्षक, सर्वगुण सम्पन्न, धनी, स्त्री विलासी, गानविद्या प्रिय, स्थूल शरीर, सुखी व्यवसायी, लक्ष्मीवान एवं दीर्घायु होता है। यदि चन्द्रमा नीच अथवा शत्रु राशि का हो तो अनिष्ट फल कारक माने।

द्वितीय: धन स्थानस्थ चन्द्रमा जातक को मृदुभाषी, कुटुम्बप्रेमी, सोने-चांदी का लाभ पाने वाला, धनाढ्य, सहनशील एवं शान्तिप्रिय बनाता है। क्षीण चन्द्रमा जातक को दुःखी, दुर्बुद्धि एवं धनहीन बनाता है।

तृतीया: तृतीयस्थ चन्द्रमा से जातक को भाईयों का सुख, पराक्रम से धनोपार्जन करने वाला, प्रवासी, विद्वान् होता है, शूर किन्तु अत्न्यत कृपण होता हे। शुभ राशि में चन्द्रमा हो तो जातक कवि होता है।

चतुर्थ: भाई-बन्धुओं में सर्वश्रेष्ठ, पुण्यात्मा, दानी, विद्धान्, भाग्यवान्, मातृ-सुख पाने वाला, धनी, यशस्वी, उदर रोग से ग्रस्त, विवाह पष्चात् भाग्योदयी, जलजीवी एव बुद्धिमान होता है।

पंचम: पाँचवे भाव में चन्द्रमा हो तो जातक तेजस्वी, सन्तान का उत्तम सुख प्राप्त करने वाला, लज्जाशील, सट्टे से धन कमाने वाला, क्षमाशील, अनेक साधनो से आय प्राप्त करने वाला हो, कन्या सन्तति, एवं लव-अफेयर रखने वाला होता है।

षष्ठ: जातक शत्रुओं को पराजित करने वाला, कफरोगी अल्पायु, नेत्ररोगी, दुर्बल शरीर वाला हो। चन्द्रमा के साथ राहु हो तो जातक को जलोदर, मन्दाग्नि रोग होने की संभावना रहती है।

सप्तम: सप्तमस्थ चन्द्रमा जातक को स्त्रीक्लेशकारक, व्यापार से धन कमाने वाला, धैर्यवान, नेता, विचारक, सुन्दर, पतले शरीर वाला, मधुरभाषी होता है। पापराशि अथवा नीचराशि हो तो जातक की पत्नी रोगी होती है, शनि द्वारा दृष्ट होने पर रोग नपुसंकता देता है।

अष्टम: अष्टम में चन्द्रमा हो तो जातक रोगी, अल्पायु प्रमेह, मूत्राशय रोगों से पीड़ित होता है। मंगल से पीड़ित होने पर जल में डूबकर मृत्यु होती है पाप पीड़ित हो तो बालारिष्ट योग बनता है।

नवम: सब प्रकार से सुखों से सम्पन्न, तेजस्वी, धनवान, धार्मिक कार्य करने वाला, परेदष में व्यापार करने पर लाभ पाने वाला होता है। चन्द्रमा क्षीण हो अथवा शत्रु राशि में हो तो अशुभ फल होता है।

दशम: कार्यकुशल, दयालु, व्यापारी, सुखी, यशस्वी, कुलदीपक, शुभ कर्म करने वाला, राजमान्य, राज दरबार में उच्च पद प्राप्त करता है।

एकादश: चंचल बुद्धि, गुणी, सम्पत्ति से युक्त, धेन और सुन्दरियों का शौकीन बनाता है। कन्या सन्तान अधिक होती है। नौकर का सुख प्राप्त हो। वाहन-सुख ओर श्रेष्ठ कार्यों से धन प्राप्त करता है।

3. मंगल का फलदेश:

लग्न: जातक क्रूर, पापी, अति साहसी हो। गुप्त रोगी, चोर प्रकृति वाला, चर्म रोगी हो। उसके शरीर में चोट लगती है। स्वराशि अथवा उच्च का होने पर धनवान व्यवसायी होता है, इस भाव में मंगल होने पर जातक मंगलिक होता है।

द्वितीय: कटुभाषी, विरोधी, बुद्धिहीन, चेहरा अच्छा, बुरी संगति वाला, परिवार में कलह करता है। मंगल पाप युक्त या दुष्ट हो तो नेत्र रोगी बनाता है।

तृतीय: पराक्रमी, बलषाली, धनी, उदार हो, छोटे भाई का सुख नहीं होता, ऐसे व्यक्ति को दूसरा दबा नहीं सकता। मंगल पाप युक्त होने पर छोटे भाई की मृत्यु होती है।

चतुर्थ: जातक परस्त्रीगामी, कठोर हृदय, मातृहीन, मित्रहीन, सुखहीन हो। कहने का तात्पर्य चतुर्थ भव से जिन बातों का विचार किया जाता है, उनमें कमी होती है।

पंचम: सन्तान सुख में कमी, क्रोधी, उदर रोगी, कफ-वायु रोगी, गुप्त स्थान में रोग शत्रुबाधा हो, डाक्टर, वैद्य या वकील बनाता है, राहु के साथ गायन विद्या में प्रवीण बनाता है।

षष्ठ: छठे भाव का मंगल शत्रु विजयी, परिवार की उन्नति करे, लेकिन मातुल (मामा) पक्ष के लिए शुभ नहीं। रक्त विकार, व्रणयुक्त। नीच राशि का होने पर, बवासीर रोगी, अपघाती।

सप्तम: मंगल सातवें भाव में हो तो पत्नी का सुख कम मिलता है। पत्नी रोगी रहे, पत्नी द्वारा अपमान सहना पड़ता है। शुभ प्रभाव का मंगल पत्नी की आयु के लिए शुभ होता है। किन्तु सन्तान के लिए अनिष्टकारी होता है। सफल सर्जन बनकर धन-मान अर्जित करे। पुलिस अधिकारियों के लिए अच्छा है, कटुभाषी, मूर्ख, शत्रु, पीड़ित धननाशक चिन्ताकारक, स्त्री की कमर का दर्द, रोगी रहे। मंगल पापयुक्त हो तो जातक के सामने उसकी पत्नी की मृत्यु हो। स्त्री क्लेश व्रण विकार, ईर्ष्यालु एवं क्रोधी स्वभाव की हो।

अष्टम: मंगल आठवें भावं में हो तो जातक के भाई-बहन भी शत्रु बन जाते है। दारिद्रय जीवन यापन, चिन्ताग्रस्त, जवानी में अनेक कष्ट। अष्टमभाव में मंगल वाले अधिकारी प्रायः रिष्वत लेते देखे गए है, जो पकड़े नहीं जाते। प्रौढ़ावस्था में अजीर्ण रक्तचाप अधिक वायु रोग हो।

नवम: नवें भाव में कठोर स्वभाव, ईर्ष्यालु, शान्त, झूठ बोलने वाला धर्म-कर्म व अध्यात्म की ओर झुकाव नहीं होता है। त्वचा रोग, नेत्ररोग, विदेश यात्रा, माता-पिता को कष्ट कारक। डॉक्टरों को नवम का मंगल धन देता है, अल्प लाभ, उद्योग की क्षति, भाग्य यश, मान व प्रतिष्ठा की वृद्धि, भातृ-क्लेश पिता से असन्तोष, सामान्य राज सम्बन्ध।

दशम: मंगल दशम भाव मे धैर्यवान, लोभी, भूमि का मालिक हो। छोटी आयु में माता-पिता का मरण हो। स्त्री राशि का लगन हो और मंगल दशम में हो तो जातक भारी कष्ट उठाकर भी स्वयं के पुरूषर्थ से उन्नति करता है। पुरूष राशि का लग्न हो तो बिना यत्न के कीर्ति और उन्नति देता है।

एकादश: मंगल ग्याहरवें भाव में हो तो मित्र विश्वासपात्र नही होते, मित्रों द्वारा ठगा जाता है। आत्मबल अच्छा हो तो सन्तान के लिए शुभ नही होता है। सिंह राशि लाभेश से युक्त मंगल बड़ा राजपद दिलाता है।

द्वादश: मंगल बारहवें भाव में हो चोरो से या झगड़े से भय होता है, शस्त्र से आघात होता है। झूठी अफवाहें फैलती है, स्त्री सुख में कमी होती है, कारावास होने या पागल होने की सम्भावना होती है।

4. बुध का फलादेश:

प्रथम: बुध प्रथम भाव में हो तो जातक विद्यावान, बुद्धिमान, मधुर एवं चतुर बोलने वाला, गणितज्ञ, साहित्य-काव्य में रूचि रखने वाला, तीव्रबुद्धि, उदार, विनोदी, मितव्ययी, स्त्रीप्रिय होता है।

द्वितीय: दूसरे भाव में धनवान, बुद्धिमान कवि, वक्ता, यशस्वी, व्यवहार कुशल, सुन्दर, दलाल, वकील, व्यय करने में दक्ष, वाणी, निर्मल, शुभ प्रभाव में या उच्च का हो तो ऊँची शिक्षा प्राप्त करने वाला होता है तथा बैंक कर्मचारियों के लिए शुभ होता है।

तृतीय: तीसरे भाव में प्रबल, शूरवीर, भ्रातृप्रेमी, कार्यदक्ष, परिश्रमी, भीरू विद्याभ्यासी, शास्त्रज्ञाता, माया प्रेमी, मित्र प्रेमी, सन्तानसुख, दीनता के भाव युक्त, चपल स्वभाव, भाई-बहन अच्छे हो, श्रम बहुत करना पड़े।

चतुर्थ: चतुर्थ भाव में पण्ड़ित चातुर्वाक्य कहने वाला भाग्यवान, सम्पत्ति का मालिक गूढ़ कार्यों में रत, धन धान्य सुख युक्त, स्वराशि का हो तो अन्तिम समय अच्छा बीते, मातृप्रेमी, बन्धु प्रेमी, वाहन प्रेमी होता है।

पंचम: पंचम भाव में मन्त्री, विद्या द्वारा सुख प्राप्त की वृद्धि होती है। विद्वानों द्वारा प्रशंसित, मधुरभाषी सम्पत्तिवान कुशाग्रवुद्धि होता है।

षष्ठ: छठे भाव में शत्रु रहित, विवेकी किन्तु विवाद के समय शीघ्र क्रोध करने वाला निष्ठुर वचन बोलने वाला, धैर्यहीन, परिश्रमी, अभिमानी आलसी होता है।

सप्तम: सातवे भाव में मर्मज्ञ, बुद्धिमान, सुन्दर, धनवान, नर्म अल्पवीर्य, व्यवसाय में दक्ष, विवाह धनवान कुल में होता है। वाचाल, स्पष्टवक्ता, स्त्री के वषीभूत, विवाह में विघ्न उत्पन्न होता है।

अष्टम: अष्टम भाव में विख्यात दीर्घायु, श्रेष्ठ, न्यायप्रिय, कुरूप, कफ-वायु रोग से पीड़ित, पत्नी सुशील व रहस्यो को गुप्त रखने वाली, स्त्री राशि में हो तो पत्नी सुशीला न हो।

नवम: नवें भाव में संतान सौख्य और धन तीनो की प्राप्ति, विद्वान्, धनवान, सदाचारी, धार्मिक, यशस्वी, कवि, ज्योतिषी होना सम्भव है।

दशम: दशम भाव में शूरवीर, बलवान, विद्वान्, बुद्धिमान, व्यवहारकुशल नम्र, विनोदी, मातृ-पितृ का भक्त, भाग्यवादी पुरूषार्थ, धनोपार्जन में कुशल, स्मरण शक्ति तीव्र होती है।

एकादश: ग्यारहवें भाव में बहुत धनशाली, स्वाभिमानी, उदारशील, परोपकारी, सुन्दर विचारवान, गायनप्रिय, पुत्रवान। स्वग्रही उच्च का हो तो सभी प्रकार के सुख मिलते है।

द्वादश: बुध द्वादश भाव मे हो तो भ्रष्ट दीन, आलसी, क्रूर, विद्याहीन, अपमान पाता है। वकील, सुन्दरी, विकलांग कठोर भावी, गुप्त शत्रुओं द्वारा झूठे अपवादों से दुःखी। उच्च का बुध धनवान बनाता है तथा सिद्धि प्राप्त कराता है।

5. बृहस्पति का भावफल:

प्रथम: जातक ज्योतिर्विद्, सुन्दर, कान्तिमान, उच्चस्तरीय विद्वान्, विजयलाभ, बन्धुप्रेमी, सुखी, चिरायु, बडे परिवारवाला, पुत्रवाला, भोगी, दयालु, केश शीघ्र ही श्वेत हो जाते है या झड़ने लगते है तथा दाँत गिरने लगते है।

द्वितीय: दूसरे भाव में मधुर भाषी, धनी, सुखी, सुन्दर कान्तिमान, व्यवहार कुशल, राजमान्य, पुण्यमान, भाग्यवान शत्रुनाशक, काव्यप्रेमी, पत्नी सुन्दर, विवाहोपरान्त लाभ, अग्नि तत्त्व राशिगत हो वो बाल्यावस्था में माता-पिता से मन-मुटाव की भी सम्भावना।

तृतीय: तीसरे भाव में अल्पधनी, बुद्धिमान, कृपण साहित्यप्रेमी, भ्रातृपक्ष से चिन्तित, स्त्री प्रिय, कृतघ्नी, विनम्र विचारशील बौद्धिक कार्य में सफल भोगी, कामी, स्त्रीप्रिय पर्यटनशील।

चतुर्थ: चतुर्थ भाव में सर्वत्र सम्मान प्राप्त बन्धु-बान्धव प्रेमी, सुखी गृहस्थ, दानी, ज्ञानी, राजमान्य, पितृभक्त, भू-स्वामी, वाहनयुक्त, बन्धुपूज्य, मातृ-पितृ भक्त चतुर्थ का बृहस्पति सन्तान प्रतिबन्धक भी होता है।

पंचम: पंचम भाव में बुद्धिमान, नीतिज्ञ, सट्टा या लॉटरी में सफल, प्रथम सन्तान पुत्र, स्त्री कुण्ड़ली में अधिक आयु के सज्जन मनुष्य या किसी उच्च श्रेणी के विधुर व्यक्ति से सम्बन्धो की सम्भावना।

षष्ठ: षष्ठभाव मे शत्रु रहित, निर्बल, आलसी, शान्त, गृहस्थी, विद्वान्, विवेकी, हास्यप्रिय, स्थायी आय वाला, कर्मचारी रखने वाला, रोग रहित, प्रतापी किन्तु मानसिक पीड़ा युक्त होता है।

सप्तम: सातवें भाव में धार्मिक, दयालु, बुद्धिमान, उच्च स्तर के व्यक्तियों से परिचय रखने वाला, सुन्दर, सदाचारी कर्त्तव्य परायण एवं उदार स्वभाव की पत्नी तथा उसके द्वारा लाभ प्राप्त करने वाला, भावुक, सुखी वैवाहिक जीवन, धैर्यवान, ज्योतिर्विद होता है।

अष्टम: अष्टम भाव में दुःखी निम्नकर्म करने मे तत्पर, उदर पीड़ा एवं अन्य गुप्त रोग से व्यथित, वांछित जन सहयोगी, लोभी, सन्तान पक्ष से चिन्तित गूढ़ विद्याओं का ज्ञाता, मित्रों द्वारा धन नाश, नीच बुद्धि, ईर्ष्यालु, लोभी व गुप्त रोगी होता है।

नवम: नवम भाव में धार्मिक, तपस्वी, यशस्वी, रूढ़िवादी, दयालु, परोपकारी, लम्बी तीर्थयात्रायें करने वाला, गंम्भीर विचार, धन पुत्र युक्त विनम्र, ज्योतिषी, भक्त, अध्यापक, वकील, महन्त, विदेशों में व्यापारिक, सम्बन्ध रखने वाला भी हो सकता है।

दशम: दशम भाव में सदाचारी असाधारण धनवान, वकील, संस्था का प्रधान, वैभवशाली, अहिंसक, मातृभक्त, उच्चस्तरीय रहन-सहन, राज्य सम्मान प्राप्त, भाइयों में धन लाभ करने वाला, अधिकार प्राप्त, व्यक्तियो एवं माता-पिता से सहायता प्राप्त, स्वतन्त्र रूप से कार्य करने वाला, मातृ-पितृ भक्त, कुटुम्बी, लाभवान होता है।

एकादश: एकादश भाव में विश्वस्त मित्रो से युक्त, धनवान, नीति निपुण, प्रभावशाली मित्र, संगीत प्रेमी, अल्प सन्तति समाजिक कार्यों में सफल ध्येय पूर्ति में सफल, सुन्दर, निरोगी, व्यवसायी होता है। स्त्री कुण्ड़ली में उच्च श्रेणी के उन्नतिशील व्यक्ति से विवाह का सूचक होता है।

द्वादश: द्वादश भाव में परोपकारी, दुर्जन, निम्न श्रेणी का कार्य करने वाला, प्रायः शुभ कार्यो में व्यय करने वाला, शत्रुओं को भी मित्र बनाने वाला, खोये हुए यश को पुनः प्राप्त करने की कोशिश में रत जीवन के उत्तरार्ध में सफल, मृत्यु के बाद मोक्ष प्राप्त करने वाला।

6. शुक्र का भावफल:

प्रथम: प्रथम भाव में सुखी, विलासी, बुद्धिमान, अत्यन्त कोमल स्वभाव, प्रेम सम्बन्धी, काम-कला में निपुण, सुन्दर आकर्षण, महत्वाकांक्षी, संगीत-नाटक-वस्त्रों का प्रेमी, अधिक आयु होने पर भी युवा दिखने वाला, भोगी-विलासी सत्संगी, राजप्रिय, नीति युक्त होता है।

द्वितीय: द्वितीय भाव में सहयोगी पत्नी, श्रृंगार या अन्य विलास वस्तुओं के माध्यम से सहज ही धन कमाने वाला, वाणी एवं नेत्र सुन्दर, कर्त्तवय परायण मनोरम पत्नी, अच्छा भोजन करने वाला, दीर्घजीवी, साहसी, चतुर वाक्ता, भग्यवान।

तृतीय: तृतीय भाव मे अनेक भाई-बहिन, पत्नी से असंतोष, कहानी नाटक लेखन पत्र व्यवहार में रूचि, यात्रा में परिचित किसी सहयात्री के साथ प्रणय सम्बन्धो की सम्भावना, पराक्रमी, कर्त्तव्य परायण, आज्ञाकारी नौकर चाकरो वाला होता है।

चतुर्थ: चतुर्थ भाव में सुखी एवं शांत गृहस्थ जीवन, मकान एवं वाहन सुख, माता से धन का लाभ, भोग-विलास एवं इच्छानुसार मकान की विशेष सजावट में रूचि, धनवान यशस्वी वाहनवान, पुत्रवान, दीर्घायु, भाग्यवान होता है।

पंचम: पाँचवे भाव में सट्टा-लॉटरी एवं प्रणय, व्यापार में सफल, उदार, काव्यप्रेमी स्नेही स्वभाव चतुर, दयालु, सुखी, भोगी, न्यायी, दानी, उदार, लाभदायी, व्यवसाय, शनि द्वारा पीड़ित होने पर स्त्री वर्ग से कष्ट का सूचक होता है।

षष्ठ: छठे भाव में शत्रुरहित स्त्री प्रकृति के शत्रु स्त्रियों द्वारा निरस्कृत, दुराचारी, संकीर्ण प्रवृति, गुप्त रोगी, अस्वस्थ, सेवाभावी, स्त्री सुखहीन वैभवहीन, स्त्रीप्रिय शत्रुनाशक होता है।

सप्तम: सप्तम भाव में अपने पिता से अधिक प्रभावशाली एवं उच्च स्तर का रहन सहन, सभाओं में सफल, तीव्र स्वभाव वाली पत्नी, वैवाहिक जीवन सुखी, भोग-विलासरत, चंचल, बुद्धिमान, बहुस्त्रीवान, धातुविकार युक्त, गानप्रिय होता है।

अष्टम: अष्टम भाव में पत्नी रोगी एवं निर्बल, असफल प्रेमी, कामी, मातृकष्ट, गुप्तकार्यो में रत, रोगी, विवाह द्वारा आर्थिक लाभ, किसी विधवा स्त्री से प्रणय सम्बन्धो की सम्भावना मंगल से दृष्ट होने पर पत्नी की मृत्यु की सम्भावना होता है।

नवम: नवम भाव में उदार, तपस्वी, राज्य सम्मान प्राप्त, विवाह से लाभ, पत्नी के सम्बधियो द्वारा लाभ, गुणी, गृह सुखी, पवित्र, दयालु, तीर्थाटन प्रेमी, विदेश यात्रा, कलात्मक, धर्मात्मका राजप्रिय, विद्वान्, बुद्धिमान, सुशील, सत्यप्रिय होता है।

दशम: दशम भाव में धनी, कलाकार, अनेक मित्र स्त्रियों द्वरा समृद्धि प्राप्त, माता-पिता व देव भक्त राज्य सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त, स्त्री वर्ग से लोकप्रियता सुखी, भोगी, न्यायी, दानी, उदार लाभदायी, व्यवसाय, शनि द्वारा पीड़ित होने पर स्त्री वर्ग से लोकप्रियता प्राप्त करता है।

एकादश: एकादश भाव में कला से, स्त्री वर्ग से, श्वेतवर या रत्नादि के व्यापार में लाभ, विख्यात स्वास्थ्य, सुन्दर, सन्त, विलासी, वाहन सुख, स्थिर, लक्ष्मीवान, कामी, गुणी, पुत्रवान होता है।

द्वादश: द्वादश भाव में कृपण, स्त्रियों से लाभ, दुर्जन मनोरंजन तथा स्त्रियों पर व्यय करने वाला, अनैतिक कार्यों में रत, गुप्त प्रेम किन्तु असफल, पत्नी से मनमुटाव, न्यायप्रिय, आलसी, पवित्र, स्थूल बहुभोजी, शत्रुनाशक होता है।

7. शनि का भावफल:

प्रथम: प्रथम भाव में कुरूप, आलसी, अभिमानी, उदासीन मलिनमन, कामी, गूढ़, एकान्तवास प्रेमी, बाल्यावस्था में पीड़ित किषोर अवस्था में अनेक विघ्न बाधाएँ, निर्बल स्मरण शक्ति ग्राम नगर का मुखिया, गम्भीर एवं विद्वान् होता है।

द्वितीय: दूसरे भाव में मुखरोगी, उत्थान-पतन, विचारहीन अत्यधिक लाभ किन्तु मितव्ययी के उपरान्त भी बचत नहीं कर सकने वाला, कठिन परिश्रम से अधिक लाभ, निर्बल दृष्टि, गृहस्थ जीवन में दुःखी, उचित अवसरों में लाभ न उठाने वाला होता है।

तृतीय: तीसरे भाव में धनवान, सावधान, बुद्धिमान, पराक्रमी, साहसी, उपकारी, युवावस्था चिन्तित, पड़ोसी तथा भाई-बहिन से मन मुटाव, उत्तरार्ध में मानसिक विकास करने वाला होता है।

चतुर्थ: चतुर्थ भाव में सुखरहित, व्यथित, उदर व्याधि, माता को अरिष्टकर, माता-पिता से विचार वैमनस्य, बाल्यावस्था में रोगी, संकीर्ण मनोवृत्ति, प्रवासी, पुराने मकान में वास करने वाला, कठोर हृदयी, गृहस्थ जीवन से दुखी एकान्तवास का इच्छुक, उदार शीघ्र, कपटी, धूर्त, भाग्यवान, होता है।

पंचम: पाँचवे भाव में अस्थिर विचार, सन्तान बाधा, लॉटरी से हानि, अविवेकी विघ्नबाधा सूचक, वात रोगी भ्रमणशील, विद्वान्, उदासीन, आलसी, मलिन ईर्ष्यालु, दयाहीन, चंचल, संतान बाधा युक्त होता है।

षष्ठ: छठे भाव में शत्रुहन्ता, साहसी, वातरोगी, हठी, दुराचारी, उद्योगी, भोगी, कण्ठरोगी, जातिविरोधी बलवान, अचार-विचारहीन। मातृक्लेश युक्त, मातुल क्लेशयुक्त होता है।

सप्तम: सातवे भाव में निर्जन एकान्तवासी, वैरागी, वैवाहिक जीवन से दुःखी, उग्रस्वभाव, विदेशों में सम्मान, स्त्रियो से पीड़ित, कपटी, साझेदारी एवं वाद-विवाद में हानि उठाने वाला, धन सुख विहिन होता है।

अष्टम: अष्टम भाव में अल्पसंतति, रोगी, निर्धन अधिक परिश्रमी, उदासीन श्वासरोगी या वायु रोग से पीड़ित, आयु लम्बी, विवाहोपरान्त कठिनाइयाँ, शैया में पड़े रहने के उपरान्त मृत्यु, कपटी, वाचाल, डरपोक धूर्त दूसरो की सेवा करने वाला बुद्धिमान होता है।

नवम: नवें भाव में विज्ञान या अन्य गुप्त विद्या में अभिरूचि, कृपण, पुत्र से सुखी हठी, दानी, धूर्त, भाई-रहित अध्यापाक, भ्रमणशील, निरूपयोगी यात्रा में कष्ट पाने वाला, वातरोगी, मातृहीन, भ्रातृहीन, शत्रु पीड़ित होता है।

दशम: दशम भाव में प्रवासी, सुखी, चतुर, बलवान, लेखक, भावुक, ज्योतिष में रूचि, राज्य सम्मान प्राप्त व्यवसाय में सफल, उत्थान पतन, नेता, न्यायी, राजयोगी, भाग्यवान पाप पीड़ित और निर्बल होने पर आर्थिक विनाश होता है।

एकादश: एकादश भाव में धनी एवं विश्वस्त किन्तु दुर्जन, अल्पमित्र, उद्योगी, सम्पत्तिवान, तीव्र स्वभाव, सन्तान पक्ष से दुःखी, ख्यातिवान, व्यापार द्वारा लाभ राजनीतिक सम्मान, क्रोधी, चंचल, विद्वान, पुत्रहीन, रोगहीन, बलवान, मित्र से विश्वासघात करने वाला होता है।
द्वादश: द्वादश भाव में पतित, व्यवसाय में असफल, अतिव्ययी, रोगी, दुर्बल शरीर, क्रोधी, राजदण्ड की आषंका, नेत्र दोष, शत्रुओं द्वारा पीड़ित, किसी गूढ़ विद्या का जानकार उन्माद रोगी, व्यसनी, क्लेशी, आलसी होता है।

8. राहु का भावफल:

प्रथम: प्रथम भाव में धनी, साहसी, बलवान, दुर्जन, सिर एवं मुख पर चिह्न, दुष्ट, मस्तक रोगी, स्वार्थी द्विभार्या, स्त्री नाशक, अल्प सन्तति युक्त, दुर्बल होता है।

द्वितीय: दूसरे भाव में कुविचारी, निर्धन, हकलाकर बोलने वाला, चोरी या अन्य कारण से धन हानि, भाई को कष्ट देने वाला तथा भाई से कष्ट पाने वाला, बालकाल में दुखी, संग्रही अल्प धनवान होता है।

तृतीय: तीसरे भाव में साहसी पराक्रमी, लघुभ्राता वाला, भाई-बन्धुओं में मनोलिनय तथा बहिन के दुःख से व्यथित, विवेकी, अरिष्टनाशक, प्रवासी, भगिनीयुक्त तथा बुद्धिमान व्यवसायी होता है।

चतुर्थ: चतुर्थ भाव में दुराचारी दुःखी, विदेशी भाषाओं का ज्ञान, पिता को आर्थिक रूप से हानि।

पंचम: पंचम भाव में सन्तान पक्ष में बाधक, प्रथम गर्भपात, तीव्र बुद्धिपूर्ण, नीतिज्ञ, उदररोगी, मतिमन्द सन्तान बाधक, धनहीन, भाग्यवान होता है।

षष्ठ: छठे भाव में रोगी, शत्रुनाशक, अनुकूल अवसर पाकर बोलने वाला, बलवान, कमर, दांत व नेत्र रोग से पीड़ित होता है।

सप्तम: सातवे भाव में कामी, संकीर्ण, चतुर या दुर्बल पत्नी, विधर्मियों से लाभ पाने वाला, ख्यातिवान, प्रवासी प्रमेह-मधुमेह, गुप्तरोग से पीड़ित, व्यापार में हानिकर, दुराचारी होता है।

अष्टम: अष्टम भाव में लांछित रोगी, दुर्जन प्रवासी मालिक दुःखी, गुप्त रोग से पीड़ित कपटी, कठोर, उदर व्याधियुक्त होता है।

नवम: नवम भाव में अल्पसन्ततिवान, पत्नी भक्त, विदेश-राज्य सम्मान प्राप्त, वृद्धावस्था में पुत्र, क्रूर स्वभाव, बुद्धिमान होता है।

दशम: दशम भाव में कठोर प्रशासक विद्वान्, पिता को अरिष्ट, आलसी, कठोर, वाचाल, सन्तान से दुखी होता है।

एकादश: एकादश भाव में धनी, समृद्धिषाली कर्ण रोग से पीड़ित, पिता एवं सन्तान पक्ष से चिन्तित, चर्मरोगी बनाता है।

द्वादश: बाहरवे भाव में विवेकहीन, पापकर्मरत, अपव्ययी, चिन्तित, नेत्रदृष्टि रोगी, विशादमय, विवाहित जीवन स्त्री क्लेशी होती है।

9. केतु का भावफल:

प्रथमः प्रथम भाव में ठिगना एवं कृषकाय, व्यवहार कुशल, चपल स्वभाव, मुख पर चेचक के निशान, गुदा रोग से पीड़ित, व्यवहार कुशल किसी अंग की खराबी होती है।

द्वितीय: दूसरे भाव में कटुवक्ता, अपव्ययी, दुःख धोखे से हानि उठाने वाला, मुखरोगी, वाणी के कारण से विरोध, धननाश, राजभीरू होता है।

तृतीय: तृतीय भाव में भ्रमणशील, साहसी, कुष्ठी रोगी, भ्रातृपक्ष से व्यथित, बुद्धिमान, कलाप्रेमी, चंचल स्वभाव वाला होता है।

चतुर्थ: चतुर्थ भाव में माता को अरिष्ट, एक स्थान पर न रूकने वाला, जन्म गृह छोड़कर अन्य स्थान पर वास करता है।

पंचम: पाँचवे भाव में सन्तान पक्ष से दुःखी, कपटी, गूढ़ विद्याओं आदि का जानकार अस्थिर बुद्धि वाला होता है।

षष्ठ: छठे भाव में शत्रुहीन विद्वान्, भोगी, झगड़ालू, भूत-प्रेत विशेषज्ञ, सुखी शत्रुहन्ता होता है।

सप्तमः सातवें भाव में दुःखी वैवाहिक जीवन दुराचारी कामी, लम्पट, मतिमन्द, मूर्ख, झगड़ालू होता है।

अष्टम: आठवें भाव में दन्तपीड़ा, रक्त विकार, बवासीर, गुदारोग, वातरोग, स्त्री द्वेषी, जनसेवी होती है।

नवम: नवें भाव में सज्जनों द्वारा घृणित, दूसरों की बुराई करने वाला द्यूत क्रीड़ा में रूचि, दुर्जनो की संगति मे रहने वाला, विचारो में कोई नीचता की बात रहे, खोटे कर्मो में रूचि दुर्भागी व मूर्ख होता है।

दशम: दशम भाव के व्यक्ति को गुदा रोग होता है। कफ प्रकृति, परस्त्री में आसक्त, पिता को कष्ट, तेजस्वी और शूर होता है।

एकादश: एकादश भाव में बुद्धिमान, उपकारी विनोद, समृद्धिशाली, सन्तानपक्ष से चिन्तित, वात रोगी निज की हानि करने वाला होता है।

द्वादश: द्वादश भाव में अपव्ययी, चंचल स्वभाव प्रवासी अध्यात्म में रूचि, धूर्त, ठग, अविषसी रोग एवं शत्रु पैदा होते है।

5.6 भावों के फलित सूत्र

जन्मकुण्ड़ली में द्वादश भाव होते है, तथा किस भाव से किस विषय का विचार किया जाता है, इस बात की जानकारी हम अभी तक प्राप्त कर चुके है, तत्पश्चात् हम कुण्ड़ली के भावों द्वारा फलविचार के लिए आवश्यक नियमों का अध्ययन करेंगे। इन नियमों को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत विचार कर सकते है:-

1. जो भाव अपने स्वामी सहित होता है, वह शुभ फल देता है। उदाहरणतः जन्मकुण्ड़ली में सप्तमभाव में तुला राशि है और उसमें शुक्र स्थित है तो हम कहेंगे कि भाव अपने स्वामी सहित है क्योंकि तुला राशि का स्वामी शुक्र है। अपने भाव में स्थित ग्रह सदैव अपने भाव की वृद्धि करता है, अतः सप्तम भाव से सम्बन्धित विषयों जैसे पत्नी, साझेदारी आदि विचार में शुभफलों की वृद्धि ही होगी।

2. यदि भाव अपने स्वामी द्वारा दृष्ट है तो वह भी शुभफल ही देगा, परन्तु दृष्टि डालने वाला ग्रह नीच, अस्त या शत्रुक्षेत्री होगा तो उसमें शुभता प्रदान करने की क्षमता कम हो जायेगी।

3. जब कोई भाव किसी ग्रह द्वारा न देखा जाये, न ही कोई ग्रह उस भाव में स्थित हो तो उस भाव का फल मध्यम हो जाता है।

4. कुण्ड़ली के अनुसार शुभ भावों के अधिपति ग्रह मित्रक्षेत्री, स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोणस्थ अथवा उच्च के हो तेवे उस भाव (जिसके वे भावेश हो) के अधिपति है तथा जिस भाव में स्थित है, उसकी वृद्धि करते है।

5. जिस भाव का विचार करना है, उस भाव से षष्ठ, अष्टम व द्वादश भाव में यदि पापग्रह हो तो उस भाव के फल का नाश करते है। षष्ठभाव रोग व शत्रु का स्थान है, अष्टम भाव मृत्युस्थान तथा द्वादशभाव व्यय का भाव है।

6. विचारणीय भाव से यदि सभी शुभ ग्रह केन्द्र (1-4-7-10) अथवा त्रिकोण (5-9) में हो तो उस भाव की वृद्धि होती है, यदि इन भावों में पापग्रह हो तो वे शुभफल का नाश करते है।

7. त्रिषडाय भाव के स्वामी नैसर्गिक शुभ ग्रह होकर केन्द्र या त्रिकोण के स्वामी हो तो पापी ही होते है, परन्तु नैसर्गिक पापीग्रह हो तो श्रेष्ठ रहता है।

8. जिस भाव में लग्नेश बैठा हो, उसकी समृद्धि होती है, लग्नेश जिस भाव के स्वामी के साथ स्थित हो, उस भाव के स्वामी के फल को नष्ट करता है।

9. यदि किसी भाव का स्वामी किसी अन्य भाव में स्थित हो और उस भाव का स्वामी दुष्टस्थान में स्थित हो तो दोनों भावों के फल को नाश होता है।

10. विचारणीय भाव से द्वितीय तथा द्वादश भाव में पापग्रह स्थित हो तो वह भाव पापमध्यत्व कहलायेगा तथा भाव निर्बल होने के कारण अपने फल में कमी करेगा।

5.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि व्यावहारिक जीवन में मनुष्य जब संकटग्रस्त होता है अथवा अपने आपको असफल महसूस करता है तब वह भविष्य की चिन्ता करता है। समस्या के निदान में उपलब्ध समस्त विकल्पों के अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र एक अभूतपूर्व विकल्प है। ज्ञाता को प्रश्नों के समाधान के लिए जन्मांक चक्र के बारह भावों का पृथक और समभाव अध्ययन करके ही किसी भी समस्या के समाधान की ओर बढ़ना चाहिए । जीवन से संबंधित प्रत्येक भावों का फलाफल समझकर ग्रहों की शुभाशुभ दृष्टि के आधार पर ही कुण्डली का फलादेश संभव है। प्रस्तुत इकाई में उदाहरणों के द्वारा भी कुण्डली के फलादेशों का विवेचन किया गया है। राशि एवं लग्नानुसार प्रत्येक भावों के विस्तृत फलों के उद्धव कर यथासम्भव प्रयास किया गया है कि आप उनका अध्ययन कर फलित के संबंध में असन्देह ज्ञान प्राप्त कर सकें। लग्न से द्वादश भाव तक सभी भावों में बैठे हुए ग्रहों का अपना महत्त्व है। उनकी दृष्टि पर ही कुण्डली के फलादेश होते हैं। अत: इस इकाई के अध्ययन से आप बतायेंगे कि वास्तव में जनमांक चक्र के फल से मनुष्य का जीवन किस प्रकार नियंत्रित होता है।

5.8 शब्दावली

1. भाव	=	कुण्ड़ली में वे स्थान जिनमें ग्रहों की स्थापना की जाती है।
2. आपोक्लिम	=	तृतीय, षष्ठ, नवम व द्वादश भाव।
3. पणफर	=	द्वितीय, पंचम, अष्टम व एकादश भाव।
4. उपचय	=	तृतीय, षष्ठ व दशमभाव।
5. त्रिषडाय	=	तृतीय, षष्ठ व एकादशभाव।
6. पापमध्यत्व	=	पापग्रहों के मध्य में स्थित होना।

5.10 लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: भाव किसे कहते है ?

उत्तर: जन्मकुण्ड़ली के वे स्थान जिनमें ग्रहों की स्थापना होती है, उन्हें भाव कहते है।

प्रश्न - 2: जन्कुण्ड़ली में कितने भाव होते है ?

उत्तर: जन्कुण्ड़ली में द्वादश (12) भाव होते है।

प्रश्न - 3: भावों के सामूहिक नाम कौन-कौन से है ?

उत्तर: भावों के सामूहिक नाम निम्नलिखित है - केन्द्र, पणफर, आपोक्लिम, त्रिकोण, चतुरस्र, त्रिक्, उपचय, मारक आदि।

प्रश्न - 4: केन्द्र एवं त्रिकोण के अन्तर्गत कौन-कौन से भाव आते है ?

उत्तर: प्रथम, चतुर्थ, सप्तम व दशम भावों की केन्द्रसंज्ञा है तथा लग्न, पंचम एवं नवम भावों की त्रिकोण संज्ञा होती है।

प्रश्न - 5: द्वितीय भाव के अनुसार किन अंगों का विचार किया जाता है ?

उत्तर: दायीं आँख, नाक, कण्ठ का विचार द्वितीय भाव से किया जाता है।

प्रश्न - 6: पंचम, षष्ठ एवं सप्तम भाव से किन सम्बन्धियों का विचार किया जाता है ?

उत्तर: पुत्र, पुत्री व प्रेमका का विचार पंचमभाव से किया जाता है तथा मामा, मामी व मौसी का विचार षष्ठभाव से किया जाता है तथा ताई, पति, पत्नी, प्रेमिका व्यापारिक सम्बन्धों का विचार सप्तम भाव से किया जाता है।

प्रश्न - 7: मारकभाव के अन्तर्गत कौन-कौन से भाव आते है ?

उत्तर: द्वितीय तथा सप्तमभाव से मारकफल का विचार किया जाता है।

प्रश्न - 8: ससुराल पक्ष का विचार कौनसे भाव से किया जाता है ?

उत्तर: अष्टमभाव से ससुराल पक्ष का विचार किया जाता है।

प्रश्न - 9: चतुर्थभाव से किन विषयों का विचार किया जाता है ?

उत्तर: माता, पिता, सुख, पैतृक सम्पत्ति, मन, अन्तः करण की स्थिति, सभी प्रकार के भौतिक सुख (धन, मान, यश), सेवक, हृदय से सम्बन्धित रोग आदि विषयों का विचार चतुर्थभाव से किया जाता है।

प्रश्न - 10: गुरु का नवमभाव में स्थित होने पर जातक को क्या फल देता है ?

उत्तर: गुरु नवमभाव में स्थित होने पर जातक को धार्मिक, तपस्वी, यशस्वी, रुढ़ीवादी, परोपकारी, दयालु, पुत्रों से युक्त, ज्योतिष-अध्यापन-वकालत द्वारा आजीविका आदि फल प्रदान करता है।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: भावों के सामूहिक नाम किस प्रकार होते है ? कुण्ड़ली बनाकर भावों के नाम स्पष्ट कीजिये ?

प्रश्न - 2: कुण्ड़ली में अंग तथा सम्बन्धियों का विचार किन भावों से किया जाता है ? कुण्ड़ली बनाकर भावों से सम्बन्धित अंग तथा सम्बन्धियों को स्पष्ट रूप से समझाइये।

प्रश्न - 3: कुण्ड़ली में लग्नादि द्वादश भावों से किस विषय में विचार किया जाता है? विवेचना कीजिये।

प्रश्न - 4: सूर्यादि ग्रहों का द्वादशभावों में फल बताईये ?

प्रश्न - 5: किन्हीं दो पर टिप्पणी कीजिये ?

(1) गुरु का पंचम, दशम तथा एकादश भाव में फल।

(2) शनि का प्रथम, चतुर्थ व दशमभाव में फल।

(3) शुक्र का आपोक्लिम भाव में फल।

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सारावली

   सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहज्जातकम्

   व्याख्याकार: केदारदत्त जोशी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

3. फलदीपिका

   सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

4. भारतीय ज्योतिष

व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई 6

नाभसादि योग

इकाई संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 विषय प्रवेश

6.3.1. आश्रय योग

6.3.2. दल योग

6.3.3. आकृति योग

6.3.4. संख्या योग

6.4 सारांश

6.5 शब्दावलि

6.6. अभ्यास प्रश्न

6.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न

6.8 संदर्भ ग्रन्थ

6.1 प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र के आचार्यों ने अत्यन्त विस्तार से 1000 नक्षत्र योगों का निरूपण किया है। प्रस्तुत इकाई में प्रमुख 32 योगों के वर्णन दिये गये है। आकृतियों के बीस भेद, संख्या योगों के सात भेद, तथा आकृतियोगों के बीस भेद, संख्या योगों के सात भेद, तथा आश्रय योगों के तीन भेद, दलयोग के दो भेदों का वर्णन करके इस इकाई की विषयवस्तु का निर्माण हुआ है। अत: इस इकाई के अध्ययन से आप जान सकेंगे कि नामस योगों का जन्मांक के अनुसार फलाफल क्या है। साथ ही योगों को परिभाषित करने में सक्षम हो सकेंगे।

अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप आकाशीय स्थितियों में विभिन्न योगों के अध्ययन से परिचित होकर सभी योगों का करा सकेंगे '

6.2 उद्देश्य

नाभस योगों के वर्णन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1 नाभस योगों का परिचय जान सकेंगे

2 दल योगों का विस्तृत ज्ञान करा सकेंगे

3 आकृति योगों के फलाफल को बता सकेंगे

4 नाभस योगों की ज्योतिषीय उपयोगिता को बता सकेंगे

5 इन योगों का अन्य राशियों से किस प्रकार का संबंध है। यह भी समझा सकेंगे।

6 जनमांक चक्र में नाभस योगों का कोई प्रभाव होता है या नहीं, इसे भी बता सकेंगे।

6.3 विषय प्रवेश

नाभासादि योग मूल रूप से 32 है तथा इनके ही भेद-प्रभेद परस्पर मिश्रण से 1800 हो जाते है। मूल नाभस योगों में तीन आश्रय योग-रज्जु, मूसल व नल है। दो दल योगः मालायोग तथा सर्प योग। बीस आकृति योगः गदा, शकट, शृंगाटक, विहग, हल वज्र, यव कमल, वापी, यूप, शर, शक्ति, दण्ड, नौका, कूट, छत्र, चाप, अर्धचन्द्र, चक्र व समुद्र। सात संख्या योगः वल्लकी (वीणा योग) दाम, पाश, केदार, शूल, युग व गोल योग होते हैं।

6.3 विषय प्रवेश

''नभ'' अर्थात् आकाश। आकाश में ग्रहों से विभिन्न प्रकार की स्थितियों का निर्माण होता है, जिसके कारण उनसे बनने वाले योग नाभस योग कहे जाते हैं। इन ग्रहों की स्थिति से जैसी आकृति नजर आती है, उसी अनुरूप इन योगों के नाम दे दिये गए है। जैसे मूसल की आकृति बनने से मूसल योग, माला की आकृति होने से माला योग, इत्यादि।

यवनादि आचार्यों ने विस्तार से 1800 प्रकार के नाभस योगों को कहा है। इनमें से मूल 32 योगों का विवरण हमने इस इकाई द्वारा स्पष्ट किया है। ग्रहों की स्थिति और प्रत्येक लग्न से जो आकृतियाँ सी बनती रहती है, उन्हें आकृति योग कहते हुए उनके 20 भेद, संख्या योग के 7 भेद, आश्रय योग के 3 भेद और दल योग के दो भेद कहे गए है। नाभासादि 32 योगों की निर्माण स्थिति तथा फल उदाहरण सहित निम्न लिखित है।

6.3.1. आश्रय योग

आश्रय अर्थात् निवास स्थान या बसेरा। अतः सभी ग्रहों के आश्रय (राशि) के आधार पर होने से ''आश्रय'' सार्थक नाम है। सभी ग्रह किसी एक दो, तीन या चारो चरादि राशियों में होने से यह योग होंगे।

आश्रय योग उत्पन्न जातक सुखी व गुणयुक्त होता है। यदि आश्रय योग अन्य योग से मिश्रित हो तो आश्रय योग का फल निष्फल हो जाता है। आश्रय योग के निम्न तीन भेद इस प्रकार है।

रज्जुयोगः

अटनप्रियाः सुरूपाः परदेशस्वास्थ्यभागिनो मनुजाः।

क्रूराः खलस्वभावा रज्जूप्रभवाः सदा कथिताः।।

चर राशि में सभी ग्रह हो तो रज्जुयोग होता है। रज्जुयोगोत्पन्न जातक भ्रमण प्रेमी, देखने में सुन्दर, परदेश में स्वस्थ (धनार्जन के लिए विदेश जाने वाला) क्रूर तथा दुष्ट स्वभाव का होता है।

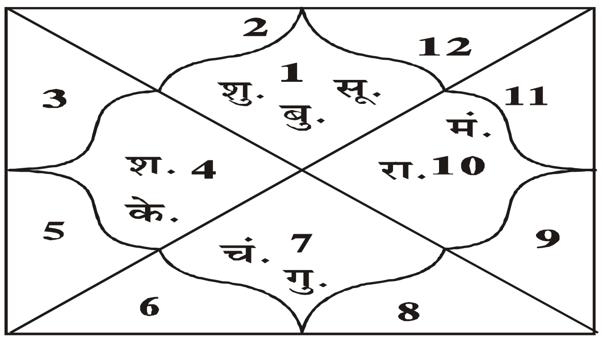

मुसलयोगः

सभी ग्रह स्थिर राशिस्थ हो तो मुसलयोग होता है।

अखिलैष्चरगैः खेटेः स्थिरगैद्विस्वभावगैः

क्रमाद्रज्जुष्च मुसलो नलष्चेत्याश्रया मताः।।

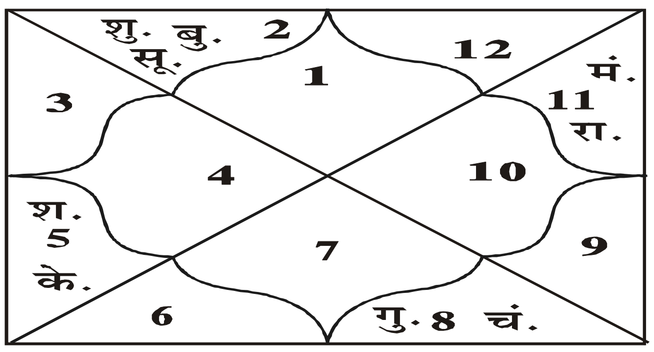

उपर्युक्त कुण्ड़ली में सभी ग्रह स्थिर राशि में है अतः जातक की कुण्ड़ली में मुसलयोग उत्पन्न हुआ। इसके अनुसार मनुष्य मानी, ज्ञानी, धनसम्पत्तियुक्त, राजप्रिय, विख्यात, अनेक पुत्रवान तथा स्थिर-बुद्धि वाला होता है।

नल योग:

सभी ग्रह जब द्विस्वभाव राशि में हो तो नल योग बनाता है।

न्यूनातिरिक्तदेहा धनसंचय भागिऽनोतिनिपुणाश्च।

बन्धुहिताष्चश्सुरूपा नलयोगे समप्रतूयन्ते।।

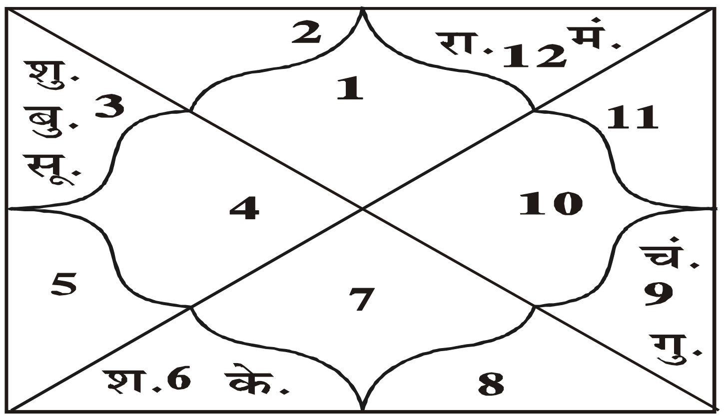

फल: सभी ग्रह उपर्युक्त कुण्ड़ली में सभी ग्रह द्विस्वभाव राशि में स्थित होने से नल योग उत्पन्न हुआ। इस योग मे समुत्पन्न जातक कम या अधिक देह वाला, धन संग्रह करने वाला, अत्यन्त चतुर, बन्धुओं का प्रिय और सुन्दर रूप वाला होता है।

दल योग:

दल योग के दो भेद मालायोग व सर्प योग बताये गऐ है। इन योग में आसपास के तीन केन्द्रों में ग्रह होना आवश्यक है। तभी सर्प या माला की आकृति बनेगी। इनमें भी 4, 7, 10 भावों का ग्रहण मुख्यपक्ष है। इन्हीं केन्द्रों में यह आकृति बनती हे। जिनका जन्म दलयोग में होता है वे जातक कभी अपने भाग्य से, कभी ऐसे ही, कभी दूसरों के द्वारा भूमि पर फेंके हुए फल की तरह कभी सुखी, कभी अत्यन्त कष्ट से जीवन व्यतीत करते है। निम्न योग इस प्रकार है।

6.3.2. मालायोग

सभी शुभग्रह तीन केन्द्र स्थानों और पापग्रह केन्द्रतिरक्ति स्थानों में हो तो मालायोग होता है।

शुभैः केन्द्रत्रितयगैः कूरैवां दलनामकौ।

मालाभुजगों सदसत्फलदौ क्रमशौ मतौ।।

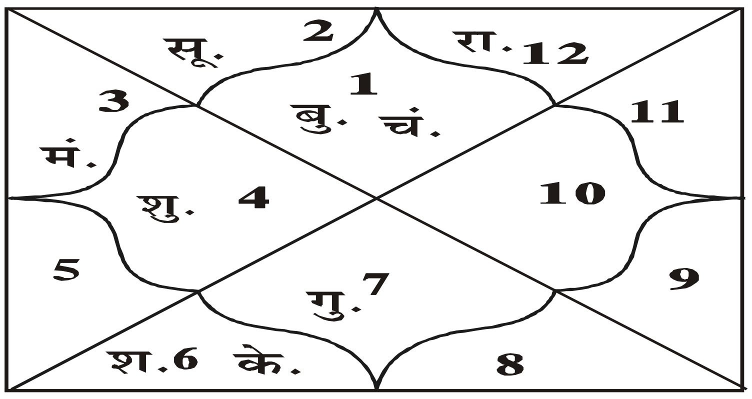

उपर्युक्त कुण्ड़ली में शुभग्रह - बुध, चन्द्र एवं शुक्र एवं गुरु प्रथम तीन केन्द्र स्थान में स्थित है तथा पापग्रह - सूर्य, मंगल एवं शनि क्रमशः द्वितीय, तृतीय एवं षष्ठभाव में स्थित है, अतः इस कुण्ड़ली में मालायोग का निर्माण हुआ। माला योगोत्पन्न जातक सतत् सुखी, वाहन, वस्त्र, अन्न आदि भोग्य सामग्रियों से युक्त, तथा अनेक सुन्दरी स्त्रियों से युक्त होता है।

सर्प योग:

सूर्य, शनि, मंगल केन्द्र में हो और शुभ ग्रह केन्द्र से अन्य स्थानों में हो तो सर्पयोग कहलाता है।

विषमाः क्रूरा निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च।

परभक्षपाननिरताः सर्वप्रथमा जातक भवन्ति नराः ।।

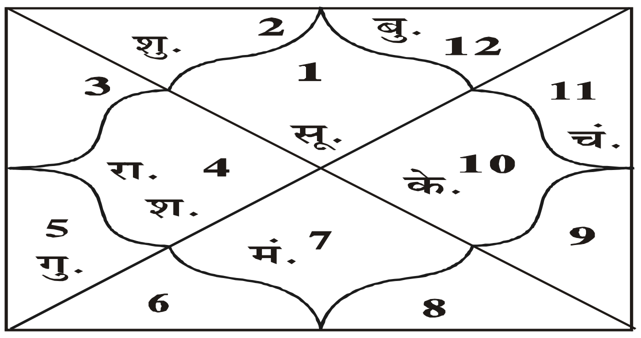

फल: इस योग मे उत्पन्न जातक विषम प्रकृति वाला, क्रूर, धनहीन, नित्य दुखी, दीन और दूसरों से माँग करके खाने वाला होता है।

6.3.3. आकृति योग

जब ग्रह स्थिति द्वारा कुण्ड़ली में कोई आकृति (जैसे शकट, गत, पक्षी, इत्यादि) नजर आये तो उसे आकृति योग कहा गया है। आकृति योग में उत्पन्न जातक अपने भाग्य से आनन्दित, राजा से धनागमकर्त्ता, राजा के प्रिय, विख्यात व प्रायः सुख से युक्त होते हैं। आकृति योग के भेद निम्न प्रकार है -

गदा योग:

आसन्नवर्त्ती दो केन्द्र स्थानों (प्रथम से चतुर्थ तक) में सभी ग्रह हो तो गदा नामक योग होता है।

आसन्नकेन्द्रद्वयगैर्गदाख्यो निखिलैः खगैः।

लग्नास्तगैस्तु शकटो विहगो ग्रहकर्मगैः।।

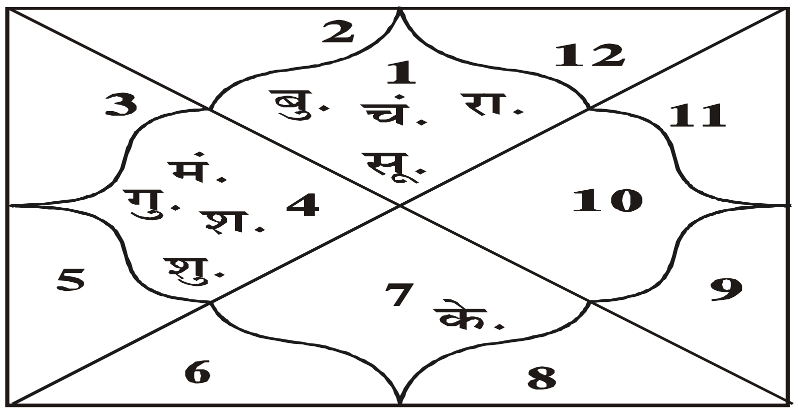

फल:

कुण्ड़ली में दो केन्द्र - प्रथम व चतुर्थ में सभी ग्रह स्थित होने से गदायोग का निर्माण हुआ। गदा योगोत्पन्न जातकः सतत् उद्योगरत, यज्ञ कराने वाला, शास्त्र तथा गान में प्रवीण, ओर धन तथा स्वर्णादि रत्नों से परिपूर्ण होता है।

आकृति - विहग योग:

चतुर्थ-दशम में सभी ग्रह हो तो विहगयोग होता है।

आसन्न केन्द्रद्वयगैर्गदाख्यो निखिलैः खगैः।

लग्नास्तगैस्तु शकटो विहगो गृहकर्मगैः।।

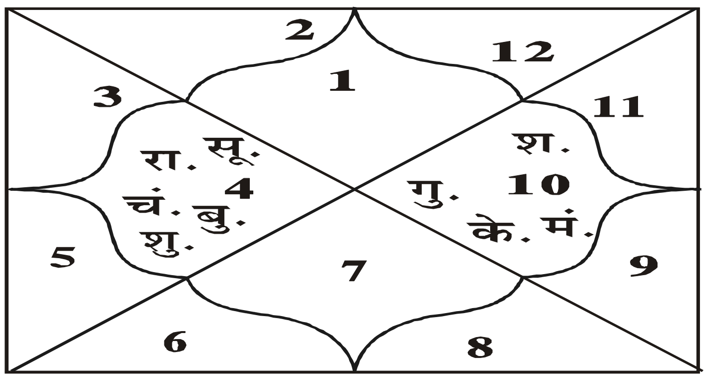

फल: उपरोक्त कुण्ड़ली में सूर्य, राहु, चन्द्र, शुक्र एवं बुध चतुर्थभाव में तथा गुरु, शनि, केतु व मंगल दशमभाव में स्थित है, अतः कुण्ड़ली में विहयोग का निर्माण हुआ। विहग योगज जातक भ्रमणशील, पराधीन, दूत, सूरत (रूप) से जीविका वाला, ढीठ, झगड़ालू होता है।

वज्र योग:

शुभग्रह लग्न तथा सप्तम में हो और पाप चतुर्थ दशमस्थ हो वज्रयोग होता है।

लग्नास्तगैः शुभैः खेटैरषुभैरम्बुकर्मगैः।

वज्राख्ययोग उदितो विपरीतगतैर्यवः।

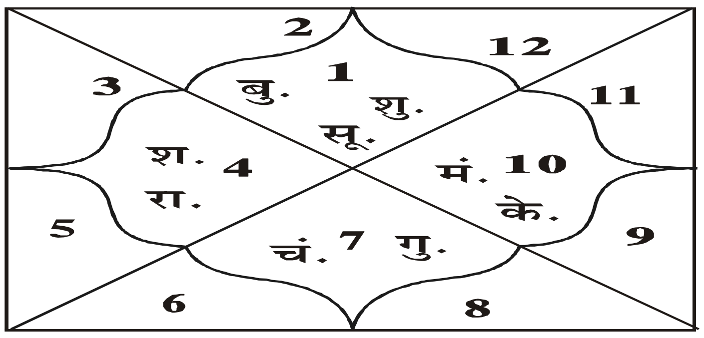

फल: उपरोक्त कुण्ड़ली में शुभग्रह - बुध, शुक्र एवं सूर्य प्रथमभाव में स्थित है तथा चन्द्र एवं गुरु सप्तमभाव में तथा पापग्रह - शनि एवं राहु चतुर्थभाव में तथा मंगल एवं केतु दशमभाव में स्थित है, अतः वज्रयोग का निर्माण हुआ। वज्रयोगज जातक बाल्यकाल तथा वृद्धावस्था मं सुखी, क्रूर, देखने में सुन्दर, निरीह भाग्यरहित, दुष्ट तथा जनविरोधी होता है।

शकट योग:

लग्न तथा सप्तम में समस्त ग्रह हों तो शकट योग का निर्माण होता है।

रोगार्ताः कुनखा मूर्खाः शकटानुजीविनो निःस्वा।

मित्रस्वजनविहिनाः शकटे जाता भवन्ति नराः।।

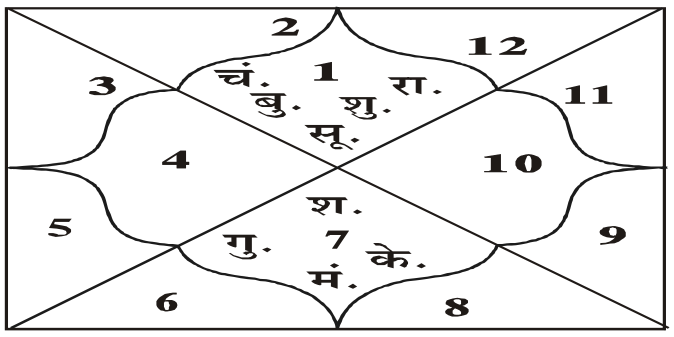

फलः प्रस्तुत कुण्ड़ली में चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य एवं राहु प्रथमभाव में तथा शनि, गुरु, मंगल, केतु सप्तम्भाव में स्थित होकर शकटयोग का निर्माण कर रहे है। इस योग में उत्पन्न जातक यरोग से पीड़ित, मुनखी, मूर्ख, गाड़ी से जीवन संचालन करने वाला, निर्धन एवं मित्रादि स्वजनों से हीन होता है।

यव योग:

लग्न-सप्तम मे पापग्रह ओर चतुर्थ-दशम में शुभग्रह हो यव योग होता है।

लग्नास्तगैः शुभैः खेटैरषुभभैरम्बुकर्मगैः।।

वज्राख्ययोग उदितो विपरीतगत्यैव।

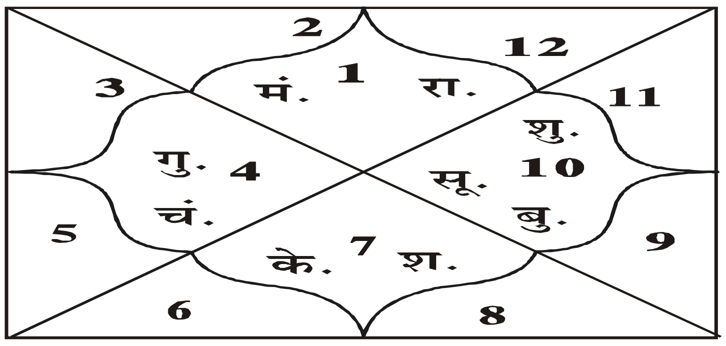

प्रस्तुत कुण्ड़ली में पापग्रह लग्न व सप्तमभाव में तथा शुभग्रह चतुर्थ व दशमभाव में स्थित है, अतः यवयोग उत्पन्न हुआ। यवयोगोद्भव जातक व्रत, नियम तथा मांगलिक कार्य में रत, अवस्था के मध्य में सुख, धन, पुत्र से युक्त, दान देने वाला तथा स्थिर-बुद्धि वाला होता है।

श्रृंगाटक योग:

यदि त्रिकोण (1-5-9) में सभी ग्रह स्थित हो तो श्रृंगाटक योग कहलाता है।

त्रिकोणसंस्थितैः खेटैर्योगः शृंगाटकाभिधः।

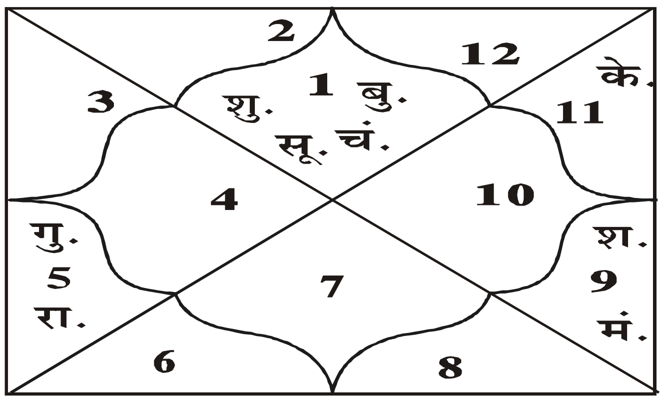

श्रृंगाटक योगोत्पन्न जातक युद्धप्रेमी, सुखी, राजवल्लभ, सुन्दर स्त्री वाला धनी, स्त्री से द्वेष करने वाला होता है।

यूप योग:

लग्न से चतुर्थ स्थान तक सभी ग्रह हो तो यूप योग होता है।

लग्नतुर्यास्तकर्मभ्यष्चतुः स्थानस्थितैर्ग्रहैः।

यूपः शरः शक्तिदण्डौ क्रमाद्योगा उदीरिताः।।

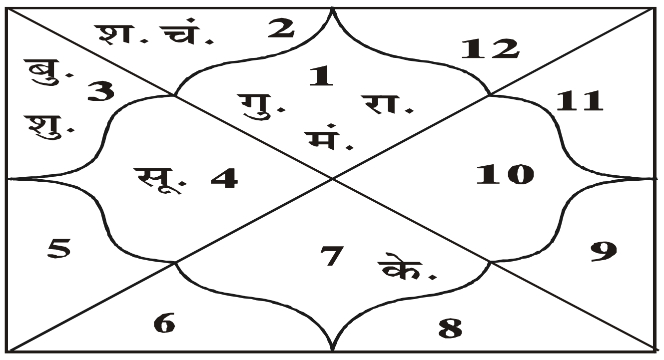

यूपयोगज जातक आत्मज्ञानी यज्ञ-कार्यरत, स्त्रीयुक्त, पराक्रमी, व्रत, यम, नियम, में तत्पर, विषिष्ट पुरूष होता है।

शर योग:

चतुर्थ से चार स्थानों में (सप्तम तक) सभी ग्रह हों तो शरयोग होता है।

लग्नतुर्यास्तकर्मभ्यष्चतुः स्थनस्थितैर्ग्रहैः।।

यूपः शरः शक्तिदण्डौ क्रमाद्योगा उदीरिताः।

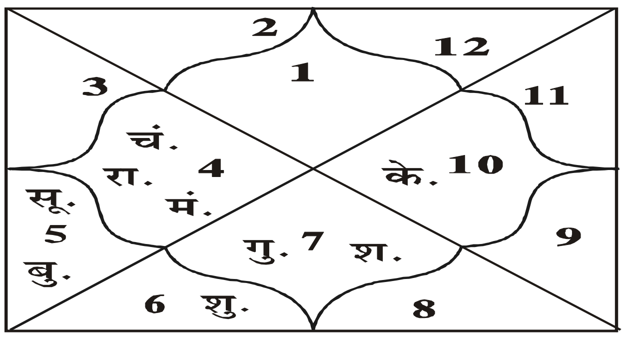

फल: शरयोगोत्पन्न जातक शर (तीर) बनाने वाला, कारागार के अधिपति (जेलर), षिकार से धन-सम्पन्न, मांसाषी, हिंसक, तथा कुत्सितकर्म करने वाला होता है।

हल योगः

लग्न से भिन्न स्थान में त्रिकोण बनाते हुए समस्त ग्रह 3 भावों में स्थित हो तो हल योग बनाता है।

बहाषिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताश्च सोद्वेगाः।

बन्धुसुद्धि शक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञके सदा पुरूषाः।।

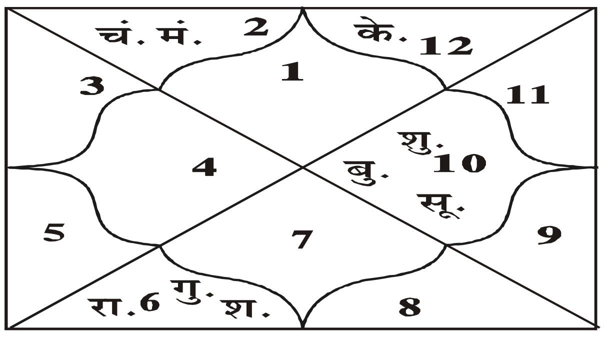

फलः प्रस्तुत कुण्ड़ली में सूर्यादि नवग्रह द्वितीय, षष्ठ एवं दशमभाव में स्थित होकर त्रिकोणस्थ स्थिति में है, अतः हलयोग का निर्माण कर रहे है। इसी प्रकार सभी नवग्रह कुण्ड़ली में लग्न के अतिरिक्त कहीं भी त्रिकोणस्थ स्थिति में स्थित हो तो हलयोग का निर्माण होता है। इस योगोत्पन्न जातक अधिक भोजन करने वाला दरिद्र, कृषक, दुःखी, चिन्ता करने वाला, मित्र एवं बन्धुओं से युक्त होता है।

दण्ड योगः

दशम से चार स्थानों में सभी ग्रहों के रहने पर दण्डयोग होता है।

लग्नतुर्यास्तकर्मभ्यष्चतुः स्थनस्थितैर्ग्रहैः।।

यूपः शरः शक्तिदण्डौ क्रमाद्योगा उदीरिताः।

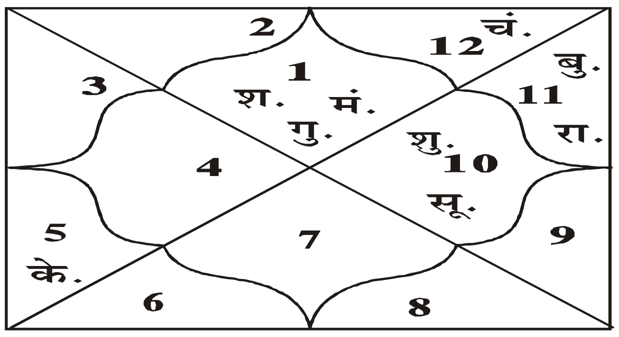

फलः प्रस्तुत कुण्ड़ली में सभी ग्रह दशम से लग्नभाव में स्थित होकर दण्डयोग का निर्माण कर रहे है। दण्डोद्भव जातक पुत्र स्त्री से विहीन, निर्धन, सर्वत्र निर्दय, आत्मीयजनों से बहिष्कृत, दुःखी, नीच, तथा दासवृत्तिवाला होता है।

नौका योग: लग्न से लगातार सात राशियों में सभी ग्रहों के रहने से नौका होता है।

लग्नात्तुर्यासप्तमाच्च दषमात् सप्तमस्थितैः।

ग्रहैनौंका तथा कूटच्छत्रचापाः क्रमान्मताः।।

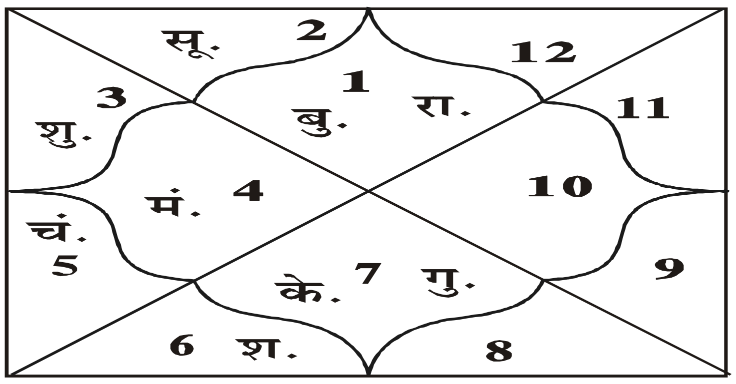

फलः नौका योगोत्पन्न जातक जलजीवी पदार्थो या जीवों से जीविका चलानेवाला, बड़ी-बड़ी आशा करनेवाला, विख्यात यश वाला, दुष्ट, कन्जूस, हृदय का मलिन, तथा लालची होता है।

वापी योगः

केन्द्र से अन्य (पणफर तथा आपोक्लिम) में ही सभी ग्रह हों तो वापी संज्ञक योग होता है।

केन्द्रतो परराशिस्थैः समैवांपीपदामविधः।

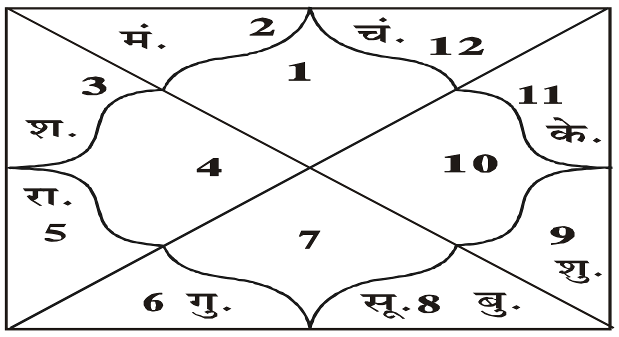

फल: प्रस्तुत कुण्ड़ली में मंगल, राहु, सूर्य, बुध व केतु पणफरभाव में तथा शनि, गुरु, शुक्र व चन्द्रमा आपोक्लिभाव मे स्थित होने से वापी योग की उत्पत्ति हुई। वापीयोगोत्पन्न जातक धन संग्रह में प्रवीण, स्थिर धन स्थिर सुख तथा पुत्रों से युक्त नेत्र-सुखकारी-नृत्यादिकों से प्रसन्न-राजा होता है।

कमल योग:

सभीग्रह चारो केन्द्र में ही हों तो कमल योग होता हे।

ग्रहैस्तु सकलैः सर्वकेन्द्रगैः कमलाभिधः॥

केन्द्रतो परराशिस्थैः समैर्वापीपदाविधः।

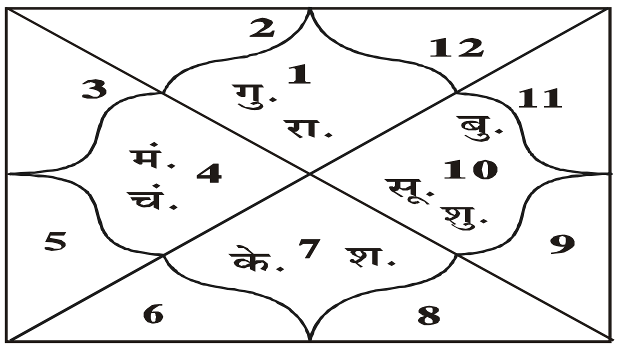

फल: प्रस्तुत कुण्ड़ली में सूर्यादि नवग्रह केन्द्रभाव - लग्न, चतुर्थ, सप्तम व दशमभाव में स्थित होने से कमलयोग का निर्माण कर रहे है। कमलयोगोत्पन्न जातक ऐश्वर्य तथा गुणों से युक्त, दीर्घायु, विपुलकीर्ति, शुद्ध तथा सैकड़ों सत्कर्म करने वाला राजा होता है।

शक्ति योग:

सप्तम से चार स्थान में सभी ग्रह हों तो शक्ति योग होता है।

धनरहितविफलदुःखितनीचालसश्चिरायुषः पुरूषाः।

संग्रामबुद्धिनिपुणाः शक्त्यां जाताः स्थिराः शुभगाः।।

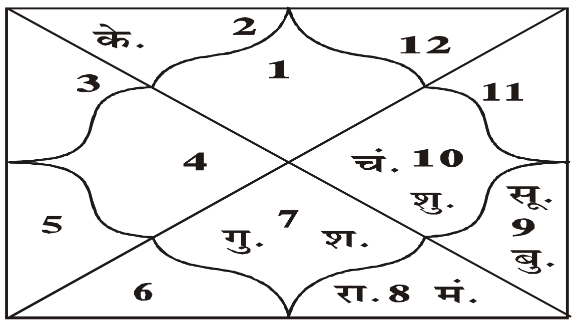

फल: मनुष्य अर्थहीन एवं फलहील जीवन वाला, नीच आलसी, दीर्घायु, स्थिरचित्त वाला सुन्दर होता है।

छत्र योग:

सप्तम से 7 राशियों में सभी ग्रहों के होने पर छत्र योग होता है।

लग्नात्तुर्यासप्तमाच्च दषमात सप्तमस्थितैः।।

ग्रहैनौंका तथा कूटच्छत्रचापाः क्रमान्मताः।

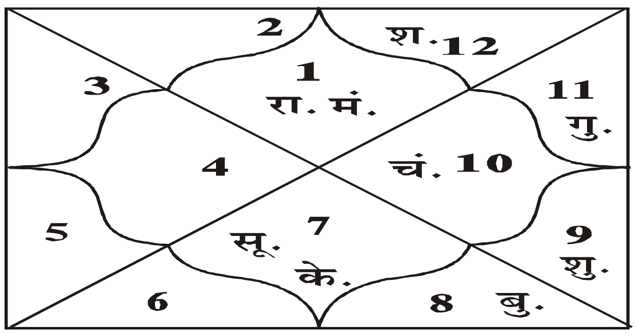

फल: छत्र योगोत्पन्न जातक अपने जनों का भरण पोषण करने वाला, दयालु राजगणप्रिय, उत्कृष्ट बुद्धि वाला आद्य तथा अन्तिम अवस्था में सुखी तथा दीर्घायु होता है।

आकृति-चाप योग:

दशम से सात स्थानों में सातो ग्रहों के रहने पर चाप योग होता हें

लग्नात्तुर्यासप्तमाच्च दषमात सप्तमस्थितैः।।

ग्रहैनौंका तथा कूटच्छत्रचापाः क्रमान्मताः।

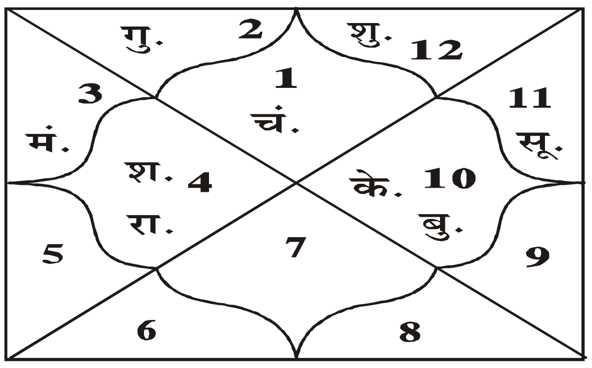

फल: चापयोगज जातक असत्यभाषी, कारागार का अधिकारी, चोर, धूर्त, जंगल में घूमने वाला, भाग्यहीन और अवस्था के मध्य में सौख्यपूर्ण होता है।

आकृति-चक्र (चन्द्र) योग:

लग्न से एकान्तर करके (1 व 3, 5 व 7, 9 व 11) छः स्थानों में सभी ग्रह हों तो चक्रयोग होता है।

एकान्तरगतैर्लग्नाच्चक्रं शडराशिगैग्रेहैः।

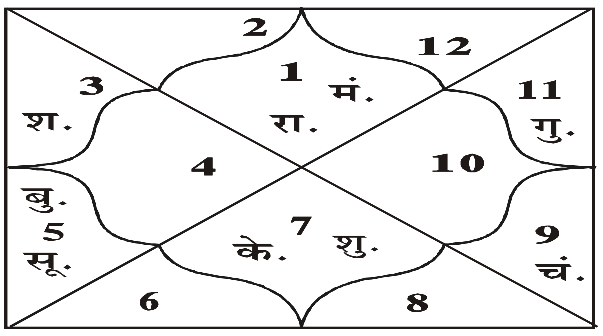

फल: चक्रयोगोत्पन्न जातक नतमस्तक राजगण के मुकुटरत्नों की कान्ति से उज्जवल चरण वाला चक्रवर्ती राजा होता है।

अर्धचन्द्र: केन्द्र के अतिरिक्त किसी भी भाव से प्रारम्भ होकर उससे सात भावों से प्रारम्भ होरक उससे सात भावों में सभी ग्रहों का स्थित होना अर्धचन्द्र योग कहलाता है।

सेनापतयः सर्वे कान्तषरीरा नष्पप्रिया बलिनः।

मणिकनक भुशणायुता भवन्ति योगे धचन्द्राख्ये।।

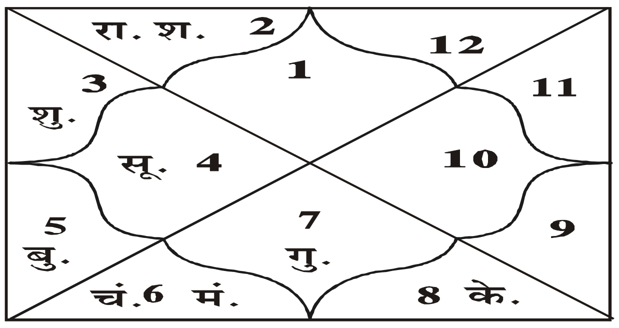

फलः मनुष्य, सेनापति, सुन्दर शरीर राजा का प्रिय, बलवान एवं ममण स्वर्ण आभूषणों से युक्त होता है।

कूट योगः

अनृतकथनबन्धपा निश्किचना शठाः क्रूराः।

कूटसमुत्था नित्यं भवन्ति गिरिदुर्गवासिने। मनुजाः।।

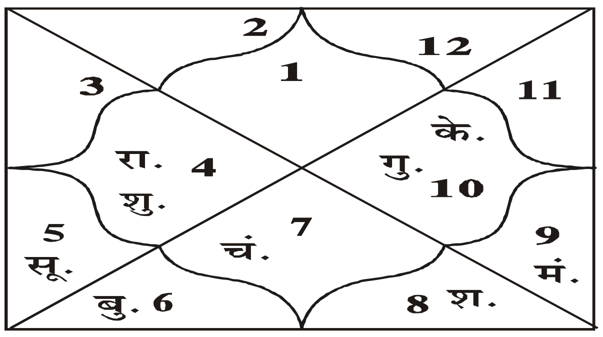

फलः मनुष्य मिथ्यावादी, जेल का अधिकारी दरिद्र, क्रूर, पर्वत या दुर्ग में रहने वाला होता है।

आकृति-समुद्र योगः

द्वितीय भाव से एकान्तर करके (2, 4, 6, 8, 10, 12) छः स्थानों में सभी ग्रह हों तो समुद्र योग होता है।

तदवद् वित्तात समुद्रः स्यादित्याकष्तिजसंग्रहः।।

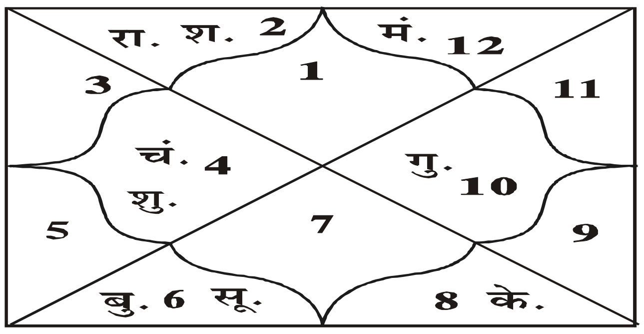

फल: समुद्र योगोदभूत जातक अनेक रत्नों से परिपूर्ण धनसमृद्ध, भोगी, जनप्रिय, पुत्रवान, स्थिर विभव वाला, तथा साधु स्वभाव का होता है।

6.3.4. संख्या योग:

आश्रय, दल व आकृति योग न हों तब एक राशि में सभी गह हो तो गोल, दो में युग, तीन में शूल, चार में केदार, पाँच में पाश, छह में दामिनी व सात में वीणा योग होता हैं। जिनका जन्म संख्या योग में होता है, वे जातक दूसरों के भाग्य से सुखी, एवं दूसरों के भाग्य से ही जीवन यापन करने वाले तथा चारों ओर से अषान्त होते है। संख्या योग निम्न प्रकार हैं:-

संख्या-केदार योग:

सब ग्रह जब चार स्थानों में होते हैं, तब ‘केदार’ योग बनता है।

केदारयोगज जातक बहुतों का उपकारक, किसान, सत्यवादी, सुखी, चंचल स्वभाव वाला तथा धनी होता है।

सुबहूनामुपयोज्याः कष्शीवला सत्यवादिन सुखिनः।

केदारे सम्भूताष्चलस्वभावा धनैर्युक्तः।।

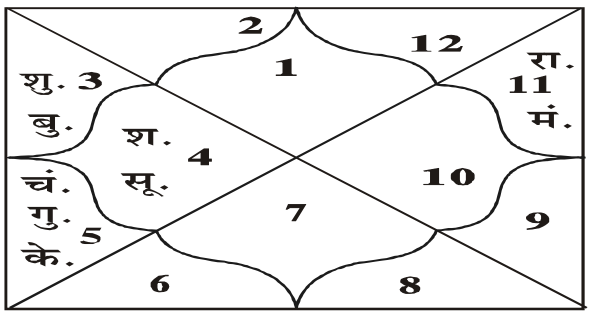

फल: मतान्तर से धनवान, कृषि से लाभ, सुस्त, बुद्धिमान, उपकारी, नौकरी से लाभान्वित, पूर्व आयु में कष्ट बाद में कष्ट रहित जीवन, माता-पिता का सुख बहुधा दीर्धजीवी होते हैं।

संख्या-दाम योग:

सब ग्रह जब छः स्थानों में होते हैं, तब यह योग होता है। दामयोगोत्पन्न जातक जनोपकारी, न्यायोपार्जित धन वाले, महान-ऐश्वर्यशाली, विख्यात, अनेक पुत्र तथा रत्नों से समृद्ध, धीर तथा विद्वान् होता है।

दाम्नि स्यादुपकारी नयधनयुक्त तो महेष्वरः ख्यातः।

बहुसुतरत्नसमष्द्धो धीरो जायेत विद्वांश्च।।

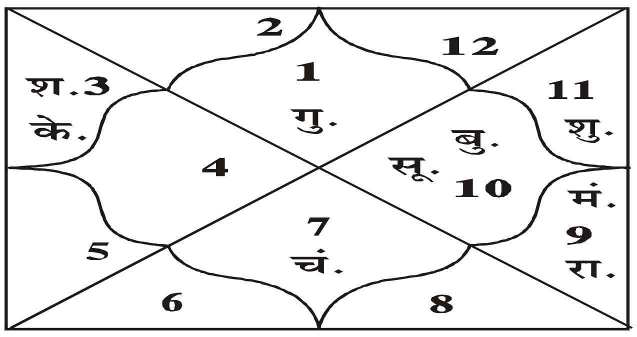

फलः उपकारी, उत्तम बुद्धि, विद्या तथा धन से यशस्वी, पूर्व आयु में बहुत कष्ट उठाकर उत्तर आयु में सुख भोगने वाला, आयु के 36वें वर्ष तक माता-पिता का सुख, 42वें वर्ष के बाद आय के नये स्रोत बनते हैं। लोगों के विरोध तथा शत्रुता से जीवन में कष्ट मिलते हैं।

संख्या-वीणा योग (वल्ल्की योग):

सब ग्रह जब सात स्थानों में होते हैं तब 'वल्लकी (वीणा)' योग होता है। वीणायोगज जातक-गीत, नृत्य तथा वाद्य का प्रेमी, कुशल, सुखी, धनी, नेता तथा अनेक सेवक वाला होता है।

प्रियगीतनष्त्यवाद्या निपुणाः सुखिनष्व धनवन्तः।

नेतारो बहुभष्त्या वीणायां कीर्त्तिताः पुरूषाः।।

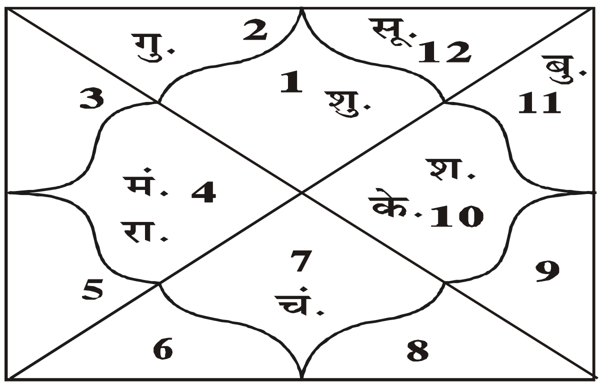

फलः सब कार्यो में प्रवीण तथा गायन वादनादिं कलाओं का शौकीन होना ऐसा शास्त्रकार बताते हैं। जो वीणा योग उत्पन्न होता है वह नाचने, गाने बजाने का शौकन और धनी होता है

संख्या- पाश योग:

सब ग्रह जब पाँच स्थानों में होते हैं, तब 'पाश' योग बनता है।

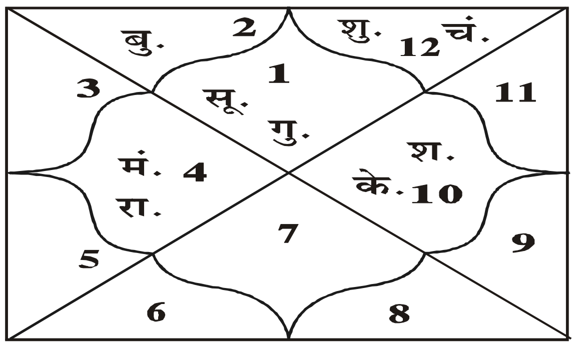

पाशयोगोत्पन्न जातक जेल जानेवाला, कार्य में दक्ष, प्रपन्ची, बहुत भाषण करनेवाला, शीलरहित, अनेक सेवक वाला तथा विषाल परिवार वाला होता है।

पाषे बन्धनभाजः कार्ये दक्षाः प्रपन्चकाराश्च।

बहुभाषिणो विषीला बहुभृत्याः सम्प्रतानाश्च।।

फल: मतान्तर से दूसरों से हमेषा प्रशन्सित, धनोपार्जन में सर्वदा ध्यान देने वाला, अत्यंत चतुत, बातुनी, पुत्रवान, जनता का कल्याण करने की इच्छा होती है।

संख्या - शूल योगः

जब सभी ग्रह 3 राशि में स्थित हों तो युग योग बनता है।

पाखण्डवादिनोंवा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके।

सुतमातध्धर्मरहिता युगयोगे ये नारा जाताः।।

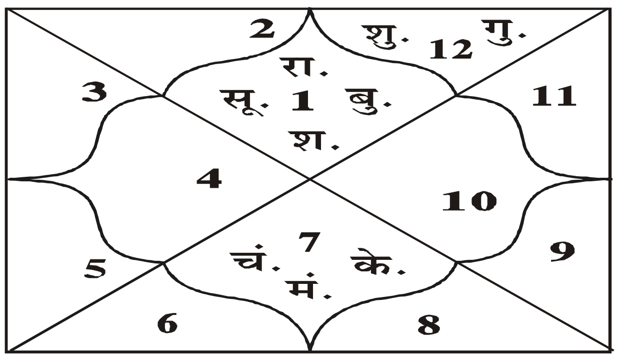

फलः युग योग में उत्पन्न जातक पाखण्ड़ी, धनहीन, समाज से बहिष्कृत एवं पुत्र-माता-पिता तथा धर्म से हीन होता है।

युग योगः

2 राशि में सभी ग्रह हों तो युग योग बनता हे।

पाखण्डवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके।

सुतमात्धर्मरहिता युगयोगे ये नष जाताः।।

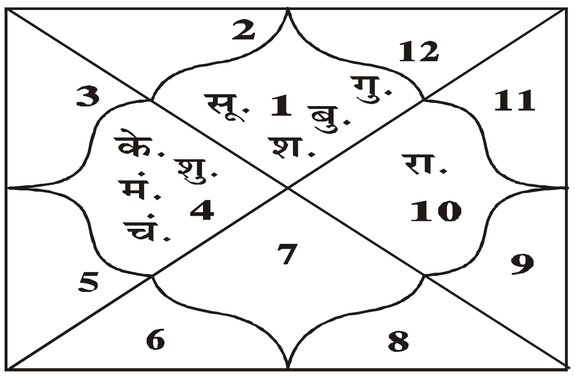

फल: युग योग में उत्पन्न जातक पाखण्डी धनहीन, समाज से बहिष्कृत एवं पुत्र माता, पिता तथा धर्म से हीन होता है।

गोल योग:

सभी ग्रह एक राशि में स्थित हों तो गोल योग बनता है।

सर्वास्वपि दशास्वेते भवेयुः फलदायिनः।

प्राणिनामिति विज्ञेयाः प्रवदन्ति त्वाग्रजाः।।

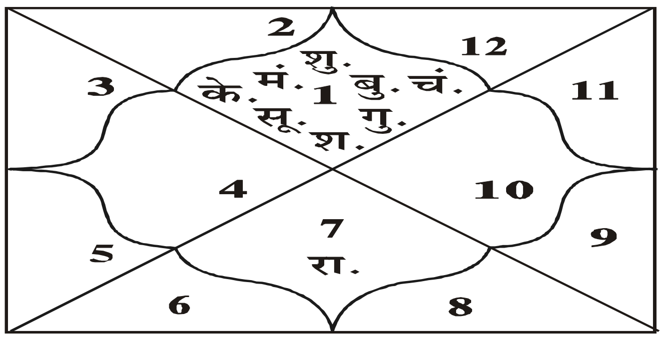

फल: गोल याग में उत्पन्न जातक बलवान धनहीन, विद्या तथा विज्ञान से हीन, मलिन सदैव दुखी एवं दीन सेवा है।

6.4 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत छात्रों ने नाभसादि योगों का परिचय प्राप्त किया। नाभसादि योग मूलतः आकृतिपरक है, इनके फलादेश हतु अधिक श्रम नहीं करना पड़ता है। कुण्ड़ली में इनके नाम के अनुसार ही आकृति देखकर तुरन्त फलादेश किया जा सकता है।

6.5 शब्दावलि

1.	नाभसादि	=	आकाश में स्थित ग्रहों के आकृति के अनुसार बनने वाले योग
2.	आश्रय	=	निवास
3.	वल्लकी	=	वीणा
4.	पणफर	=	द्वितीय, पंचम, अष्टम व एकादशभाव
5.	आपोक्लिम	=	तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादशभाव

6.6. अभ्यास प्रश्न

प्रश्न - 1: नाभस योग से क्या आष्य है?

उत्तर: ''नभ'' अर्थात आकाश में ग्रहो की विशेष स्थितियों द्वारा बनने वाले योग नाभसयोग कहलाते है।

प्रश्न - 2 नाभसादि योग कितने प्रकार के है ?

उत्तर: यह योग 1800 है, जिनमें मूल 32 प्रकार के योग कहे गए हैं।

प्रश्न - 3: आश्रय योग कितने प्रकार के है?

उत्तर: आश्रय योग तीन प्रकार के हैं। रज्जू, मूसल व नलयोग

प्रश्न - 4: दल योग के दो भेद बताइए ?

उत्तर: दल योग के 2 भेद है - मालायोग तथा सर्प योग।

प्रश्न - 5: आकृति योग कितन प्रकार के बातए गए है?

उत्तर: आकृति योग के भेद 20 बताये गये है।

प्रश्न - 6:मूसल योग कैसे बनता है ?

उत्तर: सब ग्रह स्थिर राशिस्थ हों तो मूसल योग होता है।

प्रश्न - 7: आश्रय योग के फल किस प्रकार है ?

उत्तर: आश्रय योग उत्पन्न जातक सूखी व सभी गुणों से युकत होता है।

प्रश्न - 8: संख्या योग के कितने भेद है ?

उत्तर: संख्या योग के सात भेद-वीणा, पाश, केदार, शूल, दाम युग व गोल है।

प्रश्न - 9: वीणा योग के फल बताइये ?

उत्तर: वीण योग में जल्म लेने वाला जातक गीत, नृत्य तथा वाद्य का प्रेमी, सुखी व धनी होता है।

प्रश्न - 10: किन्हीं दो आकृति योग के नाम स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर: आकृति योग के 2 भेद श्रृंगाटक तथा नौका योग हैं।

6.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: नाभासादि योग से क्या आशय है? यह योग कितनी प्रकार के है? स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न - 2: आश्रय योग से क्या आशय है, तथा इसके भेद बताइऐ।

प्रश्न - 3: मालायोग तथा सर्पयोग की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

प्रश्न - 4: आकृति योगों के फल का वर्णन संक्षिप्त रूप में करें।

प्रश्न - 5: किन्हीं 3 पर टिप्पणी करें।

1. योग 2. वीणा योग 3. शकट योग

4. केदार योग 5. कमल योग

6.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. सारावली

सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहत्पाराशर होराशास्त्र

सम्पादक: सुरेश चन्द्र मिश्र

प्रकाशक: रंजन पब्लिकेशन, दिल्ली।

3. भारतीय ज्योतिष

व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई – 7

आजीविका एवं राजयोगविचार

इकाई संरचना

7.1. प्रस्तावना
7.2. उद्देश्य
7.3. विषय प्रवेश
7.3.1. आजीविका में सफलता का आधार
7.3.2. आजीविका सम्बन्ध में ज्योतिषीय विचार
7.4. लग्न द्वारा आजीविका विचार
7.5. दशमभाव विचार
7.5.1. राशितत्त्व द्वारा आजीविका विचार
7.5.2. दशमभाव में स्थित ग्रह द्वारा आजीविका
7.6 आजीविका सम्बन्धी विभिन्न योग
7.7. उदाहरण कुण्ड़ली द्वारा आजीविका योग
7.7.1. व्यापार योग
7.7.2. ज्योतिषी योग
7.7.3. लेखक योग
7.7.4. राजनीति योग
7.7.5. खिलाड़ी योग
7.7.6. पत्रकार योग
7.7.7. एडवोकेट योग
7.7.8. इन्जीनियर योग
7.7.9. अकाऊन्टेण्ट योग
7.7.10. फिल्म अभिनेता योग
7.7.11. डाक्टर योग
7.7.12. प्राध्यापक योग
7.7.13. गायिका योग
7.7.14. जज योग
7.7.15. कर्मचारी योग
7.8. राजयोग विचार

7.9. उदाहरणार्थ कुण्ड़ली द्वारा राजयोग
7.10. प्रसिद्ध कुण्ड़लियों में राजयोग विचार
7.10.1. भगवान् श्रीकृष्ण
7.10.2. भगवान् श्रीराम
7.10.3. महाराज जयसिंह
7.10.4. पं. जवाहरलाल नेहरु
7.11. सारांश
7.12. शब्दावलि
7.13. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न
7.14. लघुत्तरात्मक प्रश्न
7.15. सन्दर्भ ग्रन्थ

7.1. प्रस्तावना

समाज में समस्त वर्गों के लोगों को हानि लाभ की चिन्ता रहती है। सभी धन की इच्छा करते हैं, सभी पद, प्रतिष्ठा एवं सुख की इच्छा करते हैं। प्रायःबहुत से मनुष्यों को अपनी जन्मकुण्डली दिखाते समय यह पूछते देखा गया है कि किस साधन से उसे धन प्राप्ति हो पाऐगी अथवा किस रोजगार द्वारा वह अपना जीवन राजतुल्य भोग सकेगा। जीवन यापन हेतु उसे ऐसी आजीविका प्राप्त हो पाऐगी या नहीं, जिसके द्वारा वह धन, मान-प्रतिष्ठा, यश, आदि प्राप्त कर सकता हो। अतएव पराशरी विधान (देश, काल, परिस्थति) को दृष्टिगत रखते हुए हम आज के आधुनिक युग के सापेक्ष आजीविका स्रोत एवं राजयोग का वर्णन इस इकाई द्वारा करेगे। अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जन्मांक के आधार पर हानि, लाभ, धन प्राप्ति, यश अपयश, पद – प्रतिष्ठा आधि- व्याधि के विषय में जानकर उनसे संबंधित फलादेशों को बताने में सक्षम हो सकेंगे।

7.2. उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् हम निम्नलिखित ज्ञान प्राप्त कर पाऐंगे।

1. आजीविका क्या है? तथा इसकी मनुष्य जीवन में क्या उपयोगिता है?
2. ज्योतिष शास्त्र में आजीविका का क्या संबंधों है?
3. ग्रहों द्वारा आजीविका विचार।
4. आजीविका के विभिन्न योग।
5. योगों का निर्माण ग्रहो के किन संबंधो द्वारा होता

6. कुण्डली में राजयोग कथन हेतु मुलभूत नियम क्या हैं।

7.3. विषय प्रवेश

मनुष्य को जीवन यापन करने हेतु धन का होना अति आवश्यक है। भारतीय संस्कृति के अनुसार लक्ष्मी के अभाव में पालनकर्त्ता विष्णु जी का जीवन भी पूर्ण नहीं है। प्राचीन मनीशियों ने धन का स्रोत आजीविका को ही बताया है। आधुनिक युग में भी इस कथन को व्यावहरिक मानते हुए कोई इसे नकार नहीं पाया है। आर्थिक गतिविधि में मनुष्य के ज्ञान, कला, योग्यता, रूचि, इच्छाशक्ति का उपयोग करने को ही आजिविका कहा गया है। आजिविका के माध्यम से ही व्यक्ति समाज का जिम्मेदार नागरिक बनकर देश की प्रगति मे महत्त्वपूर्ण योगदान देकर अपना कर्त्तवय पालन कर सकता है।

कर्त्तवय पर्यन्त मनुष्य की आजीविका स्वार्थपूर्ण कार्यों से परे दूसरों के जीवन में सहयोग एवं सेवा पर आधारित होना ही बहुमूल्य है। मनुष्य के जीवन में आजीविका किस प्रकार महत्वूपर्ण है, वह निम्नलिखित हैं:-

1: मान सम्मान, पद-प्रतिष्ठा हेतु।

2: आजिविका से व्यक्ति का पूर्ण, एवं संतुलित विकास होता है।

3: व्यक्ति के स्वयं की अर्थव्यवस्था हेतु आजिविका का विशेष योगदान है।

4: राष्ट्र की प्रगति एवं आर्थिक संपन्नता मनुष्य की आजिविका पर निर्भर है।

5: बढ़ती बेरोजगारी एवं गरीबी को दूर करने के लिए।

7.3.1. आजीविका में सफलता का आधार

आजीविका में सफलता हेतु व्यक्ति विशेष के किसी भी काम में उसकी जानकारी, क्षमता, दक्षता, कर्मनिष्ठा, परिश्रमी स्वभाव, इच्छाशक्ति, स्नेह व परस्पर सहयोग पूर्ण व्यवहार का विशेष योगदान है। अगर व्यक्ति अपने व्यवहार में स्नेह, सहयोग, कर्त्तवयनिष्ठा अथवा सद्भाव रखे तो सफलता, समृद्धि व सुख सहज ही सुलभ हो जाते है। इसके अतिरिक्त काम के प्रति समर्पण मनुष्य को निश्चय ही सफलता के शिखर पर पहुँचा देने की क्षमता रखता है।

7.3.2. आजिविका संबंध में ज्योतिषीय आधार:-

व्यक्ति के जीवन में सही आजीविका का निर्णय ही उसे अपने जीवन काल में सफलता, प्रतिष्ठा, उन्नति एवं समृद्धि प्राप्त कराने में महत्त्वपपूर्ण योगदान रखता हें प्रायः आधुनिक युग मे बहुत से व्यक्ति अपनी

जन्मकुण्डली द्वारा अपनी आजिविका का स्रोत, उससे प्राप्त उन्नति, पदोन्नति, एवं सफलता के संदर्भ में ज्योतिषियों से प्रश्न करने हेतु आते है।

अतः एक विद्वान् ज्योतिष को इसका फल कथन करने क लिए निम्न भाव एंव ग्रहों पर विचार करना चाहिए:-

1. ज्योतिष द्वारा आजिविका के चयन के लिए लग्न एवं लग्नेश का बली होना आवश्यक है। लग्न एवं लग्नेश का शुभ-अशुभ ग्रहों द्वारा सम्बन्ध, शुभ दृष्टि, शुभ युति कार्य में सफलता का सूचक होती है।

2. दशम भाव तथा दशमेश का ग्रहो से दृष्टि, युति सम्बन्ध, उच्चस्थ, स्वक्षेत्री व मित्र क्षेत्री होना आजीविका निर्णय में उपयोगी भूमिका प्रदान करता है। दशम भाव ही आजिविका भाव हैं।

3. अनेक विद्वान् दशमेश के नवांशपति को आजीविका का कारक मानते हैं।

4. कुछ आचार्यों का मत है नवांश कुण्डली से भी आजिविका का विचार करना चाहिए।

5. जन्मकुण्डली के आत्मकारक ग्रह से भी व्यक्ति विशेष की आजीविका विचार का निर्णय लिया जा सकता है।

6. कुछ विद्वान् ज्योतिष कर्म का कारक शनि को मानते है। उनके अनुसार जन्मकुण्डली मे शनि की स्थिति तथा शनि युति, दृष्टि, राशि सम्बन्ध रखने वाले ग्रहों द्वारा जातक की आजीविका का निर्धारण किया जाना चाहिए।

7. कुछ ज्योतिष नवमभाव सम्बन्ध आजीविका से कहते हैं नवम भाव से व्यक्ति का भविष्य, धार्मिक आस्था वैज्ञानिक विचार धारा का विचार किया जाता है। विदेश में व्यवसाय नवमभाव से ही ज्ञात किया जाता है।

7.4. लग्न द्वारा आजीविका विचार

आजीविका प्रकरण अत्यत गम्भीर एव गूढ़ विषय है। विद्वानों का मत है लग्न एवं दशम भाव का पारस्परिक सम्बन्ध आजीविका विचार करने के लिए महत्त्वपूर्ण है। लग्न किसी फल कथन का जन्मकुण्डली में केन्द्र स्थान रखता हे। किसी भी व्यक्ति विशेष का आजीविका में सफलता एवं शुभाशुभ का ज्ञान लग्न से ही करना चाहिए। विषय विशेष में तीन लग्न (जन्म लग्न, चन्द्र लग्नों में विभिन्न ग्रहों की स्थिति एवं प्रभाव द्वारा धन प्राप्ति का स्रोत मानना चाहिए।

7.5. दशमभाव विचार

दशम भाव को आजिविका का भाव कहा गया हैं दशमभाव रोजगार, व्यापार, व्यवसाय एवं नौकरी का दर्शाता है। मान-सम्मान, यश, प्रतिष्ठा अथवा नीति सम्बंधी कार्य दशम भव से ही जाने जाते हैं। उच्च पद या अधिकार की प्राप्ति का विचार दशम भाव से ही करना चाहिए। दशम भाव में जिन तत्त्व की राशि होगी उसके अनुसार जातक की आजिविका का विचार बताया गया है।?

7.5.1. दशम भाव मे राशि तत्त्व द्वारा आजिविका विचार निम्न प्रकार है

अग्नि तत्त्व (1, 5, 9):-

इस तत्त्व की राशि साहस एवं पराक्रम संबंधी कार्य को दर्शाती हे। ऐसा जातक, इंजीनियर, डॉक्टर, नेता, अधिकारी, सैनिक, ऊर्जा प्रबन्धक, आदि होता है।

भूतत्त्व राशि (2, 6, 10):-

दशम भाव में वृषभ, कन्या, मकर, राशि होने से जातक, कृषक, गायक, कुशल वादक, कर अधिकारी, विभिन्न पदार्थों की खानों का स्वामी होता है।

वायु तत्त्व राशि:-

जातक दार्शनिक, लेखक, विचारक, वैज्ञानिक शोधकर्ता, वकील, साहित्यकार आदि होता है। वायु तत्त्व राशि होने से जातक वायुयान चालक एवं अन्तरिक्ष का खोजकर्ता भी हो सकता है।

जल तत्त्व राशि:-

जातक दूध, घी, पेय पदार्थ, होटल, बेकरी, कपड़ा का व्यापारी, केमिस्ट, समुद्री व्यपार, अथवा जहाज चालक, सिंचाई व्यवस्थापक आदि होता है।

7.5.2 दशम भाव में स्थित ग्रहों द्वारा आजिविका

सूर्यः

उच्चाधिकारी, सरकारी कर्मचारी, चिकित्सक, खिलाड़ी, गणितज्ञ, ज्येतिषी, राजदूत, न्यायाधीश, इंजीनियर, प्रशासक , पशुचिकित्सक, आदि होता है।

मंगलः

दलनायक, व्यवस्थापक, पराक्रम सम्बन्धी कार्य, कारीगर, मिस्त्री, ताँबा, मूंगा, एवं स्वर्ण सम्बन्धी व्यवसायी होता हैं। वकील, पुलिस, सुरक्षाकर्मी आदि मंगल के प्रभाव से ही बनता है।

बुधः

वाणिज्य व्यापार, शिक्षक, प्रकाशक, सम्पादक, गणितज्ञ, मुनीम, मिस्त्री, लेखाकार आदि कार्य बुध के कारकतत्व के अन्तर्गत आते हैं। फोटोग्राफी, कलाकार, शिल्पकार, सगीतकार, ग्रन्थकार आदि बुध ग्रह से विचार करना चाहिए।

गुरूः

गुरू ज्ञान एवं विवेक का कारक कहा गया है। गुरू द्वारा जातक साहित्यकार बैंक अधिकारी, अध्यापक, पण्डित, पुरोहित, प्रवचनकर्त्ता, शोधकर्त्ता, वित्त प्रबंधक आदि होता है।

शनिः

कर्म का कारक शनि ग्रह को कहा गया है। कठिन परिश्रम द्वारा आजिविका के प्रदाता शनि ग्रह को माना है। शनि से जातक दण्ड अधिकारी, मजदूर, वकील, सरकारी ठेकों आदि से आजिविका पाता है, खनिज, लोहा, कोयला, चमड़ा, पेट्रोल का कार्य शनि के अन्तर्गत आता है।

शुक्रः

व्यक्ति धनी महिला, श्रृंगार सामग्री वस्तु, आभूषण सौदर्य प्रसाधन हेतु कार्यों से धन पाता है। सिनेमा अथवा दूरदर्शन कलाकार, रत्न व्यवसायी, संगीतज्ञ, विमान चालक आदि होता है।

चन्द्रमाः

चन्द्रमा माता से धन दिलाता हैं। दूध, दही, घी चीनी, समुद्री उत्पाद, मछली पालन जल सम्बन्धी कार्य नौसेना अधिकारी, मोती, तैलीय पदार्थ, होटल, रेस्तरां, आदि सम्बन्धी कार्य करता है।

राहुः

दशमस्थ राहू होने पर जातक श्रेष्ठ कलाकार, विद्वान्, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, कुशल नेता व्यापारी आदि होता है।

केतुः

केतु द्वारा जातक धार्मिक, तीर्थाटन करने वाला शास्त्रज्ञ, अपने परिश्रम से धन एवं सफलता पाने वाला होता है।

7.6 आजीविका सम्बन्धी विभिन्न योग

(1) मगल + चतुर्थेश की युति केन्द्र, त्रिकोण भाव मे अथवा लाभ स्थान में हो तथा दशमेश के साथ शुक्र+ चन्द्रमा) की युति/दृष्टि कृषि व पशुपालन से धन प्रदान करती है।

(2) बुध+ शुक्र+ शनि की युति नवमभाव मे हो जातक कार्य से लाभ पाता हे।

(3) लग्न तथा सप्तम भाव में सभी ग्रह हो तो शकट योग बनता है; तथा जातक ट्रांसपोर्ट सर्विस या लकड़ी के सामान का व्यापारी होता है।

(4) गुरू अष्टम भाव में तथा पाप ग्रह केन्द्र में हो तो शुभ ग्रह की दृष्टि युति से वंचित हों तो, जातक मछली व मांस का विक्रय करता है।

(5) दशमेश का नवांशपति होकर बुध या शुक्र दशम भाव में स्थित हो गुरू से केन्द्र भाव (4, 7, 10 भाव में) शुक्र की स्थिति, जातक को कपड़ों का व्यापारी बनाती है।

(6) दशम भाव में चन्द्रमा व राहु की युति, जातक को कूटनीतिज्ञ बनाती है।

(7) दशमस्थ मंगल अथवा मंगल का दशमेश से दृष्टि अथवा युति सम्बन्ध हो तो जातक को कुशल प्रशासक या सैन्य अधिकारी बनाता है।

(8) गुरू + केतु का योग हो तो जातक होम्योपैथिक चिकित्सक होता है।

(9) द्वितीयस्थ शनि हो तो जातक सेना में अधिकारी बनता है।

(10) बुध के नवांश में स्थित चन्द्रमा, यदि जन्म कुण्डली में सूर्य से दृष्ट हो, पंचम भाव बलवान हो तथा शुक्र (अभिनय), बुध (वाणी) व लग्नेश (शरीर की सुंदरता) का परस्पर दृष्टि अथवा युति सम्बन्ध हो तो जातक को फिल्मी जगत में सफलता मिलती है।

(11) यदि चन्द्रमा अथवा शुक्र की युति लग्नेश से हो आत्मकारक ग्रह का नवांश (कारकांश) जिस राशि में हो, यदि जन्म कुण्डली की उस राशि में चन्द्रमा या शुक्र की स्थिति हो तो जातक कवि या लेखक होता है।

(12) सूर्य दशमस्थ हो अथवा (सूर्य+ मंगल) किसी भी भाव में तथा दशमेश केन्द्र में हो तो जातक न्यायाधीश होता है।

(13) सूर्य$मंगल दशमस्थ होकर + शुभ ग्रहों से दृष्ट हों तो जातक को चिकित्सा क्षेत्र व राजनीति में सफलता मिलेगी।

(14) दशम भाव मे बुध+ गुरू की युति होने से जातक वैज्ञानिक, दार्शनिक, न्यायविद् या चिकित्सक होगा। वह वस्तुतः ज्ञान व बुद्धि का योग है, जो समस्याओं का निदान खोजने में प्रवीणता देगा।

(15) सूर्य+ चन्द्र+ मंगल की दशमभाव या दशमेश से युति/दृष्टि हो तो जातक नेता, बैंक अधिकारी या कलाकार बनता है। सूर्य अधिकार देता है तो मंगल प्रबन्ध व्यवस्था में निपुणता देता है तथा चन्द्रमा जनता, धन व संगीत का प्रतिनिधी है।

(16) बुध का दशमभाव या दशमेश से दृष्टि युति सम्बन्ध हो तो जातक को वैज्ञानिक बनाता है।

(17) दशमस्थ बुध का (गुरू+ शुक्र) से दृष्टि-युति सम्बन्ध जातक को कवि या साहित्यकार बनाता है।

(18) गुरू का दशम भाव या दशमेश का युति सम्बन्ध होने से जातक दार्शनिक होगा।

(19) दशमभाव या दशमेश का दृष्टि-युति संबंध शुक्र से होने पर जातक नर्तक, अभिनेता, संगीतज्ञ या कलाकार होता है।

(20) दशम भाव या दशमेश शनि से युक्त/दृष्ट होने पर जातक मजदूर या चपरासी होता है।

(21) राहु दशम भाव में होने पर जातक बढ़ई, मजदूर या लिपिक होता है।

(22) आत्मकारक (किसी भी राशि में सर्वाधिक अंश वाले) ग्रह के नवांश पर सूर्य व शुक्र की दृष्टि, जातक को राजकीय सेवा (सरकारी नौकरी) से लाभ देती है।

(23) कारकांश (आत्मकारक ग्रह के नवांश) से जन्म कुण्डली में दशम भाव पर बुध की दृष्टि सरकारी नौकरी प्रदान करती है।

(24) दशम भाव में सूर्य, मंगल अथवा शनि में से कोई दो ग्रह स्थित हो व दशम भाव पर शुभ ग्रह की दृष्टि युति का अभाव हो तो जातक नौकरी करता है। दशमस्थ सूर्य पर मंगल की दृष्टि/युति हो तो जातक राज्यकर्मचारी बनता है।

7.7. उदाहरण कुण्ड़ली द्वारा आजीविका योग

7.7.1. व्यापार योग

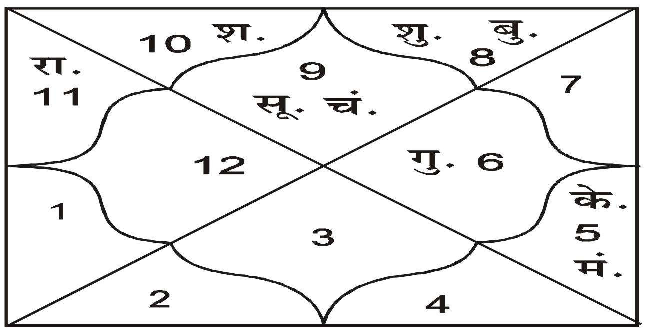

तृतीय भाव का बली, तथा शुक्र का द्वितीय एकादश में स्थित होना व्यापार में धन वृद्धि करता है। कुण्ड़ली में द्वितीयेश एकादशेश, दशमेश एवं भाग्येश बलवान हो तो जातक सफल व्यापारी बनता है।

प्रस्तुत: कुण्ड़ली सफल व्यवसायी श्री धीरूभाई अंबानी की है। कुण्ड़ली में दशमेश तथा लाभेश द्वादश भाव में सिथत होकर कार्यक्षेत्र में उन्नति को दर्शाते हैं। धनेश शनि की लाभ स्थान में दृष्टि वैभव व सम्पन्नता का संकेत दे रही है। पंचमेश नवमस्थ होना भी शुभकारक है। कुण्ड़ली में गुरू चन्द्र परस्पर केन्द्र में स्थित होकर गजकेसरी योग का निर्माण कर रहे है। लग्नेश, सुखेश का दशमस्थ होकर धन व सुख भाव को देखना, मान, यज्ञ, प्रतिष्ठा एवं लोकप्रियता देता है।

7.7.2. ज्योतिषी योग

सूर्य ज्योतिष ज्ञान का स्वामी है तथा बुध उस ज्ञान को देने वाला है। गूढ़ दैवीय शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है, अतः इन ग्रहों का पारस्पिरिक सम्बन्ध दशम, दशमेश अथवा लग्नेश से हो तो व्यक्ति सफल ज्योतिषी बनता है। चतुर्थ एवं द्वादश भाव (चतुर्थ से नवम) भी सफल ज्योतिष के लिए महत्तवपूर्ण है।

यह कुण्ड़ली प्रसिद्ध ज्योतिष डॉ. बी. वी. रमन जी की है। प्रस्तुतः कुण्ड़ली में द्वादशेश एवं लग्नेश चतुर्थ भाव में उच्च के चन्द्रमा के साथ स्थित जिसने इन्हें प्रतिष्ठा एवं यश प्रदान किया। लाभेश गुरू का सूर्य व चन्द्र से दृष्टि सम्बन्ध, मन व आत्मा में ज्ञान के प्रकाष द्वारा लाभ दिलाने में सक्षम दिखाई दे रहा है। दशमेश मंगल की पंचमेश बुध व नवमेश शुक्र से युति तथा दशम भाव पर चतुर्थ दृष्टि आजीविका क्षेत्र में बुद्धि व भाग्य का सहयोग देकर उत्कृष्ट सफलता देती है।

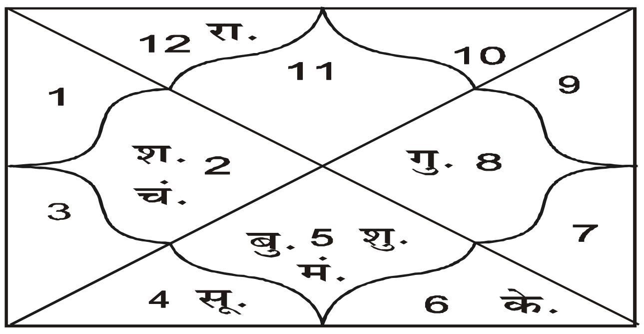

7.7.3. लेखक योग

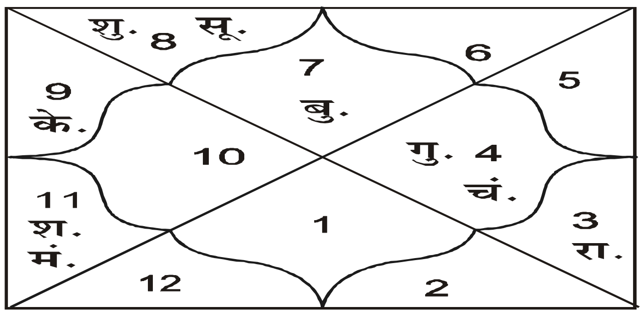

बुध का सम्बन्ध वाणी से है। गुरू ज्ञान, व्याख्यान विवेक का तथ्य, शुक्र काव्य सम्बन्धी रचना से इनका सम्बन्ध दशम, दशमेश से होने पर जातक लेखक बनता है।

यह कुण्ड़ली प्रसिद्ध कवि डॉ. हरिवंश राय बच्चन की है जो प्रसिद्ध मधुशाला के लेखक थे। इस कुण्ड़ली में दशमेश चन्द्र स्वगृही होकर उच्च के गुरू से युति कर रहे है, जो ज्ञान द्वारा यश, मान, प्रतिष्ठा दे रहे है। पंचमेश व वाणी पति का पंचम में स्थित होना तथा लाभ भाव को देखना जातक को विद्वान् बनाता है तथा ज्ञान से धन प्राप्ति का संकेत देता है।

7.7.4. राजनीति में सफलता के योग

गुरू का लग्न, तृतीय एवं लाभ भाव से सम्बन्ध राजनीति क्षेत्र में सफलता देता है। नवमस्थ गुरू राजनीति में सफलता देता है। राहु कूटनीतिज्ञता का कारक है अथवा इसका दशम भाव से सम्बन्ध करना भी राजनीति में सफलता का परिचायक है।

यह कुण्ड़ली श्रीमती सोनिया गाँधी की है। कुण्ड़ली में सप्तमेश शनि लग्नस्थ होकर योगकारक मंगल से दृष्ट हैं जो दशमेश भी हैं। भाग्येश गुरू तथा लाभेश शुक्र युति करते हुए दशम भाव को देख रहे हैं। दशमेश मंगल की लग्न तथा लग्नेश पर दृष्टि सफलता का परिचायक सूचक है। धनेश का लाभ भाव में स्थित राहु से दृष्टि सम्बन्ध कूटनीति द्वारा धन लाभ दे रहा है।

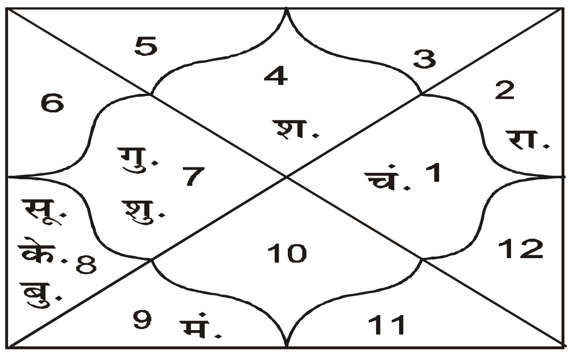

7.7.5. खिलाड़ी बनने के योग

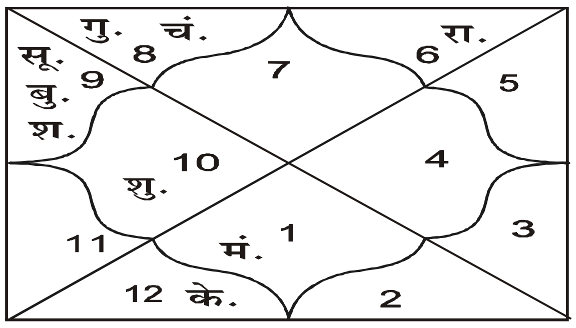

लग्न अथवा पंचम भाव पर शुभ ग्रह की दृष्टि युति जातक की क्रीड़ा प्रतियोगिता में सफलता देती है। तृतीय, तृतीयेश एवं मंगल को स्पर्धा का कारक कहा गया है।

यह कुण्ड़ली क्रिकेट खिलाड़ी कपिल देव की है। कुण्ड़ली में सप्तमेश, धनेश मंगल से दृष्ट है। दशमेश एवं तृतीयेश का सम्बन्ध धन भाव में पराक्रम से धन व मान दे रहा है। योगकारी शनि का सम्बन्ध भाग्येश बुध अथवा लाभेश सूर्य से तृतीय भाव में कार्य के दक्षता और कुशलता को दर्शाता है।

7.7.6. पत्रकार योग

यह कुण्ड़ली एक प्रसिद्ध पत्रकार की है। कुण्डली में दशमेश शनि की तृतीयेश बुध के साथ युति है तृतीय भाव समाचारों का प्रतिनिधि है, अतः तृतीयेश का एवं बुध का दशमेश शनि को प्रभावित करना जातक को पत्रकार बनाता है। लग्न में स्वराशि मंगल ''रूचक'' नामक राज योग बनाती है। चतुर्थेश चन्द्रमा से नवमेश वृहस्पति की केन्द्रीय स्थिति जहाँ ''गजकेसरी'' राज योग बनाती है, वहाँ केन्द्र-त्रिकोण योग भी बनाती है। पंचमेश सूर्य और सप्तमेश शुक्र की भाग्य स्थान में स्थिति केन्द्र त्रिकोण योग बनाती है। अतः जातक के कार्यकाल में प्रेस उन्नति के षिखर पर पहुँच गया।

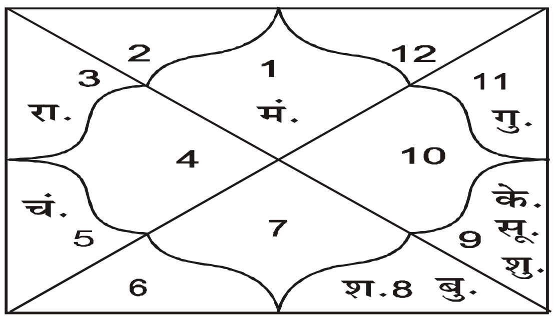

7.7.7. एडवोकेट योग

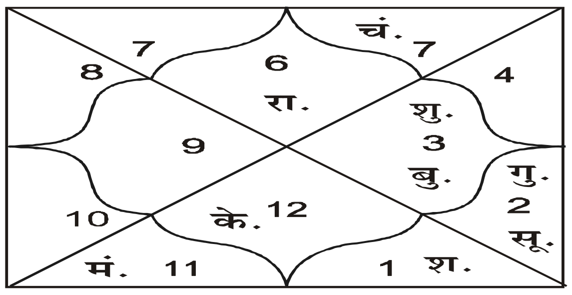

बृहस्पति देवताओं का गुरू है तथा शुक्र दैत्यों का गुरू, दोनों ही कानून शास्त्र से सम्बन्ध रखते हैं। पंचम भाव बुद्धि का है तथा बुध वाणी का कारक है। एडवोकेट की कुण्ड़ली में बुध पर शनि का प्रभाव भी जरूरी है क्योंकि अपने मुवक्किल का केस सही सिद्ध करने के लिए झूठ भी बोलना पड़ता है और बहस भी करनी पड़ती है ताकि विरोधी पक्ष कमज़ोर पड़े, शनि मुकद्दमे में बाजी एवं झगड़े का प्रतिनिधित्व करता है। अतः जब इनमें से दो या दो से अधिक ग्रह लग्न एवं दशम स्थान को प्रभावित करें तो जातक वकील बनता है।

यह कुण्ड़ली एक प्रसिद्ध एडवोकेट की है। दशमेश बुध स्वराशि होकर शुक्र के साथ दशम स्थान मे स्थित है एवं इन दानों ग्रहों पर पंचमेश शनि की दृष्टि है। कानून के कारक बृहस्पति की लग्न पर पूर्ण पंचम दृष्टि है। अतः जातक का कारक बृहस्पति की लग्न पर दृष्टि होने के कारण पूर्ण वकील बनना स्वाभाविक है।

7.7.8. इंजीनियर योग (अभियन्ता)

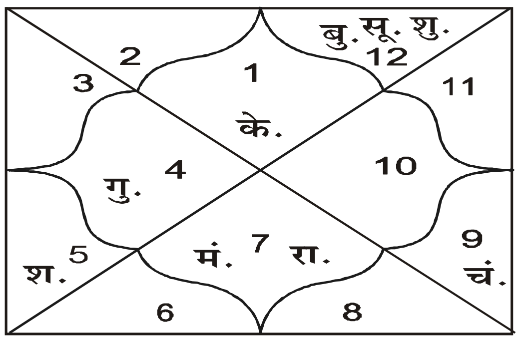

अगर दशम भाव, दशमेश पर तथा लग्न-लग्नेश पर शनि और मंगल का प्रभाव हो तो जातक इंजीनियर बनता है। शनि मिट्टी, भूमि, सीमेंट, लोहे का प्रतिनिधि है जबकि इन चीज़ों से बनी ईंटों से सम्बन्धित होता है। सफल इंजीनियर बनने के लिए बुद्धि तथा योग्यता की भी जरूरत है अतः पंचम स्थान एवं बुध का इन ग्रहों से सम्बन्ध इंजीनियर बना देता है।

यह कुण्ड़ली बिजली बोर्ड के चेयरमैन की है। दशम भाव का स्वामी स्वयं शनि है। दशम भाव पर मंगल की पूर्ण चतुर्थ दृष्टि है, अतः जातक इंजीनियर बना। चतुर्थ भाव में उच्च राशि में स्थित बृहस्पति जातक को ऊँचा पद दिलाती है। दशम भाव पर मंगल की दृष्टि भी ऊँची पदवी दिलाने में सहायक सिद्ध हुई।

7.7.9. अकाउन्टेण्ट योग (लेखाधिकारी)

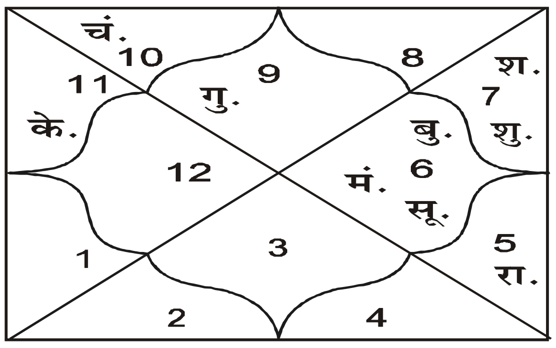

यह कुण्ड़ली ऐसे जातक की है जो एक व्यापारिक प्रतिष्ठान में चीफ कॉस्ट अकाउन्टेण्ट रहा था, इसकी कुण्ड़ली में दशम भाव में उच्च राशि में बुध बैठा है। लग्न में स्वराशि बृहस्पति तथा दशमस्थ सूर्य और मंगल जातक को उच्चाधिकारी बनाते है।

7.7.10. फिल्म अभिनेता योग

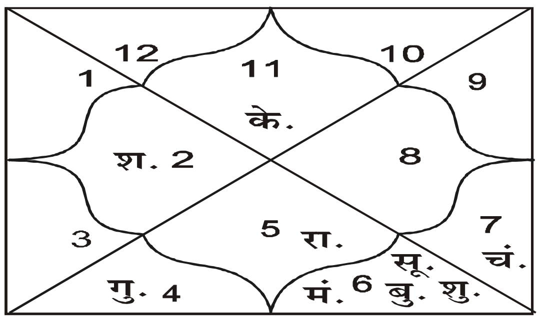

कुण्ड़ली में पंचम स्थान मनोरंजन स्थान है। शुक्र संगीत और फिल्म इण्डस्ट्री का कारक है। बुध ''एक्टिंग'' का कारक है। कुण्डली में दशम, दशमेश, लग्न, लग्नेश को शुक्र, बुध और पंचमेश प्रभावित करें तो व्यक्ति सफल अभिनेता बनता है।

यह कुण्डली सुपर स्टार अमिताभ बच्चन की है । इसमें दशमेश मंगल ,पंचमेश बुध तथा शुक्र से युक्त है। शुक्र का नीचभंग राजयोग है क्योंकि शुक्र की नीच राशि कन्या का स्वामी बुध, शुक्र के साथ ही अपनी राशि मे स्थित है। अतः शुक्र जातक के व्यवसाय पर पूरा प्रभाव डाल रहा है।

7.7.11. डाक्टर बनने के योग (चिकित्सक)

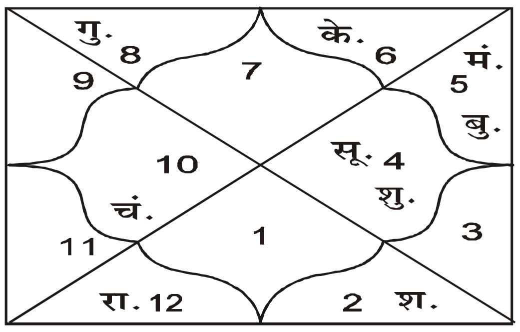

जीवन प्रदान करने वाला ग्रह सूर्य है और मृत्यु का कारक शनि। कुण्ड़ली में आठवाँ घर ''मृत्यु'' स्थान कहलाता है। मृत्यु के विरूद्ध संघर्ष करना और जीवन प्रदान करना, यही डाक्टर का व्यवसाय है। सूर्य औषधि का भी कारक है। अगर कुण्डली में नीचे लिखे योग विद्यमान हों तो जातक डाक्टर बन सकता है:-

1. दशम अथवा दशम स्थान के स्वामी पर अष्टमेश का युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभाव हो और सूर्य अथवा शनि की युति अथवा दृष्टि हो।

2. एकादश स्थान पर एवं एकादशेश पर सूर्य, शनि, अष्टमेश का प्रभाव हो।

3. लग्न में अष्टमेश, अथवा सूर्य शनि की युति हो।

4. षष्ठ ''रोग'' स्थान है। पष्ठठेश का दशम और एकादश भाव अथवा इनके स्वामियों को प्रभावित करना भी डाक्टरी योग बनाता है।

यह कुण्डली एम.बी.बी.एस., एफ.आर.सी.एस. की है।

इसमे लग्नेश और अष्टमेश शुक्र दशम स्थान में सूर्य के साथ स्थित है। सूर्य और शुक्र की दशमेश चन्द्रमा पर भी दृष्टि है। दशम स्थान पर शनि की भी दृष्टि है। जातक का डाक्टर होना स्पष्ट है।

7.7.12. प्राध्यापक योग

कुण्ड़ली में जब नीचे लिखे ग्रह योग हों तो जातक प्राध्यापक बनता है:-

1. बृहस्पति ''ज्ञान'' कारक है तथा बुध ''वाणी'' का। यह दोनों ग्रह जब दशम-दशमेश, लग्न लग्नेश को प्रभावित करें तो जातक प्राध्यापक बनता है।

2. बुध-बृहस्पति की कुण्डली में युति हो।

3. कुण्ड़ली में चन्द्र-बृहस्पति की युति हो अथवा चन्द्रमा से बृहस्पति केन्द्र अथवा त्रिकाण में हो।

4. चन्द्रमा-बृहस्पति, दशम-दशमेश, लग्न लग्नेश को प्रभावति करें तो जातक प्राध्यापक बनता है।

कुण्ड़ली एक समाज शास्त्र के लेक्चरर की है। कुण्ड़ली में दशम स्थान में बुध-बृहस्पति की युति है। बृहस्पति सवयं लग्नेश और दशमेश है। बृहस्पति स्वराशि होने से तथा इस पर मंगल की दृष्टि होने से जातक ने पंजाब विश्वविद्यालय में रीडर के रूप में ऊँचे पद पर काम किया।

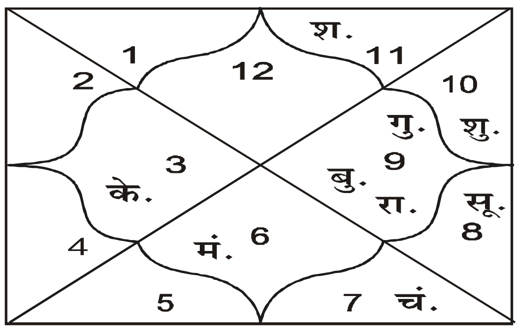

7.7.13. गायक-गायिका योग

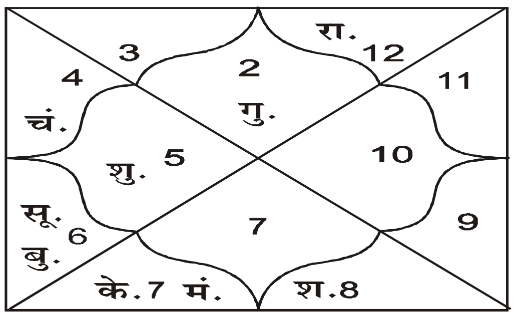

द्वितीय स्थान ''वाणी'' का है और इसका कारक बुध है। अगर द्वितीय भाव और द्वितीयेश पर पापी ग्रहों की दृष्टि न हो और शुक्र बलवान होकर केन्द्र में स्थित होकर (1) दशम भाव अथवा दशमेश (2) लग्न अथवा लग्नेश को प्रभावित करे तो व्यक्ति गायक बनता हैं। पंचमभाव मनोरंजन का है, पंचम स्थान एंव पंचमेश से द्वितीयेश, बुध एवं शुक्र का सम्बन्ध हो तो व्यक्ति प्रसिद्धि गायक बनता है।

यह कुण्ड़ली प्रसिद्ध गायिका लता मंगेष्कर की है। कुण्ड़ली में द्वितीयेश उच्च राशि का होकर पंचम ''मनोरंजन'' स्थान में सूर्य के साथ स्थित है। लग्नस्थ लाभेश बृहस्पति की उस पर पूर्ण दृष्टि हे। लग्नेश स्वयं शुक्र केन्द्र में है तथा शुक्र की पूर्ण दृष्टि दशम भाव पर है जो फिल्म इण्डस्ट्री से सम्बन्ध बनाती है।

7.7.14. जज बनने के योग (न्यायधीश योग)

यह कुण्ड़ली एक आई.सी.एस. की है जो राट्रपति के सेक्रेटरी रहे और बाद में इन्टरनेषनल कोर्ट ऑफ जस्टिस में कई वर्ष जज रहे। इसमें:-

1. लग्न से दशाम में सूर्य स्थित है।
2. लग्न में मंगल विद्यमान है।
3. लग्न से दशम स्थान केन्द्र में शुक्र अपनी मीन राशि में उच्च होकर स्थित है।
4. दशमेश बृहस्पति अष्टम स्थान में नीच राशि में स्थित है परन्तु नीच राशि मकर का स्वामी चन्द्र से केन्द्र में होने से नीच भंग राजयोग बनता हैं
5. दशमेश बृहस्पति होने से जातक को जज बनाता है।

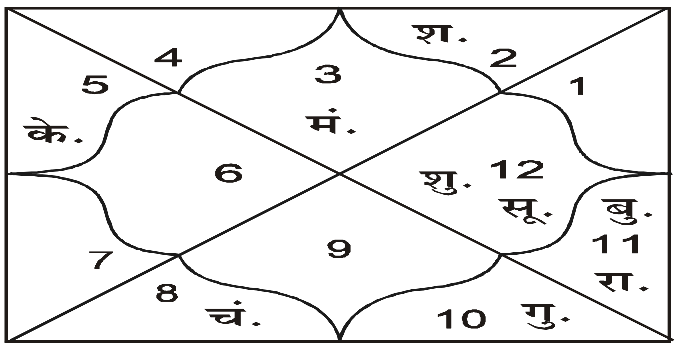

7.7.15. एयर फोर्स कर्मचारी (वायु सेना)

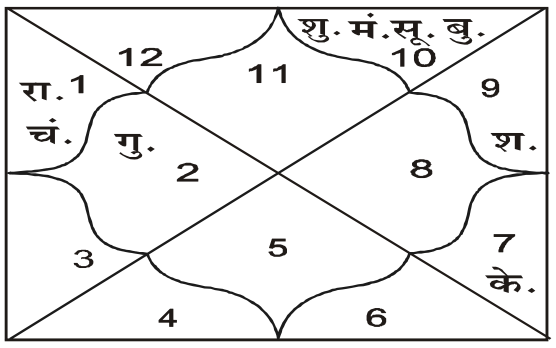

यह कुण्डली ऐयर फोर्स के एक कैप्टन की है। कुण्ड़ली में दशमेश मंगल अपनी उच्च राशि मकर मे स्थित है तथा दशम स्थान एवं दशमेश मंगल पर द्वितीयेश एवं लाभेश राज कृपा कारक बृहस्पति की दृष्टि हैं कुण्ड़ली में अन्य योग भी है:

1. दशमेश मंगल तथा नवमेश शुक्र का योग।

2. दशमेश मंगल एवं पंचमेश बुध का योग।

3. ''बुधादित्य'' योग: बृहस्पति का आकाश तत्त्व है इस कारण दशमेश मंगल पर इसकी दृष्टि जातक का वायु सेना से सम्बन्ध बनाती है।

7.8. राजयोग विचार

ज्योतिष शास्त्र में योगों को विशेष स्थान की प्राप्ति है।

जन्मकुण्ड़ली में ग्रहों के आपसी सम्बन्ध द्वारा 'योग' का निर्माण होता है। ग्रहों के इन परस्पर सम्बन्ध को ज्योर्तिविदों ने चार प्रकार में विभाजित किया है। ये निम्न प्रकार हैं -

युतिसम्बन्ध: जब दो ग्रह एक ही स्थान में स्थित हो तो उनमें युति सम्बन्ध कहलाता है। जैसे मीन राशि में गुरू एवं चन्द्रमा स्थित हो तो वे युति सम्बन्ध का निर्माण करते हैं।

दृष्टि संबंध: जब दो ग्रह परस्पर एक-दूसरे का पूर्ण दृष्टि से देखते हो तो उनमें दृष्टि सम्बन्ध माना जाता है। पराषर मत के अनुसार पूर्ण दृष्टि ही फल देने में सक्षम हैं। उदाहरण के लिए मकर में स्थित शुक्र की पूर्ण दृष्टि कर्क राशिरथ चन्द्रमा पर पड़ेगी।

क्षेत्र सम्बन्ध:

जब दो ग्रहों की स्थिति इस प्रकार से हो कि वे दोनों परस्पर एक दूसरे की राशि में स्थित हो तो यह क्षेत्र सम्बन्ध बनाता है। इसे स्थान-परिवर्तन सम्बन्ध भी कहते हैं। जैसे चन्द्रमा वष्लाभ राशि में हो और वष्लाभ राशि का स्वामी चन्द्र की कर्क राशि में हो।

स्थान दृष्टि सम्बन्ध:

जब किसी को उसकी अधिष्ठित राशि का स्वामी पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो यह स्न दृष्टि सम्बन्ध बनता है। उदाहरणार्थ धनु राशिस्थ चन्द्रमा को गुरू (धनु राशि का स्वामी) पूर्ण दृष्टि से देखे तो गुरू व चन्द्रमा में स्थान दृष्टि सम्बन्ध माना जायेगा।

जब कुण्ड़ली में शुभ भावों के स्वामी सम्बन्ध करेंगे तो निश्चिय ही कुण्ड़ली में शुभ योग बनते हैं, तथा अशुभ भावों के स्वामी सम्बन्ध स्थापित करें तो वह अशुभ योग बनाते हैं।

राजयोग के सम्बन्ध में पाराशरी सिद्धान्तः-

जब भी कोई जातक अपनी कुण्ड़ली लेकर दैवज्ञ के पास जाता है, तो वह यही जानना चाहता है कि उसके भाग्य में क्या लिखा है, वह जीवन मे कितनी उन्नति करेगा, ऊँचे पद पर प्रतिष्ठित हो धन एवं ऐश्वर्य की प्राप्ति कर पायेगा या नहीं। इसी परिप्रेक्ष्य में एक दैवज्ञ को कुण्ड़ली में 'राजयोग' का अध्ययन करना चाहिए। पराशर के मतानुसार राजयोग का विचार करने के लिए जन्मकुण्ड़ली के केन्द्र व त्रिकोण स्थानों को विशेष महत्त्व दिया गया है। केन्द्र स्थान को विष्णु स्थान एवं त्रिकोण भाव को लक्ष्मी स्थान माना गया है। अतः इनके अधिपतियों का सम्बन्ध होना निश्चिय से राजयोग की आधार भूमि बनता है। इसके अतिरिक्त धन एवं लाभ भाव में स्थित ग्रह तथा इनके स्वामियों द्वारा सम्बन्ध स्थापित करने वाले ग्रह भी राजयोग कारक कहलाये गये हैं। यह योग निम्न प्रकार हैं:-

1. यदि किसी जन्मकुण्ड़ली मे तीन या अधिक ग्रह उच्च व स्व राशि में स्थित हो तो वह प्रसिद्ध राजा होता है।

2. जिस जातक के पाँच अथवा छः ग्रह मूलत्रिकोण में हो तो वह दरिद्र कुलोत्पन्न होने पर भी राज्यशासन में प्रमुख अधिकार प्राप्त करता है।

3. फलदीपिका में सांतवे अध्याय के श्लोक-3 के अनुसार एक भी ग्रह यदि सुस्थान में हो, वक्री हो किन्तु अस्त न हो और उज्जवल प्रभा से युक्त हो तो वह राजा के सदृष वैभावषाली बना देता है।

4. शनि को छोड़कर बाकी 6 ग्रहों क्रमश: सूर्य, बुध, मंगल, गुरू, चन्द्रमा, शुक्र में से कोई भी 4 या 5 ग्रह दिग्बली हो तो चाहे किसी भी वंष मे जातक पैदा हो वह राजा होता है।

दिग्बली ग्रहः

सूर्य, मंगल	-	दशम भाव मध्य में।
बुध, गुरू	-	प्रथम भाव मध्य में।
चंद्र, शुक्र	-	चतुर्थ भाव मध्य में।
शनि	-	सप्तम भाव मध्य में।

5. यदि लग्न एवं चन्द्रमा वर्गात्तम नवांश में हो और लग्न को चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य चार ग्रह देखे तो यह अत्युत्तम राजयोग कहलाता है।

6. वर्गोत्तम ग्रहः ग्रह लग्न में जिस राशि में हो उसी राशि में नवांश में भी हो तो वह वर्गोत्तम कहलाता है।

7. यदि शुभ ग्रह बलवान होकर लग्न, सप्तम और दशम में हो तथा मंगल और शनि नवम तथा एकादश में हो तो वह सर्व सद्गुण सम्पन्न राजा होता है।

8. यदि सब ग्रह चन्द्रमा की होरा में हो तो जातक यशस्वी राजा होता है।

9. यदि समस्त शुभ ग्रह नवें और ग्यारहवें भाव में हो तथा पापगह लग्न से छठे तथा दशम स्थान में हो तो जातक राजा हो।

7.9. उदाहरण कुण्ड़ली द्वारा राजयोग

1. उदाहरण कुण्डली:

राजयोग

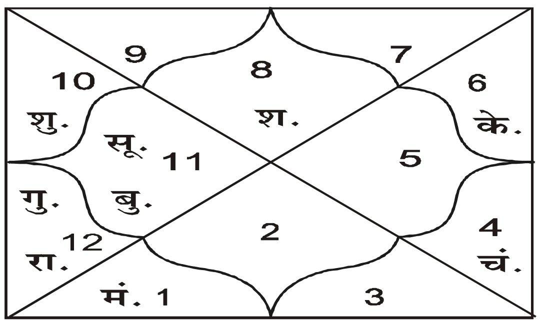

1. राहु केन्द्र या त्रिकोण में हे तथा इन भाव के स्वामी के साथ हो तो योगकारक होते हैं।

   फलः राजा या राजसी पद प्राप्त होता है सफलता, सम्मान तथा प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है।

2. नवमेश तथा सप्तमेश में परस्पर सम्बन्ध हो तो राजयोग बनाता है। प्रस्तुत कुण्ड़ली में नवमेश चन्द्र व सप्तमेश शुक्र मे दृष्टि सम्बन्ध राजयोग का निर्माण कर रहे हैं।

   फल: सफलता, सम्मान तथा प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है।

3. कुण्ड़ली में धवल कान्ति से उज्जवल (पक्ष बली) चन्द्रमा को स्वराशि या उच्चराशि में बैठा ग्रह पूर्ण दृष्टि से देखता हों। कुण्ड़ली में शुक्ल पक्ष के स्वराशिस्थ चन्द्रमा को पंचमेश स्वराशि गुरू अपनी पंचम दृष्टि से देख रहे हैं।

   फलः ऐसा जातक चाहे निषाद कुल में पैदा हुआ हो राजा होता है।

अन्य राजयोग:

1. हर्ष योग:

यदि छठे घर का मालिक दुःस्थान (6, 8, 12) में स्थित हो तो हर्ष योग होता है। कुण्ड़ली मे षष्ठेष मंगल छठे भाव में स्थित है।

फल: जातक भाग्यवान, दृढ़ शरीर वाला, सुखी, भोगी, शत्रुओं को पराजित करेन वाला, विख्यात और प्रधान व्यक्तियों का प्यारा होता है।

2. अखण्ड सम्राज्य योग:

लग्न से द्वितीय, नवम, एकादश में से किसी एक भाव का स्वामी चन्द्रमा से केन्द्र में हो, तथा लग्न से द्वितीय, पंचम, नवम में से किसी एक भाव का स्वामी गुरू हो तो निम्न योग बनता है। प्रस्तुत कुण्ड़ली में नवम भाव की स्वामी चन्द्रमा स्वराशिस्थ हैं तथा पंचम भाव के स्वामी गुरू होकर योग का निर्माण कर रहे हैं।

फलः जातक विस्तृत राज्य का स्वामी होता है।

3. लक्ष्मीयोग:

लग्नेश प्रबल हो, तथा उससे केन्द्रमत में भाग्येश स्वभवन, स्वोच्च या मूलत्रिकोणस्थ हो तो लक्ष्मी योग बनता है। कुण्ड़ली में लग्नेश मंगल प्रबल होकर भाग्येश चन्द्रमा से केन्द्रगत है।

फलः जातक सुंदर, धनी, गुणी यशस्वी राजा तथा अनेक पुत्रो से परिपूर्ण होता है।

2. उदाहरण कुण्डली:

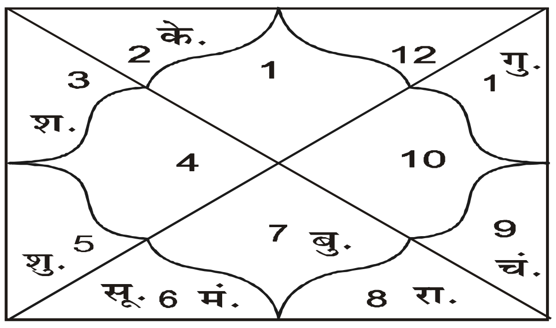

राजयोग: जो ग्रह जन्म में नीच का है उसके उच्चराशि का स्वामी अथवा जिस राशि में बैठा है उसका स्वामी लग्न से केन्द्र में हो। राहु नीच राशि मे स्थित है। उच्चराशि मिथुन का स्वामी बुध लग्न से केन्द्र में है।

फलः जातक धार्मिक तथा चक्रवर्ती राजा होता है।

2. शुक्र पर गुरू, चन्द्र की युति या दृष्टि हो तो जातक राजवर्गीय होता है। कुण्ड़ली में धनेश शुक्र पर भाग्येश गुरू की पूर्ण दृष्टि है।

फलः राजा या राजसी पद प्राप्त होता है। सफलता सम्मान, प्रतिष्ठा, उच्च राजकीय पद प्राप्त होता है।

3. केन्द्र-त्रिकाण राजयोग: लग्नेश का संबंध केन्द्र (4, 7, 10) या त्रिकोण 5, 9 शवो के स्वामियों के साथ हो तो राजयोग बनता है। लग्नेश मंगल की दृष्टि चतुर्थेश चन्द्रमा पर है।

फलः राजसी स्वभाव, सम्मान तथा सभी प्रकार के वैभव से युक्त होता है।

4. अधम योगः यदि सूर्य से केन्द्र (1, 4, 7, 10) चन्द्रमा हो तो अधम योग होता है

प्रस्तुतः कुण्ड़ली मे सूर्य से चतुर्थ भाव में चद्रंमा है।

फलः जातक को द्रव्य, सवारी, यश, सुख संपत्ति, ज्ञान, बुद्धि, विद्या की प्राप्ति होती है।

5. उभयचर योग: सूर्य से द्वितीय, द्वादश दोनों में चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य ग्रहों के रहने से उभयचर योग होता है।

कुण्ड़ली में सूर्य से द्वितीय भाव में बुध स्थित हैं तथा द्वादश भाव में शुक्र स्थित है।

फल: जातक राजा तुल्य धनी, ऐश्वर्यशाली, बलवान, सुखी, सुशील, दयावान होता है।

3. उदाहरण कुण्डली:

राजयोग:

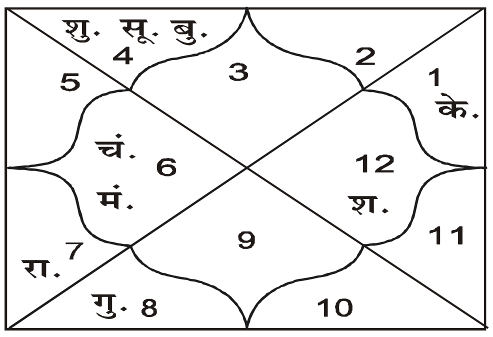

1. सुखेश व कर्मेश, पंचमेश या नवमेश के साथ हो तो राजयोग होता है।कुण्ड़ली में सुखेश बुध, पंचमेश शुक्र से द्वितीय भाव में युति कर रहे हैं।

फलः राजसी पद प्राप्त होता है। सफलता, सम्मान तथा प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है।

2. नवमेश व दशमेश का सम्बन्ध कुण्ड़ली में राजयोग बनाता है। शनि व गुरू में दृष्टि सम्बन्ध है।

फल: राजसी स्वभाव, सम्मान तथा सभी प्रकार के वैभव से युक्त होता है।

अन्य राजयोग:

3. चन्द्रमंगल योग: चन्द्रमा तथा मंगल की युति या परस्पर दृष्टि चन्द्रमंगल योग का निर्माण करती है।

फलः विभिन्न प्रकार से धर्नाजन होता है।

4. वरिष्ठ योगः सूर्य से आपोक्लिम (3, 6, 9, 12) स्थान में चन्द्रमा हो तो वरिष्ठ योग होता है। कुण्ड़ली में सूर्य से तृतीय भाव में चन्द्रमा स्थित है।

फलः वरिष्ठ योगात्पन्न जातक सवारी, यश, सुख सम्पत्ति, ज्ञान, बुद्धि धन आदि प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो।

7.10. प्रसिद्ध कुण्ड़लियों में राजयोग विचार

7.10.1. भगवान श्रीकृष्ण

भगवान् श्रीकृष्ण की कुण्ड़ली में पाँच ग्रह क्रमषः चंद्र, मंगल, बुध, शनि एवं गुरू उच्च होकर स्थित हैं अथवा अन्य दो ग्रह शुक्र व सूर्य स्वग्रही हैं। इस प्रकार सात ग्रह कुण्डली मे श्रेष्ठ स्थिति में होकर राजयोग का निर्माण कर है। प्रायः हम सभी लोग श्रीकृष्णजी के जीवन काल से भली-भाँति परिचित हैं तथा आपके जीवन में फलीभूत होने वाले राजयोगों से भी परिचित हैं।

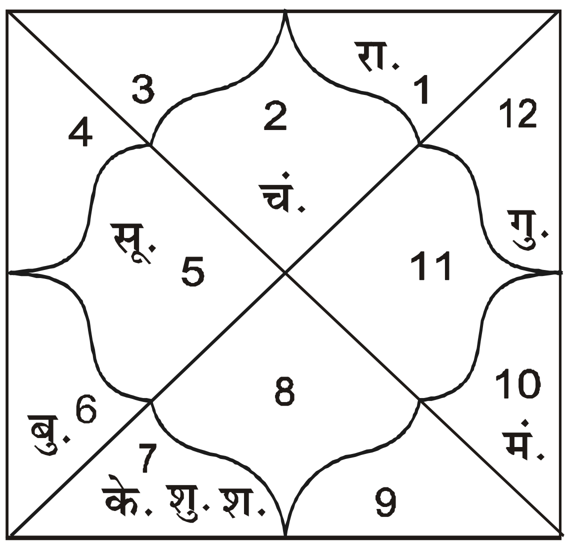

7.10.2. भगवान् श्रीराम

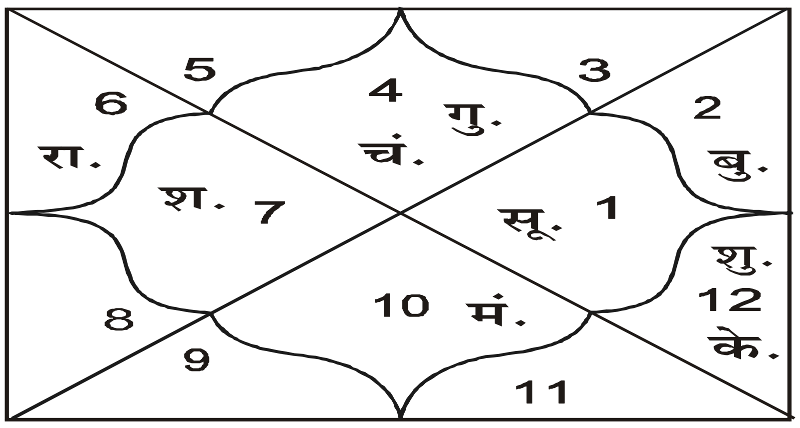

प्रस्तुतः कुण्ड़ली श्री रामचन्द्र जी की है। इनकी कुण्ड़ली में पाँच ग्रह उच्च के है तथा चन्द्रमा स्वगृही एवं लग्नेश हैं। गुरू, शनि, मंगल व शुक्र पंच महापुरूष योग का निर्माण कर रहे हैं केन्द्र भाव में चार ग्रह (गुरू, शनि, मंगल, सूर्य) उच्च होकर स्थित होने से ''चतुः सागर'' नाम का उत्तम राजयोग बनाते हैं।

7.10.3. महाराजा जयसिंह, जयपुर

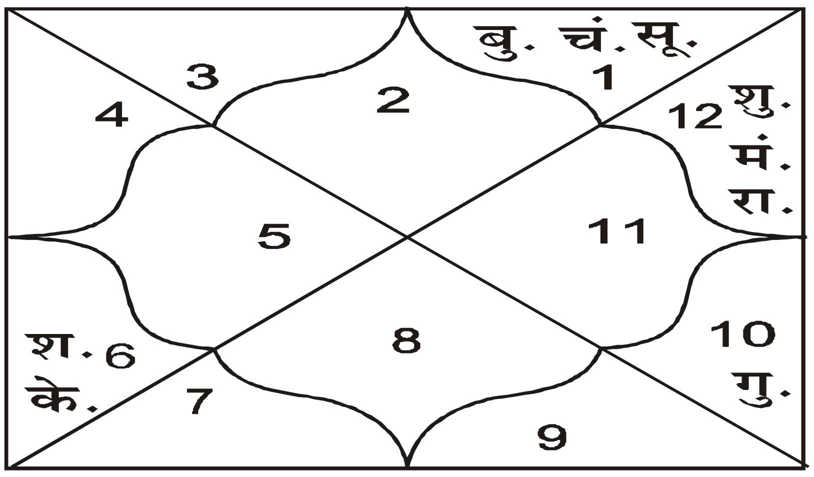

(1) इस कुण्ड़ली में दो केन्द्रेश शुक्र एवं सूर्य अपनी उच्च राशि में स्थित है, नवमेश एवं दशमेश शनि पंचम भाव में स्थित है, अतः राजयोग बनाते है।

(2) नवमेश एवं दशमेश शनि पंचम भाव में स्थित हैं, अतः राजयोग बनाते है।

(3) सप्तमेश मंगल, एवं दशमेश शनि का दृष्टि सम्बन्ध कुण्ड़ली में केन्द्र-त्रिकोणेष राजयोग बनाते हैं।

परन्तु लग्नेश की पाप ग्रहों से दृष्टि एवं युति ने इनके जीवन को संघर्षमय बनाया।

7.10.4. पं जवाहर लाल नेहरु

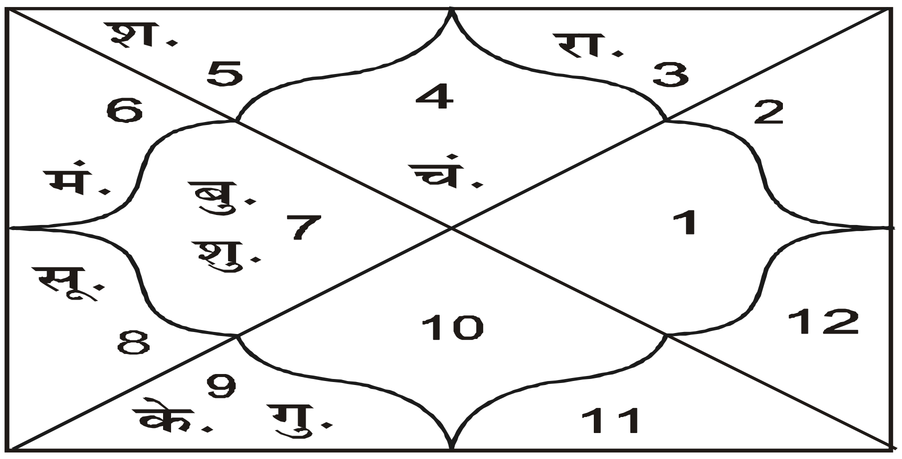

(1) प्रस्तुतः कुण्ड़ली भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरु जी की है। कुण्ड़ली मे सभी ग्रहों का क्रम से होना ''एकावली'' नाम का श्रेष्ठ राजयोग बनाता है। कर्क लग्न को प्रायः सभी ज्योतिषियों ने राजयोग प्रदाता बताया है।

(2) जन्मकुण्ड़ली में तीन ग्रह, चन्द्रमा, शुक्र एंव गुरू स्वगृही हैं तथा राहु-केतु अपनी उच्च राशि में है।

(3) चतुर्थ भाव में स्वराशि शुक्र महापुरूष योग बनाता है।

(4) चतुर्थ भाव जो जनता का कारक उसमे शुक्र स्वगृही होकर स्थित हैं तथा चतुर्थ भाव के कारक चन्द्रमा लग्न में स्वगृही होरक पूर्ण राजयोग की सृष्टि कर रहा है।

7.11. सारांश

हमने इस इकाई को दो भागों में विभाजित करते हुए आजीविका विचार एवं राजयोग का वर्णन दिया है। आजिविका, व्यक्ति की सृजनात्मक प्रवृत्ति के सही उपयोग का दूसरा नाम है। आजीविका द्वारा व्यक्ति विशेष अपने जीवन से दरिद्रता, दुर्बलता तथा दीनता को समाप्त कर सकता है। जब कोई व्यक्ति किसी नये काम की खोज या नौकरी करने की सोचता है तो सर्वप्रथम उसके मस्तिष्क में एक ही बात आती है कि वह ऐसा कौन सा कार्य करे जो उसे सफलता के षिखर पर पहुँचा देगा और वह अपनी इस जिज्ञासा के साथ एक ज्योतिष के पास अपनी कुण्ड़ली लेकर आता है। आजीविका द्वारा ही कुण्ड़ली में बने राजयोगो का फल जातक को प्राप्त हो सकता है। बिना कर्म किए कोई भी राजयोग फल देने में सक्षम प्रतीत नहीं होता। अतः एक कुशल ज्योतिष को चाहिए कि वह व्यक्ति की इस जिज्ञासा को शान्त करने हेतु कुण्ड़ली

का सूक्ष्मता से विचार कर फलकथन कहे। आधुनिक युग मे कार्य की विविधता से आजीविका क्षेत्र कुछ विषाल हो गया है तथा राजयोगों की विविधता भी आधुनिक युग के अनुसार रूपान्तरण हो गई है।

अतः हमने इस इकाई मे आजीविका के विभिन्न स्रोत अथवा कुण्ड़ली मे बनने वाले राजयोगों का उदाहरण सहित विवरण दिया है।

7.12. शब्दावली

1. पाराशरी सिद्धान्त	=	महर्षि पाराशर द्वारा प्रतिपादि ज्योतिषीय फलित सिद्धान्त
2. आत्मकारक	=	सर्वाधिक अंशयुक्त ग्रह
3. कारकांश	=	आत्मकारक ग्रह का नवमांश
4. अग्नितत्त्व राशि	=	मेष, सिंह, धनु
5. वायु तत्त्व राशि	=	मिथुन, तुला, कुम्भ
6. भू-तत्त्व राशि	=	वृष, कन्या, मकर
7. जलतत्त्व राशि	=	कर्क, वृश्चिक, मीन

7.13. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: आजीविका क्या है?

उत्तर: मनुष्य की सृजनात्मक प्रवृत्ति का सही उपयोग ही आजीविका है।

प्रश्न - 2: आजिविका की मनुश्य के जीवन में क्या उपयोगिता है

उत्तर: (1) मनुष्य की स्वयं की अर्थव्यवस्था हेतु।

(2) राष्ट्र की प्रगति में योगदान।

प्रश्न - 3: आजीविका में सफलता का आधार क्या है?

उत्तर: आजीविका में सफलता का आधार कर्मनिष्ठा दक्षता, समर्थन।

प्रश्न - 4: अग्नि तत्त्व राशि किस आजीविका स्रोत को दर्शाती है?

उत्तर: इंजीनियर, डॉक्टर, नेता अग्नि तत्त्व राशि के अंतर्गत आते है।

प्रश्न - 5: आजीविका सम्बन्ध में गुरू के क्या कारकतत्त्व हैं?

उत्तर: साहित्यकार, वित्त अधिकारी, अध्यापक, पुरोहित, आदि आजीविका सम्बन्ध में गुरू में कारकतत्त्व है।

प्रश्न - 6: कुण्ड़ली में आजीविका का विचार किन भावों अथवा वर्ग कुण्ड़लियो से करना चाहिए?

उत्तर: दशम, दशमेश, लग्न, लग्नेश, नवांश अथवा कारकांष कुण्ड़ली द्वारा करना चाहिए।

प्रश्न - 7: योग किसे कहते है?

उत्तर: ग्रहों का आपस में पारस्परिक संबंध कुण्ड़ली में योग रचना करता हैं

प्रश्न - 8: राजयोग क्या है?

उत्तर: जन्मकुण्डली में धन, ऐश्वर्य, भोग प्राप्ति हेतु योगों को राजयोग कहा गया है।

प्रश्न - 9: ग्रहों के संबंध को किस प्रकार विभाजित किया है?

उत्तर: ग्रहों के संबंध को चार प्रकार में विभाजित किया हैं।

(1) दृष्टि सम्बन्ध (2) युति सम्बन्ध (3) क्षेत्र सम्बन्ध अथवा (4) स्थान दृष्टि सम्बन्ध।

प्रश्न - 10: अखण्ड सम्राज्य योग क्या है? व्याख्या कीजिए।

उत्तर: लग्न से द्वितीय, नव, एकादश में से किसी एक का स्वामी चन्द्रमा से केन्द्र में हो तथा गुरू द्वितीय, पंचम, नवम में से किसी एक भाव का स्वामी हो तो यह योग बनता है।

7.14. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: आजीविका संदर्भ में ज्योतिष शास्त्र का क्या आधार है?

प्रश्न - 2: आजीविका विचार में राशि तत्त्व का दशम भाव पर कया प्रभाव पढ़ता है?

प्रश्न - 3: उदाहरण कुण्ड़ली विवेचना सहित डॉक्टर बनने के योग बताऐं।

प्रश्न - 4: राजयोग के संबंध में पराशरी सिद्धान्तों का वर्णन दें।

प्रश्न - 5: कोई भी उदाहरण कुण्ड़ली द्वारा उसमें बनने वाले राजयोगों का स्पष्टीकरण करें।

7.15. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. फलदीपिका

   सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. भारतीय ज्योतिष

   व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

   प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई - 8

बालारिष्ट एवं आयुविचार

इकाई संरचना

8.1. प्रस्तावना
8.2. उद्देश्य
8.3. विषय प्रवेश
8.4. पिण्ड़ायु विचार
8.4.1 पिण्ड़ायु का स्पष्टीकरण
8.4.2 पिण्ड़ायु का संस्कार
8.4.3 लग्न में पापग्रह होने पर हानि
8.5. अंशायु विचार
8.5.1 अंशायु का स्पष्टीकरण
8.6. लग्नायुर्दाय स्पष्टीकरण
8.6.1 संस्कार
8.6.2 आयु में हानि
8.6.3 चक्रार्ध हानि
8.7. निसर्गायु स्पष्टीकरण
8.8. आयु विधि निर्णय
8.8.1 परमायु योग
8.8.2 अमितायु योग
8.8.3 मनुष्यादि का परमायु प्रमाण
8.9. पराशरी कक्षा ह्रास, कक्षा में वृद्धि-नियम
8.10. आयुसाधन की जैमिनीय विधि
8.10.1 दीर्घ, मध्यम, अल्पायु योग
8.11. आयु निर्णय के अन्य प्रकार
8.12. आयुक्षीण योग
8.13. बालारिष्ट योग
8.13.1 अरिष्ट एवं अरिष्टभंग योग
8.14. सारांश
8.15. शब्दावली

8.16. अभ्यास प्रश्न
8.17. लघुत्रात्मक प्रश्न
8.17. सन्दर्भ ग्रन्थ

8.1. प्रस्तावना

जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त के जीवनकाल को आयु कहते हैं। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मान्तर में किए गए कार्यो को भोगने के लिए प्राणी के जीवनकाल को आयु कहा है। यह आयु प्रारब्ध आदि कर्म के अनुसार दीर्घ, मध्य या अल्प होती है। एक पारंगत दैवज्ञ को राजयोग, धनयोग आदि पर विचार करने से पूर्व सर्वप्रथम जातक की आयु पर विचार करना चाहिए क्योंकि आयु बिना ज्योतिर्विद के फलादेषों का कोई औचित्य नहीं रहता।

उपर्युक्त कथन के अनुसार जातक प्रारब्ध कर्मो द्वारा इस जन्म में कष्ट या आनन्द का रूप भोगता है। अतः इन्हीं कष्टों को सूचित करने के लिए ज्योतिष ग्रंथकारों द्वारा बालारिष्ट योग का वर्णन किया है। एवं इस अरिष्ट को भंग करने हेतु भी योग कहे गए है।

8.2. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जानेंगे कि -

1. ज्योतिष शास्त्र के अनुसार आयु का क्या औचित्य है ?
2. अरिष्ट कितने प्रकार के होते है ?
3. आयुखण्ड़ को कितने भाग में विभाजित किया जाता है।
4. बालारिष्ट योगों का ज्ञान।
5. अरिष्टभंग योग कब बनते हैं ?

8.3. विषय प्रवेश

किसी जातक की कुण्ड़ली में राजयोग-धनयोग आदि हो, परन्तु भौतिक सुखों को भोगने के लिए पर्याप्त आयु न हो तो सब योग व्यर्थ लगेंगे। अतः कुण्ड़ली में सबसे पहले आयु का विचार करें उसके बाद अन्य फल देखे। यदि जातक को आयु ही प्राप्त न हो तो ज्योतिर्विद के फलादेषो का कोई औचित्य नहीं रह जाता। आयु जैसे विषय पर पारंगत होना अत्याधिक दुष्कर है क्योंकि उपलब्ध ग्रन्थों में विभिन्न प्रकार के मतान्तर देखने को मिलते हैं। महार्षि पराषर के अनुसार कलियुग में मनुष्य की आयु 120 वर्ष (विंशोत्तरी मान के अनुसार) मानी गई है। परन्तु वह अपनी अनियमित दिनचर्या, रोगग्रस्त होने पर उचित चिकित्सा न

लेना, दुर्व्यसन आदि के कारण सिद्ध आयु को नहीं भोग पाता। आयुर्दाय के विषय में सभी लोग भ्रम में रहते है, आयुविचार जैसे गम्भीर विषय में पारंगत होना अत्यन्त दुष्कर है क्योंकि उपलब्ध ग्रन्थों में विभिन्न प्रकार के मतान्तर देखने को मिलते है। शास्त्रीय ग्रन्थों में आयुनिर्णय हेतु पिण्ड़ायु, निसर्गायु, अंशायु, रश्मि आयु, नक्षत्रायु, कालचक्र, आयुर्दाय, सर्वाष्टकवर्ग आयु आदि अनेक विधियों का वर्णन मिलता है। अतः आपके सुविधार्थ यहाँ पर पिण्ड़ायु, निसर्गायु एवं अंशायु की गणना विधि का विवेचन किया जा रहा है।

8.4. पिण्ड़ायु विचार

यदि सूर्यादि सप्तग्रह स्वोच्च राशि में हो तो सूर्य का आयुपिण्ड़ 19 वर्ष, चन्द्रमा का 25 वर्ष, मंगल का 15 वर्ष, बुध का 12 वर्ष, गुरु का 16 वर्ष, शुक्र का 21 वर्ष तथा शनि का 20 वर्ष पिण्ड़ होता है। यदि ग्रह परमनीच में हो तो इनका आयुपिण्ड़ आधा हो जाता है। मध्य में रहने पर स्वविवेक से आयुपिण्ड़ का निर्धारण करे।

8.4.1. पिण्ड़ायु का स्पष्टीकरण

जिस ग्रह की पिण्ड़ायु साधन करनी हो, उस स्पष्ट ग्रह में अपने ही उच्च राश्यंश को घटाकर निर्णय करना चाहिए। यदि लब्धि (शेषफल) 6 राशि से अधिक हो तो यथावत् ग्रहण करना चाहिए तथा 6 राशि से कम हो तो 12 राशि में से घटाकर शेष को ग्रहण करना चाहिए। उसे ग्रह के पूर्वोक्त आयुपिण्ड़ के वर्षों से गुणा करने पर वर्षादि ग्रह की पिण्ड़ायु होती है।

8.4.2. पिण्ड़ायु के संस्कार

पिण्ड़ायु के निम्नलिखित संस्कार इस प्रकार है:

1. शुक्र व शनि को छोड़कर शेष सभी अस्तंगत की पूर्वागत आयु का आधा नष्ट हो जाता है।
2. वक्री ग्रह को छोड़कर शेष कोई भी ग्रह शत्रु क्षेत्री हो तो उसकी पूर्व प्राप्त आयु का तिहाई अर्थात् 1/3 भाग नष्ट हो जाता है।

8.4.3. लग्नस्थ पापग्रह होने पर शनि

यदि लग्न में पापग्रह (सूर्य, शनि, मंगल, पापयुत बुध) हो तो लग्न के सम्पूर्ण अंशों की कलायें बनाकर अर्थात् लग्न स्पष्ट को प्रत्येक ग्रह की आयुर्दाय से गुणा करके गुणनफल में 21600 कलाओं का भाग देना चाहिए, जो वर्षादि लब्धि हो, उसे पूर्वागत आयुर्दायें में से घटाना चाहिए। यदि लग्न शुभग्रह से दृष्ट हो तो लब्ध वर्षादि का आधा घटाकर ग्रहण करना चाहिए।

8.5. अंशायु विचार

लग्न के सर्वाधिक बली होने पर आयु गणना के लिए अंशायु सर्वोत्तम विधि है। अंशायु के अन्तर्गत ग्रह, नवमांश राशि के तुल्य वर्ष प्रत्येक ग्रह आयु देता है। एक नवमांश एक वर्ष की आयु प्रदान करता है, इस गणना से एक राशि नौ वर्ष तथा बारह राशियाँ 108 वर्ष की आयु प्रदान करती है।

8.5.1. अंशायु का स्पष्टीकरण

लग्न व ग्रह जिसकी आयु साधन करनी हो उसकी (ग्रह व लग्न) कला बनाकर 200 का भाग देने से जो लब्धि हो, उसकी वर्ष संज्ञा होती है। यदि यह लब्धि 12 से अधिक हो तो 12 का भाग देकर ग्रहण करना चाहिए, शेष को 12 से गुणा करके 200 से भाग देने पर लब्धि मास प्राप्त होती है। पुनः शेष को 30 से गुणा करके 200 का भाग देने पर लब्ध दिन को शेष 60 से गुणा करके 200 का भाग देने पर लब्धि घटी प्राप्त होती है, घटी को 60 से गुणा करके 200 का भाग देने पर लब्धि पल होती है।

8.6. लग्नायुर्दाय स्पष्टीकरण

यदि लग्न समस्त बलों से युक्त हो अथवा बली हो तो लग्न राशि के तुल्य वर्ष तथा अंशादि से अनुपात करके लग्नायु जाननी चाहिए तथा अंशों से त्रैराशिक द्वारा मासादि का ग्रहण करके जोड़ना चाहिए।

8.6.1. विशेष संस्कार

आयुर्दाय में विशेष ग्रहण करने योग्य निम्नलिखित संस्कार:-

1. यदि लग्न या जो ग्रह वर्गोत्तम नवमांश में या अपनी राशि में अथवा द्रेष्काण में स्थित हो तो साधित आयु को द्विगुणित करना चाहिए।
2. यदि ग्रह वक्री हो अथवा उच्चस्थ हो तो साधित आयु को तीन से गुणा कर ग्रहण करना चाहिए।
3. चूड़ामणि आचार्य के अनुसार ग्रह केन्द्र (1-4-7-10) में हो तो जिसकी बड़ी गणना हो, उसे ग्रहण करना चाहिए।

8.6.2. आयु में हानि

जो ग्रह शत्रु राशि में स्थित हो, उसकी साधित आयु में तृतीयांश घटाकर एवं नीचराशि में ग्रह अस्त होने पर साधित आयु में 1/2 घटाकर ग्रहण करना चाहिए, परन्तु शुक्र व शनि के अस्त होने पर 1/2 नही घटाना चाहिए।

8.6.3. चक्रार्ध हानि

द्वादश, एकादश, दशम, नवम, अष्टम व सप्तम भाव में स्थित ग्रह क्रमशः 1/1, 1/2, 1/3, 1/4, 1/5, 1/6 भाग आयु को नष्ट करता है।

शुभ ग्रह उक्त भावों में 1/2, 1/4, 1/6, 1/8, 1/10, 1/12 भाग आयु को नष्ट करते है।

यदि एक राशि में बहुसंख्यक ग्रह हो तो उनमें से एक बली को ही हानि होगी। आयु साधन में क्षीण चन्द्रमा को पापी नहीं माना जाता है।

8.7. निसर्गायु स्पष्टीकरण

सूर्य की 20 वर्ष, चन्द्रमा की 01 वर्ष, मंगल की दो वर्ष, बुध की 09 वर्ष, गुरु की 18 वर्ष, शुक्र की 20 वर्ष और शनि की 50 वर्ष की निसर्गायु होती है।

8.8. आयु विधि निर्णय

पिण्ड़ायु, अंशायु तथा निसर्गायु - इन तीनों विधियों की आयु में किस आयु को ग्रहण करे, इसके लिए शास्त्रों में लग्न, सूर्य, चन्द्रमा - इन तीनों में यदि लग्न बली हो तो अंशायु, सूर्य बलयुत हो तो पिण्ड़ायु तथा चन्द्रमा बली हो तो निसर्गायु ग्रहण करनी चाहिए।

8.8.1. परमायु योग

यदि कुण्ड़ली में अन्तिम नवमांश में मीन लग्न हो, बुध वृषराशि में 25 कला पर हो और शेष समस्त ग्रह अपने परम उच्च स्थान में हो तो जातक की परमायु होती है। जो व्यक्ति श्रेष्ठ भोजन ग्रहण करता है, सुशील, सदाचारी, जितेन्द्रिय व सात्विक आचरण से युक्त रहता है, वह भी दीर्घायु होता है।

8.8.2. अमितायु योग

यदि कुण्ड़ली में कर्कलग्न में चन्द्रमा, चन्द्रमा के साथ गुरु, बुध तथा शुक्र केन्द्र में हो तथा अवशिष्ट ग्रह तृतीय, एकादश, षष्ठ भाव में हो तो जातक की अमितायु होती है।

8.8.3. मनुष्यादि जीवों की परमायु

जीव	परमायु (वर्ष)
गिद्ध, उल्लू, तोता, कौआ व सर्प	1000 वर्ष
बाज़, वानर, मेंढ़क	300 वर्ष

मनुष्य व हाथी की	120 वर्ष
घोड़ा	32 वर्ष
गधा व ऊँट	25 वर्ष
बैल व भैंस	24 वर्ष
श्वान (कुत्ता) व विड़ाल (बिल्ली)	12 वर्ष
मुर्गा	08 वर्ष
हिरण	16 वर्ष
बुलबुल व अन्य पक्षी	07 वर्ष (कुछ पक्षियों की आयु अधिक भी हो सकती है)

नोटः- प्रायः यह देखने में आया है कि मनुष्य एवं जीव-जन्तु यदि श्रेष्ठ आहार-विहार, वातावरण में रहते है तो उनकी आयु का मान परमायु से भी अधिक हो सकता है।

8.9. पराशरी कक्षा ह्रास, कक्षा में वृद्धि-नियम

कक्षावृद्धि के लिए निम्नलिखित नियम इस प्रकार है:

1. गुरु, शुक्र व शुभ बुध की लग्न से अष्टम भाव में स्थिति।
2. केतु के दुष्प्रभाव से मुक्त मार्गी शनि की लग्न से अष्टम भाव में स्थिति।
3. जन्म लग्नेश की अष्टमभाव में स्थिति।
4. शुभ दृष्ट-युत व बली अष्टभाव एवं अष्टमेश।
5. अष्टमेश की शनि के साथ युति।
6. पाप-पीड़ा रहित आयुष्यकारक शनि।
7. लग्न, लग्नेश, शुभग्रहों से युत-दृष्ट होकर बली हो।
8. शुभ ग्रहों (गुरु, शुक्र व शुभ बुध) की केन्द्र में स्थिति।
9. पापपीड़ा रहित बली चन्द्र शुभ युत दृष्ट हो।

पाराशरी कक्षा ह्रास के नियम:

1. शुभ दृष्टिरहित अष्टमभाव में मंगल, सूर्य, राहु, केतु व चन्द्र की स्थिति।
2. पापपीड़ित अष्टमभाव व अष्टमेश।
3. पापपीड़ित लग्न व लग्नेश अथवा लग्न-लग्नेश की निर्बलता।
4. चन्द्र सहित लग्न से केन्द्र में पापग्रहों की स्थिति।
5. निर्बल व पाप पीड़ित आयुष्यकारक शनि।
6. निर्बल व पाप पीड़ित चन्द्रमा।
7. लग्न या चन्द्रलग्न का पापकर्तरी या पापमध्यस्थ में होना।
8. लग्नेश या चन्द्र लग्नेश का पापकर्तरी या पाप मध्यस्थता में होना।
9. कुण्ड़ली में प्रबल अरिष्ट योगों की उपस्थिति का होना।

8.10. आयुसाधन की जैमिनीय विधि

जैमिनी पद्धति के अनुसार आयु को तीन खण्डों में विभाजित किया गया है। पूर्णायु, अल्पायु तथा मध्यमायु। श्री के. एन. राव के अनुसार तीनों खण्ड़ों को स्मरण रखने हेतु आधुनिक विधि भी उपयोगी है:

P.A.M. ज्ञात करना: P. का अर्थ दीघायु या पूर्णायु से है, जो कि चर राशियों के ''चल'' स्वाभाव का प्रारूप है। । का अर्थ अल्पायु से है, जो कि स्थिर राशियों के ''अचल'' स्वाभाव का प्रारूप है। M का अर्थ मध्यमायु से है, जो कि द्विस्वभाव राशियों के ''चलअचल'' स्वभाव का प्रारूप है।

P.A.M. ज्ञात करने से पूर्व राशियों का चर स्थिरादि स्वाभाव भी स्मरण रखें! जो कि निम्न प्रकार से है:

मेष, कर्क, तुला व मकर	- चर राशियाँ	+ P
वृष, सिंह, वृश्चिक व कुम्भ	- स्थिर राशियाँ	+ A
मिथुन, कन्या, धनु, व मीन	- द्विस्वभाव राशियाँ	+ M

इसके अतिरिक्त जैमिनी मुनि ने लग्न व चन्द्र, लग्नेश, अष्टमेश तथा लग्न व होरा लग्न की चर स्थिरादि राशियों से आयु विचार बताया है। संक्षेप में तालिका बद्ध किया गया है।

तालिका-1

दीर्घायु = P   मध्यायु = M   अल्पायु = A

चर राशि = P   चर राशि = P   चर राशि = P

स्थिर राशि = A   चर राशि = P   द्विस्वाभव राशि = M

स्थिर राशि = A   द्विस्वाभव राशि = M   द्विस्वभाव राशि = M

स्थिर रषि = M   स्थिर राशि = A   स्थितर राशि = A

जो आयु तीन या दो प्रकार से प्राप्त हो, वही ग्राह्य होती है, लेकिन तीनों प्रकार से अलग-अगल आयु प्राप्त हो, तो मध्यमायु ही ग्राह्य होगी।

श्रीमती इंन्दिरा गाँधी

जन्म समय 23:11:00 रात्रि

जन्म तिथि: 19-11-1917

जन्म स्थान: इलाहाबाद

होरा लग्न: धनु

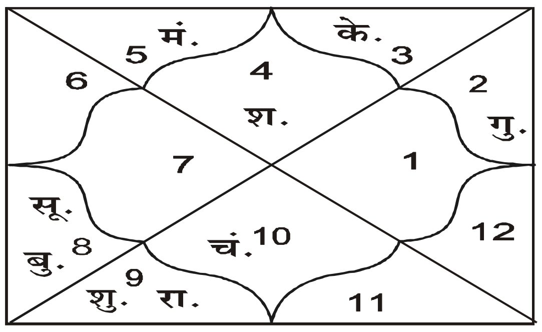

विवेचना:

(1) लग्न व चन्द्रमा चर रषि में हैं, अतः चर+चर = दीर्घायु योग।

(2) लग्नेश चन्द्र व अष्टमेश शनि चर राशि में हैं, अतः चर+चर = दीर्घायु योग।

दो प्रकार से दीर्घायु खण्ड़ (पी) प्राप्त होने पर दीर्घायु खण्ड ग्राह्य है।

(3) लग्न चर राशि व होरा लग्न द्विस्वभाव राशि में है, अतः चर+द्विस्वभाव = अल्पायु योग।

जैमिनी कक्षा-वृद्धि नियम:

1. गुरु लग्न में स्थित हो, स्वयं आत्मकारक हो या आत्मकारक से सम्बन्धित हो।
2. गुरु की जन्म लग्नेश या होरा लग्नेश के साथ जन्मांग में युति हो।
3. गुरु की जन्मांग के अष्टमेश या होरा लग्न के अष्टमेश से युति हो।
4. शुभ ग्रह लग्न या सप्तम से त्रिकोणस्थ हो अथवा आत्मकारक के साथ हो या आत्मकारक से सप्तम या त्रिकोणस्थ हो।
5. आत्मकारक उच्च राशि में हो।

कक्षा-ह्रास के नियम:

1. शनि लग्नेश या अष्टमेश के भाव में हो तथा उच्च या स्वराशि में न होकर शुभ ग्रहों की दृष्टि का अभाव हो।
2. जन्मांग में शनि की युति, लग्नेश या होरा लग्नेश से हो अथवा अष्टमेश या होरालग्न के अष्टमेश से हो।
3. लग्न अथवा सप्तम में पापग्रह अथवा इनसे त्रिकोण भाव में पापग्रह की स्थिति हो।
4. आत्मकारक या आत्मकारक से त्रिकोण में पापग्रह हो।
5. आत्मकारक पापग्रह से युत हो अथवा अपनी नीच राशि में हो।

8.10.1. जैमिनी आयु प्रकार

दीर्घायु योग:

शास्त्रों के अनुसार 64-120 वर्ष तक की आयु दीर्घायु की श्रेणी में आती है, दीर्घायु योग निम्नलिखित है:-

1. कर्क लग्न में जन्म हो, शुक्र केन्द्र में स्थित हो, चन्द्र गुरू लग्न में स्थित हों और अष्टम में कोई ग्रह न हो तो दीर्घायु होती है।
2. यदि तीन ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित हों, अष्टम में कोई पाप ग्रह स्थित न हो, अष्टमेश लग्न में।

3. अष्टमेश वष्तृतीयेष केन्द्र त्रिकोण में हो अथवा नवम एकादश स्थान में उच्चराशि हो तो दीर्घायु होती है।

4. लग्नेश, अष्टमेश, एवं दशमेश, केन्द्र त्रिकोण एवं लाभ स्थान में हो तो चिरायु हो।

5. लग्नेश सूर्य का मित्र हो तथा कोई भी एक शुभ ग्रह पूर्ण बली हो तो दीर्घायु होती है।

6. यदि केन्द्र में शुभ ग्रहों, लग्नेश शुभ ग्रह के साथ हो तथा उसे गुरू देखता हो तो मनुष्य की पूर्णायु होती है।

7. लग्न से चतुर्थ तक प्रत्येक स्थान में क्रमवार एक-एक ग्रह स्थित हों।

8. बली लग्नेश पर केन्द्र स्थित शुभ ग्रहों की दृष्टि हो।

9. यदि शुभ ग्रह बलवान होकर लग्न को देखते हों, तो दीर्घायु होती है।

10. जन्म लग्न का व्ययेष बलवान हो तथा स्वराशि में स्थित हो तो दीर्घायु होती है।

11. लग्नेश, अष्टमेश, दशमेश केन्द्र त्रिकोण या एकादश में।

12. यदि लग्नेश, अष्टमेश तथा शनि अपने उच्च, स्वग्रह त्रिकोण राशियों में हो।

13. लग्नेश लग्न में तथा अष्टमेश अष्टम मे हो, तो दीर्घायु हो।

जन्मलग्न में द्विस्वभाव राशि हो तथा लग्नेश केन्द्र, उच्चराशि या मूलत्रिकोण राशि में हो।

मध्यमायु योगः

सामान्यतः 64 वर्ष तक मध्यमायु मानी गयी है, परन्तु कुछ ज्योतिर्विदों के अनुसार 70 वर्ष तक दीर्घ-मध्य मानी जा सकती है, मध्यमायु योग निम्नलिखित है:-

1. लग्नेश एवं अष्टमेश, शनि एवं चन्द्रमा, तथा लग्न एवं होरालग्न इन तीनों के द्वारा आयु का निर्णय करना चाहिए। ये दोनों द्विस्वभाव राशि में हों या इनमें से एक चर तथा दूसरा स्थिर राशि में हो तो मध्यमायु होती है।

2. लग्नेश निर्बल हो गुरू केन्द्र त्रिकोण में हो तथा पापग्रह त्रिक (6, 8, एवं 12) स्थान में हो तो मध्यमायु होती है।

3. लग्न द्रेष्काण की राशि तथा चन्द्रमा के द्रेष्काण की राशि ये दोनों द्विस्वभाव हो और इनमें से एक चर और दूसरी स्थिर हो तो मनुष्य की मध्यमायु होती है।

4. लग्नेश के नवांश की राशि तथा राषीश के नवांश की राशि ये दोनों द्विस्वभाव हों या इनमें से एक चर और दूसरी स्थिर हो तो माध्यमायु होती है।

5. यदि लग्नेश एवं सभी शुभ ग्रह पणफर (2, 5, 8 एवं 11) में हों तो मनुष्य की मध्यमायु होती है।

6. यदि अष्टमेश एवं सभी क्रूर ग्रह पणफर में हों तो मनुष्य की मध्यमायु होती है। यदि जन्म राशीश एवं उससे अष्टमेश परस्पर सम हो, लग्नेश एवं सूर्य परस्पर सम हो तो मनुष्य की मध्यमायु होती है।

7. बुध, गुरू, एवं शुक्र द्वितीय, तृतीय, एवं एकादश भाव में हों तो मनुष्य की मध्यमायु होती है।

8. लग्नेश निर्बल हो, गुरू केन्द्र या त्रिकोण में हो तथा पापग्रह त्रिक स्थान में हो तो मनुष्य की मध्यमायु होती है।

9. भाग्येश के साथ लग्नेश, हो पंचमेश पर गुरू की दृष्टि हो तथा कर्मेश उच्च राशि में केन्द्र में हो तो मध्यमायु होती है।

10. क्रूरग्रह दशम स्थान में हो दशमेश एवं पंचमेश के साथ शनि लाभस्थान में हो, तो मध्यमायु होती है।

11. अष्टमाधिपति केन्द्र में हो, मंगल लग्न में हो तथा गुरू तृतीय, षष्ठ एवं एकादश स्थान में हो तो मध्यमायु होती है।

12. मेष या वृष्चिक राशि में लग्न में चन्द्रमा हो वह पापग्रहों से दृष्ट हो और शुभ ग्रह केन्द्र मे न हों तो मनुष्य की 33 वर्ष की आयु होती है।

13. लग्न में शत्रुराशि में दो पापग्रहों के मध्य में सूर्य हो तथा उसे शुभग्रह न दखते हों तो मनुष्य की आयु 36 वर्ष की होती है।

14. मिथुन लग्न में दो पापग्रहों के मध्य में लग्नेश हो तथा गुरू चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य की 37 वर्ष की आयु होती है।

15. लग्नेश पापग्रहों के साथ अष्टम स्थान में हो तथा शुभग्रह केन्द्र में न हों तो 40 वर्ष की आयु होती है।

16. मंगल के साथ अष्टमेश लग्न मे बैठा हो तो 42 वर्ष की आयु होती है।

17. उच्चराशि का शनि 10वें, गुरू 7वें तथा राहु लग्न में हो तो 44 वर्ष की आयु होती है।

18. पापग्रह के साथ लग्नेश अष्टम में, पापग्रह के ही साथ अष्टमेश षष्ठठ स्थान में हो तथा इस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो 45 वर्ष की आयु होती है।

19. धनु राशि में लग्न में गुरू हो तथा राहु के साथ मंगल अष्टम स्थान में हो तो 57 वर्ष की आयु होती है।

अल्पायु योग:

अल्पायु योग के अन्तर्गत मनुष्य की आयु 32 वर्ष निर्धारित की गयी है, अल्पायु के योग निम्नलिखत है:-

1. लग्नेश एवं अष्टमेश से, जन्म लग्न एवं होरालग्न से तथा शनि चन्द्रमा से आयु का विचार किया जाता हैं यदि दोनों स्थिर राशियों में हों अथवा इनमें से कोई एक चर राशि में हो तथा दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो अल्पायु होती है।

2. यदि चन्द्रमा लग्न या सप्तम में हो तो चन्द्रमा एवं शनि से ही आयु का विचार करना चाहिए। इस स्थिति में शनि एवं चन्द्रमा दोनों स्थिर राशि में हों या इनमें से एक चरराशि में और दूसरा दिस्वभाव राशि में हो तो अल्पायु होती है।

3. तुला के नवांश में शनि हो तथा उसे गुरू देखता हो तो व्यक्ति 23वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

4. कन्या के नवांश में शनि हो और से बुध देखता हो 14वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

5. कर्क के नवांश में शनि हो और गुरू देखता हो तो 16 वें वर्ष मे मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

6. मिथुन के नवांश में शनि हो तथा उसे लग्नेश देखता हो तो 17 वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

7. लग्नेश एवं अष्टमेश दानों में पाप ग्रह हों, परस्पर एक दूसरे की राशि में हों या छठें एवं बाहरवें वें स्थान में हो किन्तु गुरू के साथ न हों तो बालक 18वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

8. गुरू के नवांश में शनि हो, उसे राहु देखता हो और लग्नेश उच्च राशि के नवांश में हो तो बालक 19 वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

9. केन्द्र में पापग्रह हों, उन्हें चन्द्रमा एवं शुभग्रह न देखते हों अथवा चन्द्रमा छठें या आठवें स्थान में हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति 20 वर्ष तक जीवन का सुख भोगता है।

10. कर्क में गुरू के साथ सूर्य हो तथा अष्टमेश केन्द्र मे हो तो जातक 22वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

11. लग्न में शत्रुराशि में शनि हो तथा आपोक्लिम (3/6/9/12) स्थान में शुभ ग्रह हों तो जातक की आयु 26 या 27 वर्ष की होती है।

12. अष्टमेश पापग्रह हो, उसे गुरू देखता हो तथा जन्मराशीश अष्टम स्थान में हो और से भी पापग्रह देखता हो तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति 28 वें वर्ष में मर जाता है।

13. चन्द्रमा एवं शनि में स्थान सम्बन्ध हो, दृष्टि सम्बन्ध हो तथा सूर्य अष्टम स्थान में हो तो व्यक्ति 29वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

14. जन्म राशीश तथा अष्टमेश के बीच में चन्द्रमा हो तथा गुरू 12वें स्थान में हो तो 27वें वर्ष या 30 वें वर्ष में बालक की मृत्यु होती है।

15. अष्टमेश केन्द्र में हो तथा लग्नेश निर्बल हो तो 32वें वर्ष में व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

16. पापग्रह छठे, आठवें तथा बाहरवे स्थान में हो, लग्नेश निर्बल हो तथा किसी शुभ ग्रह से दृष्टि-युत न हो तो व्यक्ति की अल्पायु होती है।

8.11. आयु निर्णय के अन्य प्रकार

बृहत्पाराशर होराशास्त्र के अनुसार आयुनिर्णय की विधियाँ निम्नलिखि है:-

1. लग्न से अष्टम व तृतीय भाव आयुनिर्णय करते है, अतः इनसे व्ययभावों (द्वितीय व सप्तम) को मारक स्थान माना जाता है।

2. लग्नेश व अष्टमेश से बली ग्रह द्वारा आयु निर्धारित करनी चाहिए। उक्त बली ग्रह केन्द्र में हो तो दीर्घायु, पणफर में हो तो मध्यमायु तथा आपोक्लिम में हो तो अल्पायु योग बनाते है।

3. लग्नेश सूर्य का मित्र हो तो दीर्घायु, सम हो तो मध्यमायु तथा शत्रुक्षेत्र में हो तो अल्पायु योग बनता है।

4. अष्टमेश या लग्नेश स्वमित्र राशि में हो तो दीर्घायु, सम हो तो मध्यमायु तथा शत्रुक्षेत्री हो तो अल्पायु योग बनता है।

अष्टमेश से आयु विचारः

ज्योतिष ग्रन्थों के अनुसार अष्टमभाव तथा अष्टमेश को आयुकारक बताया गया है, अष्टमेश से आयु विचार करने हेतु निम्नयोगों का विचार किया जाता है:-

1. अष्टमेश या शनि उच्च, मूलत्रिकोण अथवा स्वक्षेत्री ग्रह से युत हो तो दीर्घायु योग बनता है।

2. निर्बल, शत्रुक्षेत्री या अस्तंगत ग्रह के साथ हो तो अल्पायु योग बनता है।

तृतीयेश से आयु विचारः

जिस प्रकार अष्टमेश से आयु का विचार किया गया है, उसी प्रकार तृतीयेश से भी विचार किया जाता है। यथा:-

1. तृतीयेश या मंगल उच्चस्थ हो अथवा उच्च ग्रह के साथ हो।

2. तृतीयेश व मंगल शुभ स्थानों में शुभयुक्त हो।

3. लग्नेश, तृतीयेश में से बलीग्रह केन्द्र हो तो जातक दीर्घायु, पणफर में मध्यमायु तथा आपोक्लिम में हो तो अल्पायु होता है।

8.12. आयुक्षीण योग

शास्त्रों के अनुसार आयुक्षीण हेतु विशेष योगों का वर्णन कहा गया है, जो अधोलिखित है:-

दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध ज्योतिष ग्रन्थ ''प्रश्न मार्ग'' में आयुक्षीण करने वाले विशेष योगो का वर्णन निम्न प्रकार है:-

1. लग्न व चन्द्रमा का निर्बल होना, पाप ग्रहों से दृष्ट होना एवं पाप ग्रहों से युति होना आयु को क्षीण करता है।

2. क्षीण चन्द्रमा द्वादश स्थान में हो, लग्न तथा अष्टम में पाप ग्रह हों और केद्र में शुभ ग्रह न हो तो शीघ्र मृत्यु होती है।

3. सन्ध्याकाल में चन्द्रमा की होरा में जन्म हो तथा पापग्रह राशियों के अन्तिम नवांश में हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती हे।

4. जन्म लग्न एवं सप्तम स्थान से द्वितीय एवं द्वादश भाव में पापग्रह हो।

5. शनि लग्न या सप्तम में हो, चन्द्रमा वृश्चिक में हो तथा शुभग्रह केन्द्र में हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है।

6. जिसकी कुण्ड़ली में गुरू मेष, वृश्चिक या मकर राशि में हो तथा प्रायः मध्याह्न या सायंकाल जन्म हो वह एक मास के भीतर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है अथवा मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त करता है।

7. जन्मकुण्ड़ली में अष्टम स्थान में सूर्य, मंगल एवं शनि हो तो एक मास के भीतर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है अथवा मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त करता है।

8. दो राशियों की सन्धि में जन्म हो और वह पापग्रह से दृष्ट या युत हो तो बालक शीघ्र मर जाता है।

9. केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम स्थान में पापग्रहों की स्थिति।

10. मृत्युभागांष में चन्द्रमा यदि केन्द्र या अष्टम में हो तथा पापग्रहो से युति करता हो तो भी बालक तुरन्त मर जाता है।

मेषादि राशियों के मृत्यु भाग

राशि	मृत्यु भाग
मेष	26^0
वृष	12^0
मिथुन	13^0
कर्क	25^0
सिंह	24^0
कन्या	11^0
तुला	26^0
वृष्चिक	14^0
धनु	13^0
मकर	25^0
कुम्भ	5^0
मीन	12^0

आयु के प्रकार:

पाराशर के अनुसार आयु के सात प्रकार बताये गये है -

1. बालारिष्ट 08 वर्ष
2. योगारिष्ट 20 वर्ष

3. अल्पायु 32 वर्ष

4. मध्यमायु 64 वर्ष

5. दीर्घायु 120 वर्ष

6. दिव्यायु 1000 वर्ष

7. अमितायु अमित अर्थात् जिसका अन्त न हो, इसमें जातक अमर होता है।

8.13. बालारिष्ट योग

अरिष्ट का शाब्दिक अर्थ किसी भी प्रकार का दुःख, कष्ट या दुर्भाग्य है। ज्योतिष शास्त्र में बालारिष्ट योग उन ग्रह योगों का संकेत करते है, जो नवजात शिशु के रोगी, दुर्घटनाग्रस्त पित्तिग्रस्त एवं अन्य प्रतिकुल आदि परिस्थितियों में होने वाले कष्ट को सूचित करते हैं। जन्म से बारह वर्ष पर्यन्त बालारिष्ट के प्रभाव से मृत्यु हो जाती है।

वैदिक ज्योतिष के अनुसार पूर्व जन्म या वर्तमान के बुरे कर्म या पापकर्म के कारण प्रतिकूल परिणाम घटित होते है, केवल अकस्मात् ही कुछ नहीं घटित होता। जैसे जन्म के समय किसी को भी स्वेच्छा से माता-पिता सामाजिक या आर्थिक वातावरण चुनने की छूट नही होती, उसी प्रकार प्रतिकूल घटनायें भी टाली नहीं जा सकती। कई बार नवजात शिशु उसकी जन्मपत्री में प्रत्यक्ष कारण के बिना भी मृत्यु को प्राप्त हो सकता है। शिशु 12 वर्ष की आयु तक इस प्रकार कष्ट पा सकता हैः

(1) पहले 4 वर्षों में माता के पाप कर्मों के कारण।

(2) 4-8 वर्षों मे पिता के पाप कर्मो के कारण।

(3) 8-12 वर्ष तक की आयु में स्वयं अपने पूर्वजन्मों के पाप कर्मो के कारण।

जब तक शिशु 12 वर्ष का न हो जाए तब तक उसकी जन्मपत्रिका का आयु विचार की दृष्टि से विश्लेषण नहीं करना चाहिए। यद्यपि बालारिष्ट योग की उपस्थिति सुनिश्चित हो जाने पर प्रतिकूल ग्रहों का उचित उपचार जैसे आराधना, शान्ति आदि करने का समर्थन ऋषि मुनियों द्वारा किया गया है।

नोट - 1: ज्योतिष शास्त्र के अनुसार बालारिष्ट योगों का अधिकतम सम्भाव्य अशुभ अर्थ प्रकट करने के लिए ही 'मृत्यु' शब्द का प्रयोग किया गया है अथवा इसे मृत्यु तुल्य कष्ट मानें इन योगों में वास्तव मे मृत्यु तब ही माने जब पाप ग्रहों का प्रभाव अत्यधिक हो।

नोट - 2: अन्य शास्त्रों के अनुसार जन्म समय से 24 वर्ष की अवस्था होने तक कुण्ड़ली में बालारिष्ट योग का प्रभाव माना जाता है। बालारिष्ट के अन्तर्गत गण्ड़ान्त जन्म तथा ग्रहकृत अरिष्ट योगों का विचार निम्नवत किया जा रहा है।

ज्योतिषीय नियम:

1. चन्द्र की भूमिका: सभी विज्ञ एकमत हैं कि चन्द्र का बली या निर्बल होना तथा उसके पीड़ित या अपीड़ित होने का नवजात के स्वास्थ्य से सम्बन्ध है। बालारिष्ट के अधिकांष शास्त्रीय योग वास्तव में चन्द्र के विभिन्न प्रकार से पीड़ित होने के बालपन में मृत्यु का प्रबल कारण मानते हैं।

2. लग्न तथा लग्नेषः यह सुनिश्चित है कि दुर्बल लग्नेश एवं लग्न और लग्नेश पर पाप प्रभाव कुण्डली मे विभिन्न प्रकार की पीड़ाओं को उत्पन्न करते हैं। यहां तक कि यदि लग्न या लग्नेश पीड़ित तथा दुर्बल हों तो साधारण पाप प्रभाव भी अर्थपूर्ण महत्त्व पा जाता है।

3. अष्टम भाव तथा अष्टमेश जन्मपत्री का अष्टम भाव आयु का सूचक है अष्टम भाव तथा अष्टमेश पर शुभ प्रभाव नवजात को बचाने को अग्रसर होते हैं। अष्टम भाव में पाप ग्रह बुरे हैं यद्यपि शनि एक अपवाद है। शनि की अष्टम भाव में स्थिति सामान्यतः अच्छी आयु को सुनिश्चित करती है।

4. केन्द्र में पाप ग्रहः कुण्ड़ली के चार केन्द्र (1, 4, 7, 10 वां भाव) किसी घर के चार स्तम्भों की तरह हैं। इन भावों में पाप प्रभाव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इन भावों में शुभ प्रभाव सामान्यतः जातक की कष्ट से रक्षा करता है। यद्यपि यह बाद में देखा जाएगा कि शुभ ग्रह यदि वक्री हों तो किसी प्रकार से सुरक्षा प्रदान नहीं करते और बुरे स्वास्थ्य के माध्यम से रोगोन्मुख करते है।

5. दशाक्रम बालारिष्ट के शास्त्रीय योग कष्ट के होने के वास्तविक समय के विषय में अधिक स्पष्ट है। यद्यपि हम देखेगें कि प्रायः प्रतिकूल दशा ही बुरा स्वास्थ्य या मृत्यु देती है।

6. अशुभ गोचर कष्ट का समय, जन्मकुण्ड़ली के संवेदनशील बिन्दुओं जैसे लग्न, लग्नेश, चन्द्र आदि पर से अशुभ गोचर से भी सम्बद्ध हो जाता है।

बालारिष्ट के शास्त्रीय योग:

अरिष्ट के बहुत से योग ज्योतिष के ग्रन्थों में बताए गए हैं। उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण योग पाराषर, वराहमिहिर से लिए गए हैं। यहाँ यह सुनिश्चित किया जाता है कि इन योगों मे मृत्यु का अर्थ अनिवार्य रूप से कष्ट या रोग ही ग्रहण करना चाहिए। इन योगों की मूल भावना को बरकरार रखा गया है।

1. चन्द्र छठे, आठवें या बारहवे भाव में पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो जन्म के बाद शीघ्र ही मृत्यु होती है।

नोट:

(1) जब इस चन्द्र को केवल शुभ ग्रह देखते हों तो आठ वर्ष की आयु में मृत्यु होती है।

(2) पाप ग्रहों तथा शुभ ग्रहों की सम्मिलित दृष्टि हों तो चार वर्ष तक की आयु मे मृत्यु होती है।

(3) यदि चन्द्र उक्त भावों में दृष्ट हो तो कष्ट नहीं होता है।

2. छठे, आठवें या बारहवें भाव में पाप दृष्ट वक्री शुभ ग्रह एक महीने के अन्दर मृत्यु प्रदान करते है।

नोट: (अ) छठे या आठवें भाव मे शुभ ग्रह अगर वक्री पाप ग्रह से दृष्ट हों तथा शुभ ग्रहों से अदृष्ट हों तो जन्म से एक माह के अन्दर मृत्यु देते हैं।

लग्न किसी शुभ ग्रह से दृष्ट न हो तो जन्म से एक माह के अन्दर ही मृत्यु हो जाती है। यह एक बहुत ही सामान्य योग है।

3. सूर्योदय या सूर्यास्त के समय, चन्द्र की होरा मे या गण्ड़ान्त (कर्क, वृष्चिक या मीन के अन्त में अथवा मेष, सिंह या धनु के प्रारम्भ में) में जन्म हो और केन्द्रों में पाप ग्रह तथा चन्द्र हों, तो नवजात की मृत्यु की सूचना देते है।

नोट: सायंकाल में, चन्द्र की होरा में जन्म हो और पाप ग्रह राष्यन्त (किसी राशि में 29 अंश या अधिक) में चन्द्र के साथ किसी केन्द्र में हों तो जन्म के बाद शीघ्र ही मृत्यु होती है।

4. लग्नेश किसी पाप ग्रह में पराजित होकर सप्तम भाव में हो तो जन्म से एक माह के अन्दर मृत्यु होती है। सूर्य तथा चन्द्र को छोड़कर, कोई दो ग्रह यदि एक अंश के अन्दर स्थित हों तो ग्रह युद्ध समझा जाता है। दोनों में से अंषों में आगे गया ग्रह पराजित समझा जाता है।

5. चन्द्र तथा सभी पाप ग्रहों का केन्द्र में होना नवजात के लिए मृत्युकारक है।

6. लग्न मे चन्द्र तथा सप्तम में पाप ग्रह शीघ्र मृत्यु देते है।

7. चन्द्रमा व लग्नेश शनि एवं सूर्य से युत हों तो 12 वर्ष तक अरिष्ट रहता है।

8. जन्मराशि का स्वामी पापग्रह से युक्त होकर आठवें स्थान में हो।

9. चन्द्रमा 6, 8, 12 में हो और लग्नेश अष्टम में गया हो तो 5 वर्ष तक अरिष्ट होता है।

अरिष्ट योगों के फलीभूत होने का समय:

बालरिष्ट योगों के फलीभूत होने का निम्न समय निर्दिष्ट किया गया है:-

1. पाप प्रभाव डालने वाले सबसे बली ग्रह पर जब गोचर का चन्द्र आएं।

2. गोचर का चंद्र जब जन्मकालिक चंद्र पर से गुजरे

3. लग्न पर चन्द्र्र का गोचर हो।

जब गोचर का चंद्र स्वयं पीड़ित हो तो प्रतिकूल घटना घटित नहीं होती है।

बालारिष्ट उदाहरण:

यह कुण्ड़ली एक कन्या शिशु की हैं जिसकी मृत्यु उसके जन्म से आठ दिन के भीतर हो गई।

लग्न	19^0 13'
सूर्य	10^0 26'
चन्द्र	10^0 26
मंगल	07^0 33
बुध	12^0 20
गुरू	6^0 00
शुक्र	7^0 49
शनि	20^0 53
राहु	08^0 53

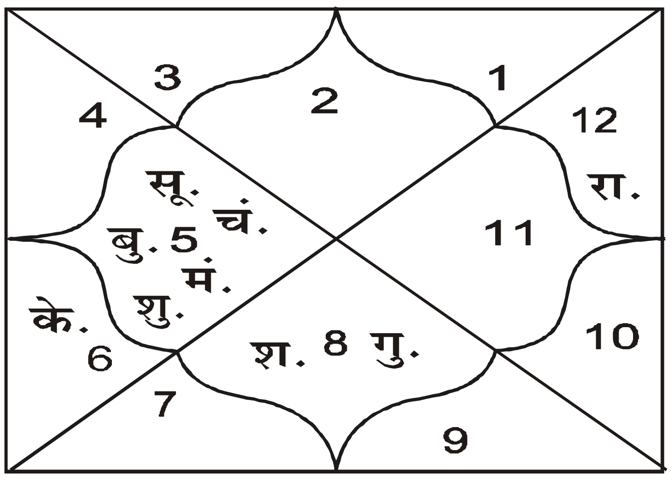

विवेचना प्रस्तुत:

कुण्ड़ली के चतुर्थ भाव में 5 ग्रह है जिस लग्नेश शुक्र भी सम्मिलित है सूर्य के अत्यधिक समीप होने के कारण सब अस्त हैं। यह प्रतिकूल योग चतुर्थ भाव में सप्तम भाव में स्थित शनि एवं वक्री ग्रह गुरू द्वारा दृष्ट है। अतः लग्नेश तथा चन्द्र पूर्ण रूप से नष्ट होकर उपर्युक्त कुण्ड़ली में बालारिष्ट योग उत्पन्न कर रहे है।

मातृकष्ट योग:

1. यदि तीन पापग्रह चन्द्रमा को देखते हो तो उस जातक की माता की मृत्यु शीघ्र होती है।
2. द्वितीय भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि व सूर्य स्थित हो तो पिता का मरण होने के पश्चात् जातक का जन्म होता है तथा जन्म के पश्चात् माता की भी मृत्यु हो जाती है।
3. लग्न में गुरु, द्वितीय भाव में शनि तथा तृतीयभाव में राहु हो तो जातक की माता की मृत्यु होती है।
4. क्षीण चन्द्रमा से त्रिकोण में पापग्रह हो शुभग्रह से हीन हो तो 06 मास के भीतर बालक की माता का निधन हो जाता है।
5. लग्न में, द्वादश व सप्तम में पापग्रह हो, द्वितीयभाव में शुभग्रह हो तो माता की मृत्यु शीघ्र होती है।
6. चन्द्र से चतुर्थस्थान में शत्रुक्षेत्रिय पापग्रह हो और केन्द्र में शुभग्रह न हो तो जातक की माता जीवित नहीं रहती है।

पितृकष्ट योग:

1. जन्मलग्न में शनि, षष्ठ में चन्द्रमा तथा सप्तम में मंगल हो तो जातक की पिता की मृत्यु शीघ्र होती है।
2. सूर्य पापयुत या पापकर्तरी योग मे हो और पापग्रह सूर्य से सप्तमभाव में हो तो पिता की मृत्यु शीघ्र होती है।
3. शत्रुक्षेत्री होकर मंगल दशमस्थ हो तो जातक के पिता की मृत्यु शीघ्र होती है।
4. सूर्य मंगल के नवमांश में हो, शनि के द्वारा दृष्ट हो तो पिता बालक के जन्म से पूर्व वैराग्य ग्रहण कर लेता है अथवा मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।
5. राहु व गुरु लग्न, षष्ठ अथवा चतुर्थ भाव में से किसी एक भाव में हो तो बालक के 23वें वर्ष पिता की मृत्यु होती है।

6. लग्न से षष्ठभाव में चन्द्र हो और लग्न में शनि तथा सप्तम में मंगल हो तो पिता की मृत्यु शीघ्र होती है।

अरिष्ट योग:

शास्त्रों में ग्रहजनित अनेक अरिष्टयोगों का वर्णन किया गया है, यहाँ प्रमुख का उल्लेख कर रहे है:-

1. लग्न से षष्ठ, अष्टम व द्वादशभाव पापग्रह से युत अथवा दृष्ट हो तो जातक को अरिष्ट होता है।

2. पंचमभाव में मंगल, शनि व सूर्य स्थित हो तो यह योग जातक की माता अथवा भाई के अरिष्टकारक होता है।

3. लग्न में शनि, अष्टम में चन्द्रमा तथा तृतीयभाव में गुरु अरिष्टकारक कहे गये है।

4. चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य हो तथा सप्तम या अष्टमभाव में पापग्रह हो तो माता-पित सहित जातक की भी मृत्यु होती है।

5. समस्त ग्रह क्षीण होकर जन्मलग्न से आपोक्लिम भावों में स्थित हो बालक का शीघ्र मरण होता है।

6. लग्न या अष्टमभाव में पापग्रहों के युति अथवा दृष्टि हो तो जातक के लिए अरिष्टकारक होता है।

7. क्षीणचन्द्रमा लग्न में, पापग्रह केन्द्र व अष्टम में हो तो जातक का मरण होता है।

8. सन्ध्या के समय चन्द्र की होरा या कर्क, वृश्चिक या मीन के गण्ड़ान्तभाग में जातक का जन्म हो तथा क्षीध्क्षीण चन्द्रमा व पापग्रह केन्द्र में हो तो अरिष्टकारक होते है।

9. द्रेष्काण या सप्तमभाव में पापग्रह हो और क्षीणचन्द्रमा लग्न में हो तो मरणप्रद होता है।

10. लग्न से सप्तम में सूर्य, दशम में मंगल और द्वादश में राहु हो तो पिता के लिए अ रिष्टकारक होता है।

बालारिष्ट योगों की प्रमाणिकता के सम्बन्ध से सूक्ष्म विचार करने के पष्चात् ही फलादेश करना चाहिए भट्टोत्पल जी के अनुसार बालरिष्ट होने पर भी बच्चे जीवित रह जाते है, उनकी मृत्यु नहीं होती क्योंकि बालारिष्ट के साथ-साथ यदि कुण्ड़ली में जीवयोग भी हो तो बच्चे की प्राणरक्षा हो जाती है। हमें यह ज्ञात होना जरूरी है कि ज्योतिष शात्र में केवल एक योग से फलादेश कथन करना उचित नहीं है। जन्मकुण्ड़ली का सर्वांगीण विचार करना फलादेश के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विद्वानों के सौकर्य के लिए उपुर्यक्त कथन को उदाहरण सहित निम्न योगों में बताया है:

जातक परिजात: के एक योग में बताया गया है कि यदि वक्री शनि मेष या वृष्चिक राशि में होकर केन्द्र (1, 4, 7, 10) छठे या आठवें घर में हो और बलवान मंगल से दृष्ट हो तो बालक केवल 2 वर्ष तक जीवित रहता है।

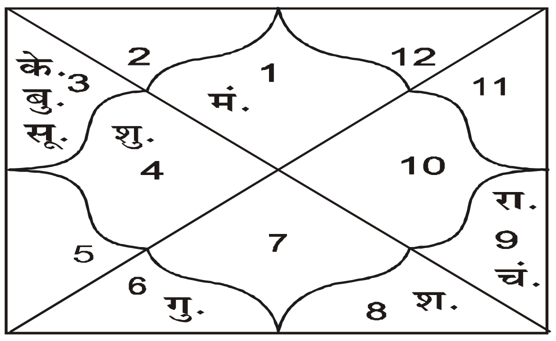

प्रस्तुतः कुण्ड़ली में जातक का जन्म 4 जुलाई 1898 को 12:53 बजे रात्रि में हुआ। वक्री शनि वृश्चिक राशि में अष्टम भाव में स्थित है तथा लग्नस्थ बली मंगल द्वारा अष्टम दृष्टि से दृष्ट होकर निम्न योगों का निर्माण कर रहे हैं। जातक ने स्वस्थ्य रहते हुए 77 वर्ष की आयु को पार किया। सारावली भी इस मत का समर्थन करती है, परन्तु योग की पूर्णता के लिए यह भी कहा है कि चन्द्रमा केन्द्र में या छठे, आठवें होना चाहिए।

सारावली के अनुसार यदि सूर्य व बुध एक साथ हो और उन पर पाप ग्रहों की दृष्टि हो तो देवता से रक्षित जातक का भी 11 वर्ष में मरण होता है।

उदाहरण कंडली:

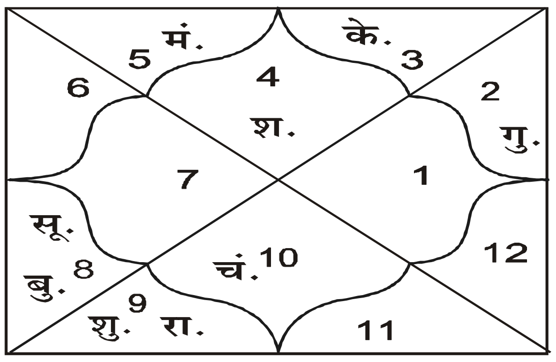

प्रस्तुत कुण्ड़ली भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी की है। सूर्य तथा बुध पंचम भाव में युति कर रहे है, मारक स्थानस्थ पापी ग्रह मंगल की चतुर्थ दृष्टि सूर्य व बुध पर है। ईश्वरीय कृपा से इंदिरा गाँधी ने उत्तम स्वास्थ्य के साथ 48 वर्ष की आयु को पूर्ण किया है। निम्न कुण्ड़ली मे उपर्युक्त योग घटित हुआ परन्तु ग्रन्थकार ने जो फल कहा, वह नहीं हुआ। यदि कुण्ड़ली में सूक्ष्मता से निरक्षण किया जाए तो ज्ञात होगा की पापी ग्रह मंगल कुण्ड़ली में केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश होते हुए योगकारी ग्रह है तथा अत्यन्त शुभ ग्रह

भाग्येश गुरू की सप्तम दृष्टि सूर्य व बुध पर है। अतः अरिष्ट योग को निष्फल करते हुए नृपति के समान भोग सम्पन्न प्रदान किया।

अरिष्टभंग योग:

जहाँ एक ओर कुण्ड़ली में जातक के लिए कष्टसूचक योग हैं वही दूसरी ओर उसके निवारण हेतु अन्य योग भी होते है। एक ज्योतिषी के लिए यह आवश्यक है कि वह अरिष्ट योग को भंग करने वाले योगों पर विचार करके ही अपनी भविष्यवाणी करें। अतः ज्योतिष ग्रन्थों द्वारा निम्नलिखित अरिष्टभंग योग इस प्रकार है।

1. शुक्लपक्ष में रात्रि का जन्म हो और छठे, आठवे स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो सर्वारिष्टनाशक योग होता है।
2. शुभग्रहों की राशि और नवांश में 2, 7, 9, 12, 3, 6, 4 में हो।
3. जन्मराशि का स्वामी 1, 4, 7, 10 में स्थित हो अथवा शुभग्रह केन्द्र में हो।
4. सभी ग्रह 3, 5, 6, 7, 8, 11 राशियों में हों तो अरिष्टनाश होता है।
5. चन्द्रमा से दसवें स्थान में गुरू, बारहवें में बुध, शुक्र और पाप ग्रह हों।
6. कर्क, मेष और वृष राशि लग्न हों तथा लग्न में राहु हो।
7. पूर्ण चन्द्रमा शुभग्रह की राशि में अरिष्ट भंग करता है।
8. चन्द्र और जन्म लग्न को शुभ ग्रह देखते हो।
9. सभी ग्रह शुभग्रहों के वर्ग में या शुभग्रहों के नवांश में स्थित हों।

लग्नेश बलवान हो और शुभगह उसे देखते हो।

8.14. सारांश

इस इकाई में आपने फलित ज्योतिष का महत्वपूर्ण अंग आयु विचार का सैद्वातिन्त ज्ञान प्राप्त किया है। आयु विचार किए बिना कुण्ड़ली में किसी भी योग द्वारा फल कथन कहना व्यर्थ है। अगर जातक के पास पर्याप्त आयु नहीं है तो उसके लिए सुखों का कोई मोल नहीं होगा। अतः आयु ज्ञात की विधि एवं आयु का वर्गीकरण कर हमने आयु क्षीण, दीर्घायु, मध्यमायु एवं अल्पायु योग का सैद्धान्तिक ज्ञान आप तक पहुँचाने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त कुण्ड़ली में बालारिष्ट योग फलीभूत होने का समय एवं अरिष्ट भंग योग का ज्ञान आपके सम्मुख स्पष्ट किया गया है।

8.15. शब्दावली

1. वक्री	=	पीछे की ओर चलना।
2. वर्गोत्तम	=	लग्न में ग्रह की राशि व नवमांश की एक राशि होने की स्थिति।
3. P.A.M.	=	P= पूर्णायु अथवा दीर्घायु, ।A= अल्पायु, M = मध्यमायु
4. अरिष्ट	=	मृत्यु अथवा मृत्युतुल्य कष्ट
5. क्षीण चन्द्रमा	=	अस्त, बलहीन, पापग्रहों से युत अथवा दृष्ट

8.16. अभ्यास प्रश्न

प्रश्न - 1: आयु प्राप्त करने की दो विधियाँ बताइये।

उत्तर: अंशकायु, पिण्डायु।

प्रश्न - 2: रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये -

आयु निर्धारण से पूर्व सर्वप्रथम ------------------ का विचार किया जाता है।

उत्तर: अरिष्ट योग

प्रश्न - 3 आयु को किन खण्डों में विभाजित किया गया है?

उत्तर: आयु को तीन खण्ड में विभाजित किया है - दीर्घायु, मध्यमायु एवं अल्पायु।

प्रश्न - 4: सद्योरिष्ट क्या है?

उत्तर: जन्म से एक वर्ष के भीतर अरिष्ट फल को सद्योरिष्ट कहते है।

प्रश्न - 5: 12 से 20 वर्ष तक की आयु में अरिष्ट फल का प्रभाव को क्या कहेंगे।

उत्तर: योगारिष्ट।

प्रश्न - 6: P.A.M. क्या अर्थ है?

उत्तर: P.A.M. अल्पायु एवं M- मध्यमायु।

प्रश्न - 7 अरिष्ट का शब्दिक अर्थ क्या है?

उत्तर: अरिष्ट का शब्दिक अर्थ किसी भी प्रकार का दुख, कष्ट या दुर्भाग्य है।

प्रश्न - 8: शिशु 12 वर्ष की आयु में किस प्रकार कष्ट पा सकता है?

उत्तर: पहले 4 वर्ष तक माता-पिता के कर्मो के कारण।

4 से 8 पिता के पाप कर्म के कारण

8-12 स्वयं के पूर्वजन्म पापकर्मो के कारण।

प्रश्न - 9: मेष, कर्क एवं धनु राशि का मृत्यु भाग बताऐं।

उत्तर: मेष - 260, कर्क - 250, धनु-130

प्रश्न - 10: अरिष्टभंग योग क्या है?

उत्तर: कुण्ड़ली में विद्यमान अरिष्ट योगों को भंग करने वाले योग अरिष्ट भंग योग कहलाए गऐ हैं।

8.17. लघुत्त्रात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: P.A.M. ज्ञात करने की विधि उदाहरण सहित दें।

प्रश्न - 2: मेषादि राशियों का मृत्यु भाग एवं नवग्रह सहित लग्न के मृत्युभाग को तालिका द्वारा स्पष्ट करें।

प्रश्न - 3: दीर्घायु, मध्यमायु एवं अल्पायु में से किन्ही 2 में योग बताऐं।

प्रश्न - 3: बा ारिष्ट का योग बताते हुए, इसकी व्याख्या उदाहरण सहित करें।

प्रश्न - 5: बालारिष्ट के अन्तर्गत गण्डान्त जन्म तथा ग्रह-कृत अकृयोग का विचार किस प्रकार किया जाऐगा?

8.17. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. बृहत्पाराशर होराशास्त्र

सम्पादक: सुरेश चन्द्र मिश्र

प्रकाशक: रंजन पब्लिकेशन, दिल्ली।

2. आयुनिर्णय

सम्पादक: वीरेन्द्र नौटियाल

प्रकाशक: एल्फा पब्लिकेशन, दिल्ली।

3. चिकित्सा ज्योतिष

सम्पादक: डॉ. के. एस. पब्लिकेशन

प्रकाशक: उमा पब्लिकेशन्स, दिल्ली।

4. फलदीपिका

सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास।

इकाई – 9

दशाज्ञान:- दशाओं का शुभाशुभ फल, महादशा, अन्तर्दशा एवं प्रत्यन्तर्दशा ज्ञान

इकाई संरचना

9.1. प्रस्तावना
9.2. उद्देश्य
9.3. विषय प्रवेश
9.3.1. दशाओं के भेद
9.3.2 योगिनीदशा तालिका
9.4. विंशोत्तरी महादशा
9.4.1. परिचय
9.4.2. ग्रहदशा बोधक चक्र
9.4.3. अन्तर्दशा
9.4.4. प्रत्यन्तर्दशा
9.5. दशाओं के शुभाशुभ फल
9.6. सूर्यादि नवग्रहों के दशाफल
9.7. सूर्यादि नवग्रहों के प्रत्यन्तर्दशाफल
9.8. सारांश
9.9. शब्दावलि
9.10. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न
9.11. लघुत्तरात्मक प्रश्न
9.12. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.1. प्रस्तावना

भारतीय ज्योतिष में ग्रहों का महत्त्वपूर्ण योगदान है, अतः ज्योतिष शास्त्र के मर्मज्ञों ने ग्रहों के शुभाशुभत्व का समय ज्ञात करने के लिए दशाओं के प्रधान रूप से अवगत कराया है। सही दशाफल के अभाव में ज्यातिष विज्ञान अपूर्ण व अधूरा रह जाता है। दशाओं का विचार करने के लिए ग्रथों मे कई प्रकार की दशाओं का उल्लेख किया गया है परन्तु विंशोत्तषरी दशा को मुख्य रूप से ग्रहण किया गया है। इस अध्याय के अन्तर्गत हम दशाओं का शुभाशुभ फल एवं महादशा, अर्न्तदशा, प्रत्यन्तर्दशा की जानकारी

प्राप्त कर पायेंगे। साथ आप इन महादशाओं के ज्ञान से सभी प्रकार की शुभाशुभ घटनाओं को बताने में समर्थ हो सकेंगे।

9.2. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप दशाओं का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे। जातक के भविष्य में किस समय क्या घटित होने वाला है, घटित घटना उसके लिए शुभ फलदायी होगी या अशुभ फलदायी, इन सबका ज्ञान आप इस इकाई द्वारा प्राप्त करने में सक्षम होंगे।

9.3. विषय प्रवेश

ज्येतिष शास्त्र के फलित ज्येतिष में दशाओं के ज्ञान को महत्त्वपूर्ण अंग माना है। भारतीय प्रथानुसार घटनाओं के समय को निर्धारित करने के लिए जिस पद्धति का वर्णन आता है, वह दशापद्धति कहलाती है। दशा का अर्थ है स्थिति, अवस्था या परिस्थिति। स्थिति से हमारा तात्पर्य जातक की अच्छी या बुरी हालत से है जो कि जीवन में किसी भी विभाग से सम्बन्ध रखती है।

किस समय पर क्या-क्या घटनायें घट सकती है, इस बात का निर्णय मौलिक रूप से कुण्ड़ली में दशाओं पर निर्भर करता हे। जन्म समय के ग्रह ही अपनी विषिष्ट स्थिति के अनुरूप शुभाशुभ फल देते हैं। जब किसी ग्रह की महादशा होती है तो यह मान ले कि उस ग्रह का अधिकार जातक के जीवन पर चल रहा है। जैसी ग्रह की प्रकृति, गुण, स्वाभव, बल होगा उसी अनुरूप जातक के जीवन मे घटनायें होगी। ग्रह शुभ, बली, उच्चराशिस्थ होगा तो जातक को उस दशा की अवधि तक सुखी एवं सम्पन्न जीवन प्राप्त रहेगा। अन्यथा निर्बल, पापी नीचस्थ राशि का ग्रह इसके विपरीत फल को ग्र्रहण करेगा।

9.3.1. दशाओं के भेद

''बृहत्पाराषर होराषास्त्र'' के अनुसार दशाओं के अनेक भेदों का वर्णन दिया गया है। विंशोत्तषरी, अष्टोत्तरी, योगिनी, षोड़षोत्तरी, द्वादषोत्तरी, पंचमोत्तरी, शताब्दिका, चतुरषीतिसमा, द्विसम्प्रतिसमा, छिहायनी, षट्त्रिंषत्समा, कालदशा, चक्रदशा, चरदशा स्थिर, योगार्द्ध, केन्द्रादि, कारक, मुन्था मण्डूक, शूल, त्रिकोण पंचस्वर, तारादशादि अनेक 52 प्रकार की दशाये है। परन्तु इन सबका मूलाधार विंशोत्तषरी दशाएं है, जो सर्वसाधारण के लिए हितकारी है। भारतीय ज्योतिष में प्राथमिकता विंशोत्तरी दशा को ही दी गई है।

भारतीय कुण्ड़ली विज्ञान के अनुसार विंशोत्तरी व अष्टोत्तरी महादशा में प्रान्तविशेष के लिए विशेष कथन कहा है:-

गुर्जरे कच्छ सौराष्ट्रे पांचाले सिन्धु पर्वते।

एते अष्टोत्तरी श्रेष्ठा अन्यत्र विंशोत्तषरी मताः।।

अर्थात् गुजरात, कच्छ, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र पंजाब, सिन्धु पर्वत के क्षेत्र में अष्टोत्तरी महादशा का प्रचलन है तथा अन्यत्र विंशोत्तषरी का प्रचलन है।

भारतीय ज्योतिष विज्ञान में ग्रहों की विभिन्न दशाओं को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। फलादेश करने हेतु इनका व्यापक प्रयोग किया जाता है। भारतीय ज्योतिषज्ञ मुख्य रूप से निम्न चार पद्धतियों का प्रयोग फलित हेतु मुख्य रूप से करते है।

(अ) विंशोत्तरी दशा पद्धति

(ब) अष्टोत्तरी दशा पद्धति

(स) योगिनी दशा पद्धति

(द) काल चक्र दशा पद्धति

जन्म कुण्डली से ग्रहों का शुभ-अशुभ फल ज्ञात होता है किंतु वह फल किस समय प्राप्त होगा यह ज्ञान दशान्तर्दशाओं के ज्ञान से ही प्राप्त होता है। दशाओं के उपरोक्त चार प्रकारों के अलावा भी अनेक प्रकार प्राचीन जातक शास्त्रों में बताए गए है।

स्वरषास्त्र में बताया गया है कि जिसका जन्म शुक्लपक्ष में हो उसका अष्टोत्तरी दशा द्वारा और जिसका जन्म कृष्णपक्ष में हो उसका विंशोत्तषरी दशा द्वारा शुभाशुभ फल जानना चाहिए।

कुछ ज्योतिर्विदों के अनुसार योगिनी दशा भी जन्मपत्री के फलादेश करने में नियमित रूप से प्रचलन में आ रही है। यह दशा 36 वर्ष में पूर्ण होती है, इसलिए इसका फल 36 वर्ष की आयु तक मानते हैं तथा 36 वर्ष बाद इसकी पुनरावृत्ति मानते हैं योगिनी दशा के आठ प्रकार बताए गए हैं। दशाक्रम स्वामी तथा अवधि नीचे तालिका द्वारा बताई गई है:

9.3.2. योगिनी दशा तालिका

क्र. सं.	योगिनी दशा प्रकार	दशा स्वामी	दशा अवधि
1.	मंगला	चन्द्रमा	1 वर्ष
2.	पिंगला	सूर्य	2 वर्ष
3.	धान्या	गुरू	3 वर्ष

4.	भ्रामरी	मंगल	4 वर्ष
5.	आर्द्रका	बुध	5 वर्ष
6.	उल्का	शनि	6 वर्ष
7.	सिद्धा	शुक्र	7 वर्ष
8.	संकटा	राहु	8 वर्ष
		योग	36 वर्ष

9.4. विंशोत्तरी महादशा

9.4.1. परिचय

इस दशा में 120 वर्ष की आयु मानकर ग्रहों का विभाजन किया गया है। विंशोत्तषरी दशा पद्धति के अनुसार फलादेश आधार चन्द्र नक्षत्र है। बालक का जिस दिन, जिस नक्षत्र में जन्म है, उस समय जो नक्षत्र वर्तमान होता है, उसी नक्षत्र के स्वामी की जन्म दशा सर्वप्रथम मानी जायेगी एवं शेष आगे क्रम वही रहेगे।

आदित्यचन्द्रकुजरा हुसुरेषमन्त्रि।

मन्दज्ञ केतुभष्गुजा नव कृतिकाद्य।।

तेनो नयः सिनदयातट धन्यसेव्य

सेनानरा दिनकारादिशाब्द संख्या।। - जातक परिजात

इसका अर्थ तालिका द्वारा समझें

9.4.2. जन्मनक्षत्र द्वारा ग्रहदशा बोधक चक्र

ग्रहदशा	सूर्य	चन्द्रमा	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र
वर्ष	6	10	8	18	16	19	17	7	20
नक्षत्र	कृतिष्	रोहि	मृगष्	आर्द्रा	पुन	पुष्य	अष्ले.	मघा	पूफा
नक्षत्र	उफा	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशा	अनु	ज्येष्ठा	मूल	पूषा

नक्षत्र उषा श्रवण धनि शत पूभा उभा रेवती अष्वि. भरणी

उदाहरण के लिए अगर किसी मनुष्य का जन्म ठीक उसे पल (सैकेण्ड) पर हो रहा हो जब रेवती नक्षत्र समाप्त हो रहा हो और मघा नक्षत्र शुरू हो रहा हो तो मघा नक्षत्र प्रारम्भिक बिन्दु पर चन्द्रमा की स्थिति होने के कारण केतु की महादशा 7 वर्ष की होगी। उसके बीत जाने के बाद शेष दशा शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, गुरू, शनि बुध की क्रमषः वर्ष 20, 7, 10, 7, 18, 16, 19, 17, 7 की होगी।

9.4.3. अन्र्तदशा

प्रत्येक की महादशा मे नवग्रहों की अन्तदर्शा अथवा भुक्ति चलती है। इन नवग्रहों में सबसे पहले उस ग्रह की भुक्ति चलती है जिसकी महादशा में अन्तदर्शा का विचार कर रहे हैं। उदाहरण के लिए सूर्य की महादशा में पहले सूर्य की अन्तर्दशा होगी उसके बाद क्रमषः चन्द्र मंगल, राहु, गुरू, शनि, बुध, केतु शुक्र की अन्तदर्शा होगी।

9.4.4. प्रत्यन्तर दशा

प्रत्येक ग्रह की अर्न्तदशा में सभी नौ ग्रहों की प्रत्यन्तर दशा चलती है। किसी भी ग्रह की अर्न्तदशा में पहले अन्तदर्शानाथ की प्रत्यन्तर होगी, तत्पष्चात् बाकी आठ ग्रहों की प्रत्यन्तर दशा चलेगी।

9.5. दशाओं के शुभाशुभ फल

जन्मकुण्ड़ली में स्थित ग्रह अपनी युति अथवा दृष्टि से जिस घटना के योग बनाते है, वह घटनायें उन सम्बन्धित ग्रहो की दशा अन्तदर्शा में घटित होती है। प्रत्येक ग्रह की दशा-अन्तदर्शा विभिन्न व्यक्तियों के लिए विभिन्न फल दिखलायेगी।

उदाहरण: एक व्यक्ति कि कुण्ड़ली में उच्च का ग्रह त्रिकोण भाव में स्थित होकर शुभ ग्रहों से दृष्ट है तथा दूसरे व्यक्ति की कुण्ड़ली में वही ग्रह नीच रषिस्थ होकर पाप ग्रहों से दृष्ट होने पर दानों व्यक्तियों की कुण्ड़लियों पर विभिन्न फल देगा।

अतः प्रत्येक व्यक्ति के लिए ग्रह-फल शुभ, अशुभ, राशि, भाव स्थिति पर तथा उस पर प्रभाव डालने वाले ग्रहों पर निर्भर करता है। दशाओं के मूलभूत फल निम्नलिखित है:

1. जो ग्रह अपनी उच्च, मित्र, स्वाराशि में हो, सूर्य के सानिध्य से अस्त न हो और पाप ग्रहों से दृष्ट न हो, वह अपनी दशा अन्तदर्शा में शुभ फल देते है।

2. नीच राशिस्थ, अस्तंगत, शत्रुराशि में स्थित ग्रह अपनी दशा व अन्तर्दशा में अशुभ फलदायी होते है।

3. जिस ग्रह की दशा वर्तमान में चल रही हो, वह ग्रह अन्य ग्रहों के जिस भी ग्रह के युति कर रहा हो, वह उन ग्रहों का फल अपनी दशा व अन्तर्दशा में प्रदान करेगा।

4. वक्री ग्रह की दशा में जातक के सुख में बाधा आती है तथा उसे परदेस में वास करना पड़ता है।

5. आरोही ग्रह की दशा श्रेष्ठफल देती है तथा अवरोही ग्रह की दशा नेष्टफलदायी होती है।

6. जो ग्रह षष्ठ, अष्टम, द्वादश में स्थित हो, वह अपने दशाकाल में अशुभफलदायी होता है, परन्तु ऐसा ग्रह अपनी उच्च अथवा स्वराशि में स्थित हो एवं बृहस्पति की उस पर दृष्टि हो तो वह शुभफलदायी होगा।

7. ग्रह अपनी दशा व अन्तर्दशा में उन भावों का फल देते हो, जिन भावों के वे स्वामी होते है।

अन्तर्दशा फल:

महादशानाथ की अपेक्षा अन्तदर्शानाथ अथवा भुक्तिनाथ अपना अधिक फल दिखाता है। यदि किसी की कुण्ड़ली में बुध की 17 वर्श की दशा प्रारम्भ हुई है और कुण्ड़ली में बुध नीच अथवा अशुभ भाव में पापी ग्रहों से पीड़ित हो तो उसका अर्थ यह नहीं कि उस व्यक्ति के पूरे 17 वर्ष ही अशुभ जायेंगे। इन 17 वषों में नवग्रहों की अपनी-अपनी अन्तदर्शा आयेगी और वह सब कुण्ड़ली में अपनी स्थिति एवं भावाधिप होने के नाते अपना-अपना फल दिखायेंगे। अर्न्तदशा फल के साधारण नियम उसी प्रकार हैं जैसे महादशा के फल बताए गए है। महादशानाथ और अन्तदर्शानाथ का कुण्ड़ली में आपस का क्या सम्बन्ध है, एक दूसरे के मित्र है अथवा शत्रु, इस बात से उनकी दशाफल में अन्तर आयेगा।

1. पाप ग्रहों की महादशा में पापी ग्रहों की अन्तदर्शा अनिष्ट फल देती है एवं शुभ ग्रहो की अन्तदर्शा शुभ फल देती है।

2. एक योग कारक ग्रह की महादशा में दूसरे योगकारक ग्रह की अन्तदर्शा शुभ फल देने वाली होती है।

3. महादशानाथ से अगर अन्तदर्शानाथ छठे, आठवें, बारहवें भाव में स्थित हो, तो अन्तदर्शानाथ अशुभ फल देता है।

4. एक मारक की महादशा हो और दूसरे मारक की अर्न्तदशा हो तो मृत्यु तुल्य कष्ट दे सकती है, अगर ऐसा मारक त्रिकोणेष भी हो तो इतना अशुभ फल नहीं होता।

5. ग्रह अपनी अन्तदर्शा में उन चीजों से सम्बन्धित फल करते है, जिनके वह कारक हों। यदि किसी की कुण्ड़ली में बृहस्पति की अन्तदर्शा चल रही है। तो बृहस्पति पंचमेश न होता हुआ भी सन्तान की इच्छा रखने वालों को पुत्र सुख देता है। यदि कुण्ड़ली में बृहस्पति अशुभ स्थान में

हो, पापी ग्रहों से पीड़ित होगा तो सन्तान सुख मे कमी होगी। अगर शुक्र की अन्तदर्शा चल रही हो तो शादी योग्य युवक-युवतियों की विवाह की बात चल सकती है।

अगर महादशानाथ का अन्तदर्शानाथ शत्रु हो तो शुभ फल होगा।

9.6. सूर्यादि नवग्रहों के दशाफल

सूर्य दशाफलः

सूर्य की दशा में जातक खूब यात्रायें करता है। नौकरी में उन्नति मिलती है, सामाजिक दृष्टि से जातक यश, मान, प्रतिष्ठा, इज्जत प्राप्त करता है। समाज में उच्च स्तरीय लोगों से सम्पर्क जोड़ता है। तन्त्र-मन्त्र व परिज्ञान में रूचि लेता है। ईष्वर और न्याय के प्रति अटूट श्रद्धा रहती है। आधे-अधूरे कार्य पूर्ण कर धनोपार्जन में समर्थ होता है।

सूर्य की दशा में अर्न्तदशाफल:

सूर्य में सूर्यः

सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तदर्शा हो तो ब्राह्मण तथा भूपति से धन लाभ हो। शास्त्रादि से धन मले। मन में रोग हो और विदेश तथा वन यात्रा होती है।

सूर्य में चन्द्रः

बन्धु और मित्रों से धन की प्राप्ति होती है। मित्रों से, सज्जनों से प्रमाद हो और जातक को पीलिया आदि रोग से सन्ताप हो।

सूर्य में मंगलः

स्वर्ण तथा धन की प्राप्ति हो, राजा से लाभ हो, शुभ फल हो किन्तु पित्त रोग की वृद्धि होती है।

सूर्य में राहुः

सूर्य में जब राहु की अन्तदर्शा आती है तब मृत्युभय होता है। बन्धु वर्ग को शत्रुओं से पीड़ा हो। मन को सन्ताप हो, पदच्युति होती है।

सूर्य में बृहस्पतिः

मनुश्य सर्व पूज्य होता है अर्थात सब जगह उसका आदर होता है। अपने पुत्र से धन की प्राप्ति होती हे। देवताओं और ब्राह्मणों का पूजन करता है। सत्कर्म आचारण करता हे और सज्जनों का समागम करता है।

सूर्य में शनि:

सूर्य में जब शनि की अन्तदर्शा होती है तो मन में दुख, आलस्य, सब लोग शत्रुता करते है छोटे दर्जे की वृत्ति होती हे। राजा और चोर से भय होता है।

सूर्य में बुध:

बन्धुओं को पीड़ा, मन में दुःख की अनुभूति होती है। मनुष्य उद्यमहीन हो जाता है और थोड़ी मात्रा में सुख मिलता है।

सूर्य मे केतु:

असमय में मृत्यु की सम्भावना रहती है और मन दुःखी रहता है। कण्ठरोग होता है, नेत्रों में बीमारी होती है।

सूर्य में शुक्र:

जब सूर्य में शुक्र होतो है तो जल में या जल मार्ग से धन की प्राप्ति होती है। दुष्ट स्त्री का सहवास हो। शुष्क सम्वाद प्राप्त हो अब विशेष कहते हैं। सूर्य की दशा में प्रारम्भ में पिता को रोग और धन क्षय होता है। मध्य में सब प्राकर की बाधायें तथा अन्त में सुख होता है।

चन्द्रमा की महादशा:

मन्त्रों की अपासना, देवताओं की भक्ति, ब्राह्मणों का सत्कार होता है। स्त्री की प्राप्ति, धन की प्राप्ति और क्षेत्र की प्राप्ति होती है। स्त्रियों से वैभव प्राप्त होता हैं वस्त्र, पुष्प, भूषण, चन्दन आदि सुनदर वस्तुयें प्राप्त हों और अनेक प्रकार के धन से युक्त हो। यदि चन्द्रमा बलहीन हो तो चन्द्रमा की दशा में धनक्षय होता हें और वात रोग से भय होता है। अर्थात वायु के रोग होते हैं।

चन्द्र की दशा में अन्तदर्शा फल:

चन्द्रमा में चन्द्रमा:

विद्या, स्त्री, गीत, में प्रीति होती हैं राजा से, मन्त्री से, सेनापति से सत्कृत होता है, तीर्थयात्रा होती है, पुत्र, मित्र से प्रिय अर्थात् सुख होता है। पृथ्वी का, घोड़े का और गायों का लाभ होता है, बहुत धन वैभव से सुख होता है।

चन्द्रमा में मंगल: विरोध बुद्धि होती है अर्थात् लोगों को अप्रिय करने की प्रकृमि होती है, स्थान-नाश और धन क्षय होता है। रोगी रहता है, मित्र और भ्रातृवर्ग से क्लेश होता है।

चन्द्रमा में राहु:

शत्रुओं और रोग से भय होता है, बन्धुनाश और धनक्षय होता है, क्लेश प्राप्त होता है। मनुष्य को कुछ भी सुख नहीं मिलता है।

चन्द्रमा में बृहस्पति:

जब चन्द्रमा की महादशा में बृहस्पति की अन्तदर्शा होती है। तो सवारी आदि नाना प्रकार के वैभव प्राप्त होते हैं। वस्त्र, भूषण और सम्पत्ति प्राप्त होती है। यत्न से कार्य सिद्धि होती है अर्थात् उद्योग सफल होते है।

चन्द्रमा में शनि:

माता को पीड़ा, मन को दुःख, वात, पित्त आदि से पीड़ा होती है। बोलने में शक्ति नहीं रहती और शत्रु के सम्वाद मिलते रहते है। शेष में चन्द्रमा की महादशा में शनि की अन्तदर्शा निकृष्ट होती है।

चन्द्रमा में बुध:

मातृवर्ग धन प्राप्ति होती है, विद्वानों का आश्रय मिलता है, वस्त्र और भूषण की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमा में केतु:

स्त्री को रोग होता है। बन्धुओं का नाश हो व काँख में रोग हो या अन्य प्रकार की बीमारी है। द्रव्य नाश होता है।

चन्द्रमा में शुक्र:

स्त्रियों से धन लाभ होता है, खेती और पशु से लाभ होता है, जल मे उत्पन्न वस्तओं से किंवा जलमार्ग से धन प्राप्ति होती है। इस प्राकर धन के लिए यह दशा उत्तम है किन्तु माता को रोग होता है।

चन्द्रमा में सूर्य:

ऐश्वर्य प्राप्ति हो अथवा राज सम्मान किसी श्रेष्ठ वस्तु से धन लाभ हो। व्याधिनाश हो और शत्रुओं का क्षय हो।

विशेष:

महादशा के प्रारम्भ में चन्द्रमा जिस भाव में बैठा होता है उस भाव का फल मिलता है। दशा मे मध्य में राशि जनित शुभाशुभ होता हे। और दशा के अन्त में दृष्टि फल होता है अर्थात् चन्द्रमा यदि शुभ ग्रह वीक्षित हो तो शुभ फल। पाप ग्रह वीक्षित हो तो पाप फल। दशा के अन्त में लग्न का फल भी होता है।

मंगल दशाफल: यदि जातक की जन्म कुण्डली में मंगल उच्च राशि, स्वराशि, केन्द्र त्रिकोण में हो, शुभ भाव का स्वामी हो, तो शुभ फल प्रदान करता है। भ्रातृ - पक्ष अच्छा रहता है, भूमि संम्बंन्धी कार्यो में

लाभ होता है। जमीन-जायदाद की प्राप्ति होती है। लम्बी यात्राएं होती हैं। मुकदमेबाजी में सफलता मिलती है। जातक को कृषि कार्यो में लाभ होता है। मान-सम्मान व प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है। मानसिक शान्ति रहती है। आमदनी में वृद्धि होती है।

यदि मंगल दुर्बल, नीच राशि, वक्री या अस्त हो, तो अशुभ फल प्रदान करता है। भाइयों से झगड़ा होता हैं परेशानीपूर्ण यात्राएं होती है। रक्त संम्बंधी बीमारियां होती है। अधिकारियों से मतभेद होते हैं। शत्रु उत्पन होते हैं। मुकदमेबाजी में असफलता मिलती है। मानसिक अशान्ति अनुभव होती है। जातक पित्त-प्रकोप, ज्वर, रक्तचाप से पीड़ित होता है तथा नाना प्रकार की चिंताओं से घिरा रहता है।

मंगल में मंगल: मंगल की महादशा में जक मंगल की अन्तदर्शा हो और शरीर में विशेष ऊष्णता हो तो भाईयों को पीड़ा, राजा से भय और समस्त कार्य का नाश हो तथा धन व्यय होता है।

मंगल में राहु:

राजा और चोर से भय, धन धान्य का नाश हो, दूषित कार्यो में सिद्धि हो, इसका आशय यह हुआ कि जघन्य और कुत्सित कार्यो में सिद्धि हो जैसे चोरी, दूसरे को मारना इत्यादि।

मंगल मे बृहस्पति:

ब्राह्मण से धन मिले, भूमि का लाभ हो और शरीर आनन्द से रहे, सब लोग उसका आदर करे और सर्वत्र विजयी हो।

मंगल में शनि:

यह अन्तदर्शा बहुत दुःखपूर्ण है, नाना प्राकर के कष्ट होते है। शत्रुओं और चोरों से भय होता है। धन का नाश होता है।

मंगल मे बुध:

वैष्यवर्ग या व्यापारी वर्ग से धन लाभ होता है, घर मकान की वृद्धि होती है, धन सम्पत्ति के लिए यह अन्तदर्शा अच्छी रहती है। किन्तु शत्रु के उपद्रव से मन में क्लेश रहता है।

मंगल में केतु:

काँख में रोग से सन्ताप हो, बन्धुओं और भाइयों को पीड़ा हो, कोई दुष्ट मनुष्य शत्रुता करे।

मंगल में शुक्र:

मनुष्य सुखी रहता है किन्तु स्त्री जन से वैर होता है, चाहे अपनी से अथवा दूसरी स्त्रियों से, नवीन स्त्री मिलती है ओर आभूषणों की प्राप्ति होती है। उत्तम वस्त्रों का लाभ होता है। बन्धु वर्ग से लाभ अर्थात् धनागम होता है।

मंगल में सूर्य:

आत्मवर्ग से मन में दुःख होता है, गुरूजनों से वैर होता है, पित्त की व्याधि पीड़ा होती है, लोगों से कलह होता है।

मंगल में चन्द्रमा:

नाना प्रकार से वित्त का सुख होता है, वस्त्र, मोती, मणि की प्राप्ति होती हें निद्रा आदि अधिक आती है, आलस्य बढ़ जाता है और मन में उद्वेग रहता है।

विशेष:

मंगल की प्रारम्भिक दशा मान में मान-हानि होती है। महादशा का जब मध्य होता है तब धन का नाश होता है तथा अन्त में राजा से भय हो, शत्रुओं से बाधा हो तथा अग्नि से भय हो।

राहु दशाफल:

राहु अपनी महादशा मे सुख का नाश करता है, धन नाश करता है। मनुष्य को पद से गिराता है। स्त्री, पुत्र का वियोग करता है, जिसके कारण दुःख होता है, यह कोई विशेष रोग करता है, मनुष्य को परदेश ले जाता है, राहु की दशा में लोगों से विवाद बढ़ता है।

राहु दशा में अंतर्दषा:

राहु में राहु:

यदि राहु की महादशा में राहु की अन्तदर्शा हो तो जातक की स्त्री बीमार हो, लोगों से विवाद हो, उसकी बुद्धि का नाश हो, धन अपव्यय करे, दूर देश की यात्रा हो तथा बहुत दुःख होता है।

राहु में बृहस्पति:

रोग और शत्रुओं का नाश हो, राजा की प्रीति जातक पर हो, धन का आगमन हो, पुत्र लाभ हो आरे मन में सदैव उत्साह रहता है।

राहु में शनि:

वात और पित्त के कारण शरीर में नाना प्रकार के रोग हो, बन्धुओं और मित्रों को पीड़ा हो, दूरदेश में निवास करना पड़ता है।

राहु में बुधः

दोस्तों से समागम होता है, मित्रो से संयोग होता है, अपनी पत्नी से मिलन होता है, धन का आगमन होता है, राजा की प्रीति प्राप्त होती है।

राहु में केतुः

घर में चोरी, मान-हानि, पुत्र-नाश और धन तथा पशुओं का क्षय होता है, नाना प्राकर के उपद्रव होते है, जिससे जातक व्याकुल रहता है।

राहु में शुक्रः

विदेश यात्रा और वाहन की प्राप्ति होती है, छत्र, चामर आदि की सम्पत्ति होती है किन्तु रोग और शत्रु का भय होता है।

राहु में सूर्यः

दान और धर्म में रति होती है, सबसे प्रेम रहता है, सभी उपद्रवों का नाश होता है, किन्तु संक्रामक रोग का संचार होता है।

राहु में चन्द्रः

राहु में जब चन्द्र की अन्तदर्शा होती है तो भोग और सम्पत्ति जातक को सदैव प्राप्त होते है, खेती की वृद्धि हो, मित्रों से अच्छे संवाद मिलें अर्थात् अलाप हो।

राहु में मंगलः

सब प्रकार के उपद्रव होते है, सब कार्यो में मूर्खता हो अर्थात् कोई कार्य सीधा नहीं होता और चित्त में भूल हो जाती है, ठीक से याद नही रहता है।

गुरू महादशा फलः

बृहस्पति की महादशा में उच्च पद की प्राप्ति, धन-वाहन एवं नवीन वस्त्र की प्राप्ति होती है। चित्त शुद्धि रहती है, स्त्री व पुत्र का सुख रहता है, जातक सदाचारवान होता है तथा ऐश्वर्य, धन एवं ज्ञान की वृद्धि होती है।

बृहस्पति में बृहस्पतिः सभी कार्य सफल होते हैं। विद्या व विज्ञान की प्राप्ति होती हे। घर में वैवाहिक धार्मिक, कार्य सुसम्पन्न होते हैं, विद्याध्ययन में श्रेष्ठ फल, पुस्तक लेखन एवं सार्वजनिक कार्यो से भी लाभ प्राप्त होता है।

बृहस्पति में शनिः कोर्ट-कचहरी, राजनीतिक चुनाव, कम्पीटीशन में सफलता प्राप्त होती है। पष्चिम दिशा की यात्रा भग्योदय देती है। शनि नीच, निर्बली होने पर ज्वर, मानसिक, गर्भाक्षय रोग होता है, पुत्र के कारण धन व्यय होता है, एवं द्वेष वृद्धि होती है।

बृहस्पति में बुधः व्यवसाय से लाभ प्राप्त होता है, नौकरी में उच्चपद, वाहन सुख, स्वास्थ्य सुख की प्राप्ति होती है, राजपत्रिक पद की प्राप्ति होती है। भौतिक सुख व ऐश्वर्य बढ़ता है।

बृहस्पति में केतुः

घर में धार्मिक एवं मांगलिक कार्य, वाहन एवं वस्त्राभूषण की प्राप्ति होती है। मनुष्य तीर्थ यात्रा करता है, गुरू और राजा से धन की प्राप्ति होती है। मनुष्य तीर्थ यात्रा करता है।

बृहस्पति में शुक्रः

जब बृहस्पति की महादशा में शुक्र की अन्तदर्शा होती है तब वाहन आदि धन की प्राप्ति होती है। छत्र, चामर का वैभव होता है, किन्तु जातक की पत्नी को पीड़ा होती है और जन विद्वेष होता है।

बृहस्पति में सूर्यः

शत्रुनाश, जय, सौख्य प्राप्त होता है, चित्त में सदैव अत्साह रहता है, धनागम होता है, राजा की कृपा होती है और शरीर नीरोग रहता है।

बृहस्पति में चन्द्रः

समाज के स्त्रियों द्वारा चित्त में उत्साह, ऐश्वर्यवान् कीर्ति होती है, हवन-यज्ञ, दान-पुण्य में खर्च होता है।

बृहस्पति में मंगलः

दूरदेश की यात्रा हो ज्वर ताप और मान भय होता है, धन का नाश होता है और मन में किसी कार्य के लिए उत्साह नहीं रहता।

बृहस्पति में राहुः

शत्रु प्रबल होत है, धन का नाश होता है, राजनीतिक सफलता प्राप्त करता है।

विषेषः यदि बृहस्पति उच्च राशि का हो किन्तु नवांश में नीच का हो तो बृहस्पति की दशा में शत्रुओं और चोरो का भय होता है, राजभय रहता है और अशुभ होता है, यदि बृहस्पति नीच राशि का हो किन्तु अपने उच्च नवांश में हो तो महाराजाओं की प्रसन्नता, विद्या, सुख, धन, यश, वैभव, वृद्धि का विस्तार होता है और देषाधिपत्य प्राप्त होता है।

शनि महादशा फल: जातक की जन्म-कुण्डली में यदि शनि उच्च राशि, स्वराशि, केन्द्र, त्रिकोण में हो, शुभ भाव का अधिपति हा, तो शुभ फल प्रदान करता है। आर्थिक लाभ होता है। जातक निम्न स्तर के कार्यो से धन संचश् करता है। जमीन-जायदाद में वृद्धि होती है, महान् पुरुषों से सम्बन्ध स्थापित होता है।

यदि शनि नीच राशि में अथवा अस्त व दुर्लब हो या 6,8,12 भाव में हो, तो अशुभ फल प्रदान करता है। जातक को अपयश व धन की हानि होती है। रोग व शत्रु उत्पन्न होते है। बड़ों की अप्रसन्न्ता, पद -हानि व झगड़े होते है। खर्च का योग अधिक रहता है। मानसिक अशान्ति अनुभव होती है। वायु विकार होता है। मुकदमेबाजी में पराजय होती है। निरंतर चिंताएं बनी रहती है। मान-प्रतिष्ठा में बाधाएं उत्पन्न् होती है और जातक को अपयश मिलती है।

शनि में शनि:

जब शनि की महादशा में शनि की अंतद्रषा हो तो बहुत दुःख और नाना-व्याधियों से क्लेषित होता है। चित्त में मात्सर्य होता है, अपमान से बहुत शोक और मनस्ताप होता है, चोर से धन और धन्य का नाश होता है।

मनुष्य सभी का विरोध करता है, मनुष्य को दूतकार्य करना पड़ता है, वृद्धा स्त्री की प्राप्ति होती है, पुत्र-पुत्री आदि को पीड़ा होती है, जातक ज्वर से पीड़ित रहता है, वात-कफजनित पीड़ा और शूल रोग होते है।

शनि में बुध:

जब शनि महादशा में बुध की अन्तदर्शा होती हे तो सुख, वित्त यश की वृद्धि होती है, मनुष्य सत्कर्म करता है, आचारवान् होता है, सम्पत्ति मिलती है, कृषि में उन्नति होती है और व्यापार करता है।

शनि में केतु: जब शनि में केतु का अन्तर हो तो वात और पित्त के रोग हो, नीच और दुर्जनों के साथ कलह हो, खराब सपने आये तथा इनसे भय होता है।

शनि में शुक्र:

बन्धु लोग स्नेह करे, जनप्रीति प्राप्त हो, विवाह हो या स्त्री से सुख मिले, धन का आगम हो, मन प्रसन्न रहे। नाना प्रकार के सुख उपलब्ध होता है।

शनि में सूर्य:

जब शनि की महादशा में सूर्य की अन्तदर्शा हो तो स्त्री और पुत्र का नाश हो, नृप और चोर से पीड़ा हो, सदैव भय लगा रहता है।

शनि में चन्द्र:

जब शनि में चन्द्रमा का अन्तर हो तो गुरू या स्त्री की मृत्यु हो, दुःख रहे, बन्धु-द्वेष करे, वायुजनित रोग हो, किन्तु धन का आगम होता है।

शनि में मंगल:

जब शनि में मंगल का अन्तर हो तो स्थान च्युति हो, महारोग की सम्भावना होती है। नाना प्रकार से मन में भय रहे, सहोदर और मित्रों की पीड़ा होती है।

शनि में राहु:

जब शनि की महादशा मे राहु की अन्तदर्शा हो तो सब अंगों में रोग हो, सन्ताप हो, राजा, चोर और शत्रु से पीड़ा हो और धन का क्षय होता है।

शनि में बृहस्पति:

जब शनि में बृहस्पति का अन्तर हो तो देव और ब्राह्मणों की भक्ति हो, राजा की प्रीति हो और महान् सुख मिले, स्थान का लाभ हो और अच्छा पद मिलता है।

विशेष: यदि शनि अपनी उच्च राशि में हो किन्तु नीच नवांश में हो तो दशा के आदि में सुख करता है। दशा के अंत में प्राणियों को कष्ट देता है। यदि शनि अपनी नीच राशि में किन्तु उच्च नवांश में हो तो दशा के अन्त में सुख-फल देता है और दशा के प्रारम्भ में शत्रु, चोर से भय, दुःख और परदेश की यात्रा कराता है।

बुध दशा फल:

बुध अपने दशाकाल में निम्नलिखित वस्तुओं से लाभ कराता है, गुरू, मित्र, बन्धु - इन सबसे धन प्राप्ति होती है, मनुष्य की कीर्ति बढ़ती है और सुखपूर्वक समय व्यतीत करता है। इस महादशा में मनुष्य दूत का कार्य करता है। (अगर अच्छी जन्मकुण्ड़ली हुई तो विदेश मन्त्रालय में राजदूत होता है, यदि साधारण कुण्ड़ली हुई तो दो मनुष्यों के बीच का कार्य करता है - यथा कमीषन ऐजेन्ट) इस दशा में सत्कर्म होते है, सोने के रोजगार से लाभ होता है, परन्तु वातरोग से पीड़ित होता है।

बुध में बुध:

ऐश्वर्य व वैभव की प्राप्ति होती है, सुन्दर घर प्राप्त होता है, धन की प्राप्ति होती है, सभी कार्य सफल होते है अर्थात् जो उद्योग करता है वे पूर्ण होते हैं। जैसी परीक्षा में सफल होता है।

बुध में केतु:

जब बुध की महादशा में केतु की अन्तदर्शा होती है तो बन्धु पीड़ा, मनस्ताप और सुख की हानि होती है। सभी कार्य जो करता है वह नाश हो जाते है अर्थात् कार्यो में असफलता मिलती है।

बुध में शुक्र: मनुष्य ब्राह्मणों को द्रव्य तथा अन्न पदार्थ देता है, गुरूओं को भेंट करता है, देवताओं को भेंट चढ़ाता है, हवन, धार्मिक कार्य, तपस्या करता है, जातक को सवयं वस्त्र और भूषण की प्राप्ति होती है, बुध में शुक्र की अन्तदर्शा का फल बहुत अच्छा है।

बुध में सूर्य:

वस्त्र, भूषण और धन प्राप्ति होती है। राजा की कृपा होती है, महान् सुख होता है। धार्मिक कथा, पुराण इत्यादि सुनने का मौका होता है।

बुध में चन्द्र:

जब सब लोग द्वेष करते है, रोग होते है, शत्रुओं से पीड़ा होती है, धन नाश होता है। सभी कार्यों में असफलता मिलती है, चौपाये से भय होता है, अर्थात् चोट लगने का भय होता है।

बुध में मंगल:

रोग और शत्रु से भय का नाश होता है अर्थात् रोग दूर हो जाते है और शत्रुओं से भय नहीं रहता, पुण्य कार्य का फल मिलता है, यश प्राप्त होता है, राजा की प्रीति होती है।

बुध में राहु:

मित्रों की प्राप्ति होती है, बन्धुओं से सुख मिलता है, धन मिलता है, मित्र और बन्धुओं से धन की प्राप्ति होती है। सुखा, विद्या और भूषण प्राप्त होते है, राजा की प्रीति होती है।

बुध में बृहस्पति:

मित्र लोगों से द्वेष होता है, गुरूजनों और बन्धुओं से वैमनस्य होता है, किन्तु धन लाभ कराता है और पुत्र पैदा होता है या पुत्रों से हर्ष एवं रोगादि से भय होता है।

बुध में शनि:

जब बुध की महादशा में शनि की अन्तदर्शा होती तब धर्म और सत्कर्म करता है। धन की प्राप्ति होती है। छोटे आदमी के नेताओं से सुख मिलता है। खेती-बाड़ी का नुकसान होता है।

विशेष: यदि बुध अपनी उच्च राशि में हो किन्तु नीच नवमांष में हो तो कर्म में विकलता करता है अर्थात् कार्य सफल नहीं होते तथा उसके कार्य अधूरे रह जाते है। यदि बुध नीच राशि का हो किन्तु अपने उच्च नवमांष का हो तो दशा के आरम्भ में सब काम विफल होते हैं और दशा के अन्त में सभी कार्यों में शुभ होता है। यदि बुध नीच राशि में हो, किन्तु अपने उच्च नवमांष में हो तो दशा के प्रारम्भ में सभी कार्य विफल हो जाते है, किन्तु दशा के अन्त में शुभ फल देता है।

केतु का महादशाफल

जब केतु की महादशा होती है तो मनुष्य की बुद्धि और विवेक नष्ट हो जाते है और वह दीन हो जाता है। नाना प्रकार के रोगों से पीड़ित होने से उसके शरीर में ताप बढ़ता है, पाप कर्म करता है, अतिकष्ट होता है, उसका चरित्र जघन्य होता है, सुख थोड़ी मात्रा में प्राप्त होता है।

केतु मे केतु: जब केतु की महादशा में केतु की अन्तदर्शा होती है तो स्त्री और पुत्र का मरण होता है। सुख और धन का नाश होता है, शत्रु का भय सदैव रहता है।

केतु में शुक्र: अपनी स्त्री और पुत्र को रोग होता है, जातक कलह करता है, बन्धुओं और मित्रों का नाश होता है, ज्वर और अतिसार रोग होते है।

केतु में सूर्य:

मनोभंग होता है अर्थात् रोग होते है, चित्त, बुद्धि में धैर्य नहीं रहता और मन उदास रहता है, शरीर में कष्ट होता है अर्थात् रोग होते है, विदेश गमन होता है, चित्त में भय होता है, जातक जो भी कार्य करता है उसमें विरोध होता है।

केतु में चन्द्र:

जब केतु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तदर्शा होती है तो स्त्री और पुत्र जनों में आलस्य होता है, धननाश होता है। धान्य नष्ट हो जाता है, मन में सन्ताप बढ़ता है।

केतु में मंगल:

पुत्र से, स्त्री से और छोटे भाई से वैर होता है। रोग, शत्रु और राजा से पीड़ा होती है, बन्धुनाश होता है। इस प्रकार केतु की महादशा में मंगल की अन्तदर्शा कष्टप्रद है।

केतु में राहु:

राजा और चोर से भय होता है, दुःख मिलते है। सब कार्यो का नाश होता है। दुष्ट मनुष्यों से पाला पड़ता है अर्थात् झगड़ा होता है।

केतु में बृहस्पति:

जब केतु महादशा में बृहस्पति की अन्तदर्शा होती है तो देवताओं, ब्राह्मणों और गुरूजनों में प्रीति बढ़ती है। राजा की कृपा होती है, शरीर नीरोग रहता है, भूमि की प्राप्ति होती है, पुत्र लाभ होता है।

केतु में शनि:

जब केतु की महादशा में शनि की अन्तदर्शा होती है तब मन दुःखी रहता है और सदैव भय बना रहता है, मनुष्य को अपना देश छोड़ना पड़ता है।

केतु मे बुध:

जब केतु की महादशा मे बुध की अन्तदर्शा होती है तब बन्धुओं और मित्रों से संयोग होता है, मनुष्य का विवाह हो, विवाहित हो तो स्त्री से सुख मिले, पुत्र लाभ हो या पुत्र से सुख हों विद्या की प्राप्ति हो। इस प्राकर केतु मे बुध अच्छा जाता है।

विषेषः यदि केतु शुभ हो तो बहुत सुख करता है। यदि शुभ ग्रह से दृष्ट हो बहुत धन का आगम करता है। यदि केतु पाप ग्रह के सहित हो तो अपनी महादशा में दुष्ट मनुष्यों से भय उत्पन्न करता है, धन नाश करता है और कृत्रिम रोगों से शरीर को पीड़ा होती है, इनसे व्यसन (बुरी आदतें) होता है।

केतु की दशा को तीन भागों में बांटा गया है - प्रारम्भ के तृतीयांश में गुरूजनों और बन्धुओं को पीड़ा करता है। मध्य में धन की प्राप्ति होती है। अन्त के तृतीयांश मे जातक को सुख मिलता है।

शुक्र दशा फल:

जब शुक्र की महादशा होती है तो स्त्री पुत्र की प्राप्ति होती है। यदि ये पहले से हो तो उनसे सुख मिलता है। अति सुख प्राप्त होता हे। सुगन्धित, माल्य, आभूषण, सुन्दर वस्त्र प्राप्त होते हैं। सवारी का सुख होता है। भाग्य बढ़ता है। उसके यश का विस्तार बढ़ता है और राजा के संदृष वैभव से रहता है।

शुक्र में शुक्र की महादशा में शुक्र की अन्तदर्शा होती है तो मनुष्य को शैया, स्त्री, धन, वस्त्र की प्राप्ति होती है, धनागम होता है, धर्म आदि सुख सम्पत्ति होती है, शत्रुओं का नाश होता है, यश और लाभ का विस्तार होता है।

शुक्र में सूर्य: जब शुक्र की महादशा में सूर्य की अन्तदर्शा होती है तो सिर में, पेट में और आंखो में रोग होता है। खेती-बाड़ी में नुकसान होता है, जातक पर राजा का कोप होता है।

शुक्र में चन्द्रमा:

जब शुक्र की महादशा में चन्द्रमा की अन्र्तदशा होती है तो सिर में गर्मी का रोग होता है, सन्ताप होता है, काम चेष्टा बढ़ जाती है, शत्रुओं से पीड़ा बढ़ जाती है और थोड़ा सुख प्राप्त होता है।

शुक्र में मंगल:

पित्त के कारण खूनखराबी होकर आंखों में रोग होता है, चित्त में उत्साह रहता है, धनागम होता है, स्त्री, भूमि का लाभ होता है।

शुक्र में राहु:

नीली वस्तु की प्राप्ति होती है, धनागम होता है, बन्धुओं से द्वेष बढ़ता है, मित्रों से भय रहता है, अग्नि बाधा होती है अर्थात् मकान आदि जल जाता है।

शुक्र में बृहस्पति:

धन, वस्त्र और भूषण प्राप्त होते है। मनुष्य का आचरण धार्मिक होता है। सुख प्राप्त होता है, किन्तु स्त्री और पुत्र को कष्ट होता है, लोगों से अनबन होती है।

शुक्र में शनि:

जब शुक्र की महादशा में शनि की अन्तदर्शा होती है तो जातक अपनी उम्र से अधिक अर्थात् बड़ी स्त्री से सम्भोग करता है, घर और खेतों में वृद्धि होती है, शत्रु नाश होता है।

शुक्र में बुध:

सुत, मित्र और सुख की प्राप्ति होती है, धनागम होता है, राजा की कृपा होती है, बहुत सुख मिलता है, शरीर निरोग रहता है और सभी काम शुभ होते है।

शुक्र मे केतु:

जब शुक्र की महादशा मे केतु की अन्तदर्शा होती है तो कलह और बन्धुनाश होता है, शत्रु से पीड़ा होती है, मन में भय रहता है तथा धननाश होता है।

विशेष: यदि शुक्र उच्च राशि में हो किन्तु नवमांष में नीच हो तो उसकी दशा में धननाश और पदच्युति होती है, यदि शुक्र नीच राशि में हो किन्तु अपने उच्च नवमांष में हो तो उसकी दशा में खेती-बाड़ी बढ़ती है। वाणिज्य का विस्तार होता है और धन लाभ होता है।

9.7. सूर्यादि नवग्रहों के प्रत्यन्तर्दशाफल

सूर्य प्रत्यन्तर दशा फलः

सूर्य में सूर्यः

सूर्य में सूर्य का प्रत्यन्तर होने पर घर में कलह, हानि, स्त्री पुत्र को कष्ट, असन्तोष, तर्क-वितर्क, विवाद, मानसिक रूप से असन्तुलन व धन की चोरी होती है। इतने पर भी केन्द्र, त्रिकोण व शुभ स्थान व राशि पर ध्यान अवष्य देना चाहिए।

सूर्य में चन्द्रः

भारी मानसिक तनाव, उद्वेग, सन्त्रास, कुण्ठा, मानसिक रोग, अर्थ-हानि, अस्थिरता, भटकावपूर्ण जीवन, अपव्यय, शत्रु-बहुलता, मित्र-हानि, पितृ-सुख में न्यूनता, संचित किए हुए धन का नाश होता है।

सूर्य में मंगलः

नौकरी, व्यापार, धनोपार्जन के उपायों की निरन्तर हानि, वाहन द्वारा चोट लगने की आषंका, घर में चोरी होना, शस्त्र से घात, दुर्घटना, वाहन-क्षति, शत्रु-घात, मित्रों से धोखा, कारागार योग, अनेकानेक रोगों का होना संभव है।

सूर्य में राहुः

वातरोग, कफ जनित रोग, माथे में पीड़ा, अस्त्र-शस्त्र से चोट लगना, निरन्तर धनहानि, अपयश, अपकीर्ति, मानसिक सन्त्रास, विषपान, अपव्यय या व्यय-वृद्धि, धर्म-कर्म हीन एवं बन्धु-वियोग का कष्ट सहना होता है।

सूर्य में गुरूः

दावे कोर्ट-कचहरी, मुकद्दमेबाजी, राजकाज, प्रषासनिक कार्य में विजय, शत्रु-बलनाश, आर्थिक प्रगति, नए-नए उपाय ढूंढना संभव, सुख-सौभाग्य में वृद्धि, व्यावसायिक लाभ, मित्र-सुख, वस्त्राभूषण लाभ, ग्रन्थ-रचना, पशु-लाभ, भौतिक समृद्धि होती है।

सूर्य में शनि:

आर्थिक रूप में दारूण कष्ट, धर्म-नाश, कुटुम्बहानि, साझे के व्यापार में हानि, दैहिक कष्ट, संकल्प-विकल्प तथा मानसिक कुण्ठा, मित्र हानि, पिता को आरिष्ट, धर्म से विमुखता रहती है।

सूर्य में बुध:

घर, परिवार, कुटुम्ब, मित्र, उच्चाधिकारियां से प्रेम, धार्मिक कृत्य सम्पन्न, बन्धुजन से लाभ, कानून व विधि-क्षेत्र में पूर्ण विजय, घर में आनन्द, पुत्र प्राप्ति, भाग्योदय, धार्मिक भाव में वृद्धिः तीर्थाटन, सामाजिक कार्यो में सुयश प्राप्त होगा।

सूर्य में केतु:

मृत्यु या मृत्यु के समान कष्ट, संचित पुण्यों का नाश, मित्रों से धोखा, व्यापार में हानि, नौकरी में अवनति, पतन व धर्म-विमुखता, तर्क-वितर्क द्वारा शत्रु-वृद्धि, मातुल कष्ट।

सूर्य में शुक्र:

सुख-दुःख में समानता, भोग-भ्रमण, मनोरंजन, कामुकता में वृद्धि, ऐश्वर्य-साधनों की वृद्धि, श्रृंगार प्रसाधनों पर विशेष खर्च, सम्पत्ति-वृद्धि, पशु-हानि, सन्तान को कष्ट, धार्मिक क्रिया-कलापों में अतिषय व्यय होता है।

चन्द्र अन्तदर्शा में प्रत्यन्तर्दशा:

चन्द्र में चद्र:

नये घर का निर्माण, भूमि-क्रय, कृषि कर्म से अतिलाभ, अकस्मात् लाभ, सम्पत्ति-सुख में वृद्धि, समाजिक मान-सम्मान की वृद्धि होती है। आदर, सुयश मिष्टान्न प्राप्ति व ऐश्वर्य लाभ होता है।

चन्द्र में मंगल:

बौद्धिक कार्यो में महत्त्व प्राप्त करता है तथा सामजिक यश, मान, प्रतिष्ठा बढ़ती है, भवन, भूमि व कृषिकर्म से लाभ होता है। बन्धु-बान्धव का सुख बढ़ जाता है, शत्रु परास्त होते है।

चन्द्र में राहुः

घर में धार्मिक व दैविक कृत्य सम्पन्न होते है, नौकरी मे उन्नति, पद वृद्धि होती है, अशुभ ग्रह के साथ होने पर दैहिक कष्ट अवष्य होता है।

चन्द्र मध्ये गुरू: वस्त्राभूषण लाभ, सामाजिक यश, मान-प्रतिष्ठा में वृद्धि। घर में धार्मिक कृत्य सम्पन्न होते है। मृत्यु-सुख, धन-सुख, तथा माता-पिता के सुख में वृद्धि, पराक्रम में वृद्धि, रत्नादिक लाभ होता है।

चन्द्र में शनि:

वात-पित-कफ रोग, जलने, शस्त्रघात करने से भय, मन में चिन्ता, मानसिकरोग, धर्म, धन, यश का नाश, सन्तान को कष्ट रहता है, संचित धन का नाश होता है।

चन्द्र में बुध:

घर में मांगलिक उत्सव होते है, पुत्रोत्सव भी मनाया जाता है, धार्मिक कार्य सुसम्पन्न होते है, पुत्र-सुख, वाहन लाभ, शिक्षा कार्य में लाभ, शत्रुओ पर विजय प्राप्त, यात्रा से लाभ, धनादि लाभ होता है।

चन्द्र मध्ये केतु:

उच्च वर्ग से विरोध, उच्चाधिकारियों से द्वेष, ईर्ष्या, सन्तान को कष्ट, दैहिक कष्ट रहता है, सुख-सुविधाओं में न्यूनता आती है, बन्धु-विरोध व कष्ट होता है।

चन्द्र में शुक्र:

परमसुख, भोग-बुद्धि, भौतिक सुख-सुविधाओं में वृद्धि, वाहन प्राप्ति, व्यवसाय में विशेष लाभ, भूमि-लाभ, कन्या प्राप्ति, वस्त्राभूषण लाभ, मानव-प्रेम में वृद्धि, व देव-कृपा से लाभ होता है।

चन्द्र में सूर्य:

अन्न, वस्त्र, आभूषण, धन का लाभ, परमसुख मे वृद्धि, सदैव सर्वत्र विजय, शत्रुओं का नाश, नौकरी में शुभ समय रहता है।

मंगल अन्तर में प्रत्यन्तर्दषा:

मंगल में मंगल:

शत्रु अशुभ फल प्रदान करते है, शत्रु सदैव अहित करने का प्रयास काते है, धन, सम्पत्ति का नाश, पुत्र को कष्ट, कृषि कर्म मे हानि, चर्मरोग, रक्त विकार, एवं घर मे कलह रहता है, शत्रु और रोग पीड़ा पहुँचाते है।

मंगल में राहु:

जातक निरन्तर रोज-रोज नयी-नयी समस्याओं में उलझता चला जाता है, धन-सम्पत्ति का नाश करता है, उदर रोग, शस्त्रघात, शत्रु से पीड़ा पहुंचती है, संचित पुण्यों का क्षय होता है, घर में निरन्तर कलह रहती है, नौकरी में बाधायें उत्पन्न होती है।

मंगल में गुरू:

मति भ्रष्ट हो जाती है, सामाजिक अहित एवं दुःख व सन्ताप बढ़ जाते है, घर मे कलह एवं सभी इच्छायें मर जाती है, इच्छित कार्य में बाधायें आती है, सन्तान को कष्ट पहुँचता है।

मंगल मध्ये शनि:

उच्चधिकारियों से अनबन, बुद्धि-बल का नाश, स्थान हानि व धन का नाश होता है, शत्रु प्रबल हो जाते है, कार्य के प्रति सदैव विफलता तथा निराशा, कलह व कष्ट का भव बना रहता है।

मंगल में बुध:

धन, धर्म, बुद्धि सुख, सुविधाओं का नाश एंव संचित धन नष्ट हो जाता है, ज्वर, पीड़ा, शत्रु-भय एवं राज्य-भय बना रहता है, मित्र, बन्धु, साझेदार धोखा देते है, मित्र साथ छोड़ देते है, अनेक रोग पीड़ा पहुचाते रहते है।

मंगल मध्ये केतु: पराजय, दुःख, शत्रु-प्रबलता, आलस्य, संत्रास, नाना प्रकार के रोग, अकाल मृत्यु, जल में डूबने, विषपान, जलन, शस्त्र घात के साथ-साथ नौकरी में अवनति की भी सम्भावना बढ़ती है।

मंगल में सूर्य:

कृषि कर्म द्वारा विशेष लाभ, भूमि क्रय-विक्रय से लाभ, सम्पत्ति, धन, पशु-धन, ऐश्वर्य, भोग में वृद्धि, पैतृक सम्पत्ति प्राप्त होती है। आत्म-तुष्टि, धैर्य-तुष्टि जैसे गुण विकसित होते है।

मंगल में चन्द्र:

कर्क वृत्त स्थान पर, समुद्र पार व्यापार, मणिमाणिक्य लाभ, व्यापार वृद्धि, दूध, रूई, चाँदी, अन्यान्य सफेद वस्तु का व्यापार विशेष लाभ प्रदान करता है। अपने कार्य मं शतप्रतिषत सफलता प्राप्त होती है तथा इष्ट सिद्धि व देव-कृपा से भग्योदय होता है।

राहु अन्तदर्शा में प्रत्यन्तर्दषा:

राहु में राहु:

कारागार, बन्धन, परस्पर सम्बन्धों में कटुता, द्वेष भाव, ईर्ष्या विकसित होती है। वाहन से दुर्घटना, शस्त्रघात, चोट आदि का लगना सम्भव है, अनेक जाने-अनजाने रोग पीड़ित करते है।

राहु में गुरूः

सम्मान, यश, प्रतिष्ठा मे वृद्धि, पुस्तक-लेखन, प्रकाषन द्वारा लाभ, व्यावसायिक लाभ, वाहन प्राप्ति, सुख और सौभाग्य में वृद्धि, पुत्र-प्राप्ति, प्रबल भाग्योदय होता है।

राहु में शनिः

अपयश, पतन, कुटुम्ब से कलह, मानहानि, कोर्ट-कचहरी, मुकद्दमेबाजी में पराजय व कारागा ार, सर्व सुख सम्पत्ति ऐश्वर्य, शान्ति का नाश होता है। शत्रु के अभाव मे रोग पीड़ा पहुँचाते है, गठिया, वात, कफजनित रोग होते है।

राहु में बुधः

व्यापार के माध्यम से विशेष लाभ, नये व्यापार का श्रीगणेष होता है, ऐश्वर्य वृद्धि, कार्य में स्थिरता एवं देव-कृपा रहती है।

राहु में केतुः

जातक धर्म बुद्धि बल का नाश हो जाता है, शत्रु प्राबल्य बढ़ जाता है, स्त्री व सन्तान को कष्ट, शुभ कार्यों में बाधायें उपस्थित होती है। संचित धन-धान्य का नाश हो जाता है, मानसिक तनाव बढ़ जाता है, कलह व पीड़ा निरन्तर रहती है।

राहु में शुक्रः

पाप कर्म के प्रति प्रवृत्ति बढ़ती है, धर्म-क्षय एवं पिषाच-बाधा, रोग-शोक-पीड़ा, नौकरी जाने का भय रहता है। वाहन नष्ट अथवा वाहन से चोट लगती है, स्त्री व सन्तान को कष्ट, भोजन तथा मानसिक असन्तुलन रहता है।

राहु में सूर्यः

रोग व शोक पीड़ित, जातक का धन व्यर्थ कामों में खर्च होता है, ज्वर, हड्डी में रोग, नेत्र-रोग, कुष्ठ जैसे रोग बढ़ते है, शत्रु भी जबर्दस्त पीड़ा पहुँचाते है। पिता को अरिष्ट, सन्तान सुख में बाधा व अपमृत्यु भय रहता है।

राहु में चन्द्रः

मन-मस्तिष्क के प्रमाद रोग बढ़ जाते है, घर में स्थायी रोग रहता है। गृह-कलह के कारण जातक विक्षुब्ध हो जाता है, अधैर्य, अषान्ति, असंतोष, उद्वेग, चिन्ता, मान-अपमान आदि से जातक टूट-सा जाता है, संचित धन नष्ट होता है, माता-पिता को अरिष्ट फल प्राप्त होते है।

राहु में मंगलः

उदर रोग, जलोदर, रक्त विकार दोष पैदा होते है, संचित धन-सम्मान नष्ट हो जाता है, भूमि कार्य व साझेदारी में हानि होती है।

गुरू अन्तदर्शा में प्रत्यन्तर्दशा

गुरू में गुरूः

वस्त्राभूषण लाभ, धन-धन्य की वृद्धि, ऐश्वर्य सर्व सुख, व्यापार में वृद्धि, गृहस्थ पक्ष में सुन्दर पत्नी-पुत्र का लाभ, जातक को मित्री का सहयोग प्राप्त होता है।

गुरू में शनिः

जातक कृषि योग्य भूमि, क्रय कर कृषि कर्म से लाभ प्राप्त करता है, अनेक उपयों से धनोपार्जन करता है, सुख वृद्धि, भवन-निर्माण, वाहन प्राप्ति सम्भव होती है। अन्न-धन की वृद्धि, मित्रों से सहयोग एवं शत्रुओं का संहार करता है।

गुरू मध्ये बुध बौद्धिक कार्यो में पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। शिक्षा में रूचि, वस्त्राभूषण लाभ, रत्नादिक लाभ होता हें व्यापार विशेष में खूब सफलता प्राप्त होती है। मित्रों से यथेष्ट लाभ होता है तथा कदम-कदम पर शत्रु मुह की खाते है, भौतिक सुख-सुविधायें बढ़ती है।

गुरू में केतुः

शस्त्रघात, शिक्षा में विफलता, वाहन द्वारा चोट भी लगती है, मानसिक सन्ताप, जलने, चोरी होने की आषंका बराबर बनी रहती है, व्यय अध्ािक होता है।

गुरू में शुक्रः

बौद्धिक कार्यो एवं शैक्षणिक कार्यो में पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। शत्रु सदैव मुंह की खाते हैं। लक्ष्मी एवं अन्नपूर्णा की पूर्ण कृपा बनी रहती है। अन्न, धन, स्वर्ण सम्पदा, मणि-माणिक्य, वस्त्राभूषण व वाहन का लाभ होता है, घर में मांगलिक कार्य एवं आत्मतुष्टि का भाव बढ़ता है।

गुरू में सूर्यः

उन्नति एवं प्रगति में मित्रगण भरपूर सहयोग प्रदान करते है, मातृ-पितृ सुख में वृद्धि, पैतृक सम्पदा एवं धन में वृद्धि, सामाजिक कार्यों द्वारा अन्न, यश, सुख, ऐश्वर्य प्राप्त होता है, नौकरी में उन्नति होती है।

गुरू में चन्द्रः

रोगी व्यक्ति रोगमुक्त हो जाता है ऋणी व्यक्ति ऋण से मुक्त हो जाता है, धन का आगमन विशेष रूप से होता है। वाहन प्राप्ति का सुयोग समय पर घटित होता है, नौकरी-व्यापार सम्बन्धों में अन्य क्रिया-कलापों में पूर्ण सफलता प्राप्त होती है।

गुरू में मंगलः

शस्त्रास्त्र द्वारा चोट लगने, जहरीले जन्तु के काटने, विषपान, जलने आदि का भय रहता है, गुप्तरोग, मूत्र रोग, चर्म रोगादि होते है, उदरव्याधि, अपच जैसे रोग परेषान करते है, मित्र शत्रुवत् व्यवहार करते है।

गुरू में राहुः

समाज के दीन-हीन वर्ग, अकुलीन, भ्रष्ट एवं दुष्ट प्रकृति के लोगों से सम्पर्क बनते है, उन्हीं के द्वारा दैहिक, भौतिक एवं मानसिक कष्ट पहुंचता है।

शनि अन्तदर्शा में प्रत्यन्तर्दषाः

शनि में शनिः

इस प्रत्यन्तर में दैहिक कष्ट चरमावस्था पर होता है, घर में फूट, परस्पर अनबन, कलहपूर्ण वातावरण बना रहता है, निम्न स्तरीय कार्य सम्पन्न कर जातक अपमानित होता रहता है।

शनि में बुधः

बौद्धिक कार्यो व क्रिया-कलापो में जातक पूर्णतः असफल रहता है, मित्र भी शत्रुवत् व्यवहार करने लगते है। घर का सारा वातावरण अषान्त एवं घर में कलह बढ़ता है। उदर पोषण की चिन्ता, संचित धन-सम्पत्ति का नाश, चिन्ता, घरेलू, परेषानियां बढ़ जाती है।

शनि में केतुः

शत्रु-पक्ष की प्रबलता खूब बड़ी-चढ़ी रहती है, जातक का कदम-कदम पर प्रबलता के साथ विरोध होता है, बन्धन एवं मानसिक परेषानियां बढ़ जाती हैं, जातक शक्तिहीन, सौन्दर्य विमुख, दुष्ट भाव बढ़ता है, व्यक्तिगत कुण्ठित हो जाता है।

शनि में शुक्रः

जातक अपने द्वारा सोचे-विचारे समस्त कार्यो में सफलता प्राप्त करता है, अष्टसिद्धि, नवनिधि, लक्ष्मी की विशेष कृपा बनी रहती है। मनोरथ सिद्धि एवं घर में धार्मिक उत्सव मनाये जाते है। मनुष्योचित कार्यो द्वारा जातक को लाभ होता है, आय के नये-नये साधन उपलब्ध होते है।

शनि में सूर्य:

नौकरी में उन्नति, प्रलोभन, अधिकारिक पद की प्राप्ति होती है, परन्तु गृह-कलह, बन्धु-पीड़ा, शत्रु-भय का सामना करना पड़ता है, रोग पिण्ड़ नहीं छोड़ता, शान्ति का सर्वथा अभाव रहता है।

शनि में चंद्र:

बौद्धिक कार्यों द्वारा विशेष लाभ एवं भग्योदयः बडे-बड़े कार्यों का सम्पादन, व्यक्तित्व का विकास, धन-धन्य एवं ऐश्वर्य की वृद्धि होती हैं स्त्री पुत्र-मित्र से लाभ, खर्च की प्रबलता रहती है।

शनि में मगल:

जातक के व्यक्तित्व का विकास रूक जाता है, मित्र शत्रुवत् व्यवहार करते है, स्त्री एवं पिता को कष्ट होता है, सन्तान कुमार्गी होती है, विषपान, विद्युत, अग्नि, शस्त्र द्वारा घात सम्भव है। शत्रु-पक्ष की प्रबलता एवं वात-कफ-पित्त रोग होते है।

शनि में राहु:

धन-धान्य, भोग, सुख, ऐश्वर्य, पराक्रम की वृद्धि होती है, भूमि कृषि, ठेकेदारी द्वारा लाभ, पर बार-बार परिवर्तन के कारण उक्त समस्त शुभ से वंचित रह जाता है, अस्थिरता, विदेश गमन व रोग से भय रहता है।

शनि में गुरू:

गृह-कलह के कारण जातक सदैव चिन्तित रहता है, अशुभ प्रकृति, दुष्टा व खर्चीली होती है, अहित का मूल कारण भी स्त्री होती है, मानसिक तनाव बना ही रहता है।

बुधान्तर्दषा में प्रत्यन्र्दशा:

बुध में बुध:

बुद्धि व चातुर्य में वृद्धि एवं बौद्धिक कार्यों में विजय प्राप्त होती है, धन-धन्य-ऐश्वर्य-व्यापार, मान-सम्मान में वृद्धि होती है। वस्त्राभूषण लाभ तथा वाहन की सुविधा उपलब्ध होती है।

बुध में केतु:

नाना प्रकार के रोग, अभक्ष्य पदार्थो का भक्षण, शत्रु पीड़ा, उदर रोग, गले के रोग, अग्नि-भय, नेत्र-रोग, चर्म रोग एवं रक्त विकार रहता है, आय का यथेष्ट भाग रोग निवृत्ति पर खर्च होता है।

बुध में शुक्रः

किसी उद्देश्य विशेष को लेकर यात्रा की जाती है तथा इस यात्रा में खूब लाभ होता है भाग्योदय होता है भौतिक सुख-सुविधाओं में वृद्धि, नौकरी में खूब लाभ होता है। भाग्योदय होता है। भौतिक सुख-सुविधाओं में वष्द्धि, नौकरी में अधिकारिक पद की प्राप्ति, व्यापार में यथेष्ट लाभ एवं पशु लाभ होता है।

बुध में सूर्यः

ऐश्वर्य भोग, सुख, स्वास्थ्य, सम्पदा की वृद्धि, परन्तु यह सब अस्थायी ही होता है, अनेक रोगो से जातक सदा पीड़ित रहता है।

बुध में चन्द्रः

स्त्री-सन्तान व स्वास्थ्य का विशेष लाभ होता है तथा भोग सुख में वृद्धि होती है, शत्रु परास्त होते है, विशेष-विशेष कार्यों से धन की प्राप्ति होती है, सर्वत्र सम्पदा व घर में कन्या का भी जन्म होता है, भाग्य-वृद्धि के लिए किये गए प्रयास पूर्ण सफल होते है।

बुध में मंगलः

इस समय जातक निरन्तर धार्मिक क्रिया-कलापों में लिप्त रहता है। पुण्यकार्यों में खर्च, धार्मिक श्रद्धा में बढ़ोत्तरी, धन-सम्पदा की वृद्धि पर यकायक धन नष्ट हो जाता है, चोरी हो जाना सम्भव है, अग्निदाह या शस्त्रघात यात्राएं अनुकूल रहती है।

बुध में राहुः

घर में कलह, बन्धु-कुटुम्बी जनों से पीड़ा, पत्नी रोग ग्रस्त रहती है, सन्तान कुमार्गी होती है, नौकरी में भय एवं व्यापार में हानि तथा व्यर्थ की दौड़-धूप बनी रहती है।

बुध में गुरूः

नौकरी में उन्नति, पद-वृद्धि, अधिकार पूर्ण पद की प्राप्ति, धन वृद्धि, भाग्योदय, सुख-वृद्धि, विद्या, व्यापार में शुभ एवं लाभ, स्त्री सन्तान व कुटुम्ब से अनुकूलता रहती है।

बुध में शनिः

अनेक प्रकार के रोग, मानसिक चिन्ता, उद्वेग वात व पित्त प्रकोप, शरीर में चोट, वाहन-हानि, धन का नाश, मान-प्रतिष्ठा पर चोट लगती है। संचित धन नष्ट होता है।

केतु अन्दर्दषा मं प्रत्यन्तर्दषाः

केतु में केतु:

यकायक रोग जातक को घेर लेते है, कई एक अनजानी विपत्तियां परेषान करती है, जातक विदेश-यात्रा अवष्य करता है, शत्रु पक्ष प्रकल होता है, जन-धन की हानि, स्वास्थ्य का नाश और कई अशुभ कार्य कर सम्मान खो बैठता है। केतु मध्ये शुक्रः संगृहीत धन उलटे-सीधे कार्यों में नष्ट हो जाता है, नेत्र-रोग, मानसिक रोग, पशुभय, व्यापार में हानि होती है। शत्रु-पक्ष प्रबल रहता है।

केतु मध्ये सूर्य: जातक घर के सदस्यों, कुटुम्बीजनों, मित्रों द्वारा अपमानित होता है, इधर-उचार का विरोध सहना पड़ता है। यकायक रोग व मृत्यु सम्भव है। मुकद्दमें में हार, शिक्षा में गिरावट, व्यर्थ तक-विर्तक एवं कुसंगति में धन, एवं स्वास्थ्य का नाश होता है।

केतु में चन्द्र:

अन्न, धन, स्वास्थ्य, लक्ष्मी, सम्मान, विजय से विमुख वह जातक रहता है। रोग पीड़ित शरीर जर्जर हो जाता है। बुद्धि भ्रष्ट तथा अराजक तत्त्वों से सम्पर्क रहता है।

केतु में मंगल:

जल, आग, एवं शस्त्रादि से घात होती है, विद्युत करण्ट, शत्रु-पीड़ा, धर्म-क्षय, नास्तिकता तथा भटकावपूर्ण जीवन जीती है आर्थिक दृष्टि से किये गए कार्य निष्फल जाते है, नौकरी विवादास्पद रूप ग्रहण करती है।

केतु में राहु:

स्त्री, पुत्र, पिता व भाई को कष्ट होता है। जातक स्वयं गृह कलह का कारण बनता है, जातक निम्नवर्ग से कष्ट पाता है, शिक्षा-कार्य व धनोपार्जन मे रूकावट आती है।

केतु में गुरू:

वस्त्राभूषण लाभ, स्वास्थ्य लाभ, व्यापार में शुभ, पर यकायक इन सबका नाश हो जाता है, घर में अनबन, उपद्रव, कलह एवं असन्तोष भरा वातावरण रहता है, सामाजिकता का निर्वाह नहीं हो पाता।

केतु में शनि:

पुत्र-हानि, मित्र शत्रुवत् व्यवहार करने लगते हैं। पशु, कृषि एवं भूमि, भवन व सम्पत्ति का नाश होता है। स्वास्थ्य भी कमजोर रहता है, भाई-बन्धु सभी छोड़ देते है।

केतु में बुध:

बल-बुद्धि, धन, मान, शिक्षा, साथियों का एवं स्वास्थ्य का नाश होता है, मानसिक तनाव, पराजय, मतिभ्रम, भय, अपयश, निराशा, निष्फलता का वातावरण प्रबल होता है।

शुक्र अन्तदर्शा में प्रत्यन्तर्दषा:

शुक्र मध्ये शुक्र भोग सुख में वृद्धि, स्त्री, वाहन, पशु, ऐश्वर्य एवं व्यवसाय की प्राप्ति होती है, भोग, सुख बढ़ता है, कामेच्छा प्रबल एवं भ्रमण के प्रति रूचि जागृत होती है। सौंदर्य-वृद्धि होती है।

शुक्र में सूर्य:

अनेक रोग, मानसिक पीड़ा, चिन्तातुरता, दैहिक क्षति, शीत ज्वर, मति भ्रम, नौकरी व व्यापर में हानि व असफलता, संगृहीत धन का नाश होता है।

शुक्र में चन्द्र:

घर में बार-बार मांगलिक उत्सव होते है, व्यापार द्वारा लाभ, कन्या का जन्म, शुभ व भाग्योदय कारक यात्रा होती है, अधिकार प्राप्ति, स्त्री व भोग के प्रति आस्था विशेष प्रकट होती है।

शुक्र में मंगल:

रक्त-दोष, चर्म-रोग, शस्त्र-घात, अग्नि-पीड़ा, कार्य-हानि, गृह-कलह, अनक उपद्रव, सन्तान कुमार्गी होती है। व्यापार में स्वल्प लाभ, भूमि क्रय होती है।

शुक्र में राहु:

गृह-कलह, व्यर्थ चिन्ता, ननिहाल से कष्ट, स्त्री व पुत्र को कष्ट, नौकरी मे हानि, स्थानान्तरण तथा पतन, शत्रु-पक्ष की प्रबलता रहती है।

शुक्र में गुरू:

वाहन-प्राप्ति , व्यापार-वृद्धि, सन्तान-पक्ष से शुभ समाचारो की प्राप्ति, धन प्राप्ति, धन प्राप्ति, उन्नति, वस्त्राभूषण लाभ, उत्तम स्वास्थ्य, यात्रा शुभ होती है।

शुक्र में शनि:

पशु धन का नाश, म्लेच्छ वर्ग से, मैली क्रिया से, तान्त्रिक क्रियाओं से, देव कृपा से, भाग्यवषात् लाभ प्राप्त होता है, देह रोग ग्रस्त यात्रा अशुभ पर धार्मिक रूझान बढ़ता है।

शुक्र में बुधः

धन-धान्य, लक्ष्मी, पशु, व्यापार, सुख, सम्पदा, ऐश्वर्य लाभ, राज्याधिकार बढ़ते है, शत्रु परास्त होते है, शिक्षा कार्य मे पूर्ण सफलता, यकायक धन प्राप्ति होती है।

शुक्र में केतुः

यकायक मृत्यु, अनेक रोगों की उत्पत्ति, सन्तान बाधा, धर्म क्षति, भाग्यपतन, विदेश गमन, लाभ की अपेक्षा हानि ही होती है।

9.8. सारांश

इस इकाई में अपने विभिन्न ग्रहों की दशाओं का अध्ययन एवं उनका मानव जीवन पर पड़नें वाले प्रभावों का अध्ययन भी किया। इसके अर्न्तगत किसी ग्रह की महादशा में शेष अन्य ग्रहों की अर्न्तदशाएँ तथा इन अर्न्तदशाओं में भी प्रत्यन्तर्दशा का भी ज्ञान आपने प्राप्त किया। इस हेतु हमने इस इकाई के अर्न्तगत विंशोत्तरी महादशा एवं अष्टोत्तरी महादशा का विशद् अध्ययन भी किया, जिसमें जातक की आयु की विंशोत्तरी महादशा में 120 वर्ष एवं अष्टोत्तरी महादशा में 108 वर्ष में बाँटकर विभिन्न ग्रहों के विभिन्न दशा वर्षो के भोगकाल में उनके प्रभावों का जातक पर होने वाले परिणाम का भी अध्ययन किया गया। विंशोत्तरी दशा में ध्यान रखने वाली बात ग्रहों का क्रम है इसमें ग्रह क्रमशः सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, राहू, गुरू, शनि, बुध, केतु, शुक्र के क्रम में आते है। इसी प्रकार अष्टोत्तरी महादशा में केवल आठ ग्रह लिये जाते है इनका क्रम क्रमशः सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शनि, गुरू,राहू एवं शुक्र होता है। इस प्रकार हम इस इकाई में चक्रों से ग्रहों एवं राशियों के अंशों एवं दशाओं में उनका प्रभाव समय ज्ञात करने में सक्षम होंगे।

9.9. शब्दावली

1. दशा	=	ग्रहों का मनुष्य पर पड़ने वाला प्रभाव।
2. प्रान्तविशेष	=	प्रान्त में प्रचलित।
3. त्रिकोण भाव	=	प्रथम, पंचम एवं नवमभाव।
4. महादशानाथ	=	दशा का स्वामी ग्रह
5. नीच नवमांश	=	ग्रह की नवमांश कुण्ड़ली में नीच राशि में स्थिति

9.10. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: दशा क्या है एवं ज्योतिष में इसका क्या महत्त्व है ?

उत्तर: दशा का अर्थ है - ग्रहों का मनुष्य पर पड़ने वाला प्रभाव। जीवनकाल में मनुष्य की शुभाशुभ घटनाओं के संकेत दशाओं से ही प्राप्त होते है।

प्रश्न - 2: किन्हीं चार दशाओं के नाम बताइए।

उत्तर: विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी, योगिनी एवं कालचक्रदशा।

प्रश्न - 3: योगिनी दशा के प्रकार बताइए।

उत्तर: योगिनी दशा आठ प्रकार की होती है। यथा - मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, आद्रिका, उल्का, सिद्धा व संकटा।

प्रश्न - 4: रिक्त स्थान पूरा करिये ?

विंशोत्तरी दशा .... वर्ष की मानी गयी है।

उत्तर: विंशोत्तरी दशा 120 वर्ष की मानी गयी है।

प्रश्न - 5: विंशोत्तरी दशा के अन्तर्गत ग्रहों का दशाकाल बताईये ?

उत्तर: दशाओं की अवधि निम्न है:- सूर्य - 6 वर्ष, चन्द्र - 10 वर्ष, मंगल - 7 वर्ष, राहु - 18 वर्ष, गुरु - 16 वर्ष, शनि - 19 वर्ष, बुध - 17 वर्ष, केतु - 7 वर्ष तथा शुक्र - 20 वर्ष।

प्रश्न - 6: योगिनी दशा का कितने वर्षो की होती है ?

उत्तर: योगिनी दशा 36 वर्षों की बतायी गयी है।

प्रश्न - 7: स्वरशास्त्र के अनुसार विंशोत्तरी व अष्टोत्तरी में क्या भेद बताया गये है ?

उत्तर: स्वरशास्त्र के अनुसार शुक्लपक्ष के जन्म में अष्टोत्तरी द्वारा तथा कृष्णपक्ष के जन्म में विंशोत्तरी दशा द्वारा शुभाशुभ फल बताया गया है।

प्रश्न - 8: दशाओं के फलादेश में ग्रहों की क्या उपयोगिता है ?

उत्तर: ग्रहों की प्रकृति, गुण, स्वभाव व बल आदि द्वारा ही दशाओं का फलादेश आधारसंगत है।

प्रश्न - 9: सूर्य की दशा में फल बताइए।

उत्तर: सूर्य की दशा में जातक पर्यटनशील, नौकरी में उन्नति प्राप्त होती है तथा सामाजिक दृष्टि से जातक यश, मान व प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

प्रश्न - 10: चन्द्रमा में महादशा में क्रमानुसार किन ग्रहों की अन्तर्दशा आयेगी ?

उत्तर: चन्द्रमा की महादशा में क्रमशः चन्द्र, मंगल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु, शुक्र तथा सूर्य की अन्तर्दशा आयेगी।

9.11. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1: ज्योतिष शास्त्र के अनुसार विंशोत्तरी दशा का महत्त्व बताइए?

प्रश्न - 2: दशाओं के शुभाशुभ फलकथन के सिद्धान्त बताइए?

प्रश्न - 3: चन्द्रग्रह की महादशा का वर्णन करते हुए उसमें अन्य ग्रहों की अन्तर्दशा का फल बताइए?

प्रश्न - 4: योगिनी दशा के प्रकार, दशास्वामी एवं दशा अवधि को तालिकाबद्ध करके समझाईये ?

प्रश्न - 5: प्रत्यन्तर्दशा क्या है ? सूर्य के अन्तर्गत अन्य ग्रहों की प्रत्यर्न्दशा का फल बताइए?

9.12. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सारावली

   सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहत्पाराशर होराशास्त्र

   सम्पादक: श्री सुरेश चन्द्र मिश्र

   प्रकाशक: रंजन पब्लिकेशन, दिल्ली।

3. फलदीपिका

   सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

4. भारतीय ज्योतिष

   व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

   प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई 10

मारक ग्रह निर्णय

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 मारक भावों का निर्णय
10.3.1 मारक ग्रह
10.3.2 शुक्र और बृहस्पति
10.3.3 मारक के रूप में शनि की भूमिका
10.3.4 केन्द्रेश व त्रिकोणेश
10.4 योग कारक व मारक
10.4.1 राहु केतु की दशा के नियम
10.5 सारांश
10.6 शब्दावली
10.7 अभ्यास प्रश्न
10.8 निबंधात्मक प्रश्न
10.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.1 प्रस्ता्वना

मारकेश दशा निर्णय से संबंधित यह 10वीं इकाई है। इसके पूर्व की इकाई में आपने महादशाओं, दशाओं के शुभाशुभ फल, अन्तर एवं प्रत्यन्तर दशाओं के संबंध में 9वीं इकाई का अध्ययन किया है। प्रस्तुत इकाई में मारकेश दशाओं का बर्गन आपके अध्ययनार्थ किया गया है।
जनमांक चक्र में लग्न से आठवां भाव आयु का माना जाता है। आयुक्षीणता एवं मृत्यु को मारकेश के अन्तर्गत ही रखा गया है। अष्टभाव मुख्य आयु स्थान है तथा तृतीय भाव गौण आयु स्थान है। किसी भी स्थान से उसका द्वादश भाव हानि या व्यय का है। अत: अष्टम भाव व्यय स्थान सप्तम भाव हुआ। सप्तमेश की दशा भी मारक दशा होती है। सप्तम भाव मुख्य मारक भाव कहलाता है। शुक्र और बृहस्पति के मारक भाव को जानने के लिए केन्द्राधिपति दोष देखना चाहिए।
अत: इस इकाई के अध्ययन के बाद आप कुण्डली की विभिन्न मारक दशाओं को बताते हुए सभी मारकों के यथाफल को चिन्हित कर सकेंगे।

10.2 उद्देश्य

मारकेश दशा निर्णय के वर्णन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1 भाव से भाव ज्ञात करना बतायेंगे
2 मारक भावों का निर्धारण करेंगे
3 विशिष्ट मारक स्थानों का निर्णय करेंगे
4 मारकेश दशाओं का निर्णय बता सकेंगे
5 मारक ग्रहों को स्पष्ट कर सकेंगे
6 शुक्र और बृहस्पति की मारकता को निर्धारित कर सकेंगे
7 समस्त मारकेश दशाओं का फलाफल बतायेंगे

10.3 मारक भावों का निर्णय

भावात् भावम के नियमानुसार मारक भावों का निर्णय -

मारक भावों का निर्णय करने से पहले हम भावात् भावम के नियम को समझने का प्रयास करते हैं। भावात् भावम का तात्पर्य है- भाव से भाव तक। इस नियम के अनुसार आप जिस भाव से जो कारकत्व देख रहें हैं उस भाव से उतनी ही दूर जो भाव है उससे भी वही कारकत्व देखें। उदाहरण के लिए हम सप्तम भाव से विवाह देखते हैं, सप्तम भाव से सप्तम हुआ लग्न, अत: लग्न से भी विवाह संबंधित विषयों को देखना चाहिए। पंचम भाव से संतान देखते हैं, पंचम से पंचम है नवम् भाव, अत: संतान संबंधी विषय नवम् भाव से भी देखे जाने चाहिएं।

अब मारक का निर्णय करते हैं। लग्न से अष्टम भाव आयु का भाव माना जाता है। अष्टम से अष्टम भाव है, तृतीय भाव अत: तृतीय भी आयु स्थान है। अष्टम मुख्य आयु स्थान है और तृतीय गौण आयु स्थान है। किसी भी स्थान से द्वादश भाव उसका व्यय या हानि स्थान होता है। अष्टम भाव का व्यय स्थान होगा सप्तम भाव और तृतीय का व्यय होगा द्वितीय भाव। आयु की हानि का तात्पर्य है मृत्यु, इसलिए सप्तम भाव और द्वितीय भाव मारक भाव हैं। सप्तम भाव मुख्य मारक भाव है क्योंकि यह आयु के मुख्य भाव अष्टम का व्यय भाव है और द्वितीय भाव गौण मारक भाव है क्योंकि यह आयु के गौण भाव तृतीय भाव का व्यय भाव है।

इस प्रकार सप्तम और द्वितीय मारक भाव हैं।

10.3.1 मारक ग्रह

मारक भाव का निर्णय करने के पश्चात् हम मारक ग्रह का निर्णय करते हैं। किसी भी जन्म पत्रिका में मारक ग्रह का निर्णय करने के लिए निम्न ग्रहों की विवेचना की जानी चाहिए।

1. सप्तमेश

2. नैसर्गिक पापी ग्रह जो सप्तमेश से युति कर रहे हों।

3. सप्तम भाव में स्थित ग्रह।

4. द्वितीयेश एवं द्वितीयेश से युति कर रहे पापी ग्रह।

5. द्वितीय भाव में बैठे ग्रह।

6. केन्द्रेश होकर शुक्र और बृहस्पति।

7. द्वादशेश, द्वादशेश से संबंधित पापी ग्रह और द्वादश भाव में बैठे ग्रह।

8. अष्टमेश

9. शुक्र ग्रह जो नीच या अस्त होकर मारक स्थान में स्थित हों।

10.3.2 शुक्र और बृहस्पकति

शुक्र और बृहस्पति की मारक भूमिका को समझने के लिए हमें केन्द्राधिपति दोष को समझना होगा। केन्द्राधिपति दोष के नियमानुसार जब भी शुभ ग्रह की राशि केन्द्र स्थान में पड़ती है तो वे सम हो जाते हैं अर्थात् शुभ परिणाम देने का सामर्थ्य खो देते हैं। नैसर्गिक रूप से शुभ ग्रह हैं बृहस्पति, शुक्र, बुध और चन्द्रमा। बुध और चन्द्रमा विशेष परिस्थितियों में ही शुभ माने जाते हैं, अत: इन्हें इस सूची से बाहर रखा जाता है। बृहस्पति और शुक्र अत्यधिक शुभ हैं और केन्द्रेश होकर सम होने से इन्हें बड़ा दोष लगता है।

लग्न अत्यधिक शुभ होने के कारण लग्नेश होने से ग्रह बलवान हो जाएगा। चतुर्थ एवं दशम् भाव में शुभ ग्रह की राशि होने से शुभता में कमी आ जाएगी परन्तु सप्तम भाव में राशि होने से एक तो शुभता में कमी आ जाएगी दूसरे मारकेशत्व प्राप्त होगा। इसलिए शुक्र व वृहस्पति की राशि सप्तम में होने से दोनों प्रबल मारक हो जाएंगे। यह स्थिति और अधिक विकट हो जाएगी यदि ये स्वराशि होकर सप्तम् भाव में ही बैठ जाएं। स्वराशि में होने से मारक शक्ति अधिक प्रबल हो जाएगी।

बृहस्पति की यदि एक राशि सप्तम भाव में हो तो दूसरी राशि भी केन्द्र में ही होगी। सभी द्विस्वभाव लग्नों में यह स्थिति रहेगी। शुक्र की यदि एक राशि सप्तम भाव में होगी तो दूसरी राशि या तो द्वादश भाव (वृश्चिक लग्न) या द्वितीय भाव (मेष लग्न) में होगी। दोनों ही स्थितियों में दोनों राशियों में मारक प्रभाव रहेगा अत: केन्द्र के स्वामी होकर शुक्र और बृहस्पति की मारक क्षमता बढ़ जाती है।

इस तथ्य को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए हम मेष और तुला लग्न का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं-

मेष लग्न में शुक्र द्वितीय व सप्तम भाव के स्वामी हैं। यही स्थिति तुला लग्न में मंगल की है जो द्वितीय और सप्तम भाव के स्वामी हैं। मेष लग्न के लिए शुक्र अत्यधिक मारक हैं परन्तु तुला लग्न के लिए मंगल उतने मारक नहीं हैं। इसका कारण है कि शुक्र शुभ ग्रह हैं और केन्द्रेश होने से शुभता में कमी आती है जबकि मंगल नैसर्गिक रूप से अशुभ ग्रह हैं। केन्द्र का स्वामी होने से उसकी अशुभता में कमी आती है।

10.3.3 मारक के रूप में शनि की भूमिका

मारक के रूप में शनि की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि शनि किसी भी प्रकार से मारक भावों से संबंध रखते हैं या मारक ग्रह से किसी भी प्रकार संबंधित होते हैं तो अन्य प्रमुख मारक ग्रहों को पीछे छोड़ कर स्वयं महत्त्वपूर्ण मारक हो जाते हैं।

कर्क लग्न के लिए शनि प्रबल मारक हो जाते हैं क्योंकि वे सप्तम और अष्टम दोनों भावों के स्वामी होते हैं। शनि किसी भी भाव के स्वामी होकर यदि मारक स्थानों में बैठे भी हों तो भी प्रबल मारक सिद्ध होंगे। शनि का जितना अधिक पापत्व होगा, उतनी ही अधिक मारक क्षमता होगी। शनि यदि त्रिषडय के स्वामी हों या नीच या अस्त मारक ग्रह से संबंध करें तो वे मारक सिद्ध हो सकते हैं। अत: मारक ग्रह का निर्णय करते समय शनि की स्थिति की पूर्ण विवेचना अति आवश्यक है।

आयु खण्ड -

आयु को खण्डों में वर्गीकृत किया गया है। 32 वर्ष तक अल्पायु, 64 वर्ष तक मध्यायु और 96 वर्ष तक दीर्घायु मानी जाती है।

एक महत्त्वपूर्ण नियम के अनुसार जन्म लग्नेश यदि सूर्य का अधिमित्र या मित्र हो तो दीर्घायु, सम हो तो मध्यायु और अधिशत्रु हो तो अल्पायु होती है। इसी प्रकार कुछ अन्य नियमों का भी उल्लेख महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में किया गया है। फलदीपिका के अनुसार यदि लग्न का स्वामी और शुभ ग्रह केन्द्र में हों तो दीर्घायु, पणकर में हों तो मध्यायु और आपोक्लिम में हों तो अल्पायु होती है। यदि अष्टमेश और क्रूर ग्रह केन्द्र में हों तो अल्पायु, पणफर में हों तो मध्यायु और आपोक्लिम में हो तो दीर्घायु होती है।

इसी प्रकार निम्न ग्रहों में मित्रता, सम या शत्रु संबंध से आयु खण्ड का निर्णय किया जा सकता है।

1 चन्द्र राशि का स्वामी और चन्द्र राशि से अष्टम का स्वामी।

2 लग्नेश और अष्टमेश

3 लग्नेश और सूर्य

यदि इन ग्रहों के मध्य मित्रता हो तो दीर्घायु, सम हो तो मध्यायु और शत्रुता हो तो अल्पायु होती है।

आयु खण्ड का निर्णय करना कठिन कार्य है क्योंकि उक्त नियमों में अलग-अलग उत्तर आने से संशय रह सकता है। अत: कई नियमों का प्रयोग करके ही किसी निर्णय पर पहुँचना चाहिए। फलदीपिका से एक महत्त्वपूर्ण नियम का उल्लेख किया जा रहा है। इस नियम के अनुसार हमें यह देखना है कि निम्न ग्रह किस राशि में हैं - चर, स्थिर या द्विस्वभाव।

1 लग्न दे्रष्काण राशि और चन्द्र देष्काण राशि।

2 लग्नेश नवांश राशि और चन्द्रेश नवांश राशि।

3 लग्नेश द्वादशांश राशि और अष्टमेश द्वादशांश राशि।

इसे निम्न सारिणी से समझते हैं -

दीर्घायु	मध्यायु	अल्पायु
चर लग्न द्रेष्काण	चर लग्न दे्रष्काण	चर लग्न दे्रष्काण
चर चन्द्र दे्रष्काण	स्थिर चन्द्र दे्रष्काण	द्विस्वभाव चन्द्र दे्रष्काण
स्थिर लग्न दे्रष्काण	स्थिर लग्न दे्रष्काण	स्थिर लग्न दे्रष्काण
द्विस्वभाव चन्द्र दे्रष्काण	चर चन्द्र दे्रष्काण स्थिर	चन्द्र दे्रष्काण
द्विस्वभाव लग्न दे्रष्काण	द्विस्वभाव लग्न दे्रष्काण	द्विस्वभाव लग्न दे्रष्काण
स्थिर चन्द्र दे्रष्काण	द्विस्वभाव चन्द्र दे्रष्काण	चर चन्द्र दे्रष्काण

जैमिनि ज्योतिष में इसी प्रकार आयु खण्ड निर्णय के लिए एक प्रक्रिया दी गई है। इसके अनुसार निम्न ग्रहों को देखा जाना चाहिए कि वे चर, स्थिर या द्विस्वभाव किस राशि में हैं और उसी अनुरूप परिणाम लेने चाहिएं।

1. लग्नेश व अष्टमेश

2. शनि व चन्द्रमा

3. चन्द्र लग्न और होरा लग्न

निम्न सारिणी से परिणाम प्राप्त करने चाहिएं-

दीर्घायु	मध्यायु	अल्पायु
चर लग्नेश +	चर लग्नेश+	चर लग्नेश +

चर अष्टमेश	स्थिर अष्टमेश	द्विस्वभाव अष्टमेश
स्थिर लग्नेश +	स्थिर लग्नेश+	स्थिर लग्नेश +
द्विस्वभाव अष्टमेश	चर अष्टमेश	स्थिर अष्टमेश
द्विस्वभाव लग्नेश+	द्विस्वभाव लग्नेश+	द्विस्वभाव लग्नेश +
स्थिर अष्टमेश	द्विस्वभाव अष्टमेश	चर अष्टमेश

जो आयु खण्ड दो या तीन प्रकार से आए उसे ही मानना चाहिए। जैमिनि मत के अनुसार यदि तीनों से अलग उत्तर प्राप्त हो तो अंतिम निर्णय जन्म व होरा लग्न से प्राप्त आयु खण्ड से करना चाहिए।

किसी ग्रह की दशा-अन्तर्दशा में परिणामों की सही विवेचना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि शुभ अथवा योगकारक ग्रह की महादशा में अशुभ अथवा अयोगकारक ग्रह की दशा कैसी जाएगी? दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि जिस ग्रह की दशा चल रही है वह यदि एक शुभ एवं एक अशुभ भाव का स्वामी है तो कब शुभ परिणाम मिलेंगे और कब अशुभ? लघु पाराशरी में इन बिन्दुओं को बहुत विस्तार से समझाया गया है। महादशानाथ और अन्तर्दशानाथ दो मुख्य वर्गों में रख सकते हैं - संबंधी ग्रह, असंबंधी ग्रह। इन्हें पुन: तीन वर्गों में बांटा गया है- सधर्मी, विरुद्धधर्मी, समधर्मी।

संबंधी का तात्पर्य है महादशानाथ और अन्तर्दशानाथ में संबंध। संबंध अर्थात् चतुर्विध संबंध में से कोई भी एक संबंध यदि महादशानाथ और अन्तर्दशानाथ के मध्य हो तो उन्हें संबंधी कहा जाएगा। यदि महादशा नाथ और अन्तर्दशानाथ में चतुर्विध संबंधों में से कोई भी संबंध नहीं बनता हो तो उन्हें असंबंधी माना जाएगा। सधर्म का तात्पर्य है समान धर्म या स्वभाव वाला। यदि महादशानाथ और अन्तर्दशानाथ दोनों शुभ भावों के स्वामी हों अथवा अशुभ भावों के स्वामी हों जैसे त्रिषडय तो उन्हें सधर्मी कहा जाएगा। स्पष्ट है कि अधर्मी का तात्पर्य है दोनों में समानता न हो, एक शुभ हो, एक अशुभ। समधर्मी का तात्पर्य है न सधर्मी हो, न विरोधी हो।

जब महादशानाथ और अन्तर्दशानाथ संबंधी ग्रह होंगे तब परिणामों की तीव्रता सर्वाधिक होगी, चाहे वे शुभ हों अथवा अशुभ। यह विदित है कि किसी भी ग्रह की महादशा में उसी ग्रह की अन्तर्दशा परिणाम देने में सक्षम नहीं होती चाहे महादशानाथ कारक हो अथवा मारक। यदि महादशानाथ कारक ग्रह है तो सर्वश्रेष्ठ परिणाम तब मिलेंगे, जब कारक ग्रह की अन्तर्दशा आएगी, यही नियम मारक ग्रह पर भी लागू होता है।

यदि महादशानाथ और अन्तर्दशानाथ विरुद्धधर्मी हों अर्थात् एक शुभ एक अशुभ तो मिश्रित परिणाम आएंगे और परिणामों की तीव्रता सीमित हो जाएगी।

उक्त नियम को निम्न रूप से समझा जा सकता है-

महादशानाथ+संबंधित सधर्मी अन्तर्दशानाथ - पूर्ण फल

महादशानाथ+संबंधित समधर्मी अन्तर्दशानाथ - मध्य फल

महादशानाथ+संबंधित विरुद्धधर्मी अन्तर्दशानाथ - सामान्य फल

महादशानाथ+असंबंधित सधर्मी अन्तर्दशानाथ - पूर्ण फल

महादशानाथ+असंबंधित विरुद्धधर्मी अन्तर्दशानाथ - मिश्रित फल

इन नियमों को हम और अधिक विस्तार से विभिन्न ष्टशठ्ठस्रद्बह्लद्बशठ्ठह्य के आधार पर समझने का प्रयास करते हैं।

10.3.4 केन्द्रे श व त्रिकोणेश

केन्द्रेश व त्रिकोणेश सधर्मी ग्रह हैं क्योंकि दोनों शुभ भावों के स्वामी हैं अत: एक की महादशा में दूसरे की अन्तर्दशा शुभफल देगी। यदि इन दोनों के बीच किसी भी प्रकार कोई परस्पर संबंध हो तो फल विशेष शुभ हो जाएगा। इस संबंध में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य जो लघु पाराशरी कहती है, वह यह है कि यदि केन्द्रेश या त्रिकोणेश अशुभ भाव के स्वामी भी हों तो शुभफल तब प्राप्त होंगे जब इन दोनों में किसी प्रकार का संबंध हो और अशुभ फल तब प्राप्त होंगे यदि इनमें किसी प्रकार का संबंध न हो। अधिक स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि सहधर्मी होते हुए भी यदि किसी प्रकार का दोष हो तो शुभफल उसी स्थिति में मिलेंगे, जब ये संबंधी भी हों। यहाँ यह उल्लेख करना अत्यंत आवश्यक है कि दोष का तात्पर्य अशुभ भाव का स्वामी होने से ही है, ग्रह के नीच या अस्त आदि होने को दोष नहीं माना गया है, ऐसी स्थिति में योग भंग हो जाता है।

1. दोषरहित केन्द्रेश + दोष रहित त्रिकोणेश, असंबंधी- शुभ।
2. दोषरहित केन्द्रेश + दोष रहित त्रिकोणेश, संबंधी- विशेष शुभ।
3. दोषयुक्त केन्द्रेश + दोषयुक्त त्रिकोणेश, असंबंधी- अशुभ।
4. दोषयुक्त केन्द्रेश + दोषयुक्त त्रिकोणेश, संबंधी - सामान्य।
5. दोषयुक्त केन्द्रेश + दोषयुक्त त्रिकोणेश, असंबंधी- अशुभ।
6. दोषयुक्त केन्द्रेश + दोषयुक्त त्रिकोणेश, असंबंधी- अशुभ।

10.4 योग कारक व मारक

किसी योगकारक ग्रह की महादशा में शुन्य परिणाम तब प्राप्त होंगे जब किसी अन्य योगकारक की अन्तर्दशा आएगी अर्थात् सहधर्मी की। यदि दोनों में संबंध भी हुआ तो परिणाम की तीव्रता बढ़ जाएगी अर्थात् सहधर्मी होने के साथ-साथ संबंधी हुए तो विशेष परिणाम प्राप्त होंगे। संबंध न होने की स्थिति में सामान्य फल ही मिलेंगे।

यदि योगकारक ग्रह की महादशा में मारक ग्रह की अन्तर्दशा हो, दोनों में संबंध भी हो रहा हो तो राजयोग की प्राप्ति हो सकती है (यद्यपि यह स्थायी नहीं होगा) स्पष्ट है कि संबंधी होने से परिणाम प्राप्त होंगे। यही नियम मारक ग्रह की महादशा में लागू होगा। मारक ग्रह की महादशा में सर्वाधिक मारक परिणाम तब आएंगे जब मारक ग्रह की अन्तर्दशा आएगी और दोनों में संबंध भी होगा। मारक ग्रह की महादशा में संबंधी पापग्रह की अन्तर्दशा में अशुभ परिणाम की तीव्रता कम होगी क्योंकि यह सहधर्मी नहीं होकर सिर्फ संबंधी हैं। यह उल्लेख आवश्यक है कि चतुर्विध संबंध के अतिरिक्त एक-दूसरे से केन्द्र-त्रिकोण में होना भी संबंध है।

10.4.1 राहु केतु की दशा के नियम

- राहु-केतु के लिए नियम है कि ये जिस भाव में बैठते हैं और जिस भावेश से संबंध करते हैं उसी के समान परिणाम देते हैं। केन्द्र-त्रिकोण में बैठने मात्र से राहु-केतु अपनी दशा में शुभफल देंगे। यदि ये केन्द्र-त्रिकोण में बैठकर केन्द्रेश या त्रिकोणेश से संबंध भी करें तो अपनी दशा में योगकारक के समान फल देते हैं।

अब याद रखने योग्य बिन्दु यह है कि केन्द्र में शुभ राशि में बैठने पर इन्हें भी केन्द्राधिपति दोष लगेगा। केन्द्र में पाप राशि में बैठने पर अशुभता सम हो जाएगी और राहु-केतु अपनी दशा में सामान्य फल देंगे। केन्द्र-त्रिकोण में स्थित राहु-केतु यदि केन्द्रेश-त्रिकोणेश से संबंध न भी करें तो भी केन्द्रेश-त्रिकोणेश की महादशा में इनकी दशा शुभ परिणाम देगी क्योंकि केन्द्र-त्रिकोण में बैठने से वे केन्द्रेश-त्रिकोणेश के समान फल देंगे अत: ऐसी दशा में सहधर्मी होने से शुभ परिणाम प्राप्त होंगे।

पाप ग्रह की दशा - लघुपाराशरी के अनुसार पाप ग्रह की महादशा में असंबंधी शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो परिणाम अशुभ होते हैं। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि 2, 3, 11 भावेशों की दशा सामान्य फल देती है और 6, 8, 12 भावेशों की दशा कष्ट देने वाली होती है। पापी महादशेश में संबंधी शुभग्रह की अन्तर्दशा मिश्रित फल देगी।

1.पापी महादशेश	+ शुभ अन्र्तदशेश, असंबंधी	- अशुभ।
2.पापी महादशेश	+ शुभ अन्र्तदशेश, संबंधी	- मिश्रित फल।

3.पापी महादशेश	+ योगकारक, असंबंधी	- अशुभ फल।
4.पापी महादशेश	+ योगकारक, संबंधी	- मिश्रित फल।

स्पष्ट है कि महादशेश एवं अन्तर्दशेश में संबंध होने पर परिणामों की तीव्रता बढ़ती है। लघुपाराशरी में एक अत्यंत रोचक उदाहरण से इस तथ्य को समझाने का प्रयास किया गया है। महादशेश राजा के समान है और अन्तर्दशेश उस राजा के अधीन अधिकारी। पापी राजा के राज में सज्जन अधिकारी चाहते हुए भी अच्छा कार्य नहीं करेगा। ऐसी स्थिति में यदि अधिकार अत्यधिक सज्जन हुआ तो और भी अधिक डरेगा इसीलिए पापी महादशेश में असंबंधी योगकारक की अन्तर्दशा में अशुभ परिणाम मिलेंगे। यदि राजा और अधिकारी में किसी भी प्रकार की रिश्तेदारी या संबंध हो तो अधिकारी कभी-कभी निर्भय होकर अपनी इच्छानुसार कार्य कर लेगा अत: संबंधी होने की स्थिति में पापी महादशेश में शुभ अथवा योगकारक अन्तर्दशेश मिश्रित फल देंगे यही नियम शुभ महादशेश में अशुभ या अयोगकारक अन्तर्दशेश लागू होगा। इसी उदाहरण से यह भी समझा जा सकता है कि पापी ग्रह की महादशा में पापी ग्रह की अन्तर्दशा बहुत अशुभ परिणाम देती है और यदि इनमें संबंध भी हो तो 'करेला और नीम चढ़ा की कहावत पूर्णत: चरितार्थ होगी।

1. दशेश का बृहस्पति या भाग्येश से संबंध - जिस ग्रह की दशा चल रही है यदि उस ग्रह का संबंध बृहस्पति या भाग्येश से हो तो उस दशा में भाग्य वृद्धि होती है।

2. ग्रह का वक्री या मार्गी होना - जिस ग्रह की दशा चल रही है यदि वह जन्म-पत्रिका में वक्री है और योगकारक भी है तब उस ग्रह की दशा में जब भी गोचर में वह ग्रह विशेष मार्गी होगा, तब पूर्ण फल देगा और वक्री होने पर विशेष फल नहीं देगा।

3. योग कारक ग्रहों से दशेश का संबंध - जिस ग्रह की दशा चल रही है वह यदि कमजोर हो, परन्तु उसका सं ंबंध योगकारक ग्रह के साथ हो रहा है तो उस ग्रह की दशा में विशेष परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। ऐसा योगकारक ग्रह की युति के कारण संभव है परन्तु ग्रह यदि युति न मिले, तो परिणाम विपरीत होंगे।

4. केन्द्र, पणकर, आपोक्लिम - दशेश यदि केन्द्र में स्थित हो तो अपनी दशा में पूर्ण फल देने में सक्षम होता है, फिर चाहे फल शुभ हों या अशुभ, यदि पणकर भावों में हो तो मध्यम फल प्राप्त होंगे। आपोक्लिम में होने पर ग्रह एक चौथाई फल ही दे पाता है।

5. शीर्षोदय, उभयोदय, पृष्ठोदय - यदि दशेश शीर्षोदय राशि में स्थित हो अर्थात् सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक या कुंभ में हो तो परिणाम दशा की शुरुआत में मिलते हैं। यदि उभयोदय राशि मीन में हो तो दशाकाल के मध्य में परिणाम मिलते हैं। यदि दशेश पृष्ठोदय राशि में हो तो दशा के अंत में फल प्राप्त होते हैं।

10.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि किसी भी जातक के जन्मांक चक्र के आधार पर उसके जीवन में होने वाली अशुभ, अल्पायुकारी, मृत्युतुल्य कष्टकारी दशायें कब और किन स्थितियों में आती हैं। किस ग्रह के कहां बैठने ओर किस भाव पर दृष्टि रखने से मारक स्थिति उत्पन्न होती है। लग्न से अष्टम भाव आयु का होता है। भावात भवम के आधार पर अष्टम से अष्टम तृतीय भाव है अत: इस प्रकार तृतीय भाव भी आयु का भाव होगा। आयुक्षीणता का तात्पर्य मृत्यु से है अत: सप्तम और द्वितीय भाव मारक भाव होते हैं। सप्तम भाव मारक इसीलिए है कि वह आयु के मुख्य भाव अष्टम का व्यय भाव है। मारक ग्रहों का निर्णय सप्तमेश नैसर्गिक पापग्रह जो सप्तमेश से युत होते हैं, द्वितीयेश के साथ पापग्रह, द्वितीय भाव में बैठे हुए पापग्रह, शुक्र और बृहस्पति केन्द्रश हो, द्वादश के मालिक तथा उसमें बैठे ग्रह एवं उनकी युति, अष्टम का मालिक, शुक्र का नीच होकर मारक भाव में रहना यह सब कुछ इसी आधार पर मुख्यत: किया जाता है। शुक्र और बृहस्पति की मारक स्थिति को समझने के लिए मुख्य रूप से केन्द्राधिपति दोष को समझना पड़ता है। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में आपने मारक का अध्ययन किया। इसके पश्चात् आप विभिनन मारक स्थितियों को समझा सकेंगे।

10.6 शब्दावली

1 दशानाथ – दशाओं के मालिक
2 दशेश – दशा का मालिक
3 अष्टमेश – आठवें भाव का स्वामी
4 नैसर्गिक – स्वयं उद्भूत स्वामी
5 द्वादशेश – बारहवें भाव का स्वामी
6 केन्द्रेश – लग्नेश या केन्द्र का स्वामी
9 मारक – मृत्यु तुल्य कष्ट या मृत्यु देने वाला

10.7 अभ्याशस प्रश्नों के उतर

सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए

1 शुक्र ओर बृहस्पति की मारकता को जानने के लिए किस दोष को पूर्णत:

समझना पड़ता है '

क सप्तम भाव

ख केन्द्र

ग	त्रिकोण

घ	केन्द्राधिपति दोष

2 नैसर्गिक शुभ ग्रह है -

क	केतु

ख	राहु

ग	शनि

घ	बुध

3 किस ग्रह की एक राशि सप्तम में होने से दूसरी केन्द्र में होती है

क	बुध

ख	बृहस्पति

ग	शुक्र

घ	सूर्य

4 चर लग्नेश और स्थिर अधमेश में क्या होता है -

क	अल्पायु

ख	मध्यायु

ग	खण्डायु

घ	दीर्घायु

5 महादशानाथ और संबंधित समानधर्मी अन्तर्दशानाथ के योग से कौन से फल प्राप्त होते हैं

क	अपूर्ण एवं पूर्ण

ख	पूर्ण

ग	मध्यम

घ	अधम

6 अष्टमेश और क्रूर ग्रह के केन्द्र में रहने से आयु होती है

क	मध्यायु

ख	पूर्णायु

ग	अल्पायु

घ	खण्डायु

7 सप्तमेश का निर्णय किसके लिए होता है

क	धन प्राप्ति

ख आयु प्राप्ति
ग यश प्राप्ति
घ मारक

8 महादशा का मालिक किसके समान होता है
- क राजा
- ख मंत्री
- ग प्रजा
- घ सेनापति

अभ्याशस प्रश्नों के उतर

1 घ
2 घ
3 ख
4 ख
5 ख
6 ग
7 घ
8 क

10.8 निबंधात्मक प्रश्न

1 मारक भावों के निर्णय संबंधी तथ्यों को लिखिए
2 मारकेश की दशा पर एक निबंध लिखिए
3 मारक ग्रहों का निर्णय कीजिए
4 मारक स्थितियों के नियमों की चर्चा कीजिए।

10.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सारावली

सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहज्जातकम्

व्याख्याकार: केदारदत्त जोशी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

3. फलदीपिका

सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

4. भारतीय ज्योतिष

व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई 11

शुभाशुभ मुहूर्त निर्णय

इकाई की संरचना

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 विषय प्रवेश

11.3.1 काल मान

11.3.2 मास

11.3.2.1 चान्द्र मास

11.3.2.2 सौर मास

11.3.2.3 सावन मास

11.4 सिद्धि योग

11.5 वार और नक्षत्रों के संयोग से बनने वाले योग

11.6 मास शून्य, तिथि , नक्षत्र, राशियां

11.6.1 मास शून्य तिथियां

11.6.2 मास शून्य नक्षत्र

11.6.3 मास शून्य राशियां

11.6.4 तिथि शून्य लग्न

11.7 तिथिक्षय और वृद्धि

11.7.1 तिथि क्यों घटती बढती है

11.7.2 वृद्धि तिथि

11.7.3 तिथि क्षय

11.7.4 राहुकाल

11.7.5 काल होरा

11.7.6 भद्रा

11.7.7 नक्षत्रों में किये जाने योग्य कार्य

11.7.8 नक्षत्र संज्ञा का अन्य प्रकार

11.7.9 हवन आहुति महुर्त
11.7.10 रोगात्पत्ति के दिन से रोगमुक्ति समय
11.8 संक्रान्ति
11.9 सारांश
11.10 शब्दावली
11.11 अभ्यास प्रश्न
11.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.1 प्रस्तावना

मुहूर्त प्रकरण ज्योतिष शास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण अंग है व्यक्ति के जीवन के विविध कार्यों के आरम्भ और समापन की जटिलताएं देखी जाती है। कार्य का आरम्भ में स्वभाविक रूप से उसकी शुभता का सम्पात हर किसी कि समक्ष रहता है। अत:ज्योतिष से संबंधित सभी अन्य पक्षों में मुहुर्त का अत्यधिक व्यावहारिक उपयोग देखा जाता है। पंचांग नामक इकाई में मूहुर्त के अन्य अंगों का भी अध्ययन आपने किया है। प्रस्तुत इकाई में मुहुर्त के शास्त्रीय पक्षों का वर्णन आपके अध्ययन हेतु किया गया है।

मुहुर्त में तिथि वार नक्षत्र योग करण कालमान इत्यादि के साथ मास क्षय मास अधिक मास सोरमास, गुरू,, शुक्र, आदि के उदयास्त सहित मासान्त दोष, भद्रा और उसके परिहार का विचार भी किया जाता है। मुहुर्त चिन्तामणि इसका अत्यन्त व्यवहारीपयोगी ग्रंथ है। चान्द्रमास भी इससे गणनीय है। वस्तुत: मुहुर्त में गोत्रादि के विचार भी होने चाहिए जैसा कि निर्णय ग्रंथ बताते हैं। दोनों पक्षों की रिक्ता आदि तिथियों पर विचार कर अग्निवास, शिववास, पंचक विचार आदि भी मुहुर्त के अन्तर्गत विचारणीय हैं। साधारण रूप से विचार करने पर मुहुर्त मान्यता के लिए ही अनिवार्य है।

अत: इस इकाई के अध्ययन से आप मुहुर्त के अन्तर्गत आने वाले शुभाशुभ पक्षों का ज्ञान करे किसी भी प्रकार के मुहुर्त का शोधन करने में सक्षम हो सकेंगे। साथ ही मुहुर्त में व्यवहारोपयोगी विधियों का निर्णय कर जनसामान्य को मुहुर्त का ज्ञान करा सकेंगे।

11.2 उद्देश्य

मुहुर्त ज्ञान से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1 मुहुर्त निर्णय में शुभाशुभ का ज्ञान करा सकेंगे
2 सोर मास , चान्द्रमास को बता सकेगें
3 तिथिवार संयोग को भली भांति परिभाषित कर पायेगे
4 योगों का विश्लेषण कर सकेंगे

5 मास शून्य, तिथि नक्षत्र राशियों को भी बता सकेंगे

6 तिथियों के घटन बढने की स्थिति को समझा सकेंगे

7 राहुकाल की लग्नों के बारे में बता सकेंगे

8 काल होरा के विषय में समझा सकेंगे

11.3 विषय प्रवेश

1. मुहूर्त ज्योतिष का सर्वोत्तम भाग है। मुहूर्त निकालने या निर्धारण करने के लिए हमें विषयों का एक बार पुन: संक्षेप में अध्ययन करना या जान लेना आवश्यक है।

2. पंचांग के प्रमुख भाग तिथि-वार-नक्षत्र-योग और करण, इनका पंचांग नामक अध्याय में हमने भली-भाँति अध्ययन किया है, अत: उसका स्मरण रखना होगा। तिथि कुल 16 होती हैं जिनमें से शुक्ल व कृष्ण पक्ष के अनुसार 14 तिथियाँ एक मास में 2 बार आती हैं तथा शुक्ल पक्ष की अंतिम तिथि पूर्णिमा और कृष्ण पक्ष की अंतिम तिथि अमावस्या होती है।

3. वार कुल सात होते हैं, जिनकी प्रकृति अलग-अलग होती है।

4. नक्षत्र कुल 27 (अभिजित् सहित 28) होते हैं जिनकी अलग-अलग विशेषताएँ होती हैं, जिनका विवरण पूर्व अध्याय में बताया गया है। नक्षत्रों को अलग-अलग संज्ञाओं में विभाजित किया गया है जिनका अध्ययन हम आगे करेंगे।

5. पंचांग में स्थित योग कुल 27 होते हैं, जिनका वर्णन पंचांग अध्याय में पढ़ा। ये योग नामानुसार दिन की शुभता और अशुभता को बताते हैं। इन योगों के अतिरिक्त कुछ अन्य योग भी होते हैं, जिनका अध्ययन हम इस अध्याय में करेंगे।

6. करण कुल 11 होते हैं, जिनमें से चार तो निश्चित तिथियों में और शेष 7 पुनरावृत्त होते रहते हैं। इन सात में से विष्टि करण को 'भद्रा भी कहा जाता है।

11.3.1 काल मान

प्रचलित समय मापन की प्रणाली से थोड़ी सी भिन्न प्रणाली काल मापन के लिए ज्योतिष में प्रयोग ली जाती है। इस अंतर को जान लेना अत्यंत आवश्यक है।

प्रचलित प्रणाली	ज्योतिष में प्रयुक्त प्रणाली
1 दिन = 24 घंटे	1 दिन = 60 घटी
1 घंटे = 60 मिनट	1 घटी = 60 पल

1 मिनट = 60 सैकंड   1 पल = 60 विपल

1 घंटा = 21/2 घटी,   1 मिनट = 21/2 पल

1 घटी = 24 मिनट

1 पल = 24 सैकण्ड

1 विपल = 24 मिनि सैकण्ड

मुहूर्त संबंधी ज्योतिषीय गणनाओं में काल मापन के इस अंतर को अवश्य ध्यान में रखना होगा, तभी गणनाएं सुगमता से हो सकेंगी अन्यथा गलती होने की संभावना रहती है।

11.3.2 मास

सामान्यतया एक वर्ष में 12 मास माने जाते हैं। प्रचलित वर्षमान के अनुसार माह जनवरी को ईस्वी वर्ष का प्रथम मास माना जाता है, जिसे वैश्विक स्तर पर मान्यता प्राप्त है लेकिन ज्योतिष में भी 12 मास होते हैं परंतु समय शुद्धि के नियम के अनुसार निश्चित अंतराल पर किसी वर्ष में 13 और किसी वर्ष में 11 माह हो सकते हैं। इस प्रकार की माह वृद्धि को अधिक मास और कमी को क्षय मास कहते हैं। इसी प्रकार से वृद्धि और क्षय तिथियों में भी होता है। जिसका अध्ययन इसी अध्याय में अधिक मास-क्षय मास, तिथि वृद्धि और क्षय प्रकरण में करेंगे।

भारतीय वर्ष में होते तो 12 मास ही हैं परंतु इन 12 मासों का मुख्यतया तीन प्रकार से निर्धारण होता है और इसीलिए तीन प्रकार के मास ज्योतिष में माने जाते हैं।

1. चांद्र मास

2. सौर मास

3. सावन मास

11.3.2.1 चान्द्रय मास

एक अमावस्या से अगली दूसरी अमावस्या तक अथवा एक पूर्णिमा से अगली पूर्णिमा तक एक चांद्र मास माना जाता है। यह दो भागों में शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष के रूप में विभाजित होता है। यह सामान्यतया 30 दिन का होता है परंतु कभी-कभी किसी-किसी मास में 1-2 दिन की कमी या वृद्धि हो जाती है।

1 शुक्ल पक्ष : अमावस्या के बाद जब चन्द्रमा का चमकदार भाग बढ़ने लगता है तो शुक्ल पक्ष प्रारंभ होता है। इस पक्ष की अंतिम तिथि पूर्णिमा होती है।

2 कृष्ण पक्ष : पूर्णिमा के बाद जब चन्द्रमा का चमकदार भाग घटने लगता है तो कृष्ण पक्ष प्रारंभ होता है। इस पक्ष की अंतिम तिथि अमावस्या होती है।

बारह चांद्र मासों के नाम

1. चैत्र	2. वैशाख	3. ज्येष्ठ,
4. आशाढ़	5. श्रावण	6. भाद्रपद,
7. आश्विन	8. कार्तिक	9. मार्गशीर्ष (अगहन)
10. पौष	11. माघ	12. फाल्गुन

वर्ष का प्रारम्भ चैत्र शुक्ल पक्ष से होता है और फाल्गुन मास वर्ष का अंतिम मास होता है, जिसमें होली आती है।

11.3.2.2 सौर मास

सूर्य संक्रांति (सूर्य का राशि परिवर्तन) के आधार पर सौर मास का निर्धारण होता है। किसी राशि में सूर्य के प्रवेश करते ही सौर मास प्रारंभ होता है और अगली राशि में सूर्य के प्रवेश करते ही मास पूर्ण हो जाता है। सौर मास भी 12 होते हैं और इनके नाम बारह राशियों के आधार पर होते हैं। जिस राशि में सूर्य होते हैं, उस मास का नाम उस राशि के अनुरूप होता है।

सौर मास	प्रारंभ की अनुमानित तारीख
मेष मास	14 अप्रैल से 14 मई
वृषभ मास	14 मई से 15 जून
मिथुन मास	15 जून से 16 जुलाई
कर्क मास	16 जुलाई से 17 अगस्त
सिंह मास	17 अगस्त से 17 सितंबर
कन्या मास	17 सितंबर से 17 अक्टूबर
तुला मास	17 अक्टूबर से 16 नवंबर

वृश्चिक मास	16 नवंबर से 15 दिसंबर
धनु मास	15 दिसंबर से 14 जनवरी
मकर मास	14 जनवरी से 12 फरवरी
कुंभ मास	12 फरवरी से 14 मार्च
मीन मास	14 मार्च से 13 अप्रैल

सौर मास यद्यपि औसतन 30 दिन का होता है क्योंकि एक राशि में 30 अंश होते हैं और सूर्य प्रतिदिन एक अंश को भोगते हुए औसत गति से आगे बढ़ते हैं परंतु सूर्य की तीव्र व मंद गति के कारण कभी-कभी एक या दो दिनों का अंतर आ जाता है।

11.3.2.3 सावन मास

एक सूर्योदय से अगले सूर्योदय के अर्थात् दो सूर्योदयों के मध्य के समय को एक सावन दिन कहते हैं और तीस सावन दिनों का एक सावन मास होता है, जिसे 'वार मास' या 30 वारों का समय भी कहा जाता है।

उपयोगिता : इन मासों की अलग-अलग कार्यों में उपयोगिता होती है। यहाँ संक्षेप में उन्हें बताया जा रहा है और आगे इनका विस्तार से अध्ययन करेंगे तथा उपयोग करने की विधि को सीखेंगे।

1. जातकर्म, नामकरण, यज्ञोपवीत, विवाह आदि सभी सोलह संस्कारों में सौर मास महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं जहाँ कि किसी राशि विशेष में सूर्य की स्थिति का विचार किया जाता है।
2. गृह-प्रवेश, गृहारंभ, पितृकार्य और जन्म दिवस के निर्धारण में सौर व चांद्र दोनों मासों का प्रयोग होता है।
3. दैनिक कार्यों में, प्रसूति स्नान और यज्ञ आदि में वार प्रधान सावन मासों को मुख्य रूप से प्रयोग किया जाता है अर्थात् इन कार्यों में वारों का महत्त्व अधिक होता है।

अब हम मुहूर्त संबंधी आधारभूत विषयों का क्रम से अध्ययन करेंगे और फिर कार्य विशेष के अनुसार उनका प्रयोग किस प्रकार किया जाता है, इसका अध्ययन करेंगे।

11.4 सिद्धि योग

कार्य की सफलता को ही सिद्धि कहते हैं। सिद्धि योग वह योग है जिसमें प्रारंभ किया गया कोई भी कार्य सफलता दिलाने वाला होता है। कोई भी कार्य शुभ समय पर प्रारंभ किया जाता है तो वह कार्य सफल हो पाता है। इस शुभ समय को ही शुभ मुहूर्त, सिद्धि योग या अन्य सार्थक नामों

से जाना जाता है। इसमें चन्द्रमा की प्रधानता रहती है, चन्द्रमा के कारण तिथियों का निर्धारण होता है। तिथियों और वारों के संयोग से अनेक शुभ-अशुभ योग बनते हैं, उन्हीं में से एक शुभ योग है, जिसे सिद्धि योग कहते हैं। यह योग सभी प्रकार के शुभ कार्यों के लिए उत्तम होता है।

तिथि-वार संयोग सारिणी-1

तिथि संज्ञा	तिथियाँ			वार	योग
नंदा	1	6	11	शुक्र	सिद्धि योग
भद्रा	2	7	12	बुध	
जया	3	8	13	मंगल	
रिक्ता	4	9	14	शनि	
पूर्णा	5	10	15	गुरु	
शुक्ल पक्ष मेंइस शुभाशुभ का आधार चन्द्रमा				अशुभ	मध्य शुभ
कृष्ण पक्ष में का बली और निर्बली होना है				शुभ	मध्य अशुभ

तिथि-वार संयोग सारिणी-2

क्र. सं.	वार	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
1.	सिद्धि	-	-	जया	भद्रा	पूर्णा	नंदा	रिक्ता
	योग	-	-	3,8,13	2,7,12	5,10,15	1,6,11	4,9,14
2.	मृत्यु	नंदा	भद्रा	नंदा	जया	रिक्ता	भद्रा	पूर्णा

	योग	1,6, 11	2,7,1 2	1,6,1 1	3,8,1 3	4,9,14	2,7,1 2	5,10,1 5
3.	दग्ध योग	12	11	5	3	6	8	9
4.	क्रकच	12	11	10	9	8	7	6
5.	संवर्त	7	-	-	1	-	-	-
6.	विष	4	6	7	2	8	9	7
7.	हुताशन	12	6	7	8	9	10	11

उपयुर्क्त चक्र में तिथियों को संख्याओं के आधार पर बताया गया है। सिद्धि योग का वर्णन ऊपर पढ़ चुके हैं।

2. **मृत्यु योग :** इस योग में किए गए कार्य की पूर्णता संदिग्ध रहती है। इस योग में कार्य करने से व्यक्ति को मृत्यु तुल्य कष्ट और समस्याओं का सामना करना पड़ता है अथवा कार्य नष्ट हो जाता है। इस योग में औषधि लेना प्रारंभ कभी भी नहीं करना चाहिये।

3. **दग्ध योग :** इस योग में विवाह, यात्रा, शुभ मांगलिक कार्य नहीं करने चाहिएं। इसमें किए गए कार्य में अग्नि पीड़ा या अग्नि संबंधी दुर्घटना होती है या संबंधों में खटास आ जाती है।

4. **क्रकच योग :** इस योग में कार्य करने से कार्य के बीच में ही व्यर्थ की कहा-सुनी होती है अथवा झगड़ा होता है। यह एक अशुभ योग है।

5. **संवर्त योग :** रविवार को सप्तमी और बुधवार को प्रतिपदा होने से यह योग बनता है। यह एक अशुभ योग है, इसमें किया गया कार्य सफल नहीं होता है।

6. **विष योग :** विष का अर्थ है जहर। जब इस योग में कोई कार्य प्रारंभ किया जाता है तो वह बिगड़ जाता है अथवा बिगाड़ दिया जाता है। यह कार्य किसी के कटु वार्तालाप से भी नष्ट हो जाता है। इसमें यात्रा को टालना चाहिए।

7. **हुताशन योग :** हुताशन योग एक प्रकार का अशुभ योग है। यह शुभ कार्यों में वर्जित माना जाता है। विशेष रूप से यात्रा का प्रारंभ इस योग में नहीं करना चाहिए।

उदाहरण : जैसे-उपरोक्त प्रदर्शित सारिणी के अनुसार मंगलवार को जया तिथि (3, 8, 13) हो तो सिद्धि योग, नंदा तिथि (1, 6, 11) हो तो मृत्यु योग, पंचमी हो तो दग्ध योग, दशमी हो तो क्रकच योग और सप्तमी तिथि हो तो विष व हुताशन योग बन जाता है, जिनके परिणाम उपरोक्त प्रकार से प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार किसी भी दिन जो वार व तिथि हो उसके अनुसार उपरोक्त सारिणी के माध्यम से शुभ-अशुभ योग देखे जा सकते हैं। सामान्य कार्यों में इन योगों की उपयोगिता होती है।

11.5 वार और नक्षत्रों के संयोग से बनने वाले योग

सप्ताह के सात वारों में जब किसी नक्षत्र विशेष पर चन्द्रमा होते हैं तो नक्षत्र और वार से कुछ शुभाशुभ योग बनते हैं। किसी वार विशेष में नक्षत्र विशेष होने पर जो योग बनता है, उस योग के आधार पर ही उस दिन की उपयोगिता सिद्ध होती है, जिनका वर्णन निम्न सारिणी में किया गया है-

वार - नक्षत्र शुभाशुभ योग सारिणी-1

क्र. सं.	योग	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
1	सर्वार्थ-सिद्धि	मूल उषा. उभा. उफा. पुष्य	अनु. श्रव. रोहि. मृग कृत्ति.	उभा. अश् कृत्ति. आश्. अश्.	हस्त रोहि. अनु. मृग. श्रव.	पुन. पुष्य रेवती अनु. पुष्य	अश्. रेवती अनु पुन. अश्वि.	श्रवण रोह स्वा. हस्त
2	अमृत सिद्धि	हस्त	श्रवण	अश्.	अनु.	पुष्य	रेवती	रोहि.
3	सिद्धि	मूल	श्रव.	उभा.	कृत्ति.	पुन.	पूफा.	स्वाती

4	चरयोग	पूभा.	आर्द्रा	विशा.	रोहि.	शत.	मघा	मूल
5	उत्पात	विशा.	पूषा.	धनि.	रेवती	रोहि.	पुष्य	उफा.
6	मृत्यु	अनु.	उषा.	शत.	अश्.	मृग.	आश्ळ.	हस्त
7	काण	ज्ये.	अभि.	पूभा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
8	कालयोग आर्द्रा	भर	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पूभा.
9	यमघण्ट	मघा	विशा	आर्द्रा	मूल	कृत्ति.	रोहि.	हस्त
10	यमदंष्ट्रा	मघा धनि.	मूल शा.	कृत्ति. भर.	पुन. रेव.	उषा. अश्.	रोहि. अनु.	श्रवण शत.
11	दग्ध	भर.	चित्रा	उषा.	धनि.	उफा.	ज्ये.	रेवती

उपरोक्त सारिणी में 11 प्रकार के योग बताये गए हैं इनमें से कुछ शुभ तो कुछ अशुभ होते हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार से है :

1. सर्वार्थ सिद्धि योग : सर्वार्थ सिद्धि योग में किए जाने वाले प्रत्येक शुभ कार्य में सफलता मिलती है अर्थात इस योग में किया गया कार्य पूर्ण रूप से सफल होता है, यह योग सभी कार्यों में शुभ होता है।

2. अमृत सिद्धि योग : यह भी एक शुभ योग है। इसमें कार्य की शुभता बनी रहती है। औषधि प्रयोग करने और रोग का इलाज प्रारंभ करने के लिए यह योग अति शुभ होता है।

3. सिद्धि योग : कार्य की सफलता के लिए सिद्धि योग शुभ रहता है। इसमें किए गए कार्य की निश्चित सिद्धि होती है। सभी उत्तम कार्यों के लिए यह योग शुभ होता है।

विशेष : मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र हो तो गृह प्रवेश, शनिवार को रोहिणी नक्षत्र हो तो यात्रा तथा गुरुवार को पुष्य नक्षत्र हो तो विवाह करना शुभ नहीं होता अत: इन तीनों प्रकार के सिद्धि योगों में इन कार्यों को त्यागना चाहिए।

सिद्धियोग राहुकाल और यमघण्ट काल के दोषों को नाश करने वाला होता है अर्थात् सिद्धियोग होने पर ये दोष प्रभावी नहीं होते।

4. चर योग : चर का अर्थ है चलायमान अत: चर योग में किया गया कार्य निरन्तर चलता रहता है। इस योग में कार्य करने से पूर्व उस कार्य की प्रवृत्ति अवश्य ही जाँच लेनी चाहिए। नया वाहन खरीदना, दुकान, व्यवसाय प्रारम्भ करने में इस योग की अत्यधिक उपयोगिता है।

5. मृत्यु योग : इस योग में किया गया कार्य नष्टा हो जाता है। इसमें शुभ कार्य नहीं किये जाते। शुभ-मांगलिक कार्य इस योग में करने से दुर्घटना, मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्टा या बाधाएं उसमें उत्पन्न होते हैं।

6. उत्पात योग : यह एक अशुभ योग है। इस योग में कार्य प्रारंभ करने से बाधाएं अधिक उत्पन्न होने के कारण व्यक्ति कार्य पूरा नहीं कर पाता। कभी-कभी इस योग में यात्रा करने पर व्यक्ति अपने गंतव्य तक भी नहीं पहुँचता और भटक जाता है। मांगलिक कार्यों में विवाद उत्पन्न होते हैं।

7 काण योग : इस योग में जो कार्य किया जाता है उसमें कोई न कोई कमी रह जाती है अत: उसकी सफलता संदिग्ध रहती है तथा मांगलिक कार्यों में आगन्तुक लोगों द्वारा कमी निकाली जाती है।

8. काल योग : यह भी एक अशुभ योग है। इसमें किए गए कार्य में कष्टा, व्यवधान उत्पन्न होते हैं।

9. यमघण्ट योग : यह एक अनिष्टाकारी योग है। इस योग में कार्य निरुद्देश्य हो जाता है और उसमें रुकावट उत्पन्न होती है।

10. यमदंष्ट्रा योग : यह भी एक अनिष्टाकारी योग है। यमघण्ट काल की तरह ही इस योग में भी कार्य बाधित हो जाता है।

11. दग्ध योग : यह एक दुर्योग है। इसमें कार्य अग्नि से प्रभावित होकर नष्टा हो जाता है। यदि कोई यात्रा की जाये तो उसमें दुर्घटना या नुकसान होता है या हिंसा हो सकती है।

उदाहरण : जैसे-

रविवार को चन्द्रमा अश्विनी नक्षत्र पर हों तो सर्वार्थ सिद्धि।

रविवार को चन्द्रमा हस्त नक्षत्र पर हों तो अमृत सिद्धि।

रविवार को चन्द्रमा मूल नक्षत्र पर हों तो सिद्धि।

रविवार को चन्द्रमा पू.भा. नक्षत्र पर हों तो चर योग।

रविवार को चन्द्रमा विशाखा नक्षत्र पर हों तो उत्पात योग।

रविवार को चन्द्रमा अनुराधा नक्षत्र पर हों तो मृत्यु योग।

रविवार को चन्द्रमा ज्येष्ठा नक्षत्र पर हों तो काण योग।

रविवार को चन्द्रमा भरणी नक्षत्र पर हों तो काल व दग्ध योग, चन्द्रमा मघा नक्षत्र पर हों तो यमघण्ट व यमदंष्ट्रा व धनिष्ठा नक्षत्र पर हों तो यमदंष्ट्रा योग बन जाता है।

इस तरह उपरोक्त सारिणी के अनुसार वार व नक्षत्रों के आधार पर शुभाशुभ योग का निश्चय कर लिया जाता है।

वार तथा नक्षत्रों से बनने वाले कुछ अन्य योग

क्र. सं.	योग	फल	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
1	आनन्द	शुभ	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनु.	उषा.	शत.
2	काल-	अशुभ	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पूभा.दण्ड
3	धूम्र	अशुभ	कृतिका	पुनर्वसु	पूफा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उभा.
4	धाता	शुभ	रोहिणी	पुष्य	उफा.	विशा.	पूफा.	धनिष्ठा	रेवती
5	सौम्य	शुभ	मृगशिरा	आश्ले.	हस्त	अनु.	उषा.	शत.	अश्वि.
6	ध्वांक्ष	अशुभ	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पूभा.	भरणी

7	केतु	शुभ	पुनर्वसु	पूफा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उभा.	कृत्ति.
8	श्रीवत्स	शुभ	पुष्य	उफा.	विशा.	पूषा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहि.
9	वज्र	अशुभ	आश्ले.	हस्त	अनु.	उषा.	शत.	अश्वि.	मृग.
10	मुद्गर	अशुभ	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पूभा.	भरणी	आर्द्रा
11	छत्र	शुभ	पूफा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उभा.	कृत्ति.	पुन.
12	मित्र	शुभ	उफा.	विशा.	पूषा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य
13	मानस	शुभ	हस्त	अनु.	उषा.	शत.	अश्वि.	मृग.	आश्ले.
14	पद्म	अशुभ	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पूभा.	भरणी	आर्द्रा	मघा
15	लुम्ब	अशुभ	स्वाती	मूल	श्रवण	उभा.	कृत्ति.	पुन.	पूफा.
16	उत्पात	अशुभ	विशा.	पूषा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहि.	पुष्य	उफा.
17	मृत्यु	अशुभ	अनु.	उषा.	शत.	अश्विनी	मृग.	अश्ले.	हस्त
18	काण	अशुभ	ज्येष्ठा	अभि.	पूभा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
19	सिद्धि	शुभ	मूल	श्रवण	उभा.	कृत्ति.	पुनर्व	पूफा.	स्वाती

							सु		
20	शुभ	शुभ	पूषा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उफा.	विशा.
21	अमृत	शुभ	उषा.	शत.	अश्विनी	मृग.	आश्ले.	हस्त	अनु.
22	मुशल	अशुभ	अभि.	पूभा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा
23	गदा	अशुभ	श्रवण	उभा.	कृतिका	पुनर्वसु	पूफा.	स्वाती	मूल
24	मातंग	शुभ	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उफा.	विशा.	पूषा.
25	रक्ष	अशुभ	शत.	अश्विनी	मृग.	आश्ले.	हस्त	अनु.	उषा.
26	चर	शुभ	पूभा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.
27	सुस्थिर	शुभ	उभा.	कृतिका	पुनर्वसु	पूफा.	स्वाती	मूल	श्रवण
28	प्रवर्द्धमान	शुभ	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उफा.	विशा.	पूषा.	घनिष्ठा

इस प्रकार से बने उपरोक्त योगों का शुभाशुभ फल, योग की प्रकृति या योग के नाम के अनुसार ही प्राप्त होता है। यह 28 प्रकार के योग हैं जो अभिजित् सहित कुल 28 नक्षत्रों और वारों के आधार पर बनते हैं।

11.6 मास शून्य्, तिथि , न्क्षात्र, राशियां

प्रत्येक महीने में कुछ तिथियाँ व नक्षत्र ऐसे होते हैं, जो शुभ प्रभावहीन या निष्प्रभावी होते हैं। इन्हें ही शून्य तिथि या नक्षत्र कहा जाता है।

11.6.1 मास शून्य तिथियां

मास शून्य तिथियों में किसी भी शुभ कार्य को नहीं करना चाहिए। इन तिथियों में किया गया शुभ कार्य पूरा होने की बजाय नष्टः या शून्यता को प्राप्त होता है इसलिए मास शून्य तिथियाँ शुभ कार्यों में त्याग देनी चाहिएं।

11.6.2 मास शून्य नक्षत्र

मास शून्य नक्षत्रों में कार्य प्रारम्भ करने से धन का नाश होता है। इनमें जो भी कार्य किया जाता है उस कार्य में अनावश्यक खर्चा होता है लाभ का प्रतिशत बहुत ही कम अथवा शून्य होता है। जैसे किसी व्यक्ति ने इस योग में वाहन खरीदा तथा खरीदते ही वह दुर्घटनाग्रस्त हो गया, ठीक करवाया तो पता चला यह पेट्रोल अधिक जला रहा है, एवरेज बढ़वाया तो कुछ दिनों बाद वह गिरने से फिर क्षतिग्रस्त हो गया। इस प्रकार उस वाहन में आए दिन कोई न कोई समस्या आती रही और धन का व्यय उस पर होता चला गया। यह मास शून्य नक्षत्र या तिथि का योग इसी प्रकार की समस्याओं को देने वाला है।

मास शून्य राशियाँ : मास शून्य राशियाँ भी उसी तरह से त्याज्य हैं जिस प्रकार से मास शून्य तिथियाँ एवं मास शून्य नक्षत्र हैं। किसी भी शुभ, मांगलिक या स्वास्थ्यवर्धक कार्य की शुरुआत मास शून्य राशि में नहीं करनी चाहिए। कार्य में अत्यधिक परेशानियाँ आती हैं अर्थात् जो भी कार्य किया जाता है वह नष्ट होता है या उसमें व्यवधान आते हैं। कार्य पूर्ण करने के लिए धन का अत्यधिक व्यय होता है।

मास विशेष में शून्य तिथि व नक्षत्र

शून्य मास	चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आशाढ़	श्रावण	भाद्रपद	अश्विन	कार्तिक	मार्गशीर्ष	पौष	माघ	फाल्गुन
शुक्ल पक्ष की तिथि	8,9	12	13	07	2,3	1,2	10,11	14	7,8	4,5	06	03
कृष्ण पक्ष की तिथि	8,9	12	14	06	2,3	1,2	10,11	05	7,8	4,5	05	04

नक्षत्र	रोहि	चित्रा	उषा.	पूषा.	उषा.	शत.	पूभा. कृतिका	चित्रा	आर्द्रा	श्रवण	भरणी	नक्षत्र
	अश्	स्वाती	पुष्य	धनि.	श्रवण	रेवती	मघा	विशा	अश्वि.	मूल	ज्येष्ठा हस्त	अश्
राशि	कुंभ	मीन	वृषभ	मिथुन	मेष	कन्या	वृश्चिक	तुला	धनु	कर्क	मकर	सिंह

तिथि शून्य लग्न : जो लग्न किसी निश्चित तिथि को शुभ कार्य के लिए त्याज्य होती हैं, वे तिथिशून्य लग्न कहलाती हैं। मुहूर्त संबंधी कोई कार्य करते समय इन लग्नों को त्यागना चाहिए क्योंकि ये लग्न बलहीन होती हैं इसलिए इनमें किए गए कार्य की सफलता संदिग्ध रहती है।

तिथि शून्य लग्न सारिणी

तिथि	1	3	5	7	9	11	13
शून्य	तुला	सिंह	मिथुन	धनु	कर्क	धनु	वृषभ
लग्न	मकर	मकर	कन्या	कर्क	सिंह	मीन	मीन

मास शून्य तिथियों एवं शून्य लग्न का विचार मुख्य रूप से मध्य भारत में मुहूर्त निकालते समय ही किया जाता है।

पक्षरंध्र तिथियों में त्याज्य घटियां : एक माह में दो पक्ष होते हैं - शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष। एक पक्ष की कुछ विशेष तिथियां रंध्र तिथियां कहलाती है। जैसे - कृष्ण और शुक्ल दोनों पक्षों की चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी और चतुर्दशी। इन तिथियों की प्रारंभिक कुछ विशेष घटियां (समय) अशुभ मानी जाती हैं एवं इसके अतिरिक्ततिथि का संपूर्ण समय शुभ माना जाता है।

रंध्र तिथि में त्याज्य घटियां

रन्ध्र तिथि	4	6	8	9	12	14
त्याज्य घटी	8	9	14	25	10	5

उपरोक्त सारिणी में तिथि के नीचे जो घटी की संख्या बताई गई है उतनी ही घटी तिथि के प्रारंभ से गिनने पर जो समय निर्धारित होता है वही त्याज्य माना जाता है।

वार विशेष में खराब मुहूर्त : सप्ताह के सात वारों में कोई न कोई घटी अर्थात् एक निश्चित समय ऐसा होता है जो शुभ कार्यों के लिए अच्छा नहीं माना जाता है।

अशुभ समय ज्ञान सारिणी

वार/मुहूर्त	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
कुलिक	14	12	10	8	6	4	2
कालवेला	8	6	4	2	14	12	10
यमघंट	10	8	6	4	2	14	12
कंटक	6	4	2	14	12	10	8
अन्य अशुभ	7	9	3	9	15	5	1
मुहूर्त	-	13	-	10	16	6	11
	-	14	-	-	-	9	-

उपरोक्त सारिणी में अंकों के आधार पर सूर्योदय के उपरांत आने वाली घटी को लिखा गया है।

11.7 तिथिक्षय और वृद्धि

तिथियों का निर्धारण चन्द्रमा की कलाओं के आधार पर होता है। ये तिथियाँ चन्द्रमा की 16 कलाओं के आधार पर 16 प्रकारों में ही हैं। इसमें शुक्ल व कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से चतुर्दशी पर्यन्त 14-14 तिथियाँ तथा पूर्णिमा व अमावस्या सहित तीस तिथियों को मिलाकर एक चान्द्रमास का निर्माण होता है। शुक्ल पक्ष की 15वीं तिथि पूर्णिमा एवं कृष्ण पक्ष की 15वीं तिथि अमावस्या होती है।

एक तिथि का भोग काल सामान्यतया 60 घटी का होता है। किसी तिथि का क्षय या वृद्धि होना सूर्योदय पर निर्भर करता है। कोई तिथि, सूर्योदय से पूर्व आरंभ हो जाती है और अगले सूर्योदय के बाद तक रहती है तो उस तिथि की वृद्धि हो जाती है अर्थात् वह वृद्धि तिथि कहलाती है लेकिन यदि कोई तिथि सूर्योदय के बाद आरंभ हो और अगले सूर्योदय से पूर्व ही समाप्त हो जाती है तो उस तिथि का क्षय हो जाता है अर्थात् वह क्षय तिथि कहलाती है।

तिथि क्यों घटती-बढ़ती है ?

तिथियों का निर्धारण सूर्य और चन्द्रमा की परस्पर गतियों के आधार पर होता है। राशि चक्र में 3600 होते हैं साथ ही तिथियों की संख्या 30 हैं अत: एक तिथि का मान।

360 ◌ 30 = 120 = 1 तिथि

इसका तात्पर्य यह है कि जब सूर्य और चन्द्रमा एक स्थान (एक ही अंश) पर होते हैं तब अमावस्या तिथि होती है। इस समय चन्द्रमा, सूर्य के निकट होने के कारण दिखाई नहीं देते हैं या वे अस्त होते हैं तथा सूर्य और चन्द्रमा का अंतर शून्य होता है। चन्द्रमा की दैनिक गति सूर्य की दैनिक गति से अधिक होती है। चन्द्रमा एक राशि लगभग सवा दो दिन में पूरी करते हैं जबकि सूर्य 30 दिन लगाते हैं।

सूर्य, चन्द्रमा का अन्तर जब शून्य से अधिक बढ़ने लगता है तो प्रतिपदा प्रारम्भ हो जाती है और जब यह अंतर 120 होता है तो प्रतिपदा समाप्त हो जाती है और चन्द्रमा उदय हो जाते हैं। तिथि वृद्धि और तिथि क्षय होने का मुख्य कारण यह होता है कि एक तिथि 120 की होती है जिसे चन्द्रमा 60 घटी में पूर्ण करते हैं परन्तु चन्द्रमा की यह गति घटती-बढ़ती रहती है। कभी चन्द्रमा तेजी से चलते हुए (एक तिथि)120 की दूरी को 60 घटी से कम समय में पार करते हैं तो कभी धीरे चलते हुए 60 घटी से अधिक समय में पूर्ण करते हैं। जब एक तिथि (120) को पार करने में 60 घटी से अधिक समय लगता है तो वह तिथि बढ़ जाती है और जब 60 घटी से कम समय लगता है तो वह तिथि क्षय हो जाती है अर्थात् जिस तिथि में दो बार सूर्योदय हो जाए तो उस तिथि की वृद्धि और जिस तिथि में एक बार भी सूर्योदय नहीं हो उसका क्षय हो जाता है। तिथियों की क्षय और वृद्धि को हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं :-

वृद्धि तिथि:

जब किसी तिथि में दो बार सूर्योदय हो जाता है तो उस तिथि की वृद्धि हो जाती है। जैसे - किसी रविवार को सूर्योदय प्रात: 5:48 पर हुआ और इस दिन सप्तमी तिथि सूर्योदय के पूर्व प्रात: 5:32 बजे प्रारंभ हुई और अगले दिन सोमवार को सूर्योदय (प्रात: 5:47) के बाद प्रात: 7:08 तक रही तथा उसके बाद अष्टमी तिथि प्रारंभ हो गई। इस तरह रविवार और सोमवार को दोनों दिन सूर्योदय के समय सप्तमी तिथि होने से, सप्तमी तिथि की वृद्धि मानी जाती है। सप्तमी तिथि का कुल मान 25 घंटे 36 मिनिट आया जो कि औसत मान 60 घटी या 24 घंटे से अधिक है। ऐसी परिस्थिति में किसी भी तिथि की वृद्धि हो जाती है।

जब किसी तिथि में एक बार भी सूर्योदय नहीं हो तो उस तिथि का क्षय हो जाता है। जैसे- किसी शुक्रवार सूर्योदय प्रात: 5:44 पर हुआ और इस दिन एकादशी तिथि सूर्योदय के बाद प्रात: 6:08 पर समाप्त हो गई तथा द्वादशी तिथि प्रारंभ हो गई और द्वादशी तिथि आधी रात के बाद 27 बजकर 52 मिनिट (अर्थात् अर्द्धरात्रि के बाद 3:52) तक रही तत्पश्चात् त्रयोदशी तिथि प्रारंभ हो गई। द्वादशी तिथि में एक भी बार सूर्योदय नही हुआ। शुक्रवार को सूर्योदय के समय एकादशी और शनिवार को सूर्योदय (प्रात: 5:43) के समय त्रयोदशी तिथि रही, अत: द्वादशी तिथि का क्षय हो गया। इस प्रकार जब किसी तिथि में सूर्योदय

नहीं हो तो उस तिथि का क्षय हो जाता है। क्षय तिथि को पंचांग के तिथि वाले कॉलम में भी नहीं लिखा जाता जबकि वृद्धि तिथि को दो बार लिखा जाता है।

राहुकाल

राहुकाल एक ऐसा काल खण्ड है जो किसी कार्य की पूर्णता पर प्रश्न चिन्ह लगा देता है अर्थात् इस समय जो भी कार्य प्रारम्भ किया जाता है, वह कभी पूरा नहीं होता अथवा उसमें कोई न कोई विघ्न उत्पन्न हो जाता है अथवा वह कार्य अपूर्ण या नष्ट हो जाता है।

राहुकाल सप्ताह के सातों वारों को ही रहता है परंतु यह कभी भी रात्रि में नहीं रहता है और वार के अनुसार राहुकाल का समय निर्धारित होता है। यह केवल सूर्योदय से सूर्यास्त के मध्य ही होता है। राहुकाल की अवधि लगभग डेढ़ घंटे की रहती है।

वारानुसार राहुकाल सारणी

वार	**समय**
रविवार	सायं 4.30 से 6.00
सोमवार	प्रात: 7.30 से 9.00
मंगलवार	मध्याह्न 3.00 से 4.30
बुधवार	मध्याह्न 12.00 से 1.30
गुरुवार	मध्याह्न 1.30 से 3.00
शुक्रवार	प्रात: 10.30 से 12.00
शनिवार	प्रात: 9.00 से 10.30

राहुकाल में लग्न स्वभावानुसार फल

1. राहुकाल में चर लग्न (1, 4, 7, 10) हो तो उसमें कार्य करने से कार्य में विलम्ब होता है तथा व्यक्ति अपने उद्देश्य से गुमराह हो जाता है।
2. राहुकाल में स्थिर लग्न (2, 5, 8, 11) हो तो उसमें कार्य करने से कार्य करने वाला निर्णय नहीं ले पाता है अर्थात् वह उस कार्य में असमर्थ हो जाता है।
3. राहुकाल में द्विस्वभाव लग्न (3, 6, 9, 12) हो तो उसमें कार्य करने से व्यक्ति स्वयं अस्थिर एवं दूसरों को भी परेशानी उत्पन्न करता है।

4. अभिजित् मुहूर्त का समय किसी भी कार्य को करने के लिए शुभ माना गया है। यह मध्याह्न के समय आता है परंतु बुधवार को आने वाला अभिजित् मुहूर्त शुभ कार्य के लिए अशुभ होता है क्योंकि इस समय राहु काल रहता है।

5. अमृत योग और सिद्धि योग राहुकाल के दोषों का नाश करते हैं।

11.7.5 काल होरा

जब कभी कोई कार्य करना हो और यदि वह वार उस कार्य की प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं हो अथवा वह वार कार्य के लिए ठीक नहीं हो और कार्य करना अति आवश्यक हो तो उसके लिए काल होरा का प्रयोग करना लाभकारी होता है। प्रतिदिन सभी वारों की होरा एक निश्चित क्रम में आती है। इसलिए किया जाने वाला कार्य जिस वार को शुभ होता है, उस वार की होरा में उस कार्य को किया जा सकता है। काल होरा का यही उपयोग है।

एक दिन 24 घंटों का होता है। इन 24 घंटों में होरा भी 24 ही होती हैं, अर्थात् 1 होरा का समय 1 घंटे या ढाई घटी के लगभग रहता है। प्रथम होरा सूर्योदय से प्रारंभ होती है। जैसे-मंगलवार को कर्जा नहीं लिया जाता परंतु यदि लेना आवश्यक हो तो मंगलवार को अन्य शुभ वार जो कर्जा लेने में प्रशस्त हो (वार विशेष में करने योग्य कार्यों वाले प्रकरण में इनका वर्णन है) की होरा में कर्जा लिया जा सकता है, इसी प्रकार मंगल की होरा में कर्जा नहीं लिया जाता। यही नियम अन्य कार्यों के लिए प्रयोग में लिया जाना चाहिए।

काल होरा सारिणी

क्र. सं.	रवि	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्यो.से
1	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	1 घंटे
2	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	2 घंटे
3	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	3 घंटे
4	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	4 घंटे
5	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	5 घंटे
6	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	6 घंटे

7	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	7 घंटे
8	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	8 घंटे
9	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	9 घंटे
10	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	10 घं.
11	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	11 घं.
12	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	12 घं.
13	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	13 घं.
14	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	14 घं.
15	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	15 घं.
16	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	16 घं.
17	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	17 घं.
18	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	18 घं.
19	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	19 घं.
20	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	20 घं.
21	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	21 घं.
22	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	22 घं.
23	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	बुध	गुरु	23 घं.
24	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	सूर्य	सोम	मंगल	24 घं.

उपर्युक्त सारिणी में किसी वार विशेष में जिस वार की होरा का जो समय होता है। उस समय में उस होरा वाले वार से संबंधित कार्य किए जाते हैं तो मुख्य वार का दोष नहीं लगता।

भद्रा

पंचांग के एक भाग का नाम करण भी है। तिथि के आधे भाग को ही करण कहते हैं अर्थात् तिथि का जितना मान होता है उसका आधा एक करण का मान होता है अत: एक तिथि में दो करण होते हैं। करणों के नाम और संज्ञाएं - बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि आदि हैं। इनकी तिथि के अनुसार पुनरावृत्ति होती रहती है तथा इनमें विष्टि नाम के करण का मान, काल या समय ही भद्रा काल या भद्रा के नाम से जाना जाता है।

शुक्ल पक्ष में अष्टमी और पूर्णिमा के पहले आधे भाग में, चतुर्थी और एकादशी के उत्तरार्द्ध में भद्रा होती है। कृष्ण पक्ष में तृतीया और दशमी के उत्तरार्द्ध में और सप्तमी व चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध यानि पहले आधे भाग में भद्रा होती है।

भद्रा का समय शुभ कार्यों के लिए त्याज्य माना जाता है। इसमें शुभ, मांगलिक और वृद्धि के कार्य नहीं किए जाते हैं। पौराणिक आधार पर भद्रा नाम की एक कृत्या भगवान शंकर के द्वारा उत्पन्न की गई जिसने राक्षसों का संहार किया। युद्ध विराम के पश्चात् वह भूख से व्याकुल हुई और भगवान शंकर से प्रार्थना की कि- हे प्रभु, मैं भूखी हूँ, मेरे भोजन का प्रबंध करिए? तब भगवान शंकर ने इसे आदेश दिया कि विष्टि करण में जो कार्य किए जाएंगे उनका समस्त फल तुम्हें प्राप्त होगा इसलिए भद्राकाल में किए गए कार्यों के शुभ परिणाम प्राप्त नहीं होते परंतु अति आवश्यकता में भद्रा पुच्छ में कार्य किए जा सकते हैं।

भद्रा पुच्छ : भद्रा पुच्छ एक कालखण्ड का नाम है जो संपूर्ण भद्राकाल का एक छोटा भाग होता है। शुक्ल पक्ष में चतुर्थी के आठवें प्रहर, अष्टमी के प्रथम प्रहर, एकादशी के छठे प्रहर, पूर्णिमा के तीसरे प्रहर की अंतिम तीन-तीन घटी तथा कृष्ण पक्ष में तृतीया के सातवें प्रहर की, अष्टमी के दूसरे प्रहर की, दशमी के पांचवें प्रहर की एवं चतुर्दशी के चौथे प्रहर की अंतिम तीन-तीन घटी भद्रा पुच्छ संज्ञक होती हैं। भद्रा पुच्छ में शुभ मांगलिक कार्य किए जा सकते हैं।

भद्रा मुख : शुक्ल पक्ष में चतुर्थी तिथि के 5वें प्रहर के प्रारंभ की 5 घटी, अष्टमी तिथि के दूसरे प्रहर की पहली 5 घटी, एकादशी तिथि के 7वें प्रहर की पहली 5 घटी और पूर्णिमा तिथि के चौथे प्रहर की प्रारंभिक 5 घटी तथा कृष्ण पक्ष में तृतीया तिथि के आठवें प्रहर में शुरु की 5 घटी, सप्तमी तिथि में तीसरे प्रहर की शुरु की 5 घटी, दशमी तिथि के छठे प्रहर की प्रारंभिक 5 घटी और चतुर्दशी तिथि के प्रथम प्रहर के शुरु की 5 घटी भद्रा का मुख कहलाती है जो कि भद्रा का सबसे अधिक अशुभ समय है।

एक अहोरात्र यानि दिन और रात्रि में कुल 8 प्रहर होते हैं। दिन के चार और रात्रि के चार। सूर्योदय से दिन का प्रथम प्रहर और सूर्यास्त से रात्रि का प्रथम प्रहर प्रारंभ हो जाता है। दिनमान और रात्रिमान को चार

भागों में विभाजित करने पर प्रहर का शुद्ध मान प्राप्त हो जाता है। एक प्रहर लगभग 3 घंटे यानि साढ़े सात घटी का होता है। इस आधार से 1 घटी = 24 मिनिट मानते हुए भद्रा मुख और भद्रा पुच्छ का समय निश्चित किया जा सकता है।

भद्रा का वास : भद्रा के समय चन्द्रमा की राशि विशेष में स्थिति के आधार पर भद्रा का वास माना जाता है। भद्रा का वास मुख्य रूप से तीन स्थानों पर स्वर्गलोक, मृत्युलोक और पाताल लोक में माना जाता है। मृत्युलोक से तात्पर्य पृथ्वी लोक से है।

भद्रा का वास

भद्रा वास	चन्द्र राशि
मृत्यु लोक	11, 12, 4, 5
स्वर्ग लोक	1, 2, 3, 8
पाताल लोक	6, 7, 9, 10

जैसे चन्द्रमा मीन राशि में हों और भद्रा काल हो तो भद्रा का वास मृत्युलोक में माना जाता है। विशेष रूप से मृत्युलोक की भद्रा अधिक अशुभ होती है।

नक्षत्रों में किए जाने योग्य कार्य

प्रत्येक नक्षत्र किसी न किसी कार्य के लिए अत्यधिक उपयुक्त होता है। सभी 27 नक्षत्रों को उनके स्वभाव के अनुसार अलग-अलग संज्ञाओं में बाँटा गया है। इन संज्ञाओं के आधार पर ही इनमें किए जाने योग्य कार्यों का विभाजन किया गया है।

11.7.7 नक्षत्रों की संज्ञा और विहित कार्य सारिणी

संज्ञा	नक्षत्र	वार	कार्य
धुर्व- स्थिर	उफा.,उषा.,उभा. रोहिणी	रवि	स्थिर, बीज रोपण, गृह निर्माण, शान्ति के कार्य, वाटिका गमन
चर	स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा,	सोम	वाहन की सवारी, वाटिका भ्रमण

	शतभिषा		
उग्र क्रूर	पूफा.,पूषा.,पूभा., मघा, भरणी	मंगल	घात, अग्नि, विष, शस्त्रादि
मिश्र	विशाखा, कृतिका	बुध	अग्नि कार्य, मिश्र कार्य
क्षिप्र- लघु	हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्	गुरु	व्यापार, आभूषण
मृदु-मैत्र	मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा	शुक्र	गीत, वस्त्र, क्रीड़ा, मैत्री, भूषण
तीक्ष्ण/ दारुण	मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा	शनि	घात, उग्र कार्य, पशुदमन

नक्षत्र के मुखः 27 नक्षत्रों को एक अन्य प्रकार से भी विभाजित किया गया है। इस प्रकार से इन्हें 3 श्रेणियों में रखा गया है।

1. अधोमुख 2. ऊर्ध्वमुख, 3. तिर्यक्मुख।

नक्षत्रों की मुख सारिणी

नक्षत्र संज्ञा	नक्षत्र
अधोमुख	मूल, आश्लेषा, कृतिका, तीनों पूर्वा, भरणी,मघा
ऊर्ध्वमुख	आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शत., तीनों उत्तरा, रोहिणी
तिर्यक्मुख	मूल, रेवती, विशाखा, अनुराधा, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, अश्विनी

1. **अधोमुख :** नक्षत्रों में वे कार्य किए जाते हैं जो अधो अर्थात् भूमि के नीचे के कार्य या उससे संबंधित हों। इनमें प्रमुख हैं:- कुआ, बोरिंग, तहखाना, बावड़ी, हौद, तड़ाग, खनन आदि से संबंधित कार्य।

2. **ऊर्ध्वमुख :** इनमें वे कार्य किए जाते हैं जिन्हें ऊपर की ओर उठाना हो, सृजनशील, भवन निर्माण से जुड़े कार्य, कृषि कार्य आदि।

3. **तिर्यक्मुख :** तिर्यक् का अर्थ होता है सीधा चलना या सामने चलना। इनमें वे कार्य किए जाते हैं जो तिर्यंक् संज्ञक हों। जैसे- सड़क निर्माण, वाहन, यांत्रिक कार्य, यात्रा आदि। इसके अतिरिक्त इन नक्षत्रों में उपरोक्त दोनों प्रकार के कार्य भी किए जा सकते हैं।

11.7.8 नक्षत्र संज्ञा का अन्य प्रकार

इस विभाजन में नक्षत्रों को कुल चार संज्ञाओं में बाँटा गया है। इन संज्ञाओं का उपयोग केवल गुम या खोई हुई वस्तु की प्राप्ति या अप्राप्ति का ज्ञान करने हेतु किया जाता है। जैसा कि निम्न प्रदर्शित सारिणी से दर्शाया गया है।

नक्षत्र संज्ञा सारिणी

नक्षत्र	28 नक्षत्र	दिशा	फल
अन्धाक्ष	रोहि.,पुष्य, उफा., विशा.,पूषा.,अभि., रेवती	पूर्व	शीघ्र लाभ
मन्दाक्ष	मृग., आश्लेषा, चित्रा, अनु., उषा., शत., अश्वि.	दक्षिण	प्रयत्न से लाभ
मध्याक्ष	आर्द्रा, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभि., पू.भा., भरणी	पश्चिम	दूर श्रवण विलंब से लाभ
सुलोचन	पुन., पूफा., स्वाती, मूल, श्रवण, उभा., कृतिका	उत्तर	न श्रवण न लाभ

- अन्धाक्ष नक्षत्र : इन नक्षत्रों में खोई हुई या भूल से रखी गई वस्तु अथवा लापता व्यक्ति से संबंधित प्रश्न किए जाएं तो उनका शीघ्र समाधान होता है।

- मंदाक्ष नक्षत्र : मंदाक्ष नक्षत्रों में जो वस्तु गुम होती है वह दक्षिण दिशा में प्रयत्न करने पर प्राप्त होती है।

- मध्याक्ष नक्षत्र : इन नक्षत्रों में जो वस्तु खो जाती है अथवा चोरी हो जाती है उसकी प्राप्ति नहीं हो पाती है। केवल यह पता चलता है कि वस्तु कहाँ और किसके पास है।

- सुलोचन नक्षत्र : इन नक्षत्रों में लापता हुए व्यक्ति, चोरी गई वस्तु या धन की प्राप्ति कभी नहीं होती और न ही उसके बारे में कहीं सुना जाता है।

जैसे कोई वस्तु या कोई व्यक्ति मृगशिरा नक्षत्र में गुम हो गया। मृगशिरा नक्षत्र की मन्दाक्ष संज्ञा है। जिसका फल है दक्षिण दिशा में तलाश की जायेगी तो प्राप्ति हो जायेगी। इसी तरह इस सारिणी का प्रयोग किया जाता है।

कृषि हेतु बीज बोने का मुहूर्त : शुभ मुहूर्त में नई फसल के लिए बीज बोया जाता है तो फसल की पैदावार अच्छी होती है।

- शुभ वार : सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार।

- शुभ नक्षत्र : मूल, मघा, स्वाती, धनिष्ठा, तीनों उत्तरा, (उ.फा.,उ.षा., उ.भा.) रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य।

- शुभ तिथि : कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तथा दोनों पक्षों की 2, 3, 5, 7, 8, 10, 11, 12, 13 और पूर्णिमा तिथि शुभ होती हैं।

उपरोक्त शुभ तिथि, वार, नक्षत्रों में बीज रोपण शुभ रहता है। इसके अतिरिक्त अन्य नक्षत्र, वार, तिथि अशुभ होते है। उनमें बीजारोपण आदि करने से उत्पादन नहीं होता है अथवा फसल किसी आपदा के कारण नष्टा हो सकती है।

बीज बोने के लिए शुभ नक्षत्र, वार, तिथि के अतिरिक्त राहु चक्र भी देखना चाहिए।

राहु चक्र : राहु, गोचर वश जिस नक्षत्र पर होते हैं उससे लगातार 8, 12वाँ, 16वाँ, 20वाँ तथा 24, 25, 26 व 27वाँ नक्षत्र अशुभ और 9, 10, 11, 13, 14, 15, 17, 18, 19, 21, 22 एवं 23वाँ नक्षत्र बीज बोने के लिए शुभ होता है।

राहु चक्र सारिणी

राहु नक्ष से	8	3	1	3	1	3	1	3	4
फल	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ

जैसे माना कि राहु शतभिषा नक्षत्र पर चल रहे हैं और चन्द्रमा रोहिणी नक्षत्र पर हैं तो शतभिषा से गिनने पर रोहिणी नक्षत्र 8वाँ पड़ता है। चक्रानुसार प्रथम आठ नक्षत्र अशुभ होते हैं अत: रोहिणी नक्षत्र बीज बोने के लिए शुभ नहीं है लेकिन मृगशिरा नक्षत्र 9वाँ पड़ता है जो कि शुभ है अत: मृगशिरा नक्षत्र में बीज बोया जा सकता है और मृगशिरा नक्षत्र बीज बोने के लिए शुभ भी बताया गया है।

सूर्य चक्र : यह चक्र भी राहुचक्र जैसा ही है। बीज बोने के लिए इस चक्र से भी नक्षत्र शुद्धि की जाती है। इसमें सूर्य गोचर में जिस नक्षत्र पर होते हैं उससे चंद्र नक्षत्र की गणना करते हैं। इस चक्र में अभिजित् नक्षत्र को भी गणना में शामिल करते हैं।

सूर्य चक्र सारिणी

सूर्य नक्षत्र से	3	8	9	8
फल	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ

अत: बीजारोपण कार्य प्रारम्भ करने के लिए मुहूर्त का चयन करते समय राहु चक्र के साथ सूर्य चक्र को भी देखना आवश्यक है, तभी मुहूर्त पूर्ण रूप से शुभ एवं प्रामाणिक होगा।

हवन आहुति का मुहूर्त : जब किसी बड़े यज्ञ या ग्रह शान्ति यज्ञ का आयोजन करना होता है तो इस चक्र के माध्यम से यह देखा जाता है कि हवन की आहुतियाँ कहीं पाप ग्रह के मुख में तो नहीं पड़ रही हैं। इस चक्र के आधार पर शुभ ग्रह चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र के मुख में आहुतियाँ पड़ें तब हवन या यज्ञ करना शुभ हाता है। जिस ग्रह की शान्ति करनी हो उसी ग्रह के मुख में आहुतियाँ पड़ना सुखदायक होता है। इस चक्र में सूर्य जिस नक्षत्र पर हों उस नक्षत्र से क्रमश: तीन-तीन नक्षत्रों के नक्षत्रों के नौ समूह बनाने पर यह चक्र बन जाता है।

हवन आहुति चक्र सारिणी

नक्षत्र त्रिक	**ग्रह**	**फल**
पहला त्रिक	सूर्य	शुभफल की हानि
दूसरा त्रिक	बुध	बुद्धि की वृद्धि
तीसरा त्रिक	शुक्र	संपत्ति प्राप्ति

चौथा त्रिक	शनि	राज पीड़ा
पांचवां त्रिक	चन्द्रमा	कृषि, जलमग्न
छठा त्रिक	मंगल	अग्नि भय
सातवां त्रिक	गुरु	मनोरथ सिद्धि
आठवां त्रिक	राहु	हानि
नवाँ त्रिक	केतु	दुर्भिक्ष

सूर्य नक्षत्र से, चन्द्र नक्षत्र तक गिनने पर 3-3 के क्रम में यदि उपरोक्त चक्र के आधार पर पाप ग्रह के भाग में आहुति पड़े तो अशुभ और शुभ ग्रह के भाग में आहुति पड़े तो उत्तम फल की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त जिस ग्रह की शान्ति के लिए हवन करना हो उस ग्रह के मुख या भाग में आहुति पड़ना भी शुभ होता है।

रोगोत्पत्ति के दिन से रोग मुक्ति समय : जिस किसी भी व्यक्ति को कोई रोग होता है तो जिस दिन रोग का प्रारम्भ हो उस दिन जो नक्षत्र होता है उस नक्षत्र के आधार पर उस रोग की अवधि या प्रभाव अथवा उसके ठीक होने या रोग मुक्ति का दिन इस सारिणी से ज्ञात किया जा सकता है।

रोग अवधि ज्ञान सारिणी

रोग वाले दिन का नक्षत्र	रोग मुक्ति का समय
स्वाती, ज्येष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, आर्द्रा, आश्लेषा	मृत्यु होती है
रेवती, अनुराधा	रोग मुक्ति में समय अधिक लगता है
भरणी, श्रवण, शतभिषा, चित्रा	11 दिनों में
विशाखा, हस्त, धनिष्ठा	15 दिनों में
मूल, कृतिका, अश्विनी	9 दिनों में
मघा	20 दिनों में

उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी	7 दिनों में
पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी	
मृगशिरा, उत्तराषाढ़ा	30 दिनों में

विशेष : भरणी, आश्लेषा, मूल, कृतिका, विशाखा, आर्द्रा और मघा-इन नक्षत्रों में किसी को सर्प डस ले तो उसकी अवश्य मृत्यु होती है।

उपरोक्त चक्र के अनुसार जिस नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो, उस नक्षत्र के अनुरूप रोग की अवधि या कष्ट मिलते हैं।

11.8 संक्रान्ति

संक्रान्ति प्रकरण : जब कोई ग्रह गोचरवश किसी राशि को भोगते या भ्रमण करते हुए अगली राशि में प्रवेश करते हैं तो जिस समय राशि परिवर्तन होता है, वह समय संक्रांति काल कहलाता है। नीचे दी गई सारिणी के अनुसार जब कोई ग्रह, किसी निश्चित वार और नक्षत्र में राशि परिवर्तित करते हैं तो यह संक्रांति विभिन्न वर्गों को शुभाशुभ परिणाम प्राप्त होने का संकेत देती है।

संक्रांति काल सारिणी

वार	नक्षत्र	संज्ञा	फल
रवि	पूफा., पूभा., पूर्वाषाढ़ा, भरणी, मघा		घोरा सुख
सोम	हस्त, पुष्य, अभिजित्,ां		ध्वांक्षी सुख
मंगल	स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा	महोदरी	चोरों को सुख
बुध	मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा	मन्दाकिनी	क्षत्रियों को सुख

गुरु	उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी	मन्दा	विप्रों को सुख
शुक्र	विशाखा, कृतिका	मिश्रा	पशुओं को सुख
शनि	मूल, आर्द्रा, ज्येष्ठा, आश्लेषा	राक्षसी	अंत्यजों को सुख

उपरोक्त सारिणी में दी गई जाति से अर्थ है कि उस श्रेणी का कार्य करने वाला वर्ग।

- शूद्र : सेवा कार्य, वाहन चालक, नौकर आदि तथा अन्य इसी श्रेणी का कार्य करने वाले।
- वैश्य : वणिक, व्यापारिक, रुपये-पैसे का लेन-देन करने वाले, बैंककर्मी, शेयर मार्केट तथा पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था से संबंधित लोग।
- अंत्यज : अति निम्न स्तर के कार्यों से आजीविका कमाने वाले।
- चोर : चोर प्रवृत्ति के लोग, देशद्रोही, डकैत, तस्कर, जुआरी, सट्टेबाज, इसमें बड़े-बड़े कर चोरी करने वाले भी शामिल होते हैं।
- विप्र : शिक्षक व शिक्षण कार्य से जुड़े लोग, धर्मगुरु, धर्म प्रचारक, बुद्धिजीवी, उपदेशक, सलाहकार आदि।
- क्षत्रिय : सुरक्षा प्रणाली से जुड़े लोग, सैनिक, पुलिस आदि।

इस प्रकार उक्त सारिणी से ग्रह विशेष की संक्रांति में मिलने वाले फलों और प्रभावों को आसानी से ज्ञात किया जा सकता है। विशेषत: इस सारिणी का सूर्य की सक्रान्ति को महत्त्वपूर्ण मानते हुए प्रयोग किया जाता है। सूर्य देव की वैसे तो सभी संक्रांतियां महत्त्वपूर्ण होती हैं तथापि मेष, कर्क, तुला व मकर संक्रांति अत्यधिक महत्त्व वाली होती हैं।

करणों के अनुसार संक्रान्ति के वाहनादि विचार: जब किसी ग्रह की संक्रांति प्रमुख 11 करणों में से किसी एक करण में होती है तो उस करण के अनुसार उस संक्रांति के विभिन्न विषयों का निर्धारण होता है। इनमें संक्रांति के वाहन, पुष्प, खाने योग्य पदार्थ, लेप, वस्त्र, संक्रांति की जाति आदि का विचार किया जाता है।

यहाँ करण विशेष में होने वाली संक्रांति के बताने का कारण यह है कि जब भी किसी निश्चित करण में संक्रान्ति होती है तो उससे संबंधित विषयों की हानि होती है अर्थात् वे विषय प्रभावित होते हैं, यदि वह कोई वस्तु है तो उसका व्यापार प्रभावित होगा। साथ ही इन सभी वस्तुओं के व्यवसायी या इनसे अपनी जीविकोपार्जन करने वाले लोग भी प्रभावित होते हैं अर्थात् करण संबंधी समुदाय विशेष ही मुख्य रूप से प्रभावित होता है। उक्त विषय का सारिणीगत विवरण अग्रिम पृष्ठ पर पढ़ें।

11.9 सारांश

मुहुर्त प्रकरण के वर्णन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पंचांग विवेचन में आने वाले तत्वों का ज्ञान मुहुर्त के लिए है। तिथि वार नक्षत्र योग करण आदि की उपयोगिता शुभ और अशुभ दोनों के लिए होती है। किस मास में कौन सा कार्य किस मुहुर्त में किया जाय अथवा तिथियों की पहचान करके ही ज्योतिष शास्त्र में बताये गये नियामानुकुल कार्य किये जाय जिससे कि मुहुर्त का औचित्य सिद्ध हो सके, यही सब इस इकाई की पाठ्य सामग्री का प्रयोजन है। विभिनन योग भी शुभाशुभ तथा यात्रा आदि में निर्णायक सिद्ध है। रिक्ता , भद्रादि के विचार भी मुहुर्त के ही अंग है। मासशून्य तिथियों की तरह मासशून्य राशियां भी मुहुर्त में यथावसर ज्याज्य हैं। इन सबके अतिरिक्त साप्ताहिक कार्य व्यवहार में भी कोई न कोई एक घटी ऐसी अवश्य होती है। जिसमें शुा कार्य करना अच्छा नहीं माना जाता है। तिथिक्षय और वृद्धि का ज्ञान भी मुहुर्त के लिए आवश्यक है चूंकि राहुकाल कार्य की पूर्णता पर एक प्रश्न चिन्ह् अवश्य लगता है, इसीलिए मुहुर्त में राहुकाल का विचार जानना व्यवहार में भी अत्यावश्यक होता है। सप्ताह के सातों दिनों में राहुकाल रहता ही है। अत: इनका विचार जानने हुए सम्यक परीक्षण कर आप मुहुर्त में शुभाशुभ का ज्ञान कराने में समर्थ हो सकेंगे।

11.11 अभ्याशस प्रश्न

1 नक्षत्रों की संख्या कितनी है

- क 22
- ख 24
- ग 24
- घ 28

2 नक्षत्रों के समूह को क्या कहते हैं

क लग्न
ख राशि
ग होरा
घ काल

3 अमृत सिद्धि योग कैसा योग है

क यह एक अशुभ

ख सुलभ

ग शुभ
घ अशुभशुभ

4 चर का अर्थ है

क चलयामान
ख निश्चल
ग निस्पंद
घ आहत

5 अनिष्टकारी योग है
क सर्वार्थसिद्धि
ख अमृत
ग चर
ग यमघण्ट

6 रविवार को चन्द्रमा विशाखा नक्षत्र हो तो कौन सा योग होता है

क सिद्धि
ख काण
ग मुद्धर
घ उत्पात

7 रविवार को राहुकाल कब होता है

क 12 बजे
ख 1.30 से 2.30

ग 3 बजे

घ 4.30 से 6 बजे

8 जो निश्चित तिथि को शुभ कार्य के लिए त्याज्य हो, ऐसी लग्न को कहते है

क क्षय

ख शून्य

ग तिथि शून्य

घ वार शून्य

9 रविवार को चन्द्रमा अनुराधा नक्षत्र पर हो तो योग बनता है

क अमृत

ख कालसूर्य

ग मृत्यु

घ कोई नही

10 रविवार को दशमी और बुधवार प्रतिपदा होने पर योग होता है

क क्रकच

ख दग्ध

ग हुताशय

घ संर्वत

11 शुक्लपक्ष की अन्तिम तिथि है

क चतुर्दशी

ख अमावस्या

ग पूर्णिमा

घ द्वादशी

12 मासों का निर्धारण कितने प्रकार से किया जाता है

क चार

ख तीन

ग दस

घ बारह

13 एक घंटा में कितनी घटी होती है

क 3 ख 31/2 ग 2 ½ घ 5 2/2

14 14 अप्रेल से 14 मई तक कौन सा मास कहलाता है

क तुला मास
ख धनु मास
ग मेष मास

घ सिंह मास

15 15 दिसम्बर से 14 जनवरी तक मास होता है
क धनु मास
ख तुला मास
ग मेष मास

घ सिंह मास

11.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सारावली

सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहज्जातकम्

व्याख्याकार: केदारदत्त जोशी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

3. फलदीपिका

सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

4. भारतीय ज्योतिष

व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई 12

विवाह, यात्रा मुहूर्त्त

इकाई की संरचना

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 विषय प्रवेश
12.3.1 वर व कन्या वरण
12.3.2 विवाह मुहूर्त्त
12.3.3 त्रिबल शुद्धि
12.3.4 विवाह मण्डप स्थापना
12.3.5 दस रेखा दोष
12.3.6 पंचशलाका चक्र
12.3.7 सप्तशलका चक्र
12.3.8 विवाह लग्न की शुभता
12.3.8.1 त्रिबल शुद्धि
12.3.8.2 लत्ता दोष
12.3.8.3 पात दोष
12.3.8.4 विवाह लग्न शुद्धि
12.3.8.5 गणेश निमंत्रण
12.3.8.6 सुहासिनी आमंत्रण
12.3.8.7 गणेशस्थापन एवं अन्य
12.3.8.8 मण्डपस्थापन
12.3.8.9 वधूप्रवेश द्विरागमन मुहूर्त्त
12.4 यात्रा का शुभ समय
12.4.1 दिशाशूल
12.4.2 वार दिशाशूल

12.4.3 यात्रा में दिशा निषेध
12.4.4 तारा शोधन
12.5 योगिनी विचार
12.5.1 योगिनी की स्थिति
12.5.2 योगिनी बोधक सारणी
12.5.3 घात चक्र सारिणी
12.5.4 काल व पाश का स्पष्टीकरण
12.5.5 परिघदण्ड
12.5.6 कुल – अकुल संज्ञक सारिणी
12.5.7 यात्रा में शुभवार, नक्षत्र
12.5.7.1 यात्रा मुहूर्त्त में नक्षत्रों के अशुभ समय
12.5.7.2 यात्रा में शुभलग्नविचार
12.5.7.3 यात्रा के महत्त्वपूर्ण नियम
12.5.7.4 यात्रा मुहूर्त्त का उदाहरण
12.5.7.5 कुल अकल ज्ञान सांख्यिकी शोधन
12.6 सारांश
12.7 अभ्यास प्रश्न
12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
12.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

12.1 प्रस्तावना

मानव जीवन में किये जाने वाले संस्कारों के अन्तर्गत विवाह संस्कार सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। मनोनुकूल जीवन साथी से जीवन में उद्देश्यों की पूर्ति संभव हो पाती है। अत: विवाह अनेक दृष्टि से विचारित होना चाहिए। यात्रा भी भौतिक जीवन में सफलता समपादन के लिए बहुतर आवश्यक है। इसलिए इसका विचार भी विवधि दृष्टिकोणों के अनुसार किया जाना चाहिए। इन्हीं आलोकों के अध्ययन में प्रस्तुत इकाई का वर्णन सन्निहित है।

विश्व की संस्कृतियों में विवाह एक महत्त्वपूर्णतम् कार्य है तथा निर्णय भी। हिन्दू विवाह एक संस्कार है, जहॉ यह समझौता माना जाता है वहां भी इसे संस्कार विधि से ही सम्पन्न होना चाहिए क्योंकि इसकी सम्पन्नता जीवन निर्वाह व निर्माण में अत्यनत प्रभावी एवं महत्त्वपूर्ण है। इस इकाई में विवाह मुहूर्त्त के निर्धारण में प्रयुक्त ज्योतिषय गणनाओं पर आधारित पद्धतियों, विधियों का वर्णन सुगमता से आपके अध्यनार्थ प्रस्तुत किया गया है। यात्रा से संबंधित शास्त्रीय ओर व्यवहार सम्मत निर्णय भी इस इकाइ्र के वर्णन विषय है। विवाह एवं यात्रा से संबंधित ज्योतिषीय तथ्यों का सम्यक् अध्ययन आप इस इकाई के

अन्तर्गत करेंगे।

अत: प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप विवाह संस्कार की सम्पन्नता में प्रयुक्त विविध पक्षों, पद्धतियों का ज्ञान प्राप्तकर यात्रा आदि से संबंधित निर्णयों को बताने में सक्षम हो सकेंगे। साथ ही यह बता सकेंगे कि यात्रा में निषिद्ध ओर ग्राह्य क्या है, विवाह में ग्राह्य और त्याज्य क्या है।

12.2 उद्देश्य

विवाह संस्कार एवं यात्रा वर्णन से संबंधित इस बारहवीं इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेंगे कि -

1 विवाह में शुभ दिन कौन कौन से है?
2 विवाह के पश्चात् छ: महीने तक क्या क्या करना चाहिए?
3 वर व कन्या के वरण का क्या विधान है। इसके वरण का मुहूर्त विधान क्या है?
4 विवाह करने में कौन से नक्षत्र प्रशस्त हैं?
5 त्रिबल शुद्धि की विशेषता क्या है?
6 यात्रा में मुहूर्त के पक्ष कौन कौन से हैं?
7 यात्रा में दिक् गुरू का क्या महत्त्व है?
8 यात्रा के प्रशस्त वार कौन कौन से हैं?

12.3 विषय प्रवेश

विवाह संस्कार मानव जीवन में अपनाये जाने वाले सभी सोलह संस्कारों में सबसे महत्त्वपूर्ण है। विवाह के उपरांत जीवन में बड़े परिवर्तन होते हैं और यह भी कह सकते हैं कि व्यक्ति के भाग्य में उतार-चढ़ाव भी विवाह के बाद आते हैं। सुन्दर और मनोनुकूल जीवनसाथी मानव जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है लेकिन यह आवश्यक नहीं की हर कोई हर किसी के लिए मनोनुकूल हो। किन्हीं में शैक्षिक साम्य होते हुए भी मानसिक, स्वाभाविक व वैचारिक साम्यता नहीं मिलती। वस्तुत: स्वभाव और वैचारिक योग्यता कोई जन्म से लेकर नहीं आता अपितु परिस्थिति और परिवेश के सहयोग से ग्रह प्रदत्त गुणों का विकास या कमी हो जाती है।

हिन्दू संस्कृति ही नहीं अपितु विश्व की प्रत्येक संस्कृति में विवाह को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। विवाह का उद्देश्य स्त्री धारा को पुरुष धारा में मिलाकर उसे मुक्तिकी अधिकारिणी बनाना तथा दोनों की अनर्गल अनियंत्रित पशु प्रवृत्तियों को नियंत्रित कर दोनों की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, पारलौकिक तथा आध्यात्मिक उन्नति करना और दोनों के मधुर समन्वय से दोनों की पूर्णता सिद्ध करना एवं सांसारिक सुख प्रदान करना है। इसलिए वह समय अतिमहत्त्वपूर्ण होता है जब स्त्री धारा का पुरुष धारा में विलय हो रहा है अर्थात् विवाह हो रहा है। जैसाकि ज्योतिष (मुहूर्त) का मूल सिद्धान्त है कि कोई कार्य

यदि शुभ मुहूर्त में किया जाए, जबकि ग्रह स्थितियाँ अनुकूल हों तो उस कार्य के अत्यंत शुभ परिणाम मिलते हैं लेकिन यदि कोई कार्य अशुभ समय यानि विपरीत ग्रह स्थितियों में किया जाता है तो उसमे असफलता मिलती है। इसीलिए विवाह जो कि जीवन का महत्त्वपूर्ण कार्य होता है, सही समय पर संपन्न होता है तो वैवाहिक जीवन मधुर और मंगलमय हो जाता है। बहुत से ऐसे उदाहरण मिलते हैं जबकि पुरुष व स्त्री दोनों ने विवाह से पूर्व एक-दूसरे को देखा तक नहीं और फिर भी उनका वैवाहिक जीवन लंबा और सुखमय हो गया। इसके विपरीत वे स्त्री-पुरुष जो विवाह से पूर्व एक-दूसरे पर मर-मिटने को तैयार थे और एक-दूसरे की भावनाओं को समझते थे, विवाह के उपरांत एक-दूसरे का मुँह भी देखना पसंद नहीं करते। इसका प्रमुख कारण होता है वह समय जब विवाह होता है ज्योतिष में बड़े मुहूर्तों में से एक विवाह मुहूर्त भी है। विवाह मुहूर्त कई प्रकार की ज्योतिष गणनाओं के आधार पर निश्चित होता है, उन विधियों का हम अध्ययन करेंगे। इसके अतिरिक्तविवाह से संबंधित कुछ बातों का भी ध्यान रखा जाता है जो पुरुष या स्त्री के जन्म मास, जन्म नक्षत्र, जन्म लग्न और बड़े अथवा छोटे होने पर निर्भर होती हैं।

विवाह मुहूर्त का निर्धारण करना अध्याय के अन्त में बताया जायेगा। उससे पूर्व विवाह मुहूर्त के निर्धारण में प्रयुक्त ज्योतिष गणनाओं पर आधारित विधियों का क्रम से अध्ययन करते हैं और इनमें प्रयुक्तचक्रों को देखना सीखते हैं। इन गणनाओं व चक्रों की शुद्धि होने पर ही विवाह मुहूर्त निश्चित होता है।

विवाह के लिए शुभ समय का निर्धारण

त्रिज्येष्ठ विचार : ज्येष्ठ का अर्थ है, सबसे बड़ा। सभी बहन-भाईयों में जो सबसे बड़ा या बड़ी हो वह ज्येष्ठ संतान कहलाती है। पुत्र है तो ज्येष्ठ पुत्र और कन्या है तो ज्येष्ठ कन्या।

तीन ज्येष्ठ का संयोग विवाह में शुभ नहीं माना जाता है। ज्येष्ठ पुरुष का, ज्येष्ठ कन्या के साथ, ज्येष्ठ महीने में विवाह नहीं किया जाता क्योंकि ऐसा होने पर त्रिज्येष्ठा का संयोग हो जाता है, जो विवाह में शुभ नहीं होता। इस योग में विवाह होने पर पति या पत्नी में से एक की आयु कम हो जाती है अथवा उनके संबंध अच्छे नहीं रहते।

इसी प्रकार ज्येष्ठ वर का, ज्येष्ठ कन्या के साथ ज्येष्ठा नक्षत्र में (जब चन्द्रमा ज्येष्ठा नक्षत्र पर हों उस दिन) विवाह नहीं किया जाता। सामान्य रूप से तो ज्येष्ठ कन्या का ज्येष्ठ पुरुष के साथ भी विवाह नहीं किया जाता। यह एक प्रबल लोकमान्यता भी बन चुकी है।

विवाह का दिन : ज्येष्ठ सन्तान का जन्म मास, जन्म नक्षत्र, तिथि व जन्म लग्न में विवाह नहीं किया जाता। जन्म मास, नक्षत्र और लग्न के नियम केवल प्रथम पुत्र संतान के लिए ही मान्य हैं। अन्य छोटी संतानों के लिए यह नियम लागू नहीं होते हैं।

विवाह के उपरांत 6 महीने : विवाह के उपरांत 6 माह महत्त्वपूर्ण होते हैं। इन 6 महीनों में निम्न कार्य नहीं किये जाते।

1. परिवार में पुत्र के विवाह के उपरांत 6 महीने तक पुत्री का विवाह नहीं किया जाता है लेकिन कन्या के विवाह के बाद पुत्र का विवाह हो सकता है।

2. पुत्र या पुत्री के विवाह के उपरांत अग्रिम 6 महीनों तक मुण्डन कार्य नहीं किया जाता है। मुण्डन से तात्पर्य बालक के प्रथम बार सिर के बाल कटवाने से है। बालक का प्रथम बार केश लोचन (मुण्डन) जिसे कहीं-कहीं जड़ूला उतारना भी कहते हैं। यह कार्य परिवार में किसी के विवाह के बाद 6 महीने तक नहीं किया जाता, जबकि मुण्डन के उपरांत विवाह हो सकता है।

3. दो सगे भाइयों का, दो सगी बहनों के साथ विवाह नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार दो सगे भाई या बहनों का विवाह 6 महीने के अंतर्गत नहीं करना चाहिए, जबकि सौतेले भाई-बहनों का विवाह किया जा सकता है।

4. यदि इन 6 महीनों के पूरा होने से पूर्व वर्ष (संवतां्) परिवर्तन हो जाये तो विवाह अथवा मुण्डन किया जा सकता है।

आपत्ति काल : विवाह की तिथि निश्चित हो जाने पर यदि वर या कन्या के परिवार में किसी की मृत्यु हो जाये तो मृत्यु के एक माह उपरांत ग्रह-शान्ति करवाकर विवाह किया जा सकता है।

12.3.1 वर व कन्या वरण

विवाह से पूर्व एक महत्त्वपूर्ण कार्य और होता है जिसे शुभ मुहूर्त में करना होता है। अपनी कन्या के लिए पति रूप में जिस पुरुष का चयन किया है, उसका तिलक या निश्चय भी शुभ मुहूर्त में किया जाता है। इसी तरह जिस कन्या का पुत्रवधू के रूप में चयन किया है, उसका निश्चय भी शुभ मुहूर्त में किया जाता है। लड़की से पहले लड़के का निश्चय (वरण) होता है अत: कन्या पक्ष वाले पहले वर (लड़के) के तिलक करके और आवश्यक सामग्रियाँ भेंट स्वरूप देकर निश्चय करें और फिर वर पक्ष के लोग होने वाली वधू के तिलक करके यथोचित वस्त्राभूषणादि भेंट करें।

यह दोनों कार्य भी विवाह की तरह ही महत्त्वपूर्ण होते हैं जिसे वर्तमान में सगाई या भी कहते हैं, ये शुभ समय पर होने चाहियें। इनके लिए शुभ समय का चयन निम्न प्रकार से कर सकते हैं।

कन्या वरण मुहूर्त : जिस कन्या को विवाह के लिए निश्चित किया गया है अर्थात्् जिस कन्या से विवाह होना तय हुआ है, उसका शुभ मुहूर्त में वरण किया जाता है। जिसे रोका करना या निश्चित करना कहते हैं।

शुभ वार : चंद्र, बुध, गुरु, शुक्र।

शुभ नक्षत्र : स्वाती, श्रवण, पू.फा., पू.षा., पू.भा., अनुराधा, धनिष्ठा और कृतिका तथा अन्य नक्षत्र जो विवाह में शुभ माने जाते हैं (रोहिणी, मृगशिरा, तीनों उत्तरा, मघा, हस्त, स्वाती, अनुराधा, मूल, रेवती) उनमें शुभ लग्न में कन्या का वरण करना चाहिये।

वर वरण मुहूर्त : जिस वर को विवाह के लिए निश्चित किया गया है अर्थात्। जिस वर से विवाह होना तय हुआ है, उसका शुभ मुहूर्त में वरण किया जाता है। जिसे रोका जाना या निश्चित करना कहते हैं।

शुभ वार : सोम, बुध, गुुरु, शुक्रवार शुभ होते हैं।

शुभ नक्षत्र : रोहिणी, उ.फा., उ.षा., उ.भा., कृतिका, पू.फा., पू्।.षा., पू.भा. नक्षत्र शुभ हैं। लग्न स्थिर व द्विस्वभाव हो तथा शुद्ध हो।

12.3.2 विवाह मुहूर्त्त

शुभ मास : ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, और आषाढ़ ये महीने विवाह में शुभ माने जाते हैं।

1. देवशयनी एकादशी (आशाढ़ शुक्ल एकादशी) से लेकर देवप्रबोधिनी एकादशी (कार्तिक शुक्ल एकादशी) तक देव शयनकाल में विवाह करना वर्जित है।
2. सूर्य वृश्चिक राशि में हों तो कार्तिक मास में। मकर राशि में हों तो पौष मास में। मेष राशि में हों तो चैत्र मास में विवाह करना भी शुभ रहता है।

शुभ नक्षत्र : विवाह में शुभ बताये गये नक्षत्रों में इन 6 नक्षत्रों को त्याग दिया जाता है।

1. जन्म नक्षत्र
2. जन्म नक्षत्र से दसवाँ कर्म नक्षत्र
3. सोलहवाँ-संघात
4. अठारहवाँ-समुदाय
5. तेइसवाँ-विनाश और
6. पच्चीसवाँ-मानस नक्षत्र कहलाते हैं।

विवाह में इन नक्षत्रों को विशेषत: 23वें नक्षत्र को त्याज्य माना जाता है। इन छ: नक्षत्रों पर विवाह के समय यदि पाप ग्रह भी हों तो ग्रह शान्ति अवश्य करनी चाहिये।

रोहिणी उत्तरा रेवत्ये मूलम् स्वाती मृगे मघा।

अनुराधा च हस्ते च विवाहे मंगलप्रदा।।

अर्थात् मूल, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, हस्त, उ.षा., उ.फा., उ.भाद्र., स्वाती, मघा, रोहिणी नक्षत्र विवाह में शुभ माने जाते हैं।

कात्यायनी सूत्र : कात्यायनी सूत्र के अनुसार अश्विनी, चित्रा, श्रवण, धनिष्ठा नक्षत्र भी शुभ माने जाते हैं परंतु इनका ग्रहण तभी किया जाता है जबकि निम्नांकित योगों का निश्चित समय त्याग दिया जाए -

1.	वैधृति	इस पूरे योग से बचना चाहिए।
2.	विष्कुंभ	प्रथम 30 घटी।
3.	परिघ	प्रथम 5 घटी।
4.	शूल	प्रथम 7 घटी।
5.	गण्ड	प्रथम 6 घटी।
6.	व्याधात व वज्र	प्रथम 9 घटी।
7.	हर्षण	प्रथम 9 घटी।
8.	व्यतिपात	प्रथम 9 घटी।
9.	ऐन्द्र	प्रथम 9 घटी।

उपरोक्त में से कोई योग जिस समय प्रारंभ हो, उस समय से एक घटी = 24 मिनट मानकर उपरोक्त सारिणी में बताये गये घटी संख्या तुल्य समय को शुभ कार्यों में छोड़ दिया जाता है।

इसके अलावा कात्यायनी सूत्र के अनुसार इन दोषों से भी बचना चाहिए -

1. रिक्ता तिथि (4, 9, 14), अमावस्या।
2. कू्रर वार वेला।
3. जन्म नक्षत्र, यमघंट काल
4. कुलिक योग, संक्रांति काल
5. मृत्यु पंचक
6. दग्धा तिथि।

12.3.3 त्रिबल शुद्धि

विवाह के लिए सूर्य, चन्द्र, गुरु की शुद्धि : विवाह में वर के लिए सूर्य और चन्द्र तथा वधू के लिए चन्द्र और गुरु की जन्म राशि से शुद्धि देख कर ही शुभाशुभ समय का निर्णय लिया जाता है। इसमें जन्म राशि से 4, 8, 12वीं राशि पर सूर्य, चन्द्र और गुरु नहीं होने चाहिएं।

त्रिबल शुद्धि सारिणी

सूर्य	चन्द्र	गुरु	शुभाशुभ
3, 6, 10, 11	3, 6, 7, 10, 11	2, 5, 7, 9, 11	शुभ
1, 2, 5, 7, 9	1, 2, 5, 9	1, 3, 6, 10	पूज्य
4, 8, 12	4, 8, 12	4, 8, 12	अशुभ

इस सारिणी में ग्रहों के नीचे जो अंक लिखे हैं, वे वस्तुत: संख्यात्मक हैं, जैसे- किसी पुरुष के लिए जन्म राशि से 3, 6, 10 और 11वीं राशि पर सूयँ हों तो शुभ होते है अर्थात् माना किसी की राशि मेष है और विवाह के समय मकर राशि में सूर्य हों तो जन्म राशि से 10वीं राशि में होने से शुभ माने जायेंगे।

इसी प्रकार कन्या के लिए बृहस्पति की शुभता देखी जाती है। माना किसी कन्या (लड़की) की जन्म राशि कर्क है तो कर्क राशि से दूसरी राशि सिंह, पांचवीं वृश्चिक, सातवीं मकर, नवीं मीन या ग्यारहवीं राशि वृषभ में बृहस्पति होंगे तो विवाह में शुभ माने जायेंगे। जन्म राशि कर्क, कर्क से तीसरी कन्या, छठी धनु और दसवीं मेष राशि में बृहस्पति विवाह के समय होंगे तो पूजा से शुभ माने जायेंगे परंतु कर्क से चौथी तुला, आठवीं कुंभ और बारहवीं मिथुन राशि में बृहस्पति होंगे तो विवाह में अशुभ माने जायेंगे। इसी प्रकार सारिणी में प्रदर्शित अंकों के आधार पर वर व कन्या दोनों के लिए समान रूप से चंद्र शुद्धि भी देखी जाती है।

परिहार : बृहस्पति यदि अपनी उच्च राशि कर्क या स्वराशि धनु या मीन में होकर, उच्च या स्वनवांश में हों तो जन्म राशि से 4-8 या 12वीं राशि में बृहस्पति होने पर भी कन्या का विवाह किया जा सकता है।

12.3.4 विवाह मण्डप स्थापना

मण्डप की स्थापना पुत्री के विवाह में ही की जाती है। इसी मण्डप के नीचे पाणिग्रहण (विवाह) संस्कार संपन्न होता है। यह शुभ मुहूर्त में स्थापित किया जाता है। मण्डप का प्रथम स्तम्भ लगाने में खात चक्र का

विचार किया जाता है अत: राहु रहित दिशा में प्रथम स्तम्भ लगाया जाता है। मण्डप स्थापना के समय वास्तु-शान्ति और ग्रह शान्ति के निमित्त पूजा व हवन किये जाते हैं।

आजकल मण्डप स्थापना विवाह से एक दिन पूर्व ही की जाती है। इसलिए मंडप स्थापना का दिन तो निश्चित हो चुका है (विवाह से 3-6-9वें दिन मण्डप स्थापना नहीं की जाती) परंतु नक्षत्र निम्न में से कोई एक होना चाहिए।

स्तम्भ स्थापन मुहूर्त

विवाह के समय मंडप का प्रथम स्तम्भ स्थापित किया जाता है। यह स्तम्भ सूर्य जिस राशि में होते हैं उसके अनुसार किसी कोने (दिशा) में स्थापित किया जाता है।

स्तम्भ स्थापन की दिशा

स्तम्भ की दिशा	सूर्य की राशि में स्थिति
ईशान	सिंह, कन्या, तुला
वायव्य	वृश्चिक, धनु, मकर
स्तम्भ की दिशा	सूर्य की राशि में स्थिति
नैऋत्य	कुंभ, मीन, मेष
आग्नेय	वृषभ, मिथुन, कर्क

स्तम्भ स्थापन में शुभ नक्षत्र : चित्रा, स्वाती, शतभिषा, अश्विनी, ज्येष्ठा, भरणी, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा इन नक्षत्रों को छोड़कर अन्य नक्षत्रों में स्तम्भ स्थापना एवं अन्य वैवाहिक कार्य जैसे-तेल चढ़ाना, वेदी बनाना आदिकार्य किए जाते हैं।

12.3.5 दस रेखा दोष

विवाह का दिन व लग्न निर्धारित करने के लिए दस प्रकार का समय संशोधन या गणनाएं मुख्य रूप से की जाती हैं। इन दस प्रकार की गणनाओं को ही दस रेखा के नाम से जाना जाता है। जिस विवाह मुहूर्त में जितनी रेखाएं अर्थात् जितने दोष अनुपस्थित हों वह मुहूर्त उतने ही रेखा वाला कहलाता है। इन दस दोषों के नाम निम्न हैं :

1.	लता दोष	2.	पात दोष
3.	युति दोष	4.	वेध दोष
5.	जामित्र दोष	6.	मृत्यु पंचक दोष
7.	एकार्गल दोष	8.	उपग्रह दोष
9.	क्रान्तिसाम्य दोष	10.	दग्धा तिथि दोष

इन दस दोषों का अर्थात् दस रेखाओं की शुद्धि का विचार किया जाता है। किसी विवाह मुहूर्त में कम-से-कम इनमें से सात दोष तो अनुपस्थित होने ही चाहिएं। जिनमें भी निम्न पाँच तो अति-आवश्यक रूप से त्याज्य माने जाते हैं।

1. क्रूरर ग्रह युति 2. वेध 3. मृत्यु बाण

4. क्रान्ति साम्य और 5. दग्धा तिथि।

इन दोषों की शुद्धि निम्न प्रकार से देखी जाती है -

(1) लत्ता दोष : लत्ता दोष का अर्थ है लात मारना। प्रत्येक ग्रह जिस नक्षत्र पर हों उससे अगले या पिछले निश्चित संख्या वाले नक्षत्र पर लात मारते हैं।

1. सूर्य जिस नक्षत्र पर होते हैं, उस नक्षत्र से अग्रिम 12वें नक्षत्र पर लात मारते हैं। जैसे-सूर्य उ.फा. नक्षत्र पर हैं तो धनिष्ठा नक्षत्र पर लात मारते हैं।
2. पूर्ण चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होते हैं उससे पिछले 22वें नक्षत्र पर लात मारते हैं। जैसे-चन्द्रमा चित्रा नक्षत्र में हैं तो मूल नक्षत्र पर लात मारते हैं।
3. मंगल जिस नक्षत्र पर हों उससे अगले तीसरे नक्षत्र पर लात मारते हैं।
4. बुध अपने से पिछले 7वें नक्षत्र पर लात मारते हैं।
5. बृहस्पति अपने से अगले 6वें नक्षत्र पर लात मारते हैं।
6. शुक्र अपने से पिछले 5वें नक्षत्र पर लात मारते हैं।
7. शनि अपने से अगले 8वें नक्षत्र पर लात मारते हैं।
8. राहु अपने से पिछले 9वें नक्षत्र पर लात मारते हैं।

किसी नक्षत्र पर किसी भी ग्रह की लात पड़ती हो तो वह नक्षत्र विवाह में शुभ नहीं माना जाता है। इसके परिणाम शुभ नहीं होते हैं। ग्रहों की लत्ता के दुष्परिणाम -

ग्रह	लत्ता	फल / परिणाम
सूर्य	अगले 12वें पर	धन नाश
मंगल	अगले तीसरे पर	वर-कन्या(दोनों को पीड़ा)
पूर्ण चंद्र	पिछले 22वें पर	कन्या नाश(पत्नी को पीड़ा)
बुध	पिछले 7वें पर	कन्या को पीड़ा
गुरु	अगले 6वें पर	बंधु नाश
शुक्र	पिछले 5वें पर	कार्य का दु:ख
शनि	अगले 8वें पर	कुल का क्षय
राहु	पिछले 9वें पर	कन्या को पीड़ा

राहु के विषय में विशेष विचार की आवश्यकता पड़ती है, क्योकि राहु सदा वक्री रहते हैं अत: नक्षत्र गणना में जिसे सीधा क्रम कहते हैं राहु के लिए पिछले 9वें नक्षत्र का निर्धारण वास्तव में सीधे क्रम में ही करना होता है। जैसे- राहु शतभिषा नक्षत्र पर हैं तो वे मृगशिरा नक्षत्र पर लात मारते हैं। इस दोष का विचार केवल विवाह मुहूर्त में ही किया जाता है।

(2) **पात दोष :** पंचांग में 27 योगों का विवरण मिलता है। पंचांग में नक्षत्र के बाद अगला क्रम योगों का ही होता है। प्रतिदिन के हिसाब से योग परिवर्तन होते रहते हैं।

इन योगों में से हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतिपात, गंड और शूल इन योगों की समाप्ति जिस नक्षत्र में हो, वह नक्षत्र पात दोष से दूषित हो जाता है। जैसे - किसी दिन चित्रा नक्षत्र प्रात: 8 बजकर 35 मिनट तक है और इसी समय स्वाती नक्षत्र प्रारंभ हो रहा है तथा वैधृति योग सायं: 5 बजे समाप्त हो रहा है तो चित्रा से अगला स्वाती नक्षत्र पात दोष से दूषित हो जाता है। पात दोष से दूषित नक्षत्र में विवाह नहीं करना चाहिए।

(3) **क्रांति साम्य दोष :** प्रदर्शित चक्र के अनुसार जिस दिन सूर्य और चन्द्रमा राशियों में स्थिति के अनुसार यदि एक ही रेखा पर हों उस दिन क्रांतिसाम्य दोष होता है। जैसे: सूर्य सिंह राशि में हों और चन्द्रमा मेष राशि में तो क्रांति साम्य दोष होता है।

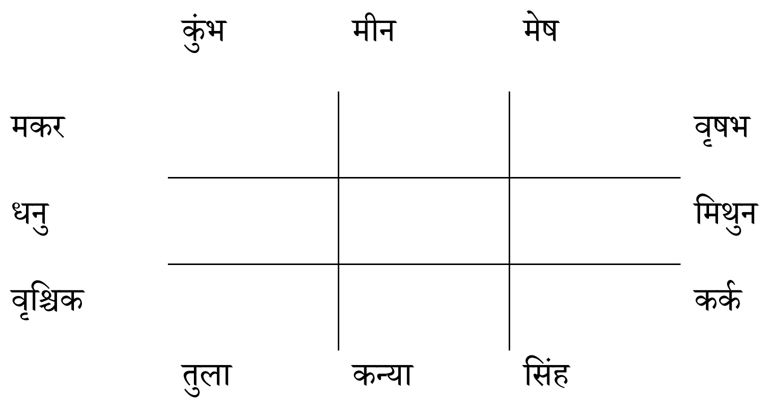

(4) **एकार्गल दोष:** जिस दिन वज्र, व्याघात, शूल, व्यतिपात, अतिगण्ड, विष्कुंभ, गण्ड, परिघ और वैधृति इनमें से कोई एक योग हो और सूर्य जिस नक्षत्र पर हों, उस नक्षत्र से गिनने पर चन्द्रमा विषम नक्षत्र पर हों तो एकार्गल दोष होता है। इसे खार्जूर दोष भी कहा जाता है। विवाह में इस दोष को त्याज्य माना जाता है किंतु यदि चन्द्रमा सम संख्या पर स्थित नक्षत्र पर हों तो यह दोष नहीं लगता है। इस खार्जूर चक्र का विचार विवाह, सीमन्त कर्म, कर्ण वेधन, व्रत बन्ध और अन्नप्राशन संस्कार में विशेष रूप से किया जाता है।

जैसे किसी दिन गंड योग है तथा सूर्य धनिष्ठा नक्षत्र पर और चन्द्रमा चित्रा नक्षत्र पर हैं। ऐसी स्थिति में सूर्य स्थित नक्षत्र धनिष्ठा से चित्रा तक गिनने (यहाँ गणना में अभिजित नक्षत्र को भी शामिल किया जाता है जो कि उत्तराषाढ़ा और श्रवण के मध्य आता है) पर 19 संख्या आती है। 19वाँ अंक विषम होने से इस दिन एकार्गल या खार्जूर दोष उपस्थित है अत: विवाह नहीं हो सकता। इसी प्रकार किसी भी दिन एकार्गल दोष का विचार विवाह हेतु किया जा सकता है।

(5) उपग्रह दोष : उपग्रह दोष का मुख्य आधार सूर्य देव हैं। सूर्य जिस नक्षत्र पर होते हैं, उस नक्षत्र से अग्रिम 5, 7, 8, 10, 14, 15, 18, 19, 21, 22, 24 व 25वाँ नक्षत्र उपग्रह दोष से पीड़ित होता है। इस नक्षत्र पर चन्द्रमा हों तो उस दिन विवाह नहीं करना चाहिए। यह उपग्रह दोष होता है।

जैसे कि सूर्य यदि शतभिषा नक्षत्र पर हैं और चन्द्रमा मघा नक्षत्र पर हैं तो शतभिषा से गिनने पर मघा 14वाँ पड़ता है अत: उपग्रह दोष उपस्थित है इसलिए विवाह नहीं हो सकता।

(6) **जामित्र दोष** : जिस लग्न के जिस नक्षत्र को विवाह हेतु निश्चित किया गया हो, उस नक्षत्र से अगला 14वाँ नक्षत्र जामित्र होता है। इस जामित्र नक्षत्र पर कोई पाप ग्रह हो तो जामित्र दोष होता है। जामित्र नक्षत्र पर शुभ ग्रह हों तो दोष नहीं होता है।

जामित्र दोष को पहचानने का सीधा सा तरीका यह है कि विवाह जिस लग्न में हो उस लग्न से सप्तम में कोई ग्रह नहीं होना चाहिए। शुभ ग्रह हों तो लग्न ग्राह्य मानी जाती है किंतु पाप ग्रह नहीं होने चाहिए।

(7) **युति दोष :** विवाह के दिन चन्द्रमा जिस नक्षत्र में हो, उस नक्षत्र पर यदि कोई और ग्रह भी हों तो यह युति दोष कहलाता है। चन्द्रमा के साथ शुभ ग्रह हों तो दोष नहीं लगता है।

परंतु यदि चन्द्रमा वर्गोत्तम, उच्च या स्वगृही हों तो युति दोष नहीं होता और यदि एक ही नक्षत्र में दो ग्रह अलग-अलग चरणों पर स्थित हों तो भी दोष नहीं होता है।

(8) **दग्धा तिथि :** सूर्य जब किसी राशि विशेष में होते हैं तो कुछ तिथि विशेष अशुभ मानी जाती हैं। इन तिथियों को दग्धा तिथि कहते हैं। दग्धा तिथि में विवाह होने पर पति-पत्नी में मतभेद और वैमनस्यता बढ़ती है।

सूर्य राशि	धनु-मीन	वृष-कुंभ	कर्क-मेष	कन्या-मिथुन	सिंह-वृश्चि	मकर-तुला
तिथि	द्वितीया	चतुर्थी	षष्ठी	अष्टमी	दशमी	एकादशी

जैसे सूर्य मिथुन राशि होते हैं तो उस चांद्र मास की अष्टमी तिथि दग्धा होती है।

(9) **वेध दोष :** विवाह मुहूर्त में नक्षत्र शुद्धि देखने के लिए सभी नक्षत्रों को एक चक्र रूप में व्यवस्थित किया जाता है और चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर होते हैं उस नक्षत्र की शुद्धि देखी जाती है। यह वेध चक्र दो प्रकार के होते हैं जो निम्न हैं -

12.3.6 पंचशलाका चक्र

इस चक्र में अभिजित् सहित सभी 28 नक्षत्रों को शामिल किया गया है। इसमें 5 रेखाएँ सीधी और 5 रेखाएँ आड़ी खींची जाती हैं साथ ही 2-2 रेखाएँ सभी रेखाओं को विकर्ण से काटती हुई या विकर्ण बनाती हुई चक्र के दोनों ओर कोणों पर खींची जाती हैं।

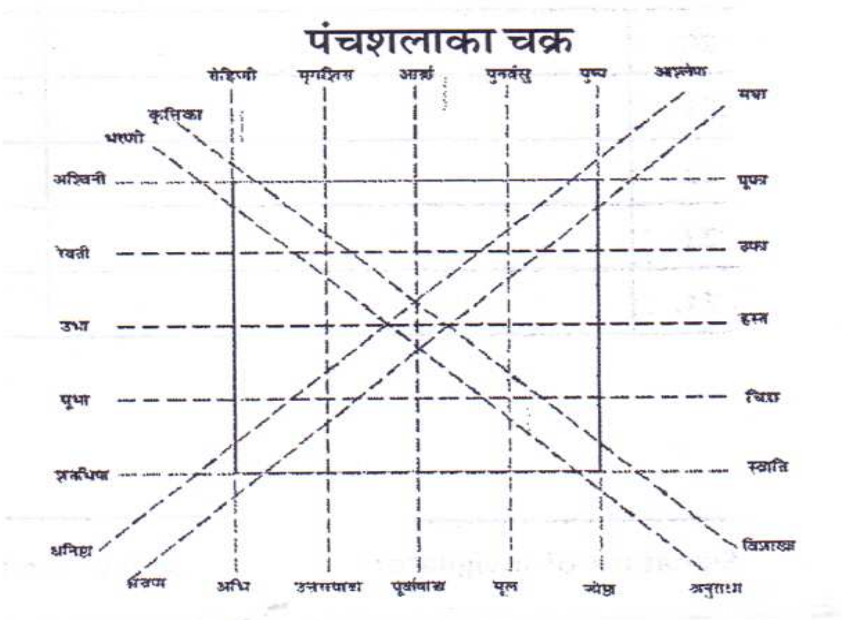

इन रेखाओं के सिरों पर नक्षत्र लिखे जाते हैं। नक्षत्रों को लिखने का क्रम कृतिका से प्रारम्भ करके भरणी पर समाप्त करते हैं।

अब ये नक्षत्र एक-दूसरे के सामने हो जाते हैं। मुहूर्त निकालते समय गोचर में जब किसी नक्षत्र पर कोई ग्रह आए तो वह नक्षत्र जिस रेखा पर है, उस रेखा के दूसरे सिरे पर स्थित नक्षत्र का वेध करते हैं। यहाँ परस्पर वेधी नक्षत्रों में एक नक्षत्र का चौथा चरण दूसरे के प्रथम चरण से इसी प्रकार तीसरे चरण से दूसरा चरण वेधित होता है। मुहूर्त निर्धारण के लिए चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर हों, उस नक्षत्र वाली रेखा के दूसरे सिरे पर स्थित नक्षत्र पर कोई ग्रह हो तो चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर स्थित है उसका वेध हो जाता है अत: इस चंद्र नक्षत्र को मांगलिक कार्यों में शुभ नहीं माना जाता।

12.3.7 सप्तशलका चक्र

इस चक्र का निर्माण अभिजित् सहित सभी 28 नक्षत्रों से होता है। इसमें 7 रेखाएँ खड़ी और 7 रेखाएँ आड़ी खींची जाती हैं। इस प्रकार ये रेखाएँ एक-दूसरे को काटती हैं।

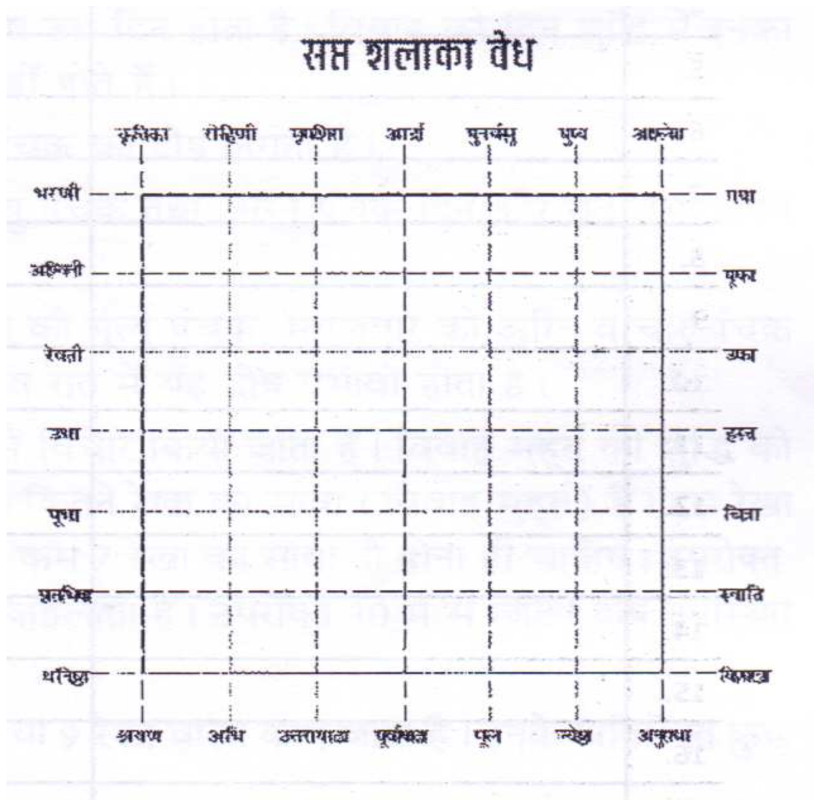

अब इस चक्र का प्रारम्भ ऊपर की रेखाओं में बांयीं ओर की प्रथम रेखा पर कृतिका नक्षत्र से प्रारंभ कर सभी नक्षत्रों को क्रमानुसार रेखाओं के सिरों पर व्यवस्थित करते हैं और पूर्वोक्त (पंचशलाका चक्र की तरह) प्रकार से ही वेध देखा जाता है। इसी प्रकार नक्षत्रों का वेध देखा जाता है।

जब मुहूर्त में किसी नक्षत्र पर ग्रह हों तो उसके सम्मुख नक्षत्र का वेध होता है। इसलिए वेधित होने वाले नक्षत्र अर्थात् चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर हैं, उस नक्षत्र को मुहूर्त में नहीं लिया जाता। यदि किसी नक्षत्र का वेध पाप ग्रह से हो तो उस सम्पूर्ण नक्षत्र को त्यागना चाहिए और यदि शुभ ग्रह से हो रहा हो तो केवल उस वेधित चरण को ही अशुभ माना जाता है।

विवाह मुहूर्त में मुख्यतया पंचशलाका चक्र का ही विचार किया जाता है एवं विवाह के अतिरिक्त अन्य सभी कार्यों में सप्तशलाका चक्र का विचार किया जाता है।

वेधफल : पंचशलाका या सप्तशलाका चक्र में चंद्र नक्षत्र का वेध यदि -

सूर्य से हो तो - कन्या विधवा हो।

मंगल से हो तो - कुल का क्षय हो।

बुध से हो तो - कन्या नि:संतान रहे।

बृहस्पति से हो तो -कन्या वैराग्य धारण करे।

शुक्र से हो तो - संतान की हानि।

शनि से हो तो - दु:ख मिले।

राहु से हो तो - दम्पत्ति में व्यभिचार बढ़े।

केतु से हो तो - वैचारिक मतभेद बढ़े।

(10) पंचक दोष : पंचक दोष से तात्पर्य पाँच प्रकार के दोषों से है। सूर्य जिस राशि के जिस अंश पर होते हैं, उस अंश के अनुसार इन पाँच दोषों का निर्धारण किया जाता है। इसके लिए एक सरल गणितीय पद्धति का प्रयोग किया जाता है। सूर्य के भोगांश (स्पष्ट अंश) को 5 स्थानों पर अलग-अलग रखते हैं और क्रमश: 15, 12, 10, 8 और 4 जोड़ते हैं तथा 9 का भाग देते हैं, जहाँ शेष 5 बचते हैं वही पंचक दोष उस दिन होता है। पंचक पाँच प्रकार के होते हैं। इन पाँच दोषों के नाम क्रमश: रोग, अग्नि, राज, चोर और मृत्यु पंचक होते हैं।

उदाहरण : माना कि सूर्य 17 अंश पर हैं तो-

	रोग	अग्नि	राज	चोर	मृत्यु
सूर्य के भोगांश-	17	17	17	17	17
	+15	+12	+10	+8	+4
=	32/9	29/9	27/9	25/9	21/9
शेष =	5	2	0	7	3

अत: जब सूर्य 17 अंश पर हों तो रोग पंचक दोष उस दिन होता है। विवाह की दिन शुद्धि में इनका विचार किया जाता है किंतु ये सभी समय पर प्रभावी नहीं होते हैं।

- विवाह का मुहूर्त रात्रि में हो तो चोर और रोग पंचक का दोष लगता है।
- दिन में राज पंचक, प्रात: और सायं संध्या में मृत्यु पंचक तथा अग्नि पंचक दिन और रात सभी समय में वर्जित होता है।
- इनके अतिरिक्त शनिवार को राज पंचक, बुधवार को मृत्यु पंचक, मंगलवार को अग्नि व चोर पंचक और रविवार को रोग पंचक हो तो सम्पूर्ण दिन व रात में यह दोष प्रभावी होता है।

इस प्रकार विवाह में इन 10 दोषों का प्रमुखता से विचार किया जाता है। विवाह मुहूर्त की शुद्धि को लेकर जन सामान्य यह कहता हुआ दिखाई देता है कि ये कितने रेखा का सावा (विवाह मुहूर्त) है। दस रेखा का सावा अति उत्तम और शुद्ध माना जाता है और कम से कम 7 रेखा का सावा तो होना ही चाहिए। उपरोक्त दस दोषों का अभाव हो तो विवाह मुहूर्त दस रेखा वाला कहलाता है। उपरोक्त 10 में से जितने दोष उपस्थित हों, 10 रेखाओं में उतनी रेखा कम हो जाती हैं।

इन दोषों के कारण ही कोई सावा 7 रेखा, 8 रेखा या 9 रेखा वाला कहा जाता है। इनके अतिरिक्त कुछ दोष और भी देखे जाते हैं जो निम्न हैं -

अर्द्धयाम : इस दोष को जानने के लिए दिनमान या रात्रिमान का ज्ञान होना आवश्यक है। दिन में विवाह हो तो दिनमान (सूर्योदय व सूर्यास्त के बीच का समय) और रात्रि में विवाह हो तो रात्रिमान (सूर्यास्त से अगले सूर्योदय के बीच का समय) के बराबर आठ भाग कर लिए जाते हैं। इन आठ भागों में से एक भाग अर्द्धयाम होता है। साप्ताहिक वार के अनुसार अर्द्धयाम की गणना होती है। प्रत्येक वार को कौन सा भाग अर्द्धयाम होगा , वह निम्न है-

वार	अशुभ अर्द्धयाम
रविवार	4वाँ
सोमवार	7वाँ
मंगलवार	दूसरा
बुध	5वाँ
गुरुवार	8वाँ
शुक्रवार	तीसरा
शनिवार	छठा

उपरोक्त बताई गई संख्याएँ वार के अनुसार अर्द्धयाम किस भाग में आएगा, की सूचक हैं। यह संख्या दिन और रात्रि में समान रूप से प्रयोग में ली जाती है। जैसे किसी सोमवार को सूर्योदय प्रात: 6:15 पर हुआ और सूर्यास्त 18:45 पर हुआ और अगला सूर्योदय प्रात: 6:16 पर हुआ।

इस तरह 18:45(सूर्यास्त का समय) - 6:15 (सूर्योदय) =12 घंटे 30 मिनिट का दिनमान और (24+6:16) 30:16 (अगला सूर्योदय) - 18:45 = 11 घंटे 31 मिनिट का रात्रिकाल प्राप्त हुआ। दिनमान के आठ भाग करते हैं-

12 घंटे 30 मिनिट = 750 मिनिट

= 750 मिनिट 8 = 93 मिनिट 45 सैकेण्ड का दिन में एक भाग प्राप्त हुआ। दिनमान से प्राप्त आठवें भाग को बारी-बारी से सूर्योदय के समय (प्रात: 6:15) में जोड़ते हैं तो 7वाँ भाग अर्द्धयाम संज्ञा वाला होगा। इसी तरह रात्रि में भी अर्द्धयाम का निर्णय कर लिया जाता है।

कुलिक दोष : कुलिक दोष का विचार केवल विवाह में किया जाता है। दिनमान व रात्रिमान को उपरोक्त प्रकार से अलग-अलग 15 भागों में बाँटा जाता है। अलग-अलग वार को अलग-अलग भाग कुलिक संज्ञक होता है। कुलिक मुहूर्त का मान दिनमान या रात्रिमान के 15वें भाग के बराबर होता है। प्रत्येक वार को कुलिक भाग -

वार	दिनमान के 15भागों में से कुलिक भाग	रात्रिमान के 15 भागों में से कुलिक भाग
रविवार	14वाँ	13वाँ
सोमवार	12वाँ	11वाँ
मंगलवार	10वाँ	9वां
बुधवार	8वाँ	7वाँ
गुरुवार	6वाँ	5वाँ
शुक्रवार	चौथा	तीसरा
शनिवार	दूसरा	प्रथम और अंतिम 15वाँ

इस प्रकार प्रत्येक वार को 15 भागों में उपरोक्त बताई गई संख्या वाला (सूर्योदय या सूर्यास्त से गिनने पर) भाग कुलिक खण्ड होता है। जब यह कुलिक भाग आवे उस समय में विवाह नहीं होना चाहिए। कुलिक खण्ड से आगे या पीछे विवाह किया जा सकता है। कुलिक खण्ड का निर्धारण भी अर्द्धयाम की तरह ही किया जाता है।

विशेष

विवाह के समय सूर्य एवं चंद्र दोनों ही अपनी उच्च राशियों में हों और लग्न से शुभ भावों में हों तो एकार्गल, उपग्रह, पात, लत्ता, जामित्र, कर्तरी और उदयास्त (ग्रहों के अस्त होने से उत्पन्न दोष) आदि दोषों का परिहार हो जाता है।

ऐसी स्थिति वर्ष में केवल एक बार अक्षय तृतीया (वैशाख शुक्ल तृतीया) को ही आना संभव है। इसलिए अक्षय तृतीया को विवाह के लिए सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। अक्षय तृतीया को अबूझ मुहूर्त भी कहते हैं अर्थात्। केवल त्रिबल शुद्धि (चंद्र, सूर्य और गुरु की जन्म राशि से शुभता) होने पर शुभ लग्न में विवाह किया जा सकता है अत: जिसकी शुद्धि के विषय में किसी से पूछने की भी आवश्यकता नहीं पड़े, उसे अबूझ मुहूर्त कहते हैं।

12.3.8 विवाह लग्न् की शुभता

शुभ विवाह लग्न (ग्रह स्थिति) : सूर्यादि ग्रहों की निम्नलिखित प्रकार से विवाह लग्न से निर्देशित भावों में उपस्थिति शुभ व अशुभ मानी जाती है। यह भी ध्यान रखने योग्य बात है कि विवाह के दिन से क्रमशः 3, 6 और 9 दिन पूर्व वैवाहिक कार्यों का प्रारंभ नही करना चाहिए।

शुभ विवाह लग्न (ग्रह स्थिति)

अशुभ विवाह लग्न (ग्रह स्थिति)

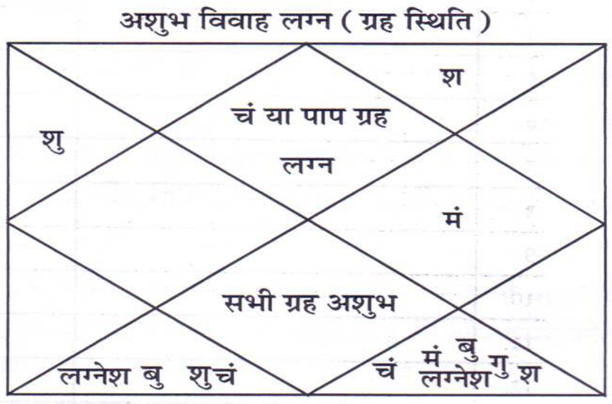

लग्न शुद्धि : विवाह में स्थिर (वृषभ, सिंह, वृश्चिक और कुंभ) व द्विस्वभाव (मिथुन, कन्या, धनु और मीन) लग्न शुभ मानी जाती हैं परंतु -

1. जन्म लग्न या चन्द्र राशि से आठवीं राशि की लग्न में विवाह नहीं किया जाता।

2. जन्म लग्न और जन्म लग्न से अष्टम राशि के स्वामी यदि एक ही हों अथवा नैसर्गिक मित्र हों तो अष्टम राशि के लग्न में विवाह किया जा सकता है।

3. जन्म लग्न या जन्म राशि से अष्टम राशि यदि वृषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर या मीन हो तो इन राशि की लग्नों में विवाह किया जा सकता है क्योंकि ऐसी स्थिति में जन्म राशि और अष्टम में स्थित राशि के स्वामी परस्पर मित्र या एक ही होते हैं।

4. लग्न से सप्तम में कोई भी ग्रह नहीं होने चाहिएं।

5. विवाह लग्न से बारहवें शनि और दशम में मंगल, तीसरे शुक्र, लग्न में चन्द्रमा या पाप ग्रह अशुभ होते हैं तथा लग्न से अष्टम में चन्द्रमा और लग्नेेश, शुभ ग्रह (बुध, गुरु और शनि) शुभ नहीं होते।

6. विवाह लग्न से छठे भाव में लग्नेश, शुक्र या चन्द्रमा शुभ नहीं माने जाते हैं।

7. विवाह लग्न से तीसरे, छठे और ग्यारहवें भाव में पाप ग्रह (सूर्य-मंगल-शनि-राहु-केतु) शुभ होते हैं।

8. विवाह लग्न से 2, 3 व 11वें भाव में चन्द्रमा शुभ होते हैं।

9. विवाह लग्न से 7, 8 व 12वें भाव को छोड़कर अन्य भावों में बुध व गुरु शुभ होते हैं।

10. विवाह लग्न से 3-6-7 व 8वें भाव को छोड़कर अन्य भावों में शुक्र शुभ होते हैं।

11. विवाह लग्न में या लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में गुरु या शुक्र अथवा दोनों शुभ ग्रह हों तो अधिकांश दोषों का परिहार हो जाता है।

12. कर्तरि दोष : विवाह लग्न से 12वें भाव में पाप ग्रह मार्गी होकर तथा लग्न से दूसरे भाव में अन्य कोई पाप ग्रह वक्री होकर स्थित हों तो यह कर्तरि दोष होता हैं। इसमें लग्न पापकर्तरि में आ जाती है। कर्तरि दोष से प्रभावित लग्न में विवाह हो तो परिवार में कोई मृत्यु, धन की हानि या शोक होता है।

यदि पापकर्तरि करने वाले पाप ग्रह अस्त हों, नीच राशि में हों, शत्रु राशि में हों अथवा लग्न से 12वें स्थित पाप ग्रह वक्री हों और दूसरे भाव में स्थित ग्रह मार्गी हों तो कर्तरि दोष का परिहार हो जाता है।

13. विवाह लग्न में किसी भी भाव में चन्द्रमा के साथ पाप ग्रह नहीं होने चाहियें। यदि चन्द्रमा के साथ -

क. सूर्य हों तो धन का अभाव

ख. मंगल हों तो दोनों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक

ग. बुध हों तो शुभ

घ. गुरु हों तो सुख

ङ. शुक्र हों तो वैवाहिक जीवन में अविश्वास बढ़ता है।

च. शनि हों तो वैचारिक मतभेद रहते हैं, प्रेम नहीं रहता।

14. विवाह में पुष्य नक्षत्र को त्याज्य माना गया है।

विचारणीय बिन्दु

1. समीपस्थ सूर्य या चंद्र ग्रहण जिस नक्षत्र में हुआ हो, उस नक्षत्र को वैवाहिक कार्यों में त्याज्य व अशुभ माना जाता है।

2. जन्म से सम संख्या के वर्षों में कन्या का और विषम संख्या के वर्षों में पुत्र का विवाह करना शुभ माना जाता है।

3. मघा नक्षत्र के प्रथम चरण में, मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में एवं रेवती नक्षत्र के चौथे चरण में विवाह नहीं करना चाहिए। इन नक्षत्रों के इन चरणों को त्याग देना चाहिए लेकिन इन नक्षत्रों के अन्य चरण ग्राह्य होते हैं।

उदाहरण : विवाह मुहूर्त निकालते समय लड़के व लड़की की जन्म राशि व जन्म नक्षत्र को आधार माना जाता है। यदि दोनों में से किसी एक की तो जन्मकुण्डली यानि जन्म राशि आदि ज्ञात हों और दूसरे की नहीं हो तो ऐसी स्थिति में दोनों के प्रसिद्ध व प्रचलित नामों पर आधारित नाम नक्षत्र और नाम राशि को आधार बनाया जाता है। किसी एक की जन्म राशि या जन्म नक्षत्र का दूसरे की प्रसिद्ध नाम की राशि और नक्षत्रों से संबंध नहीं बनाना चाहिए, यह अनुचित और शास्त्र विरुद्ध है अत: विवाह मुहूर्त निकालते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए। विवाह मुहूर्त निकालते समय प्राप्त जन्म संबंधी व नाम संबंधी विवरण को निम्न प्रकार लिखना चाहिए।

वर	कन्या
वर नाम - चि. हितेश	कन्या का नाम : सौ. कां. अनीता
जन्म नक्षत्र - पुनर्वसु	जन्म नक्षत्र - कृतिका
(4 चरण)	(1 चरण)
जन्म राशि - कर्क	जन्म राशि - मेष

राशि स्वामी - चन्द्रमा राशि स्वामी - मंगल

उपरोक्त जातकों के लिए विवाह का मुहूर्त निकाला जा रहा है। अन्य के लिए भी इसी विधि को प्रयोग में लिया जायेगा।

वर व कन्या का वरण : जिनका परस्पर विवाह होना है उन लड़के व लड़की को विवाह के लिए निश्चित करने को ही वरण करना कहते हैं। लड़की के पक्ष के लोग लड़के के तिलक करके निश्चित करते हैं तथा लड़के वाले लड़की का वरण करते हैं। इनमें पहले कन्या पक्ष के द्वारा वर का वरण किया जाता है उसके बाद वर पक्ष के लोग कन्या का वरण करते हैं।

वर वरण (लड़के का तिलक) : लड़के के तिलक या रोका करने के लिए विवाह से 1, 2 या अधिक महीने पूर्व मुहूर्त निकाला जा सकता है। इस कार्य को वर्तमान में सगाई के नाम से जानते हैं। अधिक मास, क्षयमास या मलमास में तथा गुरु व शुक्र के अस्त रहने पर यह कार्य नहीं किया जा सकता अत: इन दोष युक्तमहीनों व दिनों को छोड़कर अन्य मासों में मुहूर्त निकालना चाहिए परंतु इस कार्य में देवशयन काल का दोष नहीं लगता अर्थात् यह कार्य देवशयन काल में भी किया जा सकता है।

शुभ मुहूर्त : 23 जुलाई, 2008, श्रावण कृष्ण पंचमी, बुधवार, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र (प्रात: 09:01 तक) और चन्द्रमा मीन राशि में हैं।

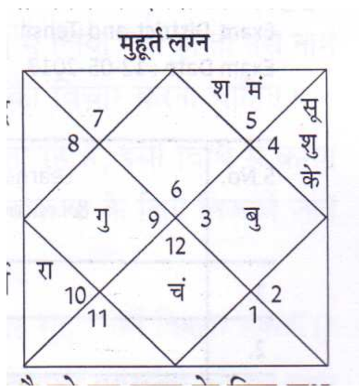

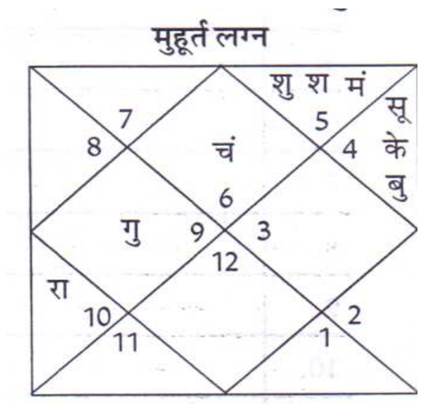

यह दिन क्यों शुभ है ?

1. 23 जुलाई, 2008 को पंचमी तिथि व बुधवार है जो इस वर वरण के कार्य में शुभ माने जाते हैं।

2. इस दिन प्रात: 9:01 तक पू.भा. नक्षत्र है और उसके उपरांत उ.भा. नक्षत्र है जो वर वरण के लिए शुभ है साथ ही उ.भा. नक्षत्र वर के जन्म नक्षत्र पुनर्वसु से दूसरी संपत तारा (जन्म, संपत, विपत आदि के अनुसार) है इसलिए शुभ है। जन्म राशि कर्क से नवमी राशि मीन पर चन्द्रमा हैं जो शुभ हैं।

शुभ समय : 23 जुलाई 2008 को प्रात: 9:47 से 12:05 तक कन्या लग्न है। कन्या लग्न द्विस्वभाव है सो इस लग्न का प्रथम आधा भाग लगभग 9:47 से 10:56 तक (स्थिर संज्ञक) शुभ रहेगा अत: इस समयावधि में वर वरण करना अत्यंत शुभ रहेगा। लग्न व चन्द्रमा से केन्द्र में गुरु व बुध स्वराशि में होने से तथा लग्न व चन्द्रमा से अष्टम में कोई भी पापग्रह नहीं होने से लग्न शुभ है।

नोट : लग्न के शुभ होने से इस दिन रहने वाले अतिगण्ड योग का भी परिहार हो गया अत: चि. हितेश की सगाई के लिए 23 जुलाई, 2008 शुभ है।

कन्या वरण : दिनांक 06 अगस्त, 2008 शुभ मिति श्रावण शुक्ल पंचमी, बुधवार हस्त नक्षत्र और चन्द्रमा कन्या राशि में है।

विशेष : तिथि व वार अनुकूल है तथा हस्त नक्षत्र कन्या के जन्म कृतिका से दूसरी संपत तारा होने से एवं जन्म राशि से छठी राशि कन्या पर चन्द्रमा होने से यह दिन शुभ है।

शुभ समय : 06 अगस्त, 2008 बुधवार को पंचमी तिथि है और इस दिन कन्या लग्न जो कि प्रात: 8:55 से प्रारंभ होगी और 11:11 तक रहेगी यही शुभ है। चन्द्रमा लग्न में ही हैं और केन्द्र मेंः बृहस्पति स्वराशि के हैं अत: 06 अगस्त, 2008, बुधवार को प्रात: 08.55 से 10:15 के मध्य कन्या कु. अनीता की सगाई करना शुभ रहेगा।

इस प्रकार उपरोक्त विधि से किसी भी लड़के या लड़की की सगाई या वरण का मुहूर्त निकाला जा सकता है। सगाई के लिए कौन-कौन से तिथि वार शुभ होते हैं इनका वर्णन पूर्व में बताया जा चुका है।

विवाह मुहूर्त

विवाह मुहूर्त जब निकाला जाता है तो विवाह मुहूर्त के साथ अन्य सहायक कार्यो जैसे - श्रीगणेश निमंत्रण, मागरमाटी, हल्द-हाथ, लग्न-टीका, तेल चढ़ाना, मण्डप आदि के लिए भी मुहूर्त निकाले जाते हैं जिनमें केवल विवाह दिवस से दिन संख्या, शुभवार और चंद्र शुद्धि ही मुख्य रूप से देखी जाती है अत्यधिक शुद्धि की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन इन सबसे पूर्व विवाह मुहूर्त यानि विवाह का दिवस निश्चित कर लेना आवश्यक है और विवाह के दिन के आधार पर ही इन मुहूर्तों का निश्चय करना चाहिए।

यहाँ एक बात और स्पष्ट कर देनी होगी कि विवाह मुहूर्त में तो लड़का और लड़की दोनों के जन्म नक्षत्र, राशि आदि का संयुक्त रूप से ध्यान रखा जाता है लेकिन विवाह अतिरिक्त अन्य सहायक मुहूर्त वर और कन्या के लिए अलग-अलग निकाले जाते हैं क्योंकि इससे पूर्व के कार्य वर के लिए, वर के घर पर और कन्या के लिए कन्या के घर पर अलग-अलग संपन्न होते हैं, इसलिए कन्या के लिए निकाले जाने वाले मुहूर्तों में कन्या के जन्म नक्षत्र (या जन्म समय के अभाव के कारण प्रसिद्ध नाम प्रयोग में लिया गया हो तो उस नाम के आधार पर नक्षत्र) व राशि का और वर के लिए वर की राशि और नक्षत्र का विचार करना चाहिए।

इन मुहूर्तों को हम वर की राशि व नक्षत्र के अनुसार निश्चित करना बता रहे है, इसी विधि से कन्या के लिए भी निकाले जा सकेंगे। कुछ मुहूर्त विशेष होंगे जो केवल वर या केवल कन्या के लिए निकाले जाते हैं उनका विवरण अलग से बताया जाएगा।

(14 जुलाई, 2008 से 09 नंवबर, 2008 तक देवशयन काल होने से विवाह मुहूर्त नहीं निकल सकता।)

शुभ मुहूर्त : दिनांक 05 मई, 2009, मंगलवार, शुभ मिति वैशाख शुक्ल एकादशी मंगलवार को धनु लग्न विवाह के लिए शुभ है।

दिन शुद्धि : विवाह के लिए शुभ समय का निर्धारण करने व समय शुद्धि के जो नियम बताए गए हैं उनका इस दिन की शुद्धि जांचने के लिए पृथक-पृथक प्रयोग करेंगे।

1. विवाह में वैशाख मास, शुक्ल पक्ष और एकादशी तिथि शुभ मानी जाती है।

2. चन्द्रमा उ.फा. नक्षत्र और कन्या राशि पर हैं और उ.फा. नक्षत्र विवाह में शुभ माना जाता है।

3. वार मंगलवार मध्यम है।

12.3.8.1 त्रिबल शुद्धि

चंद्र शुद्धि : चंद्र शुद्धि वर व कन्या दोनों के लिए अलग-अलग की जाती है और दोनों के जन्म नक्षत्र व राशि से चंद्र शुद्धि होना आवश्यक है।

वर के लिए : वर का नाम चि. हितेश कुमार है। जन्म नक्षत्र पुनर्वसु और राशि कर्क है अत: विवाह दिन का नक्षत्र उ.फा. वर के जन्म नक्षत्र पुनर्वसु से छठी साधक तारा पड़ती है इसलिए शुभ है, चन्द्रमा शुक्ल पक्ष के हैं व बली हैं तथा वर की जन्म राशि कर्क से तीसरी राशि कन्या पर हैं अत: विवाह में शुभ हैं।

कन्या के लिए : कन्या का नाम कु. अनिता है तथा जन्म नक्षत्र कृतिका व राशि मेष है।

(क) विवाह के दिन चन्द्रमा उ.फा. नक्षत्र पर हैं जो कन्या के जन्म नक्षत्र कृतिका से पहली (जन्म) तारा पड़ती है। यद्यपि पहली तारा अशुभ नहीं होती परंतु आवश्यकता में केवल शुक्ल पक्ष के उत्तरार्द्ध में ग्राह्य मानी जाती है अत: यहाँ जन्म तारा का दोष नहीं, साथ ही चन्द्रमा बली हैं व जन्म राशि मेष से छठी राशि कन्या पर स्थित हैं अत: विवाह वाले दिन वर व कन्या दोनों के लिए चन्द्रमा शुभ हैं। चन्द्रमा की शुद्धि के नियम पूर्व में बताए जा चुके हैं।

(ख) सूर्य शुद्धि : विवाह के समय सूर्य देव वर की जन्म राशि के अनुसार शुभ राशि पर होते हैं तो शुद्ध या शुभ माने जाते हैं। सूर्य शुद्धि का विचार वर (लड़के) के लिए ही किया जाता है। कन्या के लिए सूर्य शुद्धि नहीं देखी जाती है।

विवाह के समय सूर्य मेष यानि अपनी उच्च राशि में हैं तथा वर की राशि कर्क से 10 वीं राशि पर हैं अत: त्रिबल शुद्धि के नियमानुसार शुभ हैं।

(ग) बृहस्पति शुद्धि : विवाह के समय बृहस्पति कन्या की राशि के अनुसार शुभ राशि पर होते हैं तो शुद्ध या शुभ माने जाते हैं। बृहस्पति की शुद्धता का विचार केवल कन्या के लिए ही किया जाता है। वर के लिए बृहस्पति की शुद्धता देखने की आवश्यकता नहीं होती।

विवाह के दिन बृहस्पति कुंभ राशि पर हैं तथा कन्या की जन्म राशि मेष से ग्यारहवीं राशि पर हैं अत: शुभ हैं।

इस प्रकार विवाह मुहूर्त में दिन शुद्धि का विचार करते समय त्रिबल शुद्धि का विचार करना चाहिए। त्रिबल शुद्धि के उपरांत यह देखना चाहिए कि विवाह के समय गुरु या शुक्र अस्त तो नहीं हैं। दिनांक 05 मई, 2009 को गुरु या शुक्र कोई भी अस्त नहीं हैं। इसके उपरांत विवाह के प्रमुख दस दोषों या दस रेखाओं की शुद्धि देखी जाती है। दिनांक 05 मई, 2009 को सूर्य आदि ग्रहों की स्पष्ट तात्कालिक गोचरीय स्थिति निम्न हैं -

ग्रह	राशि	नक्षत्र
सूर्य	मेष	भरणी
चन्द्रमा	कन्या	उ.फा.
मंगल	मीन	उ.भा.
बुध	वृषभ	कृतिका
गुरु	कुंभ	धनिष्ठा
शुक्र	मीन	उ.भा.
शनि	सिंह	पूर्वा.फा.
राहु	मकर	उ.षा.

लत्ता दोष : लत्ता दोष का विचार करने के लिए विवाह वाले दिन की ग्रह स्थितियों का ज्ञान होना आवश्यक है। लत्ता का विचार -

1. सूर्य आगे वाले 12वें नक्षत्र पर लत्ता मारते हैं। विवाह के दिन सूर्य भरणी नक्षत्र पर हैं और भरणी से अगला 12वाँ नक्षत्र हस्त आता है जबकि चन्द्रमा उ.फा. नक्षत्र पर हैं अत: सूर्य की लत्ता नहीं है।

2. चन्द्रमा स्वयं उ.फा. नक्षत्र पर हैं अत: इनकी लत्ता नहीं मानी जायेगी।

3. मंगल उ.भा. नक्षत्र पर हैं और अगले तीसरे अश्विनी नक्षत्र पर लत्ता मारते हैं अत: मंगल की लत्ता नहीं है।

4. बुध कृतिका नक्षत्र पर हैं और पिछले सातवें शतभिषा नक्षत्र पर लत्ता मारते हैं अत: बुध की लत्ता नहीं हैं।

5. गुरु धनिष्ठा नक्षत्र पर हैं और अगले छठे नक्षत्र अश्विनी पर लत्ता मारते हैं। अत: गुरु की लत्ता नहीं है।

6. शुक्र उ.भा. नक्षत्र पर हैं और पिछले पाँचवे श्रवण नक्षत्र पर लत्ता मारते हैं अत: शुक्र की लत्ता नहीं है।

7. शनि पू.फा. नक्षत्र पर हैं और अगले 8वें नक्षत्र ज्येष्ठा पर लत्ता मारते हैं अत: शनि की लत्ता नहीं है।

8. राहु - उ.षा. नक्षत्र पर हैं और पिछले 9वें नक्षत्र हस्त पर लत्ता मारते हैं अत: राहु की लत्ता नहीं है।

उपरोक्त वर्णन में किसी भी ग्रह की उ.फा. नक्षत्र पर लत्ता नहीं है अत: विवाह किया जा सकता है और 05 मई 2009 को लत्ता दोष अनुपस्थित है।

पात दोष : दिनांक 05 मई 2009 को व्याघात योग प्रात:काल ही समाप्त हो रहा है तथा हर्षण योग प्रारंभ हो रहा है जो कि अगले दिन तक रहेगा। इस दिन उ.फा. नक्षत्र रात्रि 10:38 तक रहेगा और उनके उपरांत हस्त प्रारंभ होगा। हर्षण योग की समाप्ति हस्त नक्षत्र में होने से, हस्त नक्षत्र पात दोष से ग्रस्त है परंतु उ.फा. नक्षत्र शुद्ध है अत: इस दिन विवाह उ.फा. नक्षत्र में किया जाएगा तो पात दोष भी अनुपस्थित है।

क्रांति साम्य : विवाह के दिन सूर्य मेष राशि में हैं अत: पूर्व वर्णित क्रंति साम्य दोष के नियमानुसार सिंह राशि में चन्द्रमा होंगे तो ही दोष लगेगा अन्यथा नहीं। विवाह के दिन चन्द्रमा कन्या राशि में हैं अत: क्रांति साम्य दोष भी अनुपस्थित है।

उपग्रह दोष : जैसाकि पूर्व में बताया जा चुका है उपग्रह दोष का विचार सूर्य स्थित नक्षत्र से चन्द्रमा स्थित नक्षत्र की गणना के आधार पर किया जाता है।

विवाह के दिन सूर्य भरणी नक्षत्र पर हैं और चन्द्रमा उ.फा. नक्षत्र पर हैं। भरणी से उ.फा. नक्षत्र 11वाँ पड़ता है अत: नियमानुसार उपग्रह दोष भी अनुपस्थित है।

जामित्र दोष : जामित्र दोष का निर्धारण विवाह के नक्षत्र या विवाह दिन के चंद्र नक्षत्र के आधार पर होता है। विवाह नक्षत्र से 14वाँ नक्षत्र जामित्र कहलाता है। उ.फा. नक्षत्र से 14वाँ नक्षत्र पू.भा. नक्षत्र पड़ता है। विवाह के समय पू.भा. नक्षत्र पर कोई भी ग्रह नहीं होने से जामित्र दोष भी अनुपस्थित है।

एकार्गल दोष : विवाह के समय वज्र, व्याघात, शूल, व्यतिपात, अतिगण्ड, विष्कुंभ, गण्ड, परिघ और वैधृति योग नहीं हैं उस दिन हर्षण योग है अत: एकार्गल दोष भी अनुपस्थित है।

युति दोष : इस दिन चन्द्रमा के साथ किसी भी ग्रह की युति नहीं है अत: युति दोष भी अनुपस्थित है।

दग्ध तिथि : विवाह एकादशी तिथि में हो रहा है। सूर्य मेष राशि में हैं। सूर्य जब मेष राशि में होते हैं तो षष्ठी तिथि दग्ध संज्ञक होती है अत: दग्ध तिथि का दोष भी नहीं है।

वेध दोष : चन्द्रमा उ.फा. नक्षत्र पर हैं और पंचशलाका चक्र के अनुसार यदि रेवती नक्षत्र पर कोई ग्रह स्थित होंगे तो उ.फा. नक्षत्र का वेध हो जाएगा। दिनांक 05 मई, 2009 विवाह के समय रेवती नक्षत्र पर कोई भी ग्रह नहीं है अत: वेध दोष ही अनुपस्थित है।

पंचक : विवाह के समय सूर्य 22वें अंश पर हैं इसलिए

रोग पंचक = 22 + 15 / 9 = शेष 1,

अग्नि पंचक = 22 + 12 / 9 = शेष 7

राज पंचक = 22 +10 / 9 = शेष 5

चोर पंचक = 22 + 8 / 9 : शेष 3

मृत्यु पंचक = 22 + 4 / 9 = शेष 8

अत: विवाह वाले दिन राज पंचक उपस्थित है। नियमानुसार राज पंचक का दोष केवल दिन में और शनिवार को संपूर्ण दिन-रात में रहता है। विवाह के दिन मंगलवार है इसलिए मंगलवार को रात्रि की कोई अच्छी लग्न में ही विवाह किया जायेगा तो राज पंचक नहीं लगेगा।

इस प्रकार से 05 मई का मुहूर्त दस रेखा शुद्ध है अर्थात् रात्रि को विवाह किया जायेगा तो एक भी दोष उपस्थित नहीं है अत: यह दस रेखा वाला सावा है।

अन्य विचारणीय दोष

अर्द्धयाम दोष : पूर्व वर्णित नियमानुसार मंगलवार को दूसरा भाग (दिनमान या रात्रिमान का आठवाँ भाग तुल्य समय) अर्द्धयाम दोष युक्त होता है। 05 मई 2009 को चूंकि रात्रि में विवाह करना मजबूरी है अत: रात्रि में अर्द्धयाम संज्ञक समय का निर्धारण करेंगे।

05 मई, 2009 को सूर्यास्त - सायं - 18:55 बजे।

अगले दिन 06 मई को सूर्यादय प्रात: - 5:40 पर

कुल रात्रिमान = 24:00 - 18:55 = 5 घं 5 मि.

(रात्रि 12 बजे के बाद से सूर्योदय तक का समय)

(+) 5 : 40 = 10 : 45

अत: रात्रिमान = 10 घंटे 45 मिनिट

= 645 मिनिट

अष्टमांश = 645/8 = 80 मि. 37 सै.

लगभग 81 मिनिट

05 मई 2009 मंगलवार को अर्द्धयाम का समय -

सूर्यास्त= 18:55 + 1:21= 20:16 तक प्रथम भाग

+ 1 : 21

= 21 : 37 तक द्वितीयभाग

अत: इस दिन रात्रि 20:16 से 21:37 बजे तक का समय अर्द्धयाम संज्ञक है अत: विवाह में इस समय को त्याग दिया जायेगा।

कुलिक दोष : कुलिक दोष का विचार भी लगभग अर्द्धयाम दोष की तरह ही किया जाता है। कुलिक काल का निर्धारण करने हेतु रात्रिमान (645 मिनिट) को 15 भागों में विभाजित किया जायेगा।

रात्रिमान = 645 /15 = 43 मिनिट

मंगलवार को रात्रि में सूर्यास्त के बाद आठवाँ भाग पूरे होते ही 9वाँ भाग प्रारंभ होता है और यही भाग कुलिक संज्ञक होता है।

अत: 43 3 8 = 344 मि. = 5 घं. 44 मि. (आठ कुलिक भागों का कुल मान)

सूर्यास्त = 18 : 55 + 5 : 44 = 24 :39

+ 00 : 43

= 25 : 22

अत: 05 मई 2009 मंगलवार को रात्रि 12 बजकर 39 मि. से 1 बजकर 32 मि. तक अर्थात् 06 मई, 2009 को 00:39 बजे से 01:32 इ्ड.द्व. तक का समय कुलिक संज्ञक है अत: विवाह में इसे भी त्याग दिया जायेगा।

इस प्रकार मुहूर्त में दिन शुद्धि के आवश्यक नियमों का विचार करने के उपरांत मुहूर्त लग्न की शुद्धता देखी जाती है।

12.3.8.4 विवाह लग्न शुद्धि

उपरोक्त निर्णय अनुसार 05 मई 2009 मंगलवार को लग्न निर्धारण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना होगा।

(क) केवल रात्रि में ही विवाह हो सकता है।

(ख) रात्रि 22:37 तक जब तक कि उ.फा. नक्षत्र रहेगा तब तक ही विवाह होना शुभ है।

(ग) रात्रि 20:16 से 21:37 तक का अर्द्धयाम काल त्यागना होगा।

(घ) कुलिक काल के समय (रात्रि 00:39 से 01:32 तक) उ.फा. नक्षत्र ही नहीं रहेगा अत: विवाह नहीं हो सकता।

इस निर्णय को मानते हैं तो धनु लग्न (दिल्ली के स्टै. समयानुसार) जो कि रात्रि 21:55 बजे प्रारंभ होगी तब से रात्रि 10:33 तक (क्योंकि इसके उपरांत उ.फा. नक्षत्र नहीं रहेगा) का समय उपयुक्तहै। इस मुहुर्त लग्न के गुण दोषों का विचार पूर्व वर्णित लग्न शुद्धि के नियमानुसार करते हैं -

1. वर की राशि कर्क तथा कन्या की जन्म राशि मेष से मुहूर्त लग्न आठवीं नहीं है इसलिए शुभ है।
2. लग्न से सप्तम में कोई भी ग्रह नहीं है, सो शुभ है।
3. विवाह लग्न से दूसरे राहु मध्यम हैं क्योंकि अष्टम में केतु शुभ होते हैं।
4. विवाह लग्न से तीसरे बृहस्पति शुभ हैं।
5. विवाह लग्न से चौथे शुक्र शुभ हैं परंतु चौथे मंगल अशुभ हैं लेकिन मित्र राशि में होने से दोष का परिहार या कमी हो जाती है।
6. विवाह लग्न से पंचम में सूर्य अशुभ होते हैं लेकिन उच्च राशि में व नीच नवांश में होने से मध्यम हैं।

7. विवाह लग्न से छठे बुध शुभ हैं।

8. विवाह लग्न से अष्टम में केतु शुभ हैं।

9. विवाह लग्न से नवम में वक्री शनि अशुभ हैं परंतु उच्च नवांश में हैं।

10. विवाह लग्न से दशम में चन्द्रमा मध्यम हैं परंतु पापकर्तरि में नहीं हैं और उच्च राशि में स्थित शुक्र व मित्र ग्रह मंगल से दृष्ट हैं तथा मित्र नवांश में हैं। केवल लग्न में स्थित होने पर ही चन्द्रमा अशुभ होते हैं लेकिन मुहूर्त लग्न से केन्द्र में उच्च राशि में शुक्र स्थित हैं जो छोटे-मोटे 100 दोषों को शमन कर देते हैं।

11. इस धनु लग्न में मिथुन नवांश उत्तम है।

इस प्रकार इस लग्न में गुण व दोष दोनों उपस्थित हैं लेकिन दोषों की अपेक्षा गुण अधिक होने से यह लग्न चि. हितेश व कु. अनीता के विवाह के लिए शुभ मानी जायेगी।

इस प्रकार विवाह दिवस का निर्णय हो जाने पर अन्य सहायक मुहूर्त निकाले जायेंगे।

वर के लिए : वर की राशि कर्क, नक्षत्र - पुनर्वसु।

12. 3.8.5 श्रीगणेश निमंत्रण :

श्रीगणेश जी को विवाह की पत्रिका (शादी का कार्ड) सर्वप्रथम भेजी जाती है। यह पत्रिका शुभ दिन, वार में भेजी जाती है। विवाह से एक महीने के अंतर्गत किसी भी शुभ दिन यह कार्य किया जाता है। यदि विवाह से 5 या 10 दिन पूर्व तक कोई शुभ ग्रह अस्त हो या मलमास हो तो भी श्रीगणेश जी को निमंत्रण देने में इनका (गुरु-शुक्र के अस्त या मलमास का) दोष नहीं लगता। लेकिन तिथि, वार व चंद्र शुद्धि का ध्यान रखा जाता है। रवि, मंगल और शनिवार तथा रिक्ता (चतुर्थी, नवमी व चतुर्दशी) व अमावस्या तिथि तथा मुहूर्त अध्याय में वर्णित तिथि-वार के संयोग से तथा वार व नक्षत्र के संयोग से बनने वाले अशुभ योग में यह शुभ कार्य नहीं किया जाता। लगभग इन्हीं सब बातों का आगामी मुहूर्तों में ध्यान रखना होगा। इस कार्य में बुधवार अति शुभ माना जाता है।

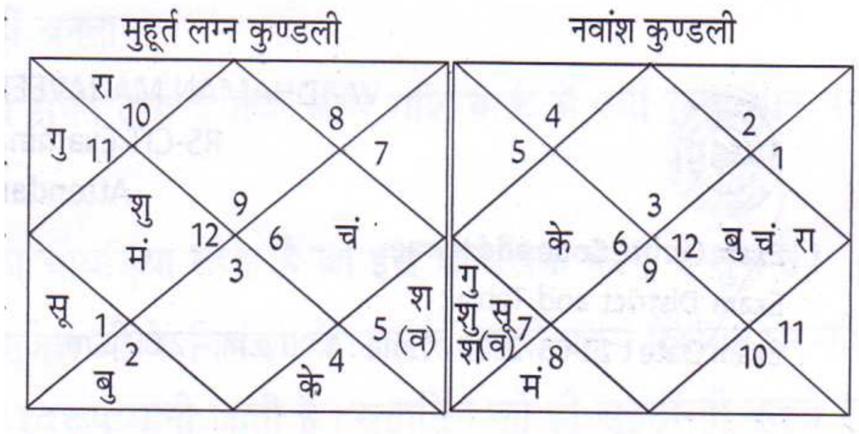

मुहूर्त : दिनांक 23 अप्रैल, 2009 गुरुवार, वैशाख कृष्ण त्रयोदशी तिथि को प्रात: 6.00 से 7.00 बजे के बीच।

1. त्रयोदशी (जया तिथि) व गुरुवार से कोई दुर्योग नहीं बनता।

2. गुरुवार व उ.भा. नक्षत्र से कोई दुर्योग नहीं बनता।

3. वर के जन्म नक्षत्र पुनर्वसु से उ.भा. दूसरी संपत तारा है तथा जन्म राशि कर्क से 9वीं राशि मीन पर चन्द्रमा हैं अत: मुहूर्त शुभ है।

4. प्रात: 6.00 से 7.00 बजे के मध्य शुभ का चौघड़िया रहता है जो इस मांगलिक कार्य में शुभ है।

सुहासिनी आमंत्रण : वैवाहिक कार्यों में श्रीगणेश जी के निमंत्रण के उपरांत सबसे प्रथम मेहमान घर की विवाहित बहन या बेटी आती है जो लक्ष्मीजी का स्वरूप मानी जाती है। सुहागिन को ही सुहासिनी कहते हैं अत: जो सुहागिन हो वही इसकी पात्रता रखती है। गणेशजी को आमंत्रित कर चुके हैं और लक्ष्मी स्वरूपा सुहासिनी को भी शुभ समय पर आमंत्रित किया जाता है जिससे वैवाहिक कार्यों में कोई विघ्न न हों और धन का अभाव भी नहीं हो।

इस कार्य में बुधवार को विशेष रूप से अशुभ माना जाता है एवं सोम-गुरु व शुक्रवार अच्छे माने जाते हैं। रवि-मंगल तथा शनिवार भी अच्छे नहीं माने जाते हैं। इस कार्य में भी पूर्ववत तिथि-वार व वार-नक्षत्र से बनने वाले दुर्योगों का ध्यान रखा जाता है। वर की राशि से व सुहासिनी स्त्री की राशि से चन्द्रमा अनुकूल हों उस दिन आमंत्रित किया जाता है।

चि. हितेश के घर सुहासिनी का आमंत्रण - (सुहासिनी का नाम श्रीमती विजयलक्ष्मी)।

मुहूर्त : दिनांक 27 अप्रैल 2009, वैशाख शुक्ल तीज, सोमवार, चन्द्रमा वृषभ में। इस दिन वर्तमान चन्द्रमा वर की राशि कर्क से 11वें तथा सुहासिनी की राशि वृषभ से पहले हैं अत: शुभ हैं। इस दिन सूर्य व चन्द्रमा दोनों अपनी उच्च राशियों में हैं अत: शुभ चौघड़िया में 9.00 से 10.00 बजे के बीच विवाह वाले घर में सुहासिनी का प्रवेश उत्तम रहेगा।

12.3.8.4 श्रीगणेश स्थापना : सुहासिनी स्त्री के आ जाने के उपरांत विवाह वाले घर में श्रीगणेश जी की स्थापना की जाती है। सुहासिनी आमंत्रण व श्रीगणेश स्थापना एक दिन में भी हो सकती है।

वैशाख शुक्ल तृतीया चूंकि सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त है अत: दिनांक 27 अप्रैल, 2009 सोमवार को अभिजित् मुहूर्त (दोपहर 12.05 से 12.51 के मध्य) में श्रीगणेश जी की स्थापना करना शुभ रहेगा। ध्यान रहे कि तारा शुद्धि की विशेष आवश्यकता नहीं। चन्द्रमा की शुद्धि ही पर्याप्त होगी।

मागरमाटी (खाना-माटी पूजन) : वैवाहिक कार्यों का आरंभ इस कार्य से होता है जब घर-परिवार और आस-पास की सभी स्त्रियाँ मिलकर के मिट्‌टी की खदान को पूजती हैं और मिट्‌टी लेकर आती हैं। पहले इसी मिट्‌टी से घर में बड़े चूल्हे बनाये जाते थे। इसमें भूमि शयन (सूर्य नक्षत्र से वर्तमान चंद्र नक्षत्र 5, 7, 12, 19 या 26वाँ हो तो भूमि शयन अवस्था में होती है) का विचार आवश्यक रूप से किया जाता है। रविवार, मंगलवार व शनिवार को छोड़कर अन्य वार को यह काम कर लेना चाहिए। साथ ही हल्दहाथ की प्रक्रिया भी इस दिन संपन्न की जाती हैं।

हल्द हाथ : यह कार्य लौकिक रीतियों के अनुसार अलग-अलग नामों से जाना जाता है जिसका अर्थ है कि वैवाहिक कार्यों जैसे - घर की सफाई, पुताई, घी-तेल, धान्य, गेहँ, मसाले आदि लाना, तैयार करना आदि। यह कार्य विवाह से पूर्व 3, 6 तथा 9वें दिन के अतिरिक्त दिनों में वर या कन्या का चंद्र बल देखकर, यदि चंद्र शुद्धि नहीं भी हो तो केवल विवाह मे शुभ माने जाने वाले नक्षत्रों में भी इस कार्य का आरंभ करना चाहिए।

मुहूर्त : विवाह से पूर्व आठवें दिन 28 अप्रैल, 2009 मंगलवार (यहाँ तिथि, वार व चंद्र राशि को गौण मानकर केवल विवाह विहित नक्षत्रों को महत्त्व दिया गया है) को मृगशिरा नक्षत्र में प्रात: 10:00 से 12.00 बजे के मध्य लाभ व अमृत के चौघड़िये में करना उत्तम रहेगा।

तेल चढ़ाना : वर या कन्या को विवाह से पूर्व तेल या उबटन आदि लगाकर स्नान कराना भी शुभ दिन से प्रारंभ किया जाता है। यद्यपि अलग-अलग राशि वालों के लिए अलग दिन संख्या बताई गई हैं तथापि वर्तमान में विवाह से मात्र तीन दिन पूर्व से ही यह कार्य प्रारंभ होने लगा है जो कि लौकिक अवधारणा या मान्यता का रूप भी ले चुका है। इस कार्य में भी चंद्र तारा बल देखने की आवश्यकता नहीं होती।

तेल चढ़ाने के लिए दिनों की संख्या का शास्त्रीय प्रमाण: (यह दिन प्रमाण वर व कन्या दोनों के लिए लागू होंगे)

मेष	-	7 दिन पूर्व
वृषभ	-	10 दिन पूर्व
मिथुन	-	5 दिन पूर्व
कर्क	-	10 दिन पूर्व
सिंह	-	5 दिन पूर्व
कन्या	-	7 दिन पूर्व
तुला	-	5 दिन पूर्व
वृश्चिक	-	5 दिन पूर्व
धनु	-	5 दिन पूर्व
मकर	-	5 दिन पूर्व
कुंभ	-	5 दिन पूर्व
मीन	-	7 दिन पूर्व

यहाँ तक के मुहूर्तों के निर्धारण में जो विधि व नियमों को प्रयुक्त किया गया है वे सभी कन्या के घर में भी समान रूप से लागू होंगे। किसी एक कार्य के लिए दोनों स्थानों (वर व कन्या के घर) पर दिन अलग-अलग या एक समान भी हो सकते हैं।

कन्या के घर के लिए मुहूर्त :

12.3.8.8 मंडप स्थापना - यह कार्य केवल कन्या के घर पर किया जाता है। जिस कक्ष या मंडप में विवाह संस्कार संपन्न होता है उसकी स्थापना शुभ मुहूर्त में की जाती है। आमतौर पर अब विवाह से एक दिन पूर्व मंडप स्थापना की जाती है। मंडप स्थापना में प्रथम स्तम्भ की स्थापना करने में अध्याय में पूर्व वर्णित रीती से सूर्य की राशि विशेष में वर्तमान स्थिति के अनुसार, खात निर्णय करके उचित दिशा (कोण) में प्रथम स्तम्भ स्थापित किया जाता है। तदुपरांत मंडप सजाया जाता है। विवाह से एक दिन पूर्व इस मंडप के नीचे कन्या के माता-पिता, कन्या को साथ मे लेकर ग्रह-शान्ति और वास्तु शान्ति पूजा व हवन करते हैं जिससे मंडप शुद्ध व संस्कारित हो जाता है। फिर अगले दिन शुभ मुहूर्त में इसी मंडप में विवाह संस्कार संपन्न होता है।

12.3.8.9 वधू प्रवेश या द्विरागमन मुहूर्त: विवाह होने के उपरांत कन्या अपने पति के घर चली जाती है और 2 या 3 दिन ससुराल में रहकर पुन: अपने पिता के यहाँ आ जाती है। इस आने-जाने के क्रम में बुधवार को अशुभ माना जाता है।

अपने पिता के यहाँ से जब कन्या दूसरी बार अपने पति के घर जाती है तो वह वधू कहलाती है और बहू जब दूसरी बार ससुराल आती है तो बहू का शुभ मुहूर्त में गृह-प्रवेश कराया जाता है। इसे ही वधू-प्रवेश या द्विरागमन अथवा गौना कहते हैं।

द्विरागमन मुहूर्त

1. विवाह के उपरांत विषम दिन-मास व वर्षों में करना चाहिए।
2. मलमास और अधिक मास के अतिरिक्तमहीनों में किया जाता है।
3. सोम, गुरु या शुक्रवार शुभ होते हैं।
4. वृष, मिथुन, कन्या, तुला और मीन लग्न शुभ होती है।
5. हस्त, अश्विनी, पुष्य, उफा., उषा., उभा., रोहिणी, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा नक्षत्रों में द्विरागमन (वधू का दूसरी बार पति के घर में प्रवेश) शुभ होता है।

द्विरागमन मुहूर्त : सौभाग्यवती अनिता के पुन: (दुबारा) ससुराल में प्रवेश के लिए शुभ मुहूर्त निकालते हैं। इसमें कन्या अर्थात् अब वधू के जन्म नक्षत्र और जन्म राशि से चंद्र शुद्धि देखी जाती है।

विवाह दिवस से 11वें दिन दिनांक 15 मई, 2009 शुक्रवार को उ.षा. के उपरांत श्रवण नक्षत्र में सायं-15:38 से 15:51 तक कन्या लग्न और इस लग्न में मिथुन नवांश ही शुद्ध मिल रहा है। इस मुहूर्त के लिए लग्न और लग्न से चतुर्थ भाव की शुद्धि विशेष रूप से देखी जाती है।

वर्तमान में द्विरागमन विवाह के तुरंत बाद ही विषम दिनों में शुभ मुहूर्त देखकर होने लगे हैं अत: हमने भी उसी परम्परा का विवाह करते हुए विवाह से ग्यारहवें दिन, षष्ठी तिथि-शुक्रवार (सिद्ध योग) को श्रवण नक्षत्र (शुक्रवार व श्रवण नक्षत्र के संयोग से बने अमृत सिद्ध योग में) में द्विरागमन का मुहूर्त निकाला है।

यद्यपि कुछ जातियों में जहाँ पर कम उम्र में विवाह होते हैं वहाँ विवाह के उपरांत विषम वर्षों में विवाह के समान ही मुहूर्त शुद्धि देखकर द्विरागमन होता है जिसे गौना करना भी कहते हैं। विद्यार्थी वर्ग इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही मुहूर्त निकालें।

12.4 यात्रा का शुभ समय

प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी कार्य से अक्सर यात्रा करनी पड़ती है। किसी भी यात्रा का प्रारम्भ यदि शुभ समय (मुहूर्त) पर किया जाए तो उसके शुभ परिणाम मिलते हैं, स्वास्थ्य की रक्षा तो होती ही है, साथ में सुख और समृद्धि की भी प्राप्ति होती है।

यहाँ यह बात ध्यान रखने योग्य है कि-दैनिक यात्राओं में मुहूर्त देखने की आवश्यकता नहीं होती, वहाँ तो दैनिक निश्चित समय पर ही घर से निकलना होता है। जैसे - किसी की नौकरी समीपस्थ किसी शहर या गाँव में है और उसे प्रतिदिन अपने घर से उस स्थान का आवागमन करना होता है या किन्हीं व्यक्तियों का व्यवसाय ही यात्रापरक होता है और उन्हें प्रतिदिन अपने घर से निकलकर उन स्थानों (कार्य क्षेत्रों) की यात्रा करके पुन: साँझ तक घर आना होता है। इस प्रकार की यात्राओं में मुहूर्त (शुभ समय) निर्धारण की कोई आवश्यकता नहीं होती।

किसी कार्य अथवा लक्ष्य विशेष को ध्यान में रखकर, उसकी प्राप्ति या सफलता के लिए शुभ समय का निर्धारण अवश्य करना चाहिए। यात्रा के कई प्रकार होते हैं - प्रतियोगी परीक्षा के लिए की गई यात्रा, पारिवारिक, सामूहिक मनोरंजक या समारोह परक यात्रा, तीर्थ यात्रा, व्यावसायिक यात्रा आदि।

इन सभी प्रकार की यात्राओं में शुभ समय का निर्धारण अपेक्षित होता है। यदि व्यक्ति को अकेले यात्रा करनी हो तो स्वयं की जन्म राशि व नक्षत्र के अनुसार, शुभ समय का निर्धारण करना चाहिए किन्तु यदि पारिवारिक सामूहिक यात्रा करनी हो तो परिवार के मुखिया (परिवार का सबसे बड़ा पुरुष) की राशि और नक्षत्र से शुभ समय का निर्धारण कर लेना चाहिए।

यात्रा के सामान्य नियम

1. सूर्य जब मिथुन, कन्या, धनु और मीन राशियों में हों तो लम्बी दूरी की विशेष प्रयोजनीय (स्थलीय-रेल, हवाई जहाज, समुद्री जहाज या मोटरयान द्वारा) यात्रा नहीं करनी चाहिए।
2. सूर्य जब वृषभ, सिंह और वृश्चिक राशियों में हों तो जलीय मार्गों से यात्रा नहीं करनी चाहिए।

3. भाद्रपद और आश्विन मास में तीर्थ स्थलों की, लम्बी दूरी की यात्रा नहीं करनी चाहिए।

4. अमावस्या तिथि में किसी भी प्रकार की यात्रा का आरम्भ नहीं करना चाहिए।

5. रिक्ता तिथियों (चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी) में व्यावसायिक यात्रा का आरम्भ नहीं करना चाहिए।

6. राहु काल व यमघण्ट काल को यात्रा में त्याग देना चाहिए।

7. जन्म राशि से 4, 8, 12वीं राशि पर चन्द्रमा हों तो यात्रा नहीं करनी चाहिये। मतान्तर से अति आवश्यकता में 12वाँ चन्द्रमा ग्राह्य: होते हैं।

   सफलतम यात्रा का मुहूर्त निकालने के लिए जो आधारीय विषय वस्तु तथा चक्र आदि होते हैं उनका क्रम से अध्ययन करेंगे।

12.4.1 दिशा शूल

दिशा में स्थित शूल ही दिशाशूल होते हैं। शूल को सामान्यत: कांटे भी कहते हैं। कांटों को समस्या या कठिनाइयों का पर्याय भी माना जाता है। बोलचाल में कहा जाता है कि हमारे पथ (जीवन चक्र या कार्य विशेष) में कांटे ही कांटे (समस्याएं ही समस्याएं) हैं।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार किसी वार विशेष को, किसी दिशा विशेष में शूल होते हैं तो किसी दिशा में फूल। शूल वाली दिशा में गमन या यात्रा नहीं की जाती, फूल वाली दिशा में गमन अर्थात्: यात्रा की जाती है। दिशाशूल के नियम छोटी से छोटी यात्राओं से लेकर बड़ी-बड़ी यात्राओं के प्रारम्भ में अपनाये जाते हैं। किसी भी यात्रा को सुखद और दु:खद बनाने में दिशाशूल निर्णायक सिद्ध होते हैं। प्रत्येक वार का किसी ग्रह विशेष से संबंध होता है।

12.4.2 वार-दिशाशूल

सोम शनैश्चर पूरब वासा, रवि शुक्र पश्चिम कर वासा।

मंगल बुध उत्तर कर वासा, दक्षिण गुरु एकला निवासा॥

सोमवार और शनिवार को पूर्व दिशा में दिशाशूल होता है। सोमवार चंद्र का वार है और शनिवार शनिदेव का। चन्द्रमा उत्तर में बली होते हैं और शनिदेव पश्चिम दिशा में। पूर्व में दोनों ही अल्पबली होते हैं इसलिए सोमवार व शनिवार को पूर्व दिशा की यात्रा नहीं करनी चाहिए। यात्रा में दिशा अपने घर से गन्तव्य स्थान की ही देखनी चाहिए। ऐसा कभी नहीं करें कि घर से निकलकर, शुभ दिशा में मुंह करके चले जाएं या घर की अन्य दूसरी दिशा में स्थित द्वार से निकलकर परिहार की पूर्ति करें। इन गतिविधियों से कभी भी

दिशाशूल का परिहार नहीं होता। दिशाशूल वाली दिशा में यात्रा करने पर अनावश्यक असुविधाएं, स्वास्थ्य में नरमी, चोरी आदि का अंदेशा रहता है।

रवि और शुक्रवार को पश्चिम दिशा में दिशाशूल होता है। सूर्य दक्षिण में और शुक्र उत्तर दिशा में बली रहते हैं। दोनों ही ग्रह पश्चिम में अल्पबली होते हैं। इसलिए रवि-शुक्रवार को पश्चिम दिशा में यात्रा करने पर शूल (परेशानी) उत्पन्न होते हैं।

मंगल और बुधवार को उत्तर दिशा में दिशाशूल होता है। मंगलवार के स्वामी मंगल और बुधवार के स्वामी बुध होते हैं। मंगल दक्षिण में और बुध पूर्व दिशा में बली होते हैं और ये दोनों उत्तर दिशा में निर्बल होते हैं इसलिए इन दोनों के वारों (मंगल व बुध) में उत्तर दिशा में यात्रा नहीं करनी चाहिए।

गुरुवार को दक्षिण दिशा में शूल होते हैं। गुरु, पूर्व दिशा में बली होते हैं। दक्षिण दिशा यम दिशा है, इसमें गुरु निर्बल होते हैं इसलिए गुरुवार को दक्षिण दिशा की यात्रा नहीं करनी चाहिए।

किसी भी प्रकार की यात्रा हो, वार शूल (दिशाशूल) अवश्य देखना चाहिए। यात्रा में दिशाशूल नहीं हो अच्छे अवसर और सहयोग दोनों प्राप्त होते हैं।

इसके अतिरिक्त चन्द्रमा जब किसी नक्षत्र विशेष में होते हैं तो भी किसी दिशा विशेष के लिए अनिष्टकारी होते हैं। जैसे - चन्द्रमा जब ज्येष्ठा नक्षत्र में हों तो पूर्व दिशा में दिशाशूल होता है, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में हों तो दक्षिण दिशा में शूल, रोहिणी नक्षत्र में हों तो पश्चिम दिशा में और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में हों तो उत्तर दिशा में शूल होते हैं।

यदि किसी दिन, वार और नक्षत्र दोनों का मेल हो तो संबंधित शूल दिशा में, कितनी ही आवश्यकता हो, यात्रा नहीं करनी चाहिए।

कहा है :-

शूल संज्ञानि धिष्ण्यानि शूल संज्ञाश्च वासरा:।

यायिनां मृत्युदा: शीघ्रमथवा चार्थहानिदा:॥

व्यावसायिक, प्रतियोगितात्मक और वाद-विवाद परक यात्रा में इस नियम का विशेष रूप से प्रयोग करना चाहिए अर्थात्‌ वार या नक्षत्र शूल में तत्संबंधी दिशा में जो यात्रा करता है उसके स्वास्थ्य में नरमी अथवा धन की हानि अवश्य होती है। जैसे - सोमवार या शनिवार हो और ज्येष्ठा नक्षत्र भी हो तो पूर्व दिशा में कदापि यात्रा नहीं करनी चाहिए।

दिशाशूल वाली दिशा को अपने बाँयीं (उल्टे हाथ) तरफ लेकर जो यात्रा करता है, उसकी यात्रा जिस किसी भी कार्य के लिए हो, सफल होती है तथा सुविधाएं व सहयोग प्राप्त होते हैं।

वर्तमान में चूंकि मार्केटिंग आवश्यक हो गई है और कम्पनियों के रिप्रेजेन्टेटिव वर्ग को रोज यात्रा करनी पड़ती है अत: उनकी यात्राओं की सफलता ही उनकी और कम्पनियों की सफलता का मुख्य आधार होता है। वे बंधु वर्ग अपने क्षेत्रों में, अच्छी दिशा के नक्षत्रों में ही वार विशेष में यात्रा करें, कम्पनी का प्रचार करें। किसी को शहर, किसी को तहसील या जिला अथवा प्रदेश का प्रभारी, कम्पनी द्वारा नियुक्त किया जाता है जो क्षेत्र आपके पास में है, उसका दिशा निर्धारण क्षेत्र विशेष के अनुसार अपने मुख्य कार्यालय से दिशा साधकर, वार विशेष को जो दिशा शूल रहित हो, उसी दिशा के क्षेत्रों की यात्राएँ, उस वार को करनी चाहिएं।

12.4.2 यात्रा में दिशा निषेध

दिशा	वार शूल	नक्षत्र शूल
पूर्व	सोम, शनि	ज्येष्ठा
दक्षिण	गुरुवार	पूर्वाभाद्रपद
पश्चिम	रवि, शुक्र	रोहिणी
उत्तर	मंगल, बुध	उत्तरा फाल्गुनी

दिशा कोण	पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैऋर्त्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
वार शूल	सोम शनि	सोम गुरु	गुरु -	रवि शुक्र	रवि शुक्र	मंगल मंगल	मंगल बुध	बुध शनि

जैसे कि चक्र के अनुसार सोमवार व शनिवार को पूर्व दिशा में दिशाशूल होता है अत: इन वारों में पूर्व दिशा की यात्रा नहीं की जा सकती। अति आवश्यकता में नीचे बताए गए उपायों को अपनाकर यात्रा की जा सकती है लेकिन यदि सोमवार या शनिवार को ज्येष्ठा नक्षत्र भी हो तो कितनी भी आवश्यकता हो पूर्व दिशा की यात्रा नहीं करनी चाहिए।

1. रविवार को पश्चिम में यात्रा करनी पड़े तो यात्रा अन्य वार की होरा में, देशी घी खाकर और अपने प्रिय व्यक्ति को ताम्बूल (पान) दान कर (खिलाकर) यात्रा कर लेनी चाहिए।

2. सोमवार को दूध पीकर, चंदन का दान करके और चंदन लगाकर जाना चाहिए।

3. मंगलवार को गुड़ खाकर और मृगचर्म या ऊनी कंबल का दान करके ।

4. बुधवार को तिल या तिल से बनी वस्तु खाकर तथा कुछ पुष्प देवता को चढ़ाकर और एक पुष्प साथ लेकर।

5. गुरुवार को दही खाकर और दही का ही दान करके।

6. शुक्रवार को जौ से बना पदार्थ खाकर और घी का दान करके।

7. शनिवार को उड़द से बना पदार्थ खाकर और तिल का दान करके आवश्यक यात्रा की जाए तो यात्रा में शूल उत्पन्न नहीं होते या व्यक्ति कठिनाइयों को दूर कर पाने में सक्षम बना रहता है अथवा अच्छा सहयोगी प्राप्त होता है, जिसकी सहायता से यात्रा सकुशल हो जाती है।

12.4.4 तारा शोधन

अपने (यात्री के) जन्म नक्षत्र से वर्तमान दिन (यात्रा का दिन), नक्षत्र की शुद्धि की जाती है। यह शुद्धि विशिष्ट यात्राओं में आवश्यक रूप से देखनी चाहिए।

जिस दिन यात्रा करनी हो, उस दिन चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर हों, उस नक्षत्र की (अश्विनी-भरणी आदि क्रम से), अपने जन्म नक्षत्र से गणना करनी चाहिए। जन्म नक्षत्र से वर्तमान दिन नक्षत्र तक की गणना करने पर, जितनी संख्या आए, उस संख्या में 9 का भाग देवें। भाग देने पर शेष 1, 3, 5 और 7 बचे तो यात्रा स्थगित कर देनी चाहिए।

12.5 योगिनी विचार

योगिनी का विचार पर्वतीय क्षेत्रों की यात्रा में विशेष रूप से करना चाहिए। सामान्य यात्राओं में भी यदि योगिनी की स्थिति का विचार कर लिया जाए तो परिणाम अच्छे ही आते हैं।

12.5.1 योगिनी की स्थिति

सूर्य से चन्द्रमा की दूरी अर्थात्; प्रतिपदा आदि तिथियों के आधार पर योगिनी की स्थिति पूर्वादि 8 दिशाओं में होती है। इसे निम्न चक्र या चित्र के माध्यम से समझ सकते हैं।

इस चित्र में लिखे गए अंक, संबंधित तिथि के सूचक हैं, जैसे - 1-9 का अर्थ प्रतिपदा व नवमी, 30 का अर्थ है अमावस्या आदि।

योगिनी का वास यात्रा करने वाले के पृष्ठ (पीछे) और दांयीं ओर शुभ होता है। जैसे प्रतिपदा और नवमी तिथि को योगिनी का वास पूर्व दिशा में होता है अत: पूर्व दिशा में तथा दक्षिण दिशा में यात्रा नहीं की जा सकती। पूर्व दिशा में योगिनी सम्मुख (सामने) तथा दक्षिण दिशा की यात्रा में योगिनी बांयीं ओर पड़ती है जो कि अशुभ लेकिन पश्चिम व उत्तर में यात्रा की जा सकती है।

12.5.2 योगिनी बोधक सारिणी

योगिनी	तिथि	गंतव्य दिशा	त्याज्य दिशा
वास		(यात्रा में शुभ)	(यात्रा में अशुभ)
पूर्व	1,9	पश्चिम, उत्तर	पूर्व, दक्षिण
अग्नि	3,11	वायव्य, ईशान	अग्नि, नैऋर्त्य
दक्षिण	5,13	उत्तर, पूर्व	दक्षिण, पश्चिम
नैऋर्त्य	4,12	अग्नि, ईशान	वायव्य, नैऋर्त्य
पश्चिम	6,14	पूर्व, दक्षिण	पश्चिम, उत्तर
वायव्य	7,15	नैऋर्त्य, अग्नि	वायव्य, ईशान
उत्तर	2,10	पश्चिम, दक्षिण	उत्तर, पूर्व
ईशान	8,30	वायव्य, नैऋर्त्य	ईशान, अग्नि

घात चंद्र विचार : घात का अर्थ धोखा या प्रहार अर्थात् अशुभ। प्रत्येक राशि के लिए अलग तिथि-वार, राशि-नक्षत्र आदि घात संज्ञक होते हैं। जन्म राशि से, घात राशि पर जब चन्द्रमा होते हैं तो वे घात संज्ञक अर्थात्ं घात चंद्र कहलाते हैं। घात राशि में जब चन्द्रमा होते हैं तो यात्रा करने से अनेक विघ्न आते हैं तथा झगड़े-फसाद का भय रहता है।

घात चक्र में प्रत्येक राशि के अनुसार घात संज्ञक मास, तिथि, वार, नक्षत्र तथा घात राशियाँ आदि बताई गई हैं। इस चक्र में पुरुष व स्त्री दोनों के लिए घात मास, तिथि, वार आदि समान होते हैं परंतु कुछ राशि वाले पुरुष व स्त्रियों के लिए चन्द्रमा अलग-अलग राशियों पर घात-संज्ञक होते हैं। जिनका विवरण चक्र में दिया गया है। जीवन की महत्त्वपूर्ण यात्राओं में घात संज्ञक, मास, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण और चन्द्रमा को त्याज्य माना जाता है। घात चक्र की शुद्धि यात्रा में आवश्यक रूप से देखी जाती है। कितनी भी आवश्यकता होने पर भी घात चक्र का उल्लंघन नहीं करना चाहिए।

घात चंद्र का विचार पुरुषों व स्त्रियों के लिए अलग-अलग प्रकार से किया जाता है अत: यहाँ पुरुषों व स्त्रियों की राशियों से चन्द्रमा का अलग-अलग विचार करना चाहिये।

12.5.3 घात चक्र सारीणी

जन्म राशि	मेष	वृष	मिथु.	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
घात मास	कार्तिक	मार्गशीर्ष	आषाढ़	पौष	ज्येष्ठ	भाद्रपद	माघ	आश्विन	श्रावण	वैशाख	चैत्र	फाल्गुन
घात तिथि	1,6,11	5,10,15	2,7,12	2,7,12	3,8,13	5,10,15	4,9,14	1,6,11	3,8,13	4,9,14	3,8,13	5,10,15
घात वार	रवि	शनि	सोम	बुध	शनि	शनि	गुरु	शुक्र	शुक्र	मंगल	गुरु	शुक्र
घात नक्षत्र	मघा	हस्त	स्वाति	अनु.	मूल	श्रवण	शत्.	रेवती	भरणी	रोहिणी	आर्द्रा	आश्लेषा
घात योग	विष्कुंभ	शुक्ल	परिघ	व्याघात	धृति	शुक्ल	शुक्ल	व्यतिपात	वज्र	वैधृति	गण्ड	वज्र
घात करण	बव	शकुनि	कौलव	नाग	बव	कौलव	तैतिल	गर	तैतिल	शकुनि	किंस्तुघ्न	चतुष्पद
घात प्रहर	प्रथम	चतुर्थ	तृतीय	प्रथम	प्रथम	प्रथम	चतुर्थ	प्रथम	प्रथम	चतुर्थ	तृतीय	चतुर्थ
घात चंद्र पुरुष	मेष	कन्या	कुंभ	सिंह	मकर	मिथुन	धनु	वृषभ	मीन	सिंह	धनु	कुंभ
घात चंद्र स्त्री	मेष	धनु	धनु	मीन	मकर	वृशि.	मकर	धनु	कन्या	वृशि.	मिथु.	कुंभ

घात चक्र में प्रत्येक राशि के नीचे मास, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण आदि लिखे गये हैं। जिस राशि के नीचे जो मास, तिथि आदि लिखे हैं वे उस राशि वाले व्यक्ति के लिए घातसंज्ञक होते हैं। घात संज्ञक मास, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण एवं घात राशि पर चन्द्रमा स्थित हों तो यात्रा नहीं की जाती है।

सम्मुख चंद्र विचार : चन्द्रमा जिस राशि में होते हैं, उस राशि के आधार पर ही उनकी दिशाओं में स्थिति निर्धारित होती है। प्रत्येक राशि अलग-अलग दिशा की सूचक होती है।

पूर्व दिशा : मेष, सिंह और धनु।

दक्षिण दिशा : वृष, कन्या और मकर।

पश्चिम दिशा : मिथुन, तुला और कुंभ।

उत्तर दिशा : कर्क, वृश्चिक और मीन।

इस प्रकार चन्द्रमा जिस राशि में होते हैं, उस राशि की दिशा में उनकी स्थिति मानी जाती है। जिस दिशा में चन्द्रमा होते हैं, उस दिशा में यात्रा करने पर अर्थात्। चन्द्रमा को सम्मुख लेकर अथवा दाहिने हाथ की तरफ लेकर यात्रा की जाये तो धन संपत्ति और सुख समृद्धि प्राप्ति होती है तथा यात्रा सुखकारी और अत्यंत सफलतम सिद्ध होती है। जबकि बांयीं तरफ चन्द्रमा हों तो धन की हानि व पीठ पीछे हों तो स्वास्थ्य की हानि होती है।

12.5.4 काल व पाश समय का स्पष्टीकरण

जिस प्रकार किसी वार विशेष को किसी दिशा विशेष में दिशाशूल होते हैं और तिथि विशेष को योगिनी रहती है। उसी प्रकार वार विशेष में किसी निश्चित दिशा में काल और पाश का निवास रहता है। जिस दिशा में काल का वास होता है उस दिशा में यात्रा करने पर स्वास्थ्य की हानि या कोई दुर्घटना होने की संभावना रहती है तथा जिस दिशा में पाश का वास होता है उस दिशा में यात्रा करने पर बंधन या व्यर्थ की उलझनें उत्पन्न होती है।

दिन और रात्रि में काल व पाश संज्ञक दिशाओं में अंतर होता है। किसी एक वार को दिन में जो दिशा काल संज्ञक होती है वही दिशा रात्रि में पाश संज्ञक हो जाती है और जो दिशा दिन में पाश संज्ञक होती है वह रात्रि में काल संज्ञक हो जाती है जिसे निम्न सारिणी द्वारा समझा जा सकता है।

काल-पाश दिशा ज्ञान सारिणी

संज्ञा	रवि.	सोम.	मंगल.	बुध.	गुरु.	शुक्र.	शनि.
दिन में	काल	उत्तर	वायव्य	पश्चिम	नैऋत्य	दक्षिण	आग्नेय पूर्व
पाश	दक्षिण	आग्नेय	पूर्व	ईशान	उत्तर	वायव्य	पश्चि.

रात्रि में	काल	दक्षिण	आग्नेय	पूर्व	ईशान	उत्तर	वायव्य पश्चि.
पाश	उत्तर	वायव्य	पश्चिम	नैऋर्व्य	दक्षिण	आग्नेय	पूर्व

महत्त्वपूर्ण यात्राओं में काल-पाश संज्ञक दिशाओं का ध्यान रखा जाता है। जैसे - यदि रविवार को दिन में उत्तर दिशा में यात्रा नहीं की जा सकती क्योंकि रविवार को उत्तर दिशा काल संज्ञक है एवं इसी तरह दक्षिण दिशा पाश संज्ञक होती है अत: किसी भी महत्त्वपूर्ण यात्रा पर जाने के लिए काल पाश रहित दिशा का निर्धारण उपरोक्त सारिणी के द्वारा आसानी से किया जाता है।

पथिराहु चक्र

धर्म	अश्.	पुष्य	आश्.	विशा.	अनु.	धनि.	शत.
अर्थ	भरणी	पुन.	मघा	स्वाती	ज्येष्ठा	श्रवण	पूभा.
काम	कृत्ति.	आर्द्रा	पूफा.	चित्रा	मूल	अभि.	उभा.
मोक्ष	रोहिणी	मृग.	उफा.	हस्त	पूषा.	उषा.	रेवती

उपरोक्त चक्र के अनुसार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पर आधारित 28 नक्षत्रों का वर्गीकरण चार प्रकार से किया गया है। इस चक्र से यात्रा की सफलता और असफलता का ज्ञान निम्न प्रकार से किया जाता है। युद्ध और वाद-विवाद के कार्यों से संबंधित यात्राओं में इस चक्र का विचार किया जाता है।

1. धर्म मार्ग के नक्षत्रों में सूर्य हों और अर्थ या मोक्ष मार्ग के नक्षत्रों में चन्द्रमा हों।
2. अर्थ मार्ग के नक्षत्रों में सूर्य हों और धर्म या मोक्ष मार्ग के नक्षत्रों में चन्द्रमा हों।
3. काम मार्ग के नक्षत्रों में सूर्य हों और धर्म, अर्थ या मोक्ष मार्ग के नक्षत्रों में चन्द्रमा हों।
4. मोक्ष मार्ग के नक्षत्रों में सूर्य हों और धर्म मार्ग पर चन्द्रमा हों। उपरोक्त चारों प्रकार से सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति होने पर प्रारंभ की गई समस्त यात्राएं शुभफल प्रदायक एवं लाभदायक होती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य स्थिति में की गई यात्राएं असफल रहती हैं।

परिघ योग

परिघ एक विशेष प्रकार का चक्र होता है जो यात्रा में विशेष रूप से देखा जाता है। योग के अनुसार इसमें अभिजित् सहित 28 नक्षत्रों को शामिल किया गया है। इस चक्र का प्रारम्भ पूर्व दिशा के बांयीं ओर से

कृतिका नक्षत्र से करते हैं। इसके बाद पूर्व से दक्षिण, पश्चिम और अन्त में शेष सात नक्षत्र उत्तर दिशा में लिखे जाते हैं। इसमें वायव्य कोण से अग्निकोण को काटती हुई एक रेखा खींची जाती है। यही रेखा कालदण्ड या परिघ दण्ड कहलाती है जो पूर्व और उत्तर के नक्षत्रों को तथा दक्षिण और पश्चिम दिशा के नक्षत्रों को दो बराबर-बराबर भागों में बाँटती है।

12.5.5 परिघ दण्ड

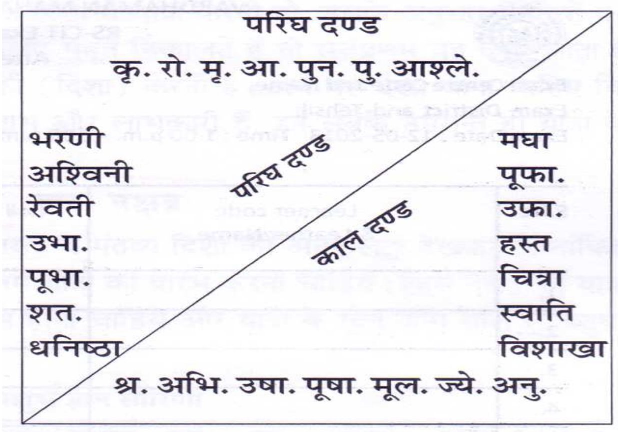

इस चक्र के विचार करने का कारण यह है कि यात्रा जिस दिशा में करनी हो उसी दिशा के नक्षत्र का चयन मुहूर्त में करना चाहिए, ऐसा करने से यात्रा शुभ व लाभप्रद रहती है। जैसे यदि पूर्व दिशा में यात्रा करनी है तो पूर्व वर्णित सभी नियमों को अपनाते हुए केवल कृतिका से आश्लेषा तक या धनिष्ठा से भरणी पर्यन्त तक जो नक्षत्र शुद्ध मिले उसी में यात्रा करना शुभ होता है। लेकिन मघा से श्रवण पर्यन्त नक्षत्रों में पूर्व दिशा की यात्रा नहीं की जा सकती।

कुल-अकुल संज्ञक नक्षत्र शोधन

कुल-अकुल संज्ञक नक्षत्र शोधन यात्रा मुहूर्त से संबंधित एक विशेष प्रकार की पद्धति होती है। दैनिक जीवन में जब कभी संधि, वार्ता, सुलह, समझौता, सौदेबाजी, कोई निर्णय, साक्षात्कार या दो पक्षों की सहमति अथवा सुलह वार्ता आदि होते हैं तो इस पद्धति का प्रयोग यात्रा में किया जाता है। यह नक्षत्रों पर आधारित पद्धति है जिसमें नक्षत्रों को तीन भागों में विभाजित किया गया है।

12.5.6 कुल-अकुल संज्ञक सारिणी

संज्ञाएं	नक्षत्र	तिथियाँ	वार	फल

अकुल	स्वाती, भरणी,आश्लेषा, धनिष्ठा, रेवती, हस्त, अनुराधा, पुनर्वसु, उफा., अनुराधा, पुनर्वसु, उफा., उभा.,उषा., रोहिणी	1, 3, 5, 7 9, 11, 13, 15 15	रवि. सोम. शनि शनि बृह.	जाने वाला विजयी विजयी उभा.,उषा., रोहिणी
कुलाकुल	मूल, आर्द्रा, अभिजित् शतभिषा	10, 6, 2	बुध	संधि
कुल	पूफा., पूभा., पूषा., अश्विनी, पुष्य, मघा, मृगशिरा, श्रवण, कृतिका,विशाखा, ज्येष्ठा, चित्रा	4, 8, 12, 14	मंगल शुक्र	स्थायी विजय

1. **अकुल :** इसमें जो व्यक्ति वार्ता या संधि आदि के लिए जाता है, वह यायी कहलाता है। इस मुहूर्त में वह व्यक्ति सामने वाले से अपनी बात मनवाने में सफल हो जाता है अर्थात् जो कोई अन्य किसी दूसरे व्यक्ति से बात करने या कोई समझौता या सौदा करने के लिए अपने स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है तो उसे अकुलसंज्ञक मुहूर्त साधना चाहिये। इससे उसकी विजय होती है, वह सफल रहता है।

2. **कुलाकुल :** इसमें दोनों पक्षों की सहमति रहती है अर्थात्ा इस मुहूर्त में संधि या सुलह वार्ता संबंधी कार्य हेतु यात्रा करना शुभ रहता है।

3. **कुल :** इसमें जो व्यक्ति वार्ता हेतु अन्य को अपने यहाँ बुलाता है या वार्ता चाहने वाला अपने स्थान पर रहकर ही वार्ता या संधि करता है वह सफल होता हैं वह विजयी होता है अर्थात् कुलसंज्ञक मुहूर्त में यात्रा करने वाले को असफलता मिलती है।

इस सारिणी के अनुसार वर्ष के प्रत्येक माह की विशिष्टा तिथियों में, विशिष्टा दिशा में ही यात्रा करना शुभ रहता है। यात्रा के लिए मुहूर्त निकालते समय जिस दिशा में यात्रा करनी हो, उसके अनुसार तिथियों की भी अपनी अलग महत्ता होती है। अत: जब यात्रा के लिए मुहूर्त निकालते हैं तो सर्वप्रथम यह देखा जाता है कि यात्रा कब अर्थात्ा किस माह में और किस स्थान की (दिशा) करनी है। अब यह देखा जाना चाहिए कि यात्रा कालिक दिशा के लिए कौन-कौन सी तिथियाँ शुभ और लाभकारी हैं, इन सबके उपरान्त ही यात्रा के लिए मुहूर्त निकालते हैं।

12.5.7 यात्रा में शुभ, वार, नक्षत्र

उपरोक्त चक्रों के अनुसार अपने जन्म राशि, नक्षत्र व गंतव्य दिशा की अनुकूलता देखकर निम्नांकित तिथि, वार, नक्षत्र आदि जो कि यात्रा में शुभ होते हैं उनमें यात्रा का प्रारंभ करना चाहिये। जिस नक्षत्र को यात्रा के लिए निश्चित किया जाता है वह जन्म नक्षत्र से शुभ होना चाहिये और यात्रा के दिन जन्म राशि से चतुर्थ, अष्टम व बारहवीं राशि पर चन्द्रमा नहीं होने चाहिये।

पौष	माघ	फा.	चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठा	आषाढ़	श्रावण	भाद्र	आश्वि.	कार्तिक	मार्ग.	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
1	2	3, 13	4,14	5,15	6	7	8	9	10	11	12	सौख्य	क्लेश	भीति	धन प्राप्ति
2	3,13	4,14	5,15	6	7	8	9	10	11	12	1	शून्य	निस्व	निस्व	मित्रता
3,13	4,14	5,15	6	7	8	9	10	11	12	1	2	धन, क्लेश	दु:ख	इच्छा पूर्ति	धन
4,14	5,15	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3,13	लाभ	सौख्य	मंगल	धन प्राप्ति
5,15	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3,13	4,14	लाभ	धनाप्ति	धन	सौख्य
6	7	8	9	10	11	12	1	2	3,13	4,14	5,15	भय	लाभ	मृत्यु	धन प्राप्ति
7	8	9	10	11	12	1	2	3,13	4,13	5,15	6	लाभ	कष्ट	धन प्राप्ति	सुख
8	9	10	11	12	1	2	3, 13	4,14	5,15	6	7	कष्ट	सौख्य	क्लेश, लाभ	सुख
9	10	11	12	1	2	3,13	4,14	5,15	6	7	8	सौख्य	लाभ	कार्यसिद्धि	कष्ट
10	11	12	1	2	3,13	4,14	5,15	6	7	8	9	क्लेश	कष्टसिद्धि	धन प्राप्ति	धन
11	12	1	2	3,13	4,14	5,15	6	7	8	9	10	मृत्यु	लाभ	धनलाभ	शून्य
12	1	2	3,13	4,14	5,15	6	7	8	9	10	11	शून्य	सौख्य	मृत्यु	कष्ट

उपरोक्त सारिणी में मास के नीचे जो संख्या लिखी गई हैं, वे उस माह विशेष की तिथियाँ हैं।

इसके अतिरिक्त उपरोक्त सारिणी के अनुसार भी दिन शुद्धि एवं दिशा शुद्धि देखी जाती है। प्रत्येक मास में किसी तिथि विशेष में कोई दिशा विशेष शुभ और अशुभ होती है। जो दिशा शुभ हो, उस दिशा में ही यात्रा करनी चाहियें।

यात्रा में वर्जित काल सारिणी

	दिन	रात्रि
पूर्व भाग	उफा. उषा. उभा., रो. विशा. कृतिका	मृगशिरा, रेवती, चित्रा अनुराधा।

मध्य भाग	मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा	पूफा., पूषा., पूभा.भरणी, मघा
अंतिम भाग	हस्त, अश्विनी, पुष्य अभिजित	स्वाती,पुनर्वसु, श्रवण धनिष्ठा, शतभिषा।

यात्रा में समय का भी विशेष महत्त्व होता है। दिन और रात्रि के अलग-अलग समय में विशिष्टा नक्षत्रों में यात्रा करना शुभ रहता है। दिन और रात्रि को समय के अनुसार 3-3 भागों में बाँटा गया है। दिनमान के तीन बराबर-बराबर के हिस्सों को क्रमश: पूर्वाह्न, मध्याह्न, और अपराह्न कहते हैं। ठीक इसी तरह रात्रिमान के भी तीन हिस्से (भाग) पूर्वाह्न, मध्याह्न और अपराह्न कहलाते हैं। उपरोक्त सारिणी में दिनमान अथवा रात्रिमान के जिस भाग में जिन नक्षत्रों को लिखा गया है, वे शुभता के सूचक हैं अर्थात् जिस दिन जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र के अनुसार दिनमान या रात्रिमान के पूर्व, मध्य या अंतिम भाग में यात्रा प्रारंभ करनी चाहिये।

यात्रा मुहूर्त में नक्षत्रों के अशुभ समय : दैत्य गुरु शुक्राचार्य कहते हैं कि यात्रा के समय शुभ और लाभ के लिए कुछ नक्षत्रों का प्रारम्भ या कुछ का समाप्ति काल यात्रा में त्याग दिया जाता है।

नक्षत्र	**वर्जित समय**
पूफा., पूषा., पूभा.	प्रारंभिक 6 घंटे 24 मि.,
कृतिका	प्रारंभिक 6 घंटे 24 मि.
मघा	प्रारंभिक 4 घंटे 24 मि.
भरणी	अंतिम 2 घंटे 48 मि.
स्वाती	प्रारंभिक 5 घंटे 36 मि.
चित्रा	अंतिम 5 घंटे 36 मि.
आश्लेषा	अंतिम 5 घंटे 36 मि.

शुभ नक्षत्र : अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा।

मध्य नक्षत्र : उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी। यात्रा करने हेतु सबसे उत्तम और शुभ नक्षत्र श्रवण, हस्त, पुष्य एवं मृगशिरा हैं। इनमें यात्रा करना सदा शुभ रहता है।

12.5.7.2 यात्रा में शुभ लग्न विचार

1. जन्म लग्न या जन्म राशि से अष्टाम लग्न को, यात्रा में त्याग देना चाहिए।

2. चर लग्न (कर्क के अतिरिक्त) व चर नवांश में लंबी दूरी की यात्राएं अति शुभ होती हैं तथा द्विस्वभाव लग्नों व नवांशों में भी सभी प्रकार की यात्राएं की जा सकती हैं।

3. स्थिर लग्न व नवांश का यात्रा में त्याग करना चाहिए।

4. कर्क, वृश्चिक व मीन लग्न में किसी भी प्रकार की यात्रा नहीं करें।

5. यात्रा में लग्न से अष्टम में कोई ग्रह नहीं होना चाहिए।

6. यात्रा लग्न के स्वामी व जन्म राशि के स्वामी अस्त नहीं होने चाहिएं।

7. चर संज्ञक नक्षत्रों (पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) में यात्रा सफल होती है।

8. मुहूर्त निर्णय नामक अध्याय में बताए गए तिथि-वार तथा वार-नक्षत्रों के संयोग से बनने वाले अशुभ योगों (मृत्यु, विष, उत्पात आदि) को यात्रा में त्याज्य माना जाता है जबकि सिद्धि, सर्वार्थ सिद्धि व अमृत सिद्धि योगों को शुभ माना जाता है।

9. जन्म नक्षत्र व जन्म राशि से चन्द्रमा शुभ नक्षत्र व राशियों पर होने चाहियें।

यदि उपरोक्त इन नियमों का पालन कर लिया जाए तो यात्रा सुखकारी हो जाती है। इस प्रकार किसी भी यात्रा का शुभ समय आसानी से निर्धारित किया जाता है।

12.5.7.3 यात्रा के महत्त्वपूर्ण नियम

1. किसी भी प्रकार की यात्रा में कुंभ लग्न और कुंभ नवांश को त्याग देना चाहिये।

2. यात्रा काल में शुक्र ग्रह वक्री, अस्त या नीच राशि में हों तो यात्रा करने वाला जिस व्यक्ति से अपना कार्य करवाने के लिए जाता है, वह उस व्यक्ति के वश में हो जाता है जिससे वह मिलने जाता है और कार्य नहीं हो पाता है किंतु शुक्र के अस्त, वक्री या नीच राशि में होने पर भी यात्री की जन्म राशि से बुध ग्रह अनुकूल हों तो यात्रा सफल हो जाती है।

3. चन्द्रमा जब रेवती से कृतिका नक्षत्र के बीच में होते हैं तो इस काल में अस्त, नीच या वक्री अवस्था में स्थित शुक्र अंधे माने जाते हैं। शुक्र जिस दिशा में हों उस दिशा में और उस दिशा से दक्षिणावर्त क्रम में अगली दिशा में यात्रा त्याग देनी चाहिये। शुक्र के उदय और अस्त होने वाली दिशाओं के आधार पर शुक्र की दिशा-विशेष में स्थिति का निर्धारण होता है।

4. मीन लग्न और मीन नवांश में यात्रा का आरंभ किया जाए तो यात्री मार्ग में भटक जाता है अर्थात्। उसको बीच यात्रा में मार्ग बदलना पड़ता है परंतु जिनकी जन्म लग्न या जन्म राशि मीन होती है और गोचरगत बृहस्पति बली होते हैं तो उनकी यात्रा मीन लग्न में भी शुभ हो जाती है।

5. यात्रा लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में शुभ ग्रह और 3,6,10 और ग्यारहवें स्थानों में पापग्रह हों तो शुभफलदायक होते हैं।

6. यात्रा लग्न से 1,6,8 और 12वें भाव में चन्द्रमा, दसवें भाव में शनि, 7वें भाव में शुक्र और 6, 7, 8 व 12वें भाव में लग्नेश शुभ नहीं माने जाते। इनके अतिरिक्त यात्राकालीन लग्न की शुभता को प्रदर्शित करने वाली ग्रह स्थिति निम्न हो सकती है-

विजय यात्रा योग-1

विजय योग-2

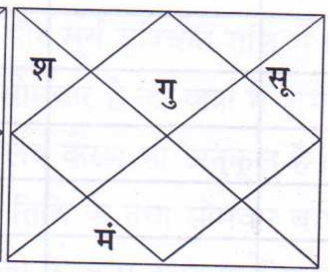

विजय योग-3

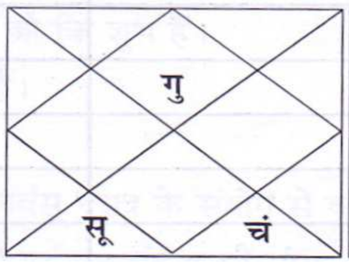

विजय योग-4

विजय योग-5

विजय योग-6

विजय योग-7

विजय योग-8

विजय यात्रा योग-11

विजय यात्रा योग-12

विजय यात्रा योग-13

विजय योग-14

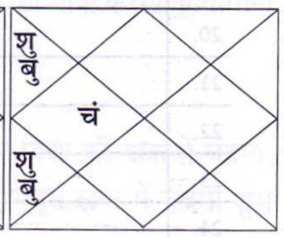

उदाहरण विजय योग 14 नं. की कुण्डली में योग यह है कि चन्द्रमा चौथे भाव में हो और बुध या शुक्र में से कोई एक चन्द्रमा से पीछे यानि तीसरे भाव में और एक चन्द्रमा से आगे यानि पंचम भाव में हो तो भी यात्रा सफल होती है।

उपर्युक्त कुण्डलियों के माध्यम से जो ग्रह स्थितियाँ प्रदर्शित की गई हैं, वे यात्रा में अत्यंत शुभ मानी जाती हैं। किसी भी लग्न में उपर्युक्त प्रकार से ग्रह स्थित हों तो यात्रा अवश्य सफल होती है। उक्त स्थिति में ग्रह बली हों तो यात्रा में सफलता का प्रतिशत गुणोत्तर रूप से बढ़ जाता है और ग्रह कमजोर हों तो सफलता का प्रतिशत कम हो जाता है।

12.5.7.4 यात्रा मुहूर्त का उदाहरण

श्री सोमेश कुमार जी जयपुर में रहते हैं और इनके लिए बदरीनाथ जी जाने के लिए तीर्थ यात्रा का शुभ मुहूर्त निकालना है। बद्रीनाथ जी जयपुर से उत्तर दिशा में हैं। श्री सोमेश जी का जन्म नक्षत्र - शतभिषा है और जन्म राशि - कुंभ है।

मुहूर्त के संबंध में क्या-क्या शुद्धि आवश्यक है उनका विवरण हम पढ़ चुके हैं। अब हम उनका प्रयोग करना सीखेंगे? इससे पूर्व मुहूर्त के लिए कोई एक दिन निश्चित कर लिया जाता है और फिर इस दिन की शुभता तथा यह दिन जातक (स्वयं यात्री) के लिए शुभ है या नहीं? इसकी जाँच कर लेने के उपरांत ही मुहूर्त का निर्धारण किया जाता है। दिन शुद्धि हो जाने के बाद लग्न शुद्धि की जाती है जिस क्रम व विधि को इस मुहूर्त के निर्धारण में अपनाया जा रहा है वही प्रक्रिया अन्य किसी के लिये यात्रा प्रारंभ का मुहूर्त निकालने में अपनायी जायेगी। यथा -

शुभ दिवस : दिनांक 17 नवंबर, 2008 सोमवार, तदानुसार शुभ संवत् 2065 मार्गशीर्ष कृष्ण पंचमी, सोमवार, पुनर्वसु नक्षत्र, शुभ योग,कौलव करण और चन्द्रमा मिथुन राशि में। इस दिन के गुण - दोष :

1. मार्गशीर्ष मास है और सूर्य वृश्चिक राशि में हैं जो कि शुभ हैं।

2. पंचमी तिथि एवं सोमवार है जो यात्रा में शुभ है।

3. शुभ योग और कौलव करण भी अनुकूल है।

4. सोमवार व पंचमी तिथि के तथा सोमवार व पुनर्वसु नक्षत्र के संयोग से कोई भी दुर्योग नहीं बनता।

5. श्री सोमेश कुमार जी के जन्म नक्षत्र शतभिषा से वर्तमान चंद्र दूसरी संपत तारा पर हैं तथा जन्म राशि से पंचम राशि में चन्द्रमा हैं जो कि शुभ है।

6. सोमवार को राहुकाल प्रात: 7.30 से 9.00 बजे तक रहता है अत: इस समय को त्याज्य माना जायेगा।

7. जातक को निज स्थान से उत्तर दिशा में स्थित बद्रीनाथ जी तीर्थस्थल की यात्रा करनी है। सोमवार को पूर्व दिशा में दिशाशूल होता है। उत्तर दिशा की यात्रा में दिशाशूल दाहिनी तरफ रहेगा जो कि मध्यम है।

   (यह दिशाशूल विचार है)

8. पंचमी तिथि में योगिनी का वास दक्षिण दिशा में होता है। जातक उत्तर दिशा की यात्रा करेगा तो योगिनी पीछे की तरफ रहेगी जो कि शुभ है।

   (यह योगिनी विचार है)

9. चन्द्रमा मिथुन राशि में हैं और पश्चिम दिशा में चन्द्रमा का वास है अत: उत्तर दिशा की यात्रा में चन्द्रमा, बांयी तरफ रहेंगे। बांयी तरफ चन्द्रमा होने से धन की हानि होती है (परंतु मुहूर्त लग्न में चन्द्रमा शुभ प्रभाव में हों तो यह दोष कम हो जाता है।)

10. काल-पाश निर्णय : सोमवार को दिन में वायव्य कोण को काल तथा अग्निकोण को पाश की संज्ञा प्राप्त है जैसाकि काल-पाश चक्र में बताया गया है जबकि यात्रा उत्तर दिशा में की जानी है अत: यात्रा करना शुभ है।

11. घात चक्र शुद्धि : कुंभ राशि वाले पुरुष के लिए -

    घात मास - चैत्र

घात तिथि	-	3, 8, 13
घात वार	-	गुरुवार
घात नक्षत्र	-	आर्द्रा
घात योग	-	गंड
घात करण	-	किंस्तुघ्न
घात चंद्र (पुरुष) -		धनु राशि पर
घात चंद्र (स्त्री) -		मिथुन राशि पर।

हम यहाँ पुरुष के लिए मुहूर्त निकाल रहे हैं, इसलिए मिथुन राशि के चन्द्रमा स्वीकार्य हैं। लेकिन किसी स्त्री के लिए निकालना हो तो यह मान्य नहीं होंगे। यात्रा में इस घात चक्र की शुद्धि अवश्य होनी चाहिए। दिनांक 17 नवंबर को जातक के लिए कुछ भी घात संज्ञक नहीं है अत: दिन शुभ है।

12. यात्रा में वर्जित काल सारिणी के अनुसार पुनर्वसु नक्षत्र रात्रि के अंतिम भाग में त्याज्य माना जाता है अत: रात्रि के अंतिम भाग में यात्रा का आरंभ नहीं किया जा सकता।

13. यात्रा आरंभ में पुनर्वसु नक्षत्र का संपूर्ण भाग ही शुभ माना जाता है।

14. शुभाशुभ ज्ञान सारिणी के अनुसार मार्गशीर्ष मास की पंचमी तिथि को उत्तर दिशा की यात्रा धनप्रदायक होती है।

12.5.7.5 कुल-अकुल ज्ञान सारिणी का शोधन

जैसाकि पूर्व में बताया जा चुका है कि उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अथवा किसी व्यक्ति से अपना काम निकलवाने के उद्देश्य से जब यात्रा की जाती है तो इस सारिणी का मुख्य रूप से प्रयोग करना चाहिए।

सारिणी में तिथि-पंचमी, नक्षत्र-पुनर्वसु और वार-सोमवार, तीनों ही अकुल संज्ञक हैं, जिसका अर्थ है कि यात्री को सफलता मिलेगी।

15. पथि राहु चक्र : मुहूर्त के दिन सूर्य विशाखा नक्षत्र में और चन्द्रमा पुनर्वसु नक्षत्र में हैं। पथि राहु चक्र के अनुसार सूर्य धर्म मार्ग में और चन्द्रमा अर्थ मार्ग में हैं। जिसका फल है कि यात्रा अवश्य सफल होगी।

16. परिघ दण्ड : परिघ दण्ड चक्र में पुनर्वसु नक्षत्र पूर्व दिशा में है। यात्री को उत्तर दिशा में यात्रा करनी है, जो कि चक्रानुसार शुभ है।

17. लग्न शुद्धि –

1. दिनांक 17 नवंबर, 2008 को धनु लग्न ही शुद्ध आ रही है क्योंकि पूर्व निर्णयानुसार केवल दिन में यात्रा की जा सकती है और इस दिन में केवल धनु लग्न ही शुभ है। धनु लग्न प्रात: 9:04 पर प्रारंभ होगी ओर 11:08 तक रहेगी।

2. 9 बजे से पूर्व यात्रा का प्रारंभ हो नहीं सकता क्योंकि प्रात: 7:30 से 9:00 बजे तक राहुकाल रहेगा। जिसका विचार यात्रा में मुख्य रूप से किया जाता है।

3. मुहूर्त लग्न में गुरु व शुक्र दोनों शुभ ग्रह हैं तथा सप्तम में स्थित चन्द्रमा को पूर्ण दृष्टि से देख रहे हैं जिससे बांयी तरफ (सम्मुख चंद्र विचार के अनुसार) स्थित चंद्र का दोष समाप्त हो रहा है।

4. लग्न से अष्टम में केतु हैं जो विचारणीय नहीं है लेकिन केतु की अपेक्षा राहु होते तो विचारणीय होते। साथ ही लग्न व लग्नेश दोनों बली हैं एवं लग्न व लग्नेश पर किसी भी पापग्रह की दृष्टि नहीं है।

5. लग्न पापकर्तरि में दिख रही है लेकिन लग्न से दूसरे भाव में राहु वक्री हैं जिससे कर्तरि दोष नहीं लगेगा और लग्न में लग्नेश भी स्थित हैं।

6. यात्रा लग्न में गुरु व शुक्र का होना तथा केन्द्र में केवल शुभ ग्रह होना यात्रा की सफलता का लक्षण है।

7. धनु लग्न में कर्क (चर) नवांश (प्रात: 9:48 से 10:01 तक) ही शुभ है।

8. इस मुहूर्त में चर संज्ञक वार (सोमवार), चर संज्ञक नक्षत्र (पुनर्वसु) और अन्य चक्रों की शुद्धि हो रही है इसलिए मुहूर्त शुभ है।

इस मुहूर्त के कुल गुण दोष निकाले जायें तो दोष कम (मात्र चन्द्रमा बांयीं ओर होना तथा दिशाशूल दांयीं तरफ होना) एवं गुण अधिक हैं। दिशाशूल का परिहार अध्याय में बताये गए उपाय (दूध पीकर, चंदन लगाकर) करने से हो जायेगा। बांयें चन्द्रमा अधिक हानि नहीं करेंगे क्योंकि मुहूर्त लग्न में शुभ ग्रहों से प्रभावित हैं।

9. जन्म राशि से ग्यारहवीं लग्न है जो शुभ है।

10. जन्म राशि कुंभ के स्वामी शनि लग्न से त्रिकोण में हैं एवं बृहस्पति से दृष्ट हैं।

11. मुहूर्त लग्न में राशि के स्वामी (शनि) एवं लग्न के स्वामी (गुरु) अस्त या वक्री नहीं हैं। केवल मंगल और बुध अस्त हैं। इसलिए यात्रा के लिए यह दिन शुभ है।

12.6 सारांश

विवाह और यात्रा से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के बाद आपने जाना कि वर और कन्या के वरण में किन उपयोगी बातों का विचार किया जाता है। वर वरण तथा कन्या वरण में शुभवार , शुभ पक्ष, तिथि आदि विचार भी किया जाता है। विवाह में वर के लिए सूर्य शुद्धि तथा कन्या के लिए चन्द्रशुद्धि के अतिरिक्त त्रिबल शुद्धि का निधान भी ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत किया गया है। यहां तक कि मण्डपस्थापन से लेकर विवाह में किये जाने वाले विभिन्न पारम्परिक संस्कारों का उल्लेख करते हुए उदाहरणों के साथ वर और कन्या के विवाह की स्थिति को इस इकाई में समझाया गया है। विवाह में ग्रहीत नक्षत्रों, त्याज्य नक्षत्रों तथा मृत्युबाण आदि के निषेध हेतु ज्योतिषयमत को उपस्थापित किया गया है। साधारण तरीके से कथन करते हुए पंचक तथा विवाह में त्याज्य विभिन्न योगों के और दोषों के वर्णन भी किये गये हैं। इसके अलावा यात्रा में त्याज्य घटियों, यात्रा में ध्यान देने योग्य महत्त्वपूर्ण नियमों के साथ साथ दिशाशूल का विचार भी इस इकाई का वर्ण्य विषय है। अत: प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप विवाह के उपयुक्त नियमों एवं यात्रा के आवश्यक तथ्यों का ज्ञान करा सकेंगे।

12.7 शब्दावली

1 विवाह – विशिष्टं वहनं विवाह: विशिष्ट प्रकार का निर्वाह विवाह है। अथवा जिसका निर्वहन विशेष तरीके से किया जाता है वह विवाह।

2 त्रिज्येष्ठ – ज्येष्ठ का अर्थ है बडा। यहां पर तीन ज्येष्ठ हैं ‘ जयेष्ठ पुरूष ज्येष्ठ कन्या, ज्येष्ठ मास।

3 वरण – चुनाव करना या चयन करना

4 वार – दिन या दिवस

5 लत्ता दोष – प्रत्येक ग्रह का अगले या पिछले नक्षत्र पर लात मारना लत्ता दोष कहलाता है।

6 सम्पत – समृद्धि देने वाला।

7 विपत – विपत्ति देने वाला

12.8 अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए -

1 कन्या वरण मुहूर्त में शुभ वार है –

क रविवार
ख मंगलवार
ग शनिवार
घ बुधवार

2 वर वरण में शुभवार है -
क मंगलवार
ख रविवार
ग शनिवार
घ सोमवार

3 विवाहमण्डल का प्रथम स्तम्भ लगाने में किस चक्र का विचार किया जाता है

क घात चक्र
ख खात चक्र
ग स्तम्भ चक्र
घ गोल चक्र

4 लात मारना किस दोष का अर्थ है
क रेखा दोष
ख ललत दोष
ग लत्ता दोष
घ कोई नहीं

5 योगों की संख्या कितनी है

क 15
ख 16
ग 18
घ 27

6 उपग्रह दोष का मुख्य आधार है
क सूर्य
ख बुध
ग चन्द्र
घ शनि

7 सूर्योदय और सूर्यास्त के बीच का समय कहलाता है

क रात्रिमान
ख दिनमान
ग इष्ट
घ भभोग

8 सिंह राशि का चन्द्रमा किस दिशा में होता है
क पश्चिम
ख उत्तर
ग पूर्व
घ दक्षिण

9 धनु राशि की दिशा है
क उत्तर
ख पूर्व
ग पश्चिम
घ दक्षिण

10 कर्क का चन्द्रमा किस दिशा में होता है

क दक्षिण
ख उत्तर
ग पश्चिम

घ पूरब

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1	घ
2	घ
3	ख
4	ग
5	घ
6	क
7	ख
8	ग
9	ख
10	ख

12.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सारावली

   सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहज्जातकम्

   व्याख्याकार: केदारदत्त जोशी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

3. फलदीपिका

   सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

4. भारतीय ज्योतिष

   व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

   प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई 13

'शंकुन ज्योतिष'

इकाई की रूपरेखा

13.1. प्रस्तावना
13.2. उद्देश्य
13.3. विषय प्रवेश
13.3.1. शकुन का अर्थ
13.3.2. शुभास्थानस्थ शकुन का शुभ फल कथन
13.4. यात्रा आदि कालिक शकुनों का फल कथन
13.5. पशु-पक्षियों द्वारा शकुन विचार
13.5.1. गाय के शकुन
13.5.2. सियार के शकुन
13.5.3. घोड़ो से शकुन विचार
13.5.4. हाथी अथवा हाथी के दन्त द्वारा शकुन
13.5.5. छिपकली का शकुन विचार
13.5.6. कुत्ते द्वारा शकुन विचार
13.5.7. अन्य पशुओं द्वारा शकुन विचार
13.6. पक्षियों द्वारा शकुन विचार
13.6.1. श्यामा चिड़िया से शकुन विचार
13.6.2. कौए से शकुन विचार
13.6.3. अन्य पक्षियों के शकुन
13.7. अद्भुत शकुन
13.8 अंग-लक्षणों द्वारा शकुन-विचार
13.9. स्वप्न द्वारा शकुन विचार
13.10. प्रतिदिन के शुभ व अशुभ शकुन
13.10.1. यात्रा में शुभ शकुन
13.10.2. यात्रा में अशुभ शकुन
13.10.3. अपशकुन
13.10.4. अपशकुन परिहार
13.11 वर्षासूचक शकुन

13.11.1. मेघमहोदयवर्षप्रबोध के अनुसार वर्षासूचक विधियाँ
13.11.2. ज्यौतिषशास्त्र के ग्रन्थों में वर्षा के विभिन्न योगायोग
13.12. सारांश
13.13. शब्दावली
13.13. अभ्यास प्रश्न
13.15. बोध प्रश्न
13.16. सन्दर्भ ग्रन्थ

13.1. प्रस्तावना

प्राचीन भारत में भारतीय ज्योतिष को स्कन्धत्रय कहा गया है। वे तीन स्कन्ध-सिद्धान्त, संहिता और होरा है। कालान्तर में संहिता के दो भेद बनाए गए-शकुन ओर प्रश्न। इस प्रकार ज्योतिष शास्त्र पाँच स्कन्धों में विभाजित हो गया। ''शकुन'' को एक मात्र ऐसा शास्त्र कहा गया है जो संहिता में अलग से अपना स्थान रखता है। मनुष्यों द्वारा जन्म जन्मान्तरो से सम्पादित शुभाशुभ कर्म के फल स्वरूप शुभाशुभ फल का गमन समय से सम्बन्धित शकुन को प्रकट करता हैं शकुन शास्त्र प्राचीन काल से हमारे विश्वास और श्रद्धा का विषय रहा है। इस शास्त्र के प्रवर्तकों में महर्षि अत्रि, बृहस्पति, गर्ग, शुक्राचार्य, व्यास, वषिष्ठ, गौतम आदि प्रसिद्ध ऋषि रहे हैं।

शकुन चाहे स्वप्न मे हो या जाग्रत दशा में, अपने शरीर में हो या संसार में, पशु-पक्षियो द्वारा हो या दिव्य शक्तियो द्वारा, प्रत्येक दशा मे उनका तात्पर्य है हमें सावधान करना और आश्वासन देना। शकुन शास्त्र यह सिद्ध करता है कि जगत् की संचालिका एक चेतन शक्ति है और वह हमारे प्रति ममतामयी है। वह जड़, विचारहीन और बर्बर-प्रकृति नही हैं, उसमे अपार दया, स्नेह और ममत्व है। यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि जब घटनाओ का निवारण नही हो सकता तो उनकी सूचना मिलने से ही हमे क्या लाभ? इसका उत्तर यह है कि अनेक घटनायें स्थिति से सम्बन्ध रखती है। वर्षा होने वाली है तो होगी ही, उस समय यदि आप घर से बाहर न निकले तो भीगने से बच जायेंगे, इसी प्रकार यात्रादि के अपशकुन जो अनिष्ट परिणाम प्रकट करते है, उनसे यात्रा रोककर बचा जा सकता है। अनेक बार मनुष्य जान-बूझकर स्वयं को संकट मे डाल लेता है। ऐसे समय मानना पडता है कि उसका संकट मे पडना अनिवार्य था, वह पूर्वनिश्चित था, सब समय ऐसा नही होता। यदि ऐसा हो तो हमारे लिए मार्ग विवरण तथा संकट की सूचनाएं अनावश्यक हो जाए। हम प्रत्येक कार्य में पूर्व सूचना पाने की इच्छा रखते है और जीवन में उसका महत्त्व जानते है, अत: शकुन की महत्ता हम अस्वीकार नही कर सकते। हम मान ले कि सब घटनायें अनिवार्य है और बात कुछ ऐसी ही है भी इतने पर भी पूर्व सूचना महत्त्वहीन नही हो जाती है। यदि हमें पता चल जाये कि हम बीमार होंगे और इतना कष्ट पायेंगे तो उसके लिये पहले से मानसिक दृढता प्राप्त कर सकते है।

13.2. उद्देश्य

शकुन शास्त्र से जो सूचना हमें मिलती है, यदि हम उस सूचना के आधार बनाकर चले तो प्रतिकूलता से बचकर अनुकूलता का लाभ उठा सकते हैं। यही शकुन शास्त्र का उपयोग अथवा उद्देश्य है। शकुन ज्ञान के अन्तर्गत हम निम्न द्वारा शुभ अथवा अशुभ फल जानेंगे:

1. पशु-पक्षियों द्वारा शकुन
2. यात्रा में जाते समय होने वाले शकुन
3. वर्षा आने से पहले के शकुन
4. स्वप्न द्वारा शकुन विचार

13.3. विषय प्रवेश

मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण भविष्य में होने वाली घटनाओं की सूचना पाने हेतु सदैव कर्मशील रहा है। शकुन शास्त्र इसी परिप्रेक्ष्य में मनुष्य के विश्वास और श्रद्धा का विषय रहा है। सृष्टि का हर जीवन प्रकृति को विचित्रता और विशेषता लिए हुए है। प्राचीन मनीशियों ने इनका सूक्ष्म निरीक्षण परिक्षण किया और उससे निकले महत्त्पूर्ण निष्कर्षो को शकुन शास्त्र का आधार माना है।

13.3.1. शकुन का अर्थ

जीव ने पूर्वजन्म में जो शुभ अथवा अशुभ कर्म किए है, उसे पशु पक्षी अपने कर्म द्वारा प्रकाषित करते हैं मूलतः यही शकुन है। ग्रामवासी, वनचर, जलचर, भूचर, दिनचर, रात्रिचर, उभयचर, आदि प्राणियों के शब्द, गति दृष्टि, उक्ति आदि से पुरूष स्त्री और नपुंसक को लेना चाहिए। अलग जाति ओर अनवस्था के कारण इन प्राणियों में व्यक्तिगत पुरूष, स्त्री, नपुंसक आदि का भेद होने का अभाव होता है। अतः इनका लक्षण निम्न द्वारा जाने -

1. स्थूल, उन्नत और विस्तीर्ण कंधो वाले, विशाल गर्दन सुन्दर छाती, गम्भीर स्वर तथा स्थिर पराक्रम वाले प्राणी पुरूष संज्ञक शकुन है।
2. दुर्बल, छाती, गर्दन, मस्तक, छोटे मुख, तथा सदैव मधुर स्वर करने वाला प्राणी स्त्री संज्ञक शकुन है।
3. पुरूष व स्त्री के मिश्रित लक्षण जिस किसी प्राणी में हो उन्हें नपुसंक शकुन समझना चाहिए।

शकुन प्रभाव -

शकुन जब स्वत: होते है तभी उनका कुछ प्रभाव भी होता है। आजकल जैसे दूसरे नियमो का दुरूपयोग होता है। वैसे ही शकुन सम्बन्धी धारणा का भी दुरूपयोग चल पडा है। दीपावली के दिन बहेलिया घर-घर घूमकर बँधा हुआ नीलकण्ठ दिखलाता है और बड़े लोग यात्रा-शकुन बनाने के लिए जल भरे घड़े मार्ग मे रखने की व्यवस्था करते है, ऐसे कृत्रिम शकुन से कोई परिणाम नही हुआ करता। इससे मनुष्य अपने आपको भ्रान्त ढंग से संतुष्ट करता है और सिद्धान्त का परिहास ही होता है। शकुन का प्रभाव समझने के लिए भाव जगत् और उसकी प्रेरणा माने बिना काम चल नही सकता। जैसे आकर्षण शक्ति एवं विद्युत् शक्ति को अस्वीकार कर देने पर वर्तमान विज्ञान चलेगा ही नही। न तो यन्त्र बन सकेंगे और न ही कार्य सम्बन्धी अनुमान होंगे। आकर्षण एवं विद्युत् दोनो अप्रत्यक्ष शक्ति है। प्रभाव के द्वारा ही उनकी सत्ता का बोध होता है, ऐसे ही भाव-जगत् एवं दिव्य-जगत् भी प्रत्यक्ष नहीं हैं। विश्व की अद्भुत घटनाओं से ही उनकी सत्ता जानी जाती है। शकुन के प्रभाव तो अनुभव करने की वस्तु है। कोई यह जाने न जाने कि विद्युत कैसे उत्पन्न होती है, परन्तु बटन दबाकर विद्युत प्रकाश तो वह प्राप्त कर ही सकता है, इसी प्रकार शकुन के परिणाम शास्त्रवर्णित है, वे तो सभी को प्राप्त होते है। जो उन लक्षणो को जानते है, वे सावधान हो जाते है और जो नही जानते या उपेक्षा करते है उनके साथ भी परिणाम तो वही घटित है।

13.3.2. शुभास्थानस्थ शकुन का शुभ फल कथन

राजप्रसाद, देवमन्दिर, शुभस्थान अर्थात् देवता, ब्राह्मण और गौओं से अध्यासित मनोरम स्थान अर्थात् हरी घास और शीतल वृक्ष की छाया तथा मीठे फल वाले दूध वाले, पुष्प वाले आदि वृक्ष, इन सब स्थानों से दिखने वाले शकुन शुभ फल करने वाले होते हैं।

13.4. यात्रा आदि कालिक शकुनों का फल कथन

यात्रा करने के लक्ष्य से जाते हुए अथवा स्थान विशेष पर स्थित होते ही जिस किसी दिशा में स्थित शकुन की ध्वनि सुनाई दे, तो उसे उस दिशा से सम्बन्धित जीव के साथ समागम कहना चाहिए।

उदाहरणतः ईषान कोण और पूर्व दिशा के त्रिभागों में निम्न जीवों से समागम जाने -

प्रथम त्रिभाग में शकुन - वैष्णवों से

द्वितीय त्रिभाग में शकुन- 'चरकर' संज्ञक भिक्षुकों से

तृतीय त्रिभाग में शकुन- अश्व रक्षक से

यात्रा में जाते समय शुभ व अशुभ शकुन निम्नलिखित दिए गए हैः -

1. भिन्न, भंयकर, कठोर जर्जर आदि प्रकार के स्वर होना शुभ नहीं होता। परन्तु सूर्य के सामने रहते हुए मधुर स्वर और हर्ष के साथ सभी स्वर शुभ होते है।

2. शृगाल, छंछुन्दर, उल्लु, वराह (सुअर), कोयल पुरूष संज्ञक जन्तु आदि सभी यात्रा करने वाले का वाम भाग पर दिखने पर शुभफलदायी होते हैं।

3. बंदर, मुर्गा, श्रीकण्ठ, बाज़ आदि स्त्री संज्ञक प्राणी यात्रा करने वाले की दायीं ओर स्थित होने या दिखने पर शुभफल दायक होता हे।

4. वेत स्वर, हस्त स्वर, पुण्य वाचन, शंख, ध्वनि, जल का स्वर, वेदध्वनि आदि सभी पुरूष की तरह बायी आरे स्थित होने से शुभदायक होते है। मंगलिक स्वरों का स्त्रियों की तरह दायीं ओर स्थित होना शुभ होता है।

5. भरद्वाज, बकरा, मोर आदि का स्वर, नाम का आवर्तन और दर्षन ये तीनों यात्रा के समय आगे की ओर हो तो यात्रा धन्य हो तथा नेवा, नीलकण्ठ और कृकलास (गिरगिट), ये तीनों का दिखना पापप्रद कहा गया है।

6. यात्राकाल में पूर्वदिशा में घोड़ा और श्वेत पदार्थ, दक्षिण दिशा में शव और मांस, पष्चिम में कन्या और दही तथा उत्तर में गौ, ब्राह्मण और सज्जन पुरूष शुभफल दायक होते है।

7. यात्रा करते समय बुलबुल मार्ग में दक्षिण होकर मिले तो शुभफलदायी होता हे। यदि वाम होकर मिले तो यात्रा में विशेष लाभ प्राप्त होता हैं।

8. यदि दक्षिण दिशा की ओर यात्रा कर रहे व्यक्ति को दोपहर के समय सियारिन बोलती सुनाई दे तो यात्रा में उसकी मृत्यु हो। यदि सियारिन पीछे से बोलती सुनाई दे तो यात्री के सकुशल लौट आने में सन्देह रहता है।

9. यदि यात्रा पर जा रहे व्यक्ति के सामने आकर श्वान (कुत्ता) कान फड़फड़ाता है या शरीर खुजाता है तो यात्री का धन चोरी होता है।

10. यात्रा कर रहे व्यक्ति के बाई ओर कोई कुत्ता थोड़ी दूर चलकर वापस चला जाए तो यात्रा आनन्दपूर्वक समाप्त होती है।

13.5. पशु-पक्षियों द्वारा शकुन विचार

पशु-पक्षी अपनी चेष्टाओं द्वारा मनुष्य के भविष्य में होने वाली घटनाओं की पूर्व सूचना दे देते है। प्लेग पड़ने वाला हो तो चूहे पहले मरने लगते है, कुत्ते प्रात:काल सूर्य की ओर मुख करके रोने लगे तो कोई अमङ्ल होने वाला होता है गधे ग्राम मे दौड़ने और चिल्लाने लगे रात्रि मे बिल्लियाँ या शृगाल अकारण

रोते हो तो ये अमङ्गल की सूचना देते है, ऐसा शकुन होने पर समीप ही किसी की मृत्यु की सूचना मानी जाती है। घर के पशु यथा - गाय, घोडे या हाथी अकारण अश्रु बहाये या चिल्लाये तो भी अमङ्गल सूचित होता है। ऊपर से छिपकली शरीर पर गिर पडे या गिरगिट दौडकर शरीर पर चढ़ जाये तो किस अङ्ग पर उसके चढने क्या परिणाम होता है। यह शकुन शास्त्र से सम्बन्धित ग्रन्थों से विस्तारपूर्वक वर्णित है। इसी प्रकार शरद् ऋतु के प्रारम्भ में सूर्य के हस्तनक्षत्र पर अधिष्ठित होने पर खंजन पक्षी के दर्शन का फल भी दिशा भेद से वर्णन किया गया है। कौवे के शब्द के अनुसार भविष्य ज्ञान का वर्णन अत्यन्त विस्तृत रुप मे ग्रन्थों मे वर्णित है। ऐसे ही अनेक पशु-पक्षियों, सर्पादिको और कीड़ो की चेष्टाओ के अनुसार परिणाम जानने की प्रथा है। यात्रा के समय मार्ग मे कौन सा पशु या पक्षी किस दिशा मे कैसे मिले तो क्या परिणाम होगा। यह शकुन को जानने वाले लोग शास्त्रों मे प्राप्त कर लेते है। जैसे यात्रा मे मृगयूथ का दाहिने आना, नेवले और लोमडी का दिखायी देना, वृषभ, बछडे सहित गौ, ब्रह्मचारी, हरे फल आदि का दृष्टि गोचर होना- ये शकुन सब शुभ सूचक है। यात्रा मे बिल्ली रास्ता काटकर सामने से चली जाए या शृगाल बायें से दाहिने मार्ग को काटकर निकल जाए तो लौट आना चाहिए। ये शकुन यात्रा मे आपत्ति की आशंका सूचित करते है। अन्धविश्वास कहकर एक तथ्य को उडा देना एक बात है और उसमे सन्निहित सत्य का अन्वेषण दूसरी बात। ग्राम के लोग जानते है कि जब ग्राम मे महामारी आने वाली होती है तब गौरैया पक्षी पहले से ही ग्राम को छोड़ देता है, इस प्रकार दूसरे पशु-पक्षियो को भी आपत्ति का पूर्वाभास हो जाता है। आपत्ति को सूचित करने वाले उनकी चेष्टाएँ भिन्न-भिन्न प्रकार की है, परन्तु पशुओं का स्वभाव है कि उन्हे प्रसन्नता या आपत्ति की जो पूर्व सूचना अनुभूत होती है, उसे वे प्रकट कर देते है। जंगल मे बाघ चलता है तो उसके साथ-साथ एक विशेष प्रकार के पक्षी तथा गिलहरियाँ चिल्लाते चलते है तथा बाघ को देखकर पक्षी तथा गिलहरियाँ चिल्लाकर दूसरो को सावधान करती है, यह सब दूसरो को सूचित करने के लिए उनका प्रयत्न नहीं है, अपितु उनका स्वभाव है, उनकी ऐसी चेष्टा क्यों हुई है, यह क्या सूचित करती है- यह जानना ही शकुन ज्ञान है। पशु-पक्षियों को यह सूक्ष्म ज्ञान कैसे होता है? इस प्रश्न का उत्तर यही है कि उनका मन प्रकृति से सहज प्रेरणा प्राप्त करने का अभ्यासी होता है। मनुष्यो मे भी जो मन को अपने विचारो के प्रभाव से शून्य कर पाते है। वे प्रकृति से प्रेरणा ग्रहण करने लगते है तथा भविष्य का अनुमान करने में बहुत सफल होते हैं।

यद्यपि हम भविष्य में होने वाली घटनाओं को तो नहीं रोक सकते परन्तु उसके अनिष्ट परिणामों को कुछ कम करने के बारे सोच सकते है। अतः हम पशु पक्षियों के सन्दर्भ में निम्नलिखित शकुनों का वर्णन कर रहे है:

13.5.1. गाय के शकुन

1. दीन गाये अमंगलकारी होती है। अपने पैरों से भूमि को कुरेदने वाली गायें रोगकारिणी होती है।
2. अश्रुपरित नेत्रों वाली गाय अपने स्वामी की मृत्यु का सूचक होती है।

3. उच्च स्वर में शब्द करने वाली गायें चोरों से भय का अवगत कराती है।

4. बिना किसी कारण विशेष के गायें स्वर निकालने लगती हों तो अनर्थ और रात्रि के समय स्वर निकाले तो भय उत्पन्न करती है।

5. रात्रि के समय बैल का शब्द या स्वर मंगलप्रद होता है।

6. गायें जब कुत्तों के बच्चे से घिर जाए अथवा बहुत सी मक्खियाँ उस पर आकर बैठ जाए तो वर्षा होने की सम्भावना रहती है।

7. बाहर से रम्भाती हुई गाये एक साथ आये तो जातक के सभी मनोरथो की पूर्णता होती है।

8. गायों के अंगभंग हो अथवा वे रोमांचित हो रही हो तो वे शुभकारिणि एवं धन्य मानी गई है।

13.5.2. सियार के शकुन

सियार को शिशिर ऋतु के समय मद का लाभ होता है, जिससे उस काल में इसके शुभाशुभ फल का विचार नहीं होता है। सियार के बोलने पर अन्त में हू... हू... और फिर टा... टा... ध्वनि इनका पूर्ण स्वर तथा इनको छोड़कर शेष अन्य सवर दीप्त होते है।

1. यदि सियार का स्वर दक्षिण दिशा में दिन के प्रथम प्रहर में सुनाई दे तो शत्रुओं का भय होता है।

2. यदि पूर्व में सूर्य की आरे मुख करके यात्रा कर रहे व्यक्ति के पीठ पीछे सियारिन क्रन्दन करे तो व्यक्ति को लाभ होता है।

3. यदि सियार गाँव के बीच में आकर क्रन्दन करे तो उस गाँव अथवा नगर पर दैवीय विपदा के कारण घोर संकट आ सकता है।

13.5.3. घोड़ो से शकुन विचार

1. अश्वों के गोबर या लीद को उसके आसन के पष्चिम और वाम भाग में जलाने से उत्पन्न ज्वलन अशुभकारक होता है। इसके विपरीत अन्य दिशाओं मे ज्वलन शुभदायक होता है।

2. बिना कारण शरीर से पसीना आना, मुख से रक्त निकलना, शरीर से भाप की उत्पत्ति होना, दिन मे आलस्य तथा रात्रि मे अनिद्रा आदि घोड़े द्वारा की गई चेष्टाये शुभ नही होती है।

3. यदि ध्वनि कर रहे अश्व के समीप किसी प्रकार के भी शुभ द्रव्य, दही, ब्राह्मण, देवता, पुष्प, फल सोना आदि धातुओं अथवा अन्य कोई शुभ पदार्थ आ जाये तो व्यक्ति को अतुल्य धन की प्राप्ति हो तथा उसकी जय समझनी चाहिए।

4. भोज्य समग्री, पानी और लगाम को प्रसन्नता से स्वीकार करने वाला, अपने मालिक की इच्छानुसार व्यवहार करने वाला अश्व अभीष्ट फल प्रदान करता है।

5. अत्याधिक शब्द करने वाला, पूँछ के बालों को सदैव फैलाये रखने वाला, सोने वाला अश्व, जो धुल खाता हो, तो वह भय प्रदान करने के लिए होता है।

6. जो अश्व अपने जानुओं को मोड़कर दाहिने पार्श्व से सोने वाला और दाहिने पैर को उठाकर खड़ा होने वाला हो वह अपने मालिक के लिए जयप्रद होता है।

13.5.4. हाथी अथवा हाथी के दन्त द्वारा शकुन

1. हाथी का दर्षन होना शकुन शास्त्र मे शुभ माना गया है।

2. हाथी द्वारा दूध वाले फल, पुष्प वाले वृक्ष, घर्षित होने से, बायें भाग के गजदन्त मध्य भाग से भग्न हो जाए तो शत्रुओं का नाश करने वाला होता है।

3. गमनशील हाथियों की गति अचानक बधित हो जाने पर कानों का हिलना बन्द होने पर भय उत्पन्न होता है।

4. हाथी दाँत काटने पर श्रीवत्स, वर्द्धमान, छत्र, ध्वज, या चामर के समान चिन्ह दिखाई दे तो आरोग्य, विजय, धन और सुख की प्राप्ति होती हें

5. यदि हाथी के दाँत गल जाये अथवा मलिन हो जाये तो अशुभ फल मिलते है।

6. गजदन्त में छिपकली, वानर अथवा सर्प सदृष आकृति दिखे तो रोग से पीड़ा, अथवा शत्रुओं से पराजय होती है।

7. गजदन्त पर गिद्ध, उल्लू, वायय (कौआ), या बाज़ आदि आकृति दिखने पर महामारी फैलती है।

8. गजदन्त पर स्त्री सदृश चिह्न दिखने पर धनहानि, झाड़ी दिखने पर पुत्र प्राप्ति, घड़े के दिखने से निधि मिलती है।

9. गजदन्त के काटने पर फांसी की आकृति दिखे तो राजा की मृत्यु हो, रक्त स्राव हो तो विपत्ति आए।

10. गजदन्त में छेद समान हो, वेत, सुगन्धित या निर्मल हो तो शुभदायक होता है।

13.5.5. छिपकली का शकुन विचार

1. भोजन करते समय छिपकली का स्वर शुभ फलकारक है।

2. यदि घर में प्रस्थान करते समय छिपकली बायीं ओर तथा प्रवेष करते समय दायीं ओर दिखे तो व्यक्ति को अपार सफलता मिलती है।

3. यदि छिपकली दीवार पर चढे तो महंगाई का भय देती है।

4. भोजन कर रहे व्यक्ति की दायीं ओर छिपकली गिरे तो उसे धन की प्राप्ति होती है।

5. यदि छिपकली सिर अथवा दाहिने हाथ पर गिरती है तो सम्मान दिलाती है तथा बायें हाथ पर गिरने से धन की हानि होती है।

6. गिरगिट या छिपकली का सिर पर गिरना अशुभ सूचक है।

7. नव दम्पति घर में प्रवेष करे तथा उनके आगे छिपकली या गिरगिट नजर आए तो यह धन-सम्पन्नता का सूचक होती है।

8. दीपावली के समय छिपकली का दिखना धन में वृद्धि देता है।

9. नये घर में प्रवेश करते समय गृहस्वामी को मरी हुई छिपकली दिखे तो ऐसे घर में निवास करने पर सभी लोग रोगी रहेंगे।

13.5.6. कुत्ते द्वारा शकुन विचार

1. यात्रा करते समय किसी व्यक्ति को कुत्ता अपने सामने मुख में रोटी, माँस, पूड़ी, फल, मिठाई आदि लाता दिखाई दे तो उस व्यक्ति को सदा ही धन का लाभ होता है।

2. कुत्ता ऊँचे स्थान पर बैठकर अपने दाहिने पैर से अपने मस्तक को खुजाता है तो व्यक्ति को अपने सभी कार्यों मे सफलता प्राप्त होती है।

3. यदि कुत्ता अपने स्थान पर बैठकर अपने दाहिने नेत्र को खोलकर शकुनार्थी को देखे तो कठिन कार्य भी बिना विघ्न हो जाते है।

4. यदि शाम को सूर्य की ओर मुख करके कुत्ता रोये तो उस नगर के लोगों का महान् दुःख होता है।

5. गाँव के बीच में बहुत से कुत्ते मिलकर बार-बार रोये तो गाँव के मुखिया को मृत्यु तुल्य कष्ट मिलता है।

6. यदि कुत्ता माँस, हड्डी अथवा किसी भोज्य पदार्थ को राख के ढेर में छुपाता है तो अग्निकाण्ड का भय होता है।

7. यदि किसी व्यक्ति के घर में कुत्ता आकाश को वहाँ पडे गोबर को बहुत देर तक ताकता रहता है, तो उस गृह स्वामी को प्रचुर मात्रा में धन की प्राप्ति होती है।

8. यदि कुत्ता आकस्मिक रूप से धरती पर अपने सर को रगड़ता है तो उस जगह भूमि में गड़े धन की सूचना देता है।

9. यदि वायव्य कोण में मुँह करके कुत्ता रोये तो चोरी अथवा आँधी-तूफान से हानि की सम्भावना रहती है।

10. यदि कुत्ता एक आँख से रोये और कम खाना खाए तो उस घर में दुःखद स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

11. हल्दी या माँस से सने मुख वाला कुत्ता यदि घर में आकर भौंकता है तो स्वर्ण प्राप्ति का योग होता है।

13.5.7. अन्य पशुओं द्वारा शकुन विचार

1. कहीं पर जाते समय यदि गधा बोले तो अपनी यात्रा स्थगित कर देनी चाहिए।

2. कही पर जाते समय भीगा और कीचड़ से सना हुआ सूअर देखना शुभ माना जाता हैं परन्तु कीचड़ जो उस की देह पर लगी है, वह सूख गयीं हैं तो अशुभ माना जाता है।

3. व्यक्ति कही पर जाते समय अपनी बायीं ओर किसी साण्ड को सींग अथवा खुर से जमीन को खोदता हुआ देखता है अथवा अपनी दाहिनी ओर कोई अन्य चेष्टा करते दिखता है अथवा आधी रात के समय उसे बोलते हुए सुनता है या अपनी बाई तरफ से दाहिनी तरफ जाता देखता है तो यह सभी शकुन शुभ रहते है।

4. कहीं पर जाते समय यदि किसी व्यक्ति के दोनों ओर भैसे दिखाई दे तो जातक को मृत्यु का भय रहता है।

5. कहीं पर जाते समय बकरी अथवा बकरे की मिमियाहट अनुकूल फल देने वाली होती है।

6. यदि किसी को कोई बिल्ली मुँह मे माँस का टुकड़ा दबाये मिले तो उसके कार्य सफल होते है।

7. यदि कोई बिलाव या बिल्ली किसी सोते व्यक्ति के ऊपर कूदे तो उस व्यक्ति की मष्त्यु छः मॉस के अन्दर हो जाती है।

8. कहीं बाहर जाते समय बंदर अपनी बायी ओर दिखाई दे तो शुभ शकुन माना जाता है।

9. कही बाहर जाते समय दाहिनी अरे काली पूँछ वाली लोमड़ी आए तो उसको अपने कार्य में सफलता मिलती है।

10. किसी व्यक्ति को देखकर हिरण शरीर खुजलाने लगे अथवा शरीर को थिरकन दे तो यात्री को अपनी यात्रा स्थगित कर देनी चाहिए।

13.6. पक्षियों द्वारा शकुन विचार

13.6.1. श्यामा चिड़िया से शकुन विचार

1. अपने बायें भाग को खुजाती हुई श्यामा दिखे तो शत्रु का नाश और मित्र से लाभ होता है, दायें भाग को फडफड़ाती मिले तो विवाद मे विजय मिलती है, दोनो ही भागों मे फड़फड़ाने पर व्यक्ति को शुभ समाचार मिलता है।

2. श्यामा अपनी चोंच या पैरों से अपनी बायीं आँख खुजलाती दिखाई दे तो वस्त्र आभूषण का लाभ होता है।

3. भोजन तलाश करती हुई श्यामा मिले तो सिद्धि की सूचना मिलती है और श्रेष्ठभोज्य पदार्थ प्राप्त होते है।

4. भोजन पर छटपटाती हुई उसे अपने चोंच में दबा ले तो व्यकित को अतिशीघ्र सफलता और कार्य सिद्धि का लाभ होता है।

5. किसी यात्री को निर्जन सरोवर में आनन्दपूर्वक नहाती दिखाई दे तो भू-सम्पति का लाभ होता है।

6. मुँह मे लिए आहार को नीचे फेंकती दिखाई दे तो व्यक्ति का संचित धन समाप्त हो जाता है।

7. पति पत्नी दोनो ही यात्रा कर रहे हो और उनके बीच में से श्यामा चिड़िया और फिर श्यामा चिड़ा निकले तो कार्य सिद्धि में काई शंका नहीं रहती है।

13.6.2. कौए से शकुन विचार

1. वैशाख मास में उपद्रवहीन वृक्ष के ऊपर कौए द्वारा घोंसला बनाना कल्याण का सूचक है तथा कंटीले एवं सूखे वृक्ष पर घोसला बनाना दुर्भाग्य का सूचक है।

2. कौआ शरद ऋतु में पूर्व दिशा में स्थित वृक्ष पर घोंसला बनाऐ तो सर्वप्रथम पष्चिम दिशा में वर्षा होती है।

3. जिस किसी देश में कौआ गृह, भूमि, लता, धान्य के नीचे घोंसला बनाये तो देश के लोगों में रोग पीड़ा हो, वर्षा न हो तथा देश जनाभाव का षिकार हो जाता है।

4. यदि कौआ बालू, धान्य, भीगी हुई मिट्टी, पुष्प फल में से कोई वस्तु ले जाकर पुनः अपने घोंसले में आ जाये तो इसे धनलाभ कराने का संकेत जानना चाहिए।

5. यदि किसी इमारत पर बहुत सारे कौए एक साथ स्थित दिखाई दे तो यह दुर्भिक्ष का संकेत है।

6. यदि किसी व्यक्ति के ऊपर कौआ बैठ जाये तो उसके धन ओर मान की हानि होती है।

7. यदि कौआ 4 अण्डे दे तो अच्छी वर्षा तथा शुभ समय का सूचक है। 3 अण्डे देने पर खेतों में उपज की कमी, दो अण्डे दे तो दुख और संकट का सूचक है तथा एक ही अण्डा दे तो आने वाला समय शुभ जाने तथा वर्षा अच्छी हो।

8. पानी से भरे घड़े पर कौआ बैठता है तो, धन-धान्य की वृद्धि करता है।

9. गाय की पीठ प बैठा कौआ स्त्री-सुख की प्राप्ति का सूचक है, ऊँट पर बैठा दिखे तो किसी प्रियजन का शुभ समाचार मिले, सूअर की पीठ पर धन लाभ तथा शव पर बैठा दिखाई दे तो किसी अशुभ की सूचना देता है।

10. सूखी हड्डी को नोंचता हुआ कौआ दिखाई दे तो दुर्घटना में हड्डी टूटे।

11. ऊपर की ओर मुँह कर अपने पंख फड़फडाता हुआ कौआ कर्कश (तीखा) स्वर में आवाज करे तो यह मृत्यु का सूचक है।

12. हड्डी का टुकड़ा गिराते हुए कौआ दिखे तो व्यक्ति की मुत्यु होने का संकेत है।

13. किसी गर्भवती स्त्री को कौआ घड़े पर बैठा दिखाई दे तो स्त्री को पुत्र की प्राप्ति होती है।

14. यात्री के दाऐं फिर बाऐं भाग में शब्द करता हुआ कौआ यात्री को मनोवाच्छित धन की प्राप्ति कराता है।

15. तिनकों के ढेर पर अथवा बायें भाग में स्थित जल में कौआ शब्द करता हो तो कार्य हानि का संकेतक होता है।

13.6.3. अन्य पक्षियों के शकुन

1. कबूतर का वाहन, आसन बिस्तर आदि पर बैठना, अथवा गृह में प्रवेश करना मनुष्य के लिए अशुभदायक है।

2. श्वेत रंग का कबूतर दिखे तो एक वर्ष में, बहुरंगा कबूतर दिखे तो छः मास में, तथा धूम्रवर्ण का कबूतर दिखे तो तत्काल फल की प्राप्ति होती है।

3. कोयल की कूक दिन के प्रथम प्रहर में सुनाई दे तो हानि हो, दूसरे प्रहर में सुनाई दे तो एक घर छोड़ दूसरे में निवास करे, चौथे प्रहर में सुनाई दे तो शुभ समाचार मिले।

4. उल्लू का बायीं ओर से बोलना या दिखाई देना शुभ हो, पीछे दिखाई दे तो सफलता मिले तथा दायीं ओर दिखे तो अशुभ फल होता है।

5. उल्लू किसी घर पर निरन्तर बैठना प्रारम्भ कर दे तो वह घर शीघ्र ही उजड़ जाता है किसी के दरवाजे पर तीन दिन लगातार उल्लू रोता दिखाई दे तो उस घर में डकैती होती है।

6. कष्टमय समय में प्रातः काल मुर्गा बोलता है तो आने वाले समय में शुभ की सूचना देता है।

7. यात्रा करते समय किसी व्यक्ति के आगे आकर नीलकण्ठ बोलता है तो उसको अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ता है।

8. तीतर उच्च स्वर में आवाज करता दिखाई दे तो उसे अपने कार्य में सफलता मिलती है।

9. यात्रा पर जाते समय मैना का दिखना अशुभ शकुन है।

10. व्यक्ति को देख मोर का एक बार बोलना धन की प्राप्ति, दो बार बोले तो स्त्री सुख, तीन बार मिले तो राज्यदण्ड, चार बार बोले तो दुर्घटना, पाँच बार बोले तो कार्य सिद्धि होती है।

11. हंस का दिखाई देना अथवा आवाज सुनाई देना शुभ संकेत का सूचक है।

12. बगुला यात्री को पानी के किनारे एक पैर पर खड़ा दिखाई दे तो धन की प्राप्ति होती है।

13. बाज़ की आवाज प्रथम प्रहर में सुनाई दे तो अच्छा भोजन मिले, दूसरे प्रहर में सुनाई देना रोग सूचक, तीसरे प्रहर में कष्ट तथा चौथे प्रहर में लम्बी बीमारी का सूचक है।

14. सारस दिखाई देना शुभ शकुन है। यदि सारस का जोड़ा बायीं ओर बोलता सुनाई दे तो धन सम्पत्ति का सूचक, दायीं ओर स्त्री सुख तथा दोनों ओर दिखाई दे तो सभी अभिलाषाओं की पूर्ति होती है।

15. चकोर तथा बटेर का दिखाई देना शुभ शकुन है।

13.7. अद्भुत शकुन

मूर्तियों से पसीने की धारा बहने, मूर्ति का दूध पीना, मूर्ति की आँख खुलना, मूर्तियों के हसने या स्वयं एक स्थान से उठकर चले जाने की घटनायें आज भी यदा-कदा समाचार पत्रों मे आ जाती है। इसी प्रकार आकाश से रक्त, धूलि, चन्दन आदि की वर्षा के समाचार भी इस द्वितीय (सन्1939-45 ई. के) महायुद्ध से पूर्व रक्त-वृष्टि तो अनेक स्थानो पर हुई और कहीं-कहीं व्यापक क्षेत्र मे हुई। वहाँ की मिट्टी परीक्षण के लिए भी भेजी गई परन्तु वैज्ञानिक यह नही स्पष्ट सके कि रक्त किस प्राणी का है, किन्तु वह है रक्त ही, यह उन्होने स्वीकार किया। इसी प्रकार एक स्त्री के गर्भ से अण्ड़ा उत्पन्न होने तथा एक स्त्री के ऐसा बच्चा उत्पन्न होने का समाचार आया था कि बच्चे को गर्भ से ही जीवित सर्प लिपटा हुआ पैदा हुआ। बच्चा और सर्प- दोनो पर्याप्त समय तक जीवित थे। मूर्तियों मे आराधक के भाव से जो लक्षण प्रकट होते है, यहाँ उनसे कोई सन्बन्ध नही है। भाव तो दृढ़ होने पर सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित कर सकता है क्योंकि दृश्य संसार भाव लोक द्वारा भी संचालित है। इसी प्रकार आसुरी माया या मन के संकल्प से जो रक्त वर्षा आदि होते है, वे भी सिद्धि के अन्तर्गत है। यहाँ तो उन घटनाओं से तात्पर्य है जो बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के स्वत: होती है। ऊपर जैसी घटनाओं का उल्लेख है, उनके अतिरिक्त इसी कोटि के बहुत से लक्षण ज्योतिष ग्रन्थों में वर्णित है, ये सब लक्षण उत्पात के सूचक है। मूर्तियों मे जड़ पदार्थों मे क्या-क्या परिवर्तन होते है। आकाश में किन-किन पदार्थों वृष्टि होती है। नारी गर्भ से कैसी कैसी अद्भुत आकृतियाँ उत्पन्न होती है, इनका वर्णन और परिणाम ग्रन्थों मे देखना चाहिए।

इसी प्रकार की अद्भुत घटनाओं मे अकारण भूकम्प, उल्कापात, धूमकेतु का उदय होना गुफाओं मे आँधी न चलने पर भी शब्द होना, बिना आँधी और धूलि के दिशाओ तथा आकाश का मलिन हो जाना। अमावस्या और पूर्णिमा के बिना ही ग्रहण लगना आदि घटनाओ का ज्योतिष शास्त्र मे विस्तृत एवं सपरिणाम उल्लेख है। हमने पहले बताया है कि जड़वादियो के लिए भी पशु-पक्षी आदि से ज्ञात शकुन मान्य होने चाहिए, परन्तु जड़वाद को मानकर इन अद्भुत शकुनो का कारण पाया नही जाया सकता। पाषाण, धातु या काष्ठादि की मूर्तियो मे हास्य, रोदन, गति, स्वेद तथा आकाश से रक्त, चन्दन आदि की वृष्टि का कारण जड़वाद से पाना शक्य नही। जैसे किसी भावुक भक्त ने भगवान को मानसिक पूजा के समय कोई नैवेद्य अर्पित करना प्रारम्भ किया और उसे किसी ने उसी समय चौका दिया तो नैवेद्य बाहर गिर पडा, अब वह नैवेद्य कहां से आया। इसे वह नही बता सकेगा। इसी प्रकार ये घटनाएँ आजकल भाव लोक से सम्बन्ध रखती है, जो सम्बन्ध हमारे शरीर और शरीर की चेतना है, वही सम्बन्ध पदार्थों एवं उनके अधिष्ठाता देवताओ मे है। पदार्थों का स्थूल रूप देवताओ का व्यक्त पदार्थ भाव ही है। जैसे बाजीगर का भाव कुछ क्षण के लिए कोई प्रकट कर देता है। जैसे भय, आशङ्का, आश्चर्य आदि से हमारे शरीर मे स्वेद, रोमाञ्च, अश्रु, हास्य प्रकट होते है, वैसे ही देवताओ मे भी है। शोक या क्रोध की अधिकता मे हमारे रोमकूपों से रक्तकण निकल सकते है और रक्तवमन भी हो सकता है, मूर्तियो मे भक्तो की भावना तथा प्राण-प्रतिष्ठा के कारण देव शक्ति का सान्निध्य स्थापित करता है। विश्व मे कोई भी बडी

घटना होने वाली हो तो उसका प्रभाव देवशक्ति पर पडता है और प्रभाव प्रबल हो तो शोकादि के लक्षण स्थूल जगत् मे प्रकट होते है। देवता जब प्रसन्न होकर अपने आराधक को कोई पदार्थ देते है तो वह देवताओं का भाव ही पदार्थ के रूप मे मूर्त्त होता है।

पाण्ड़वो को वनवास के समय सूर्यनारायण से एक पात्र मिला था। महाभारत मे वर्णन है कि द्रौपदी जब तब भोजन न कर ले तब तक उस पात्र में असंख्य व्यक्तियों को भोजन करने योग्य पदार्थ प्राप्त हो सकते थे। पात्र मे इतने पदार्थ नित्य भरे नही होते थे। पात्र देते समय देवता का जैसा संकल्प था, वह शक्ति उस पात्र मे मूर्त हो गयी थी। संकल्प से वस्तु निर्माण करने वाले पुरूष इस समय भी देखे जाते है। इसी प्रकार देवताओ के हर्ष, शोकादि के चिह्न स्थूल जगत् से मूर्तिमान हो जाते है। उनकी दिव्य दृष्टि जगत मे किसी बडी उथल-पुथल का प्रत्यक्ष करती है, तो भूकम्प आदि होते है। इसी से चन्दन, रक्तादि की वृष्टि या मूर्तियों में क्रियायें प्रकट होती हैं।

13.8 अंग-लक्षणों द्वारा शकुन-विचार

अनेक बार हमारे शरीर के विभिन्न अङ्ग फडकते है या हथेलियो अथवा पैरों के तलो मे खजुली होती है, ये बाते शरीर मे वायु आदि दोषों से भी होती है और शकुनों के रूप में भी। प्राय: शकुन के रूप ये लक्षण तब प्रकट होते है जब किसी कार्य, वस्तु या व्यक्ति के सम्बन्ध मे सोच रहे हो, ये शकुन उसी सम्बन्ध में सूचना देते है, बिना हमारी इच्छा के या हम किसी सम्बन्ध में न सोचते हो, तो भी अङ्ग स्फुरणादि शकुन हो सकते है। ऐसे समय वे प्रभाव की महत्ता सूचित करते है। जैसे विश्व के समस्त पदार्थों के विभिन्न अधिष्ठाता देवता है। वैसे ही हमारे शरीर के भिन्न-भिन्न अङ्गों के भी अधिष्ठाता देवता है। समष्टि मे व्यापक रूप से कोई अद्भुत घटना होती हैं तो उस समय उस देवता का प्रभाव प्रकट होता है और हमारे जीवन की भावी घटना का प्रभाव हमारे शरीर में प्रकट होता है। कारण दोनो स्थानो पर एक ही है, दोनो ही स्थानों पर क्रिया देव-शक्ति हुई है, जैसे समष्टि में घटना की महत्ता तथा अल्पता के अनुसार लक्षण प्रकट होते हैं, वैसे ही शरीर में भी छोटे या बडे लक्षण दिखायी देते है। अङ्ग-स्फुरण, हथेलियों अथवा पाद तल की खुजलाहट और छींक-ये सामान्य लक्षण है। इनके अतिरिक्त और भी लक्षण शरीर मे प्रकट होते है परन्तु जैसे संसार मे रक्त-वर्षण या मूर्ति हास्यादि कभी-कभी होते है, वैसे ही शरीर के लक्षण भी कभी कभी किसी मे प्रकट होते है। पहने हुए आभूषण अकारण टूट या गिर जाये, फूलो की माला अस्वभाविक ढंग से मलिन हो जाये, किसी अङ्ग से स्वेद बहने लगे, बिना कारण रूलायी आये और अश्रु गिरे, शरीर से अकारण रक्त निकले, कार्यारम्भ मे हाथ के उपकरण गिर पड़े, शरीर फिसल जाए, इस प्रकार के बहुत से लक्षण शास्त्रो ने बतलाये है।

निम्न बिन्दुओं द्वारा अंगों के अन्य शकुन बताये जा रहे है:-

1. सिर का फड़कना सौभाग्य का सूचक है तथा कनपटी का फड़कना इच्छापूर्ति का सूचक है।

2. गर्दन का फड़कना विदेश यात्रा द्वारा धन प्राप्ति का संकेत है।

3. दाये कान का फड़कना शुभ समाचार की प्राप्ति तथा बाये कान का फड़कना किसी प्रियजन से भेंट का संकेत दर्शाता है।

4. दायी आँख फड़कने पर शुभ समाचार मिले तथा बायी आँख फडकने पर मित्र से मिलने की सूचना मिले।

5. मुँह का फड़फड़ाना पुत्र से सम्बन्धित शुभ समाचार का सूचक।

6. दायी बाजू फड़के तो धन और यश की प्राप्ति हो तथा बायी बाजू फड़के तो नष्ट हुए धन की प्राप्ति हो।

7. दायी हथेली का फड़कना धन आगमन का सूचक होती है।

8. अंगुलियाँ अथवा अंगूठे का फड़कना आने वाले समय की विपदा एवं संकट का संकेत देता है।

9. छींक की आवाज दक्षिण पूर्व में दिन के प्रथम प्रहर में सुनाई देती है तो कार्य में विघ्न आते हैं दूसर प्रहर मे सुनाई दे तो अग्नि से हानि होती है। तीसरे प्रहर में प्रियजन से मिलन तथा चौथे प्रहर में शुभ समाचार मिलता है।

10. नये मकान में प्रवेश करते समय छींक की आवाज सुनाई दे तो प्रवेष को स्थगित कर देना चाहिए।

11. किसी कार्यवश जाते समय व्यक्ति के सम्मुख कोई छींकता हो तो कार्य में बाधा आती है यदि एक से अधिक बार छींक की आवाज सुनाई दे तो कार्य सरलता से सम्पन्न हो जाते है।

12. व्यवसायिक कार्य आरम्भ करने से पूर्व छींक व्यापार-वृद्धि का संकेत है।

13. सोने से पूर्व और जागने के पष्चात् छींक की ध्वनि सुनना अशुभ संकेत है।

13.9. स्वप्न द्वारा शकुन विचार

स्वप्न के समय हमारा अर्न्तमन स्थूल शरीर के बन्धन से स्वतन्त्र होता है। हमारे स्वभाव, विचारादि के प्रभाव उस पर बन्धन नही लगा पाते, केवल प्रेरणा देते है। ऐसे समय वह प्रकृति की सूक्ष्म सूचनाओं को बहुत स्पष्ट रूप से ग्रहण करता है। स्वप्न मे देखे गये दृश्यो का शुभाशुभ विचार अत्यन्त विस्तृत है और इस विषय पर स्वतन्त्र ग्रन्थ भी है। यहाँ इतना ही जान लेना चाहिये कि सब स्वप्न शकुन ही नही होते। उनमे और भी बहुत से तात्पर्य तथा कारण होते है जागने पर जो स्वप्न भूल जाते है, वे तो केवल मन की कल्पना है, जो नही भूलते उनमे से बहुत से हमारी शारीरिक आवश्यकता या स्थिति को सूचित करते है।

जैसे प्यास लगी हुई हो या शरीर को जल की आवश्यकता हो तो स्वप्न मे हम जल पाने का प्रयास करते है, इसी प्रकार यदि स्वप्न मे हम आकाश मे उड़ते या भोजन करते है तो इसका अर्थ है कि शरीर मे वायुतत्व विकृत है अथवा अजीर्ण है। कफ एवं पित्त विकार से जल तथा अग्नि देखे जाते है। स्वप्न जैसे शरीर की विकृति एवं आवश्यकता की सूचना रहती है वैसे ही मानसिक विकास के लिए भी सूचना रहती है। स्वप्न मे हम जिस प्रवृति या कार्य को करते है। उस पर ध्यान दे तो पता लगेगा कि जीवन मे हमें किस ओर जाने का वहाँ संकेत है। जैसे एक व्यक्ति साहित्य का अध्ययन करता है और स्वप्न मे श्लोक गिनता, जोड़ता है तो इसका अर्थ है कि वह गणित मे लगने पर विशेष उन्नति कर सकेगा।

स्वप्न के द्वारा भय, उद्वेग आदि मानसिक दुर्बलताओ का कारण भी जान जाता है। स्वप्न विज्ञान पर पाश्चात्य विद्वानो ने बहुत विचार किया है। हमारे शास्त्रो मे भी इस पर विस्तृत आलोचना है। तात्पर्य इतना ही है कि स्वप्नो मे से कौन सा स्वप्न शकुन सम्बन्धी है। यह निश्चय करना सरल नही है। ब्रह्ममुहूर्त्त मे देखे गये स्वप्न, जिनके पश्चात पुन: निद्रा न आयी हो शकुन की दृष्टि महत्वपूर्ण माने गये है। यदि एक ही प्रकार के दृश्य स्वप्न मे बार-बार दिखायी दे तो उन पर विचार करना चाहिए। वे शरीरिक सूचना हो या शकुन दोनो ही प्रकार से उपयोगी है। स्वप्नो पर विचार करते समय पहले यही देखना चाहिए कि वे शारीरिक सूचना या मानसिक स्थिति से प्ररित तो नही है। इसके पश्चात ही उनका शकुन विचार उचित है। स्वप्न के समय हमारी स्थिति भावलोक मे होती है अतएव जाग्रत दशा के स्थूल जगत की अपेक्षा उस समय देव दर्शन एवं देवताओ के आदेश या सूचनाओ का प्राप्त होना सरल होता है। अधिकारी पुरूषो को ऐसी अनुभूतियाँ होती भी है। फिर भी स्वप्न मे मनकी भावना साकार हुई या देव दर्शन हुआ, यह जानना सरल नही है। इसलिए स्वप्न की भविष्य वाणियो पर विश्वास करना बहुधा भ्रमपूर्ण होता है।स्वप्न के आदेश यदि निष्ठा, शास्त्र एवं आचार के प्रतिकूल हो तो उन पर ध्यान देना ही नही चाहिए।

स्वप्न में दृष्ट अन्य घटनाओं के शकुन:-

1. स्वच्छ आकाश देखना, चिन्तामुक्ति, आनन्द प्राप्ति का पूर्व संकेत है।

2. स्वप्न में नवयुवक का अप्सरा को देखना उसके शीघ्र विवाह होने का पूर्व संकेत है।

3. स्वप्न में यदि विद्यार्थी समय की बर्बादी करे तो समझे परीक्षा में विद्यार्थी अच्छे अंको से उत्तीर्ण हो।

4. स्पप्न में बच्चे को बोलता देखे तो पारिवारिक सुख में बढ़ोत्तरी होती है।

5. अविवाहित युवती स्वप्न में कुर्सी पर बिल्ली को सोता देखे तो उसका विवाह किसी धनी युवक के साथ होता है।

6. स्वप्न में व्यक्ति अपने आप को रेगिस्तान की यात्रा करते तो यह संकेत उसके सौभाग्य का सूचक बनता है।

7. जो व्यक्ति स्वप्न में पण्डित बनकर पंचांग पढ़ता है उसके व्यवसाय में उन्नति होती है।

8. जो व्यक्ति स्वप्न में जल क्रीड़ा करता है, उसके सौभाग्य में निरन्तर वृद्धि होती है।

9. व्यक्ति यदि स्वप्न में तारे, बादल और गरजती बिजली को देखता है तो उसको राज्य पद की प्राप्ति होती है।

10. स्वप्न में सूर्य ग्रहण देखना व्यापार में क्षति का संकेत है।

13.10. प्रतिदिन के शुभ व अशुभ शकुन

1. अनुपयुक्त औषधियाँ, काला अन्न, कपास, तृण, सूखा गोबर, ईन्धन, अङ्गार, गुड, तेल, तेल लगाया हुआ, मुण्डन कराया हुआ, नंगा, खुले बालो वाला, रोग-पीडित, काषाय वस्त्रधारी, मानसिक रूप से बीमार, दीन तथा नपुंसक व्यक्ति, लोहा, कीचड़, चमड़ा, केश का बन्धन, खली आदि सभी सारहीन वस्तुयें अशुभ कही गयी है।

2. चाण्डाल, श्वपच, बन्धन मे डालने वाले कर्मचारी, जल्लाद, पापी, गर्भिणी स्त्री, भूसी, राख, खोपड़ी, हड्डी, टूटे हुए सभी पात्र, खाली पात्र, लाश, सींगो वाले पशु- ये तथा इनके अतिरिक्त और भी वस्तुएँ देखने मे अशुभ मानी गयी है।

3. वाद्यो के भयानक तथा तालहीन रूखे स्वर भी अशुभ कहे गये है।

4. 'कहां जा रहे हो, रूको, मत जाओ, तुम्हारे वहां जाने से क्या लाभ इस प्रकार के जो दूसरे अनिष्ट शब्द है। वे सभी विपत्ति कारक है।

5. ध्वजा, पताका आदि पर मांसभक्षी पक्षियो का बैठना, वाहनों का फिसलना तथा वस्त्र का अटक जाना निन्दित माना गया है।

6. द्वार से निकलते समय सिर मे चोट लगना तथा छत्र, ध्वजा और वस्त्रादि गिरना अशुभ कारक होता है।

7. श्वेत फू ल, भरा हुआ घट, जलीयजन्तु, पक्षी, मांस, मछलियाँ, गाये, घोडे, हाथी, अकेला बंधा हुआ पशु, बकरा, देवता, मित्र, ब्राह्मण, जलती हुई अग्नि, नगरवधू (वेश्या), दूर्वा, गीला गोबर, सुवर्ण, चाँदी, तांबा, सभी प्रकार के रत्न, औषधियाँ, जौ, पीली सरसों, मनुष्य को ढोता हुआ वाहन, सुन्दर सिंहासन, सभी प्रकार के राजचिह्न, तलवार, छत्र, पताका, मिट्टी, हथियार, रूदन रहित मुर्दा, घी, दही, दूध, विविध प्रकार के फल, स्वस्तिक, वर्धमान, नन्द्यावर्त, कौस्तुभमणि, वाद्यों के सुखदायक एवं गम्भीर शब्द, गांधार, षड्ज तथा ऋषभ आदि स्वर शुभदायक माने गये है।

8. बालू के कणो से युक्त रूखी वायु सर्वत्र प्रतिकूल दिशा में पृथ्वी का स्पर्श करके बह रही हो तो उसे भयकारी समझना चाहिए।

9. अनुकूल दिशा मे बहने वाली मृदु, शीतल एवं सुखस्पर्शी वायु सुखदायिनी होती है।

10. निष्ठुर एवं रूखे स्वर मे बोलने वाले मांसभक्षी जीव यात्रियो के लिए कल्याणकारक होते है।

11. हाथियो की चिङ्घाड़ के समान गम्भीर स्वर करने वाले चिकने घने मेघ शुभदायी होते है, पीछे से चमकने वाली बिजली का प्रकाश तथा इन्द्रधनुष प्रशंसनीय है तथा यात्रा में सूर्य एवं चन्द्रमा के मण्डल तथा घनघोर वृष्टि को अशुभ समझना चाहिए।

12. अनुकूल दिशा मे उदित हुए ग्रहो को विशेषकर बृहस्पति को शुभ सूचक कहा गया है।

13. यात्रा काल मे आस्तिकता, श्रद्धा, पूज्यो के प्रति पूज्य भाव और मन की प्रसन्नता ये सभी प्रशंसनीय है।

नोट : प्रथम बार अपशकुन दिखने पर विद्वान राजा को चाहिए कि वह अशुभ विनाशक एवं मधुहन्ता भगवान् केशव की स्तोत्रो द्वारा पूजा करे। दूसरी बार अपशकुन दिखने पर पुन: घर मे लौट आना चाहिए।

13.10.1. यात्रा में शुभ शकुन

यात्रा के लिये प्रस्थान करते समय मृदङ्ग, वीणा अथवा अन्य मधुर सङ्गीत की ध्वनि हो, सफेद पुष्प का दर्शन, भरा हुआ कलश, जलचर पक्षी, गाय, घोड़ा, हाथी, देवमन्दिर, अच्छे मित्र, ब्राह्मण, जलती हुई अग्नि, हरी घास, गोबर से सने हाथ, वेश्या, सोना, चाँदी, ताँबा, कोई भी रत्न, अन्न, ध्वजा, छत्र, चँवर, तलवार आदि राज चिह्न, हँसते हुए लोग, दूध, दही, घृत, रसदार फल, वेदध्वनि, शवयात्रा के दर्शन और मन की प्रसन्नता कार्य सिद्धि हेतु अच्छे शकुन होते हैं। मृग बायें ते दाहिने जो आवे तत्काल। अन्नधन लक्ष्मीबहु मिले चलते प्रात:काल॥ विप्र, दो अश्व, गजमद्, फल, अन्न, दुग्ध, गोदधि, सर्प, कमल, निर्मलवस्त्र, वाद्य, नगरवधू (वेश्या), मोर, नकुल, सिंहासन, शस्त्र, माँस, दीप्ताग्नि, मत्स्य, शिशु सहित महिला, सुन्दर कन्या, रजक (धोबी), कार्यसिद्धि सूचक वाक्य, जलपूर्णघट यात्रा के समय तथा यात्रा के पश्चात् रिक्त घट देखने में शुभ होता है।

13.10.2. यात्रा में अशुभ शकुन

बन्ध्या स्त्री, चर्म, अस्थि, ईधन, सन्यासी, भैंसो का युद्ध, सर्प, शत्रु, बिलाव (मार्जार), युद्ध, कुटुम्ब-कलह, विधवा, जातिभ्रष्ट, अङ्गहीन, छिक्का, दुष्टवाणी यात्रा के समय अशुभ होती है।

13.10.3. अपशकुन

प्रस्थान के समय लड़ाई के दर्शन हो, विधवा या बाँझ स्त्री के दर्शन हो, सन्यासी दिखे, काठा ले जाता हुआ, छींक हो, चमड़ा दिखे, अपशब्द सुनाई दें, घोर गर्जना हो, अस्थियाँ दिखे, कुत्ते लड़ते हुए दिखे, बिखरे बाल वाली स्त्री दिखे - ये सभी अच्छे शकुन नहीं होते हैं। ऐसे में यदि यात्रा का आरम्भ हो तो यात्रा में अनावश्यक बाधाएँ, आपत्ति आती हैं एवंा कार्यसिद्धि में सन्देह होता है।

13.10.4. अपशकुन परिहार

पहला अपशकुन हो तो एक बार प्राणायाम करके जल पीकर, दुबारा अपशकुन हो तो तीन बार प्राणायाम करके जल का आचमन तथा इष्टा सुमिरन करके यात्रा आरम्भ करें, और यदि तीसरी बार अपशकुन हो तो यात्रा हेतु उस मुहूर्त का, लग्न का अथवा लग्न नवांश का त्याग करना चाहिये।

13.11 वर्षासूचक शकुन

13.11.1. मेघमहोदयवर्षप्रबोध के अनुसार वर्षासूचक विधियाँ

1. अक्षयतृतीया (वैशाखशुक्ल तृतीया) को सन्ध्या के समय सात प्रकार के धान्य एकत्रित करके वृक्ष के नीचे अलग-अलग स्थान पर रखें। यदि वे धान्य बिखर जाये तो उस वर्ष में धान्य व वर्षा बहुत हो तथा इक ही पड़े रहे तो तो धान्य व वर्षा बहुत न्यून होती है।

2. अक्षयतृतीया (वैशाखशुक्ल तृतीया) को एक थाली में जल भर के रखे, इसमें सूर्य को देखें और उसका स्वरूप विचारे, यदि सूर्य लालरंग का दिखे तो विग्रह, नीले या पीले रंग का दिखे तो महारोग, सफेद दिखे तो श्रेष्ठवर्षा, धूसर वर्ण दिखे तो टिड्डी, चूहे का उपद्रव हो।

3. आशाढ़ आदि चार महीनों के नामवाले मिट्टी के चार पिण्ड (गोल) बनाकर उसके ऊपर जल से पूर्ण घड़ी को रखे। जितने पिण्ड की माटी कुम्भ से झरते हुआ जल से भीग जाये, उतने महीने में वर्षा होगी और शुष्क पड़ी रहे तो उस महीने में वर्षा नहीं होती है।

4. रक्षाबन्धन (श्रावणशुक्ल पूर्णिमा) के पर्व पर सन्ध्या के समय गौसमूह के पुन: घर आने के समय उनके अनुसार वर्षा का निर्णय करे, जैसे टेढ़ी पूंछवाली गाय सबसे आगे हो तो खण्डवर्षा की भविष्यवाणी करनी चाहिए।

5. सायंकाल (गोधुलिवेला) गौप्रवेश के समय सफेद बैल या कालेरंग के बैल में सफेद बैल अथवा गाय आगे हो तो बहुत वर्षा हो तथा काले रंग का बैल अथवा गाय आगे हो तो वर्षा मध्यम हो।

6. जल से पूर्ण कलशों पर श्रावण, भाद्रपद, आश्विन महीनों के नाम लिखकर प्रदक्षिणा करें, फिर उन कलशों को मस्तक पर लेकर जलाश्रय या देवमन्दिर की प्रदक्षिणा करे। इसमें जो जल से भरा

कलश पूर्ण रहे उस मास में श्रेष्ठवर्षा जानना और जो कलश टूट जाये या जल झरने लगे या जल से न्यून हो जाये तो अल्पवर्षा जानना।

7. कौवे के 2, 3 या 4 बच्चे हो तो सुभिक्ष जानना, पाँच हो तो दूसरा राजनैतिक परिवर्तन हो, एक ही बच्चा हो तो वर्षा खण्डित हो।

8. टिटहरी के चार अण्ड़े से आशाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन महीने की वर्षा का निर्णय करे, जैसे जितने अण्ड़े अधोमुख हो उतने महीने वर्षा और ऊर्ध्वमुख वाले अण्ड़े हो तो वर्षा नहीं होती है। टिटहरी नदी, तालाब आदि जलाशय में अण्डे रखें तो वृष्टि का अवरोध हो और ऊँची भूमि पर रखे तो वृष्टि अच्छी होती है।

9. कौवा अपना घोंसला वृक्ष पर पूर्वदिशा में बनावे हो तो सुभिक्षकारक है। अग्निकोण में बनावे तो वर्षा थोड़ी हो तथा दक्षिण में बनावे तो दो महीने वर्षा हो परन्तु पीछे वर्षा न हो केवल हिमपात हो। पश्चिमदिशा में बनावे तो दो महीने बहुत वर्षा तथा ऊँची भूमि में धान्य की उत्पत्ति श्रेष्ठ हो। वायव्यकोण में बनावे तो वायु के साथ वर्षा हो। नैऋर्त्यकोण में बनावे तो पहिले वर्षा न हो तथा बाद में हो।

कौआ अपना घोंसला वृक्ष के ऊपर के अग्रभाग रखे तो महावर्षा, मध्यभाग में बनावे तो मध्यमवर्षा और नीचे के भाग में बनावे तो अनावृष्टि के योग बनते है।

कौआ वृक्ष के कोटर में घोंसला बनावे तो राज्य में दुर्भिक्ष होवे, नदी के तट पर बनावे तो अनावृष्टि होती है। मेघ के प्रश्न के समय यदि कौआ पंख कंपाता हुआ वृक्ष के अग्रभाग में बैठा हो तो शीघ्र ही वर्षा होवे।

13.11.2. ज्यौतिषशास्त्र के ग्रन्थों में वर्षा के विभिन्न योगायोग (भौमनिमित्त, आन्तरिक्षनिमित्त, दिव्यनिमित्त व मिश्रनिमित्त से) बताये गये है। यथा -

1. देश, मनुष्य, पशु, कीट, पतङ्ग आदि भूमि पर विद्यमान निमित्तों के द्वारा वर्षा का ज्ञान करने को भौमनिमित्त कहते है।

2. वायु, बादल, विद्युत्, गर्जन, तर्जन, सन्ध्या, दिग्दाह, प्रतिसूर्य, तारा, कुण्ड़ल, आँधी, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वायुधारणा आदि से वर्षा का ज्ञान करने को आन्तरिक्षनिमित्त कहते है।

3. सूर्य/चन्द्र ग्रहण, पुच्छलतारे, सूर्य के चिह्न, सप्तनाड़ीचक्र, ग्रहों के उदयास्त, संक्रान्ति आदि से वृष्टि का ज्ञान करने को दिव्यनिमित्त कहते है।

4. कार्तिक से आश्विन तक के बारह महीनों के प्रत्येक दिनों के तथा विशेष दिवस (अक्षयतृतीया, आशाढ़ीपूर्णिमा व होलिकादहनरात्रि) के शकुनों तथा उपर्युक्त चिह्नों से वर्षा का ज्ञान करने को मिश्रनिमित्त कहते है।

03. मार्गशीर्ष मास से साढे छ: मास बाद की गणना से प्रति तिथि गर्भ शकुन देखना चाहए। ओस की बूंदे गिरना, कोहरा आना, बादल होना एवं हल्की बूँदा-बूँदी होना मौसम का गर्भ होता है। उस तिथि से साढे छ: मास बाद जो तिथि होती है उसी दिन वर्षा होती है तथा गर्भ के दिन वर्षा नहीं होने पर गर्भक्षय समझे।

04. पौष वदी सप्तमी व अष्टमी को अर्धरात्रि में मेघ गरजे तो वर्षा ऋतु में अच्छी वर्षा होती है। अष्टमी को दिन में वर्षा नहीं हो तो आगे सूर्य के आर्द्रा नक्षत्र में वर्षा अधिक होती है।

05. पौष सुदी सप्तमी, अष्टामी, नवमी को बिजली गर्जना हो तो आगे चौमासा में उत्तम वर्षा होती है।

06. मार्गशीर्ष शुक्ल अष्टमी को बादल बिजली चमके तो आगे श्रावणमास में अच्छी वर्षा होगी और इस मास में जिन नक्षत्रों में वर्षा हो, उन्हीं नक्षत्रों में आशाढ़ मास में वर्षा होती हैं।

07. वर्षाकाल में मृगशिरा से स्वाती नक्षत्र तक के 11 नक्षत्रों में सूर्य रहे तब यदि कुत्ता घास या भूसे के ढ़ेर पर चढ़कर वहाँ से अथवा देवालय के ऊपर चढ़कर वहाँ से अथवा मकान के मुख्य स्थान पर चढ़कर वहाँ से रोवे तो जितने जोर से रोवे उतने ही जोर से वर्षा होगी। अन्य नक्षत्रस्थित सूर्य में अन्यान्य अशुभ परिणाम जैसे मृत्यु, अग्नि, रोग आदि होते हैं किन्तु वर्षाकाल में अशुभ परिणाम न होकर वृष्टि होती हैं।

08. उपरोक्त वर्षाकाल में वर्षा एक ही बार होकर यदि बन्द हो गयी हो तब यदि कुत्ते पानी में गोल-गोल चक्कर लगावे, पानी को जोर जोर से हिलाएँ या घूम-घूम कर पानी पीवे तो 12 दिन के भीतर वर्षा होती हैं।

09. चलती हुई गाय को अकारण कुत्ते रोक देवे, किसी तरह आगे जाने ही न दे तो उसी दिन एक प्रहर के अन्दर भारी वृष्टि हो, इसी प्रकार मधुमक्खियाँ भी झुण्ड में चलती हुई गाय को अकारण ही रोकने में सफल हो तो भी उस दिन एक प्रहर के भीतर जैसे छोटा बड़ा उनका झुण्ड होगा वैसी न्यूनाधिक वर्षा होगी।

10. वर्षाकाल में चीटियाँ यदि अण्डा लेकर ऊपर की तरफ जाती हो तो वर्षा होगी, परन्तु नीचे की ओर या पानी में अण्डा ले जाती हो तो बरसता हुआ पानी भी रुक जाता हैं।

13.12.सारांश

ज्योतिष विज्ञान मानव जिज्ञासा का परिणाम है मनुष्य सदैव भविष्य में होने वाली घटनाओं के लिए जिज्ञासु रहा है और मनुष्य की इसी प्रवृति के कारण प्राचीन ऋषि मुनियों ने ज्योतिष शास्त्र की रचना की थी। अतः प्रस्तुत इकाई में हमने ज्योतिष शास्त्र के अभिन्न अंग ''शकुन शास्त्र'' का सम्पूर्ण अध्ययन किया है। शकुन शास्त्र के अन्तर्गत मनुष्य भविष्य में होने वाली घटनाओं की जानकारी पहले से ही प्राप्त कर लेता है। शकुन शास्त्र यह सिद्ध करता है कि जगत् की संचालिका एक चेतन शक्ति है और वह हमारे प्रति ममतामयी है। शकुन चाहे स्वप्न में हो या जाग्रत दशा में, अपने शरीर में है या संसार में, पशु-पक्षियों द्वारा हो या दिव्य शक्तियों द्वारा प्रत्येक दशा में उनका तात्पर्य हमें सावधान करना और आश्वासन देना है अतएव हमने इन सब के द्वारा होने वाले शुभ व अशुभ शकुनों का इस इकाई में वर्णन किया है।

13.13. शब्दावलि

1. शकुन	=	जीव के लक्षणों द्वारा घटनाओं का फल
2. राजप्रासाद	=	राजा का महल
3. उल्कापात	=	आकाश से पत्थररूपी पिण्डों का गिरना
4. गर्भिणी	=	गर्भवती स्त्री
5. अपशकुन परिहार	=	अशुभ संकेतों के परिहारार्थ किये गये उपाय

13.13. अभ्यास प्रश्न

प्रश्न - 1: शकुन को ज्योतिष शास्त्र के अनुसार किस स्कन्ध का भाग माना है ?

उत्तर: शकुन को ज्योतिष शास्त्र के अनुसार संहिता स्कन्ध का भाग माना है।

प्रश्न - 2: शकुन का क्या आशय है ?

उत्तर: भविष्य में होने वाली घटनाओं का आकस्मिक लक्षणों द्वारा पूर्व संकेत होना ही शकुन है।

प्रश्न - 3: शकुन की मनुष्य के जीवन में क्या उपयोगिता है ?

उत्तर: शकुन शास्त्र द्वारा जो सूचनायें पूर्वानुमानित की जाती है, उसके आधार पर मनुष्य अपने जीवन में होने वाली प्रतिकूलताओं से बचकर अनुकूलता का लाभ उठाने में सक्षम होता है।

प्रश्न - 4: पशु-पक्षी द्वारा शकुन-विचार किस प्रकार किया जाता है ?

उत्तर: पशु-पक्षी यदि अपनी सामान्य चेष्टाओं के विपरीत चेष्टा अभीष्ट समय में करते है, तो वे निश्चित ही किसी मंगल अथवा अमंगल का संकेत करते है।

प्रश्न - 5: शकुन शास्त्र के प्रसिद्ध प्रवर्तकों के नाम बताईये ?

उत्तर: महर्षि अत्रि, बृहस्पति, गर्ग, शुक्राचार्य, व्यास, वसिष्ठ व गौतम आदि ऋषि शकुन के प्रवर्तक माने जाते है।

प्रश्न - 6: यात्रा पर जाते समय किस प्रकार का स्वर शुभ बताया गया है ?

उत्तर: सूर्य के सामने रहते हुए मधुर स्वर और हर्ष के साथ सभी स्वर यात्रा के समय शुभ कहे गये है।

प्रश्न - 7: अंग द्वारा निर्धारित होने वाले किन्हीं दो शकुनों के नाम बताईये ?

उत्तर: 1. सिर का फड़कना सौभाग्यदायक होता है तथा 2. गर्दन का फड़कना विदेश यात्रा के योग बनाता है।

प्रश्न - 8: भौमनिमित्त किसे कहते है ?

उत्तर: देश,मनुष्य, पशु, कीट, पंतग आदि भूमि पर विद्यमान निमित्तों के द्वारा वर्षा का ज्ञान करने को भौमनिमित्त कहते है।

प्रश्न - 9: चींटियों की किस चेष्टा से वर्षा का अनुमान लगाया जाता है ?

उत्तर: वर्षाकाल में चीटियां यदि अण्डा लेकर उपर की तरफ जाती हो तो वर्षा होगी, परन्तु नीचे की ओर या पानी में अण्डा ले जाती हो तो बरसता हुआ पानी भी रूक जाता है।

प्रश्न - 10: छींक द्वारा शकुन का फल बताईये ?

उत्तर: नये मकान में प्रवेष करते समय छींक की आवाज सुनाई दे तो प्रवेष को स्थगित कर देना चाहिए।

13.15. बोध प्रश्न

प्रश्न - 1: शकुन शास्त्र से क्या तात्पर्य है तथा मानव जीवन में इसकी क्या उपयोगिता है ?

प्रश्न - 2: यात्राकालिक शकुनों का फलकथन कीजिये ?

प्रश्न - 3: निम्नलिखित में से कीन्हीं दो पशुओं के शकुनों का विचार कीजिये ?

प्रश्न - 4: स्वप्न द्वारा शकुन विचार किस प्रकार किया जाता है ?

प्रश्न - 5: प्रतिदिन होने वाले शुभ अथवा अशुभ शकुनों का वर्णन करते हुए इनके परिहारों का वर्णन करिये।

13.16. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सारावली

   सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहज्जातकम्

   व्याख्याकार: केदारदत्त जोशी

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

3. फलदीपिका

   सम्पादक: गोपेश कुमार ओझा

   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

4. भारतीय ज्योतिष

   व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

   प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।